प्रकाशक

पो० कण्ठमणि शास्त्री
संचालक विद्या-विभाग
कांकरोली

प्रथम संस्करण ····	सं० १९९८ ··	५०० प्रति
द्वितीय संस्करण ····	सं० २००६ ·	१००० प्रति

मुद्रक
श्री विट्ठलनाथ प्रेस कोटा.

मूल्य ३)

ऐतिहासिक दृष्टि में

अष्टछाप

(१) सूरदास—

—:*:—

आधार—

(१) साहित्य-लहरी के दृष्ट—कूटों में एक पद सूरदास का जीवन चरित्र-सम्बन्धी है। उससे निम्न बातें ज्ञात होती हैं चंद के वंशज, जगात बंशी थे। उनके ६ भाई युद्ध में मारे गये। वे जन्मान्ध थे, भगवान की कृपा से उनको दर्शन हुए और वे कृष्ण-भक्त हो गये। संभवतः प्रक्षिप्त और वार्ता-विरुद्ध होने के कारण यह पद प्रमाणिक नहीं है।

(२) साहित्य-लहरी में 'मुनि-पुनि रसन के रस लेख, दसन गोरी नन्दकों लिखि सुवल संवत पेख' इस पद से उसका रचना-काल संवत १६०७ प्राप्त होता है।

(३) सूर-सारावली-'गुरु प्रसाद होत यह दरसन सरसठ बरस प्रवीन।' के आधार पर ग्रन्थ-रचना-काल के समय कवि ने अपनी आयु ६७ वर्ष की बतलाई है।

(४) कुछ पदों में उन्होंने अपने अन्धे होने और श्रीवल्लभाचार्यजी का दीक्षागुरु-रूप में उल्लेख किया है।

(५) भक्तमाल—में जो-सूरदास के समय का लिखा ग्रन्थ है कवि की भक्ति और काव्य की प्रशंसा की गई है। यह ग्रन्थ प्रमाणिक है।

(६) चौरासी—वार्ता— संवत १७५२ की लिखित हरिरायजी के भावप्रकाश वाली, यह ग्रन्थ प्रमाणिक है।

(७) आईने अकबरी में—सूरदासजी को अकबर के दरबार का गवैया और रामदास का पुत्र कहागया है।

यह वृत्तान्त अष्टछापजी सूरदास का नहीं है।

(८) मुन्शियान अबुलफ़ज़ल-इसमें अकबर की आज्ञा से अबुलफजल का सूरदास के नाम भेजे गए एक पत्र का और अकबर से सूरदास के मिलने का भी उल्लेख है। सभवतः यह वृत्तान्त 'मदनमोहन सूरदास' का है।

(९) गोसाईं चरित्र-इस ग्रन्थ को विद्वान प्रामाणिक नहीं मानते।

साहित्य क्षेत्र में तीन सूरदास हुए हैं।

(क) विल्वमंगल सूरदास—जिन्हें रूपवती स्त्री के रूपकी आसक्ति से ज्ञान प्राप्त हुआ, और वे आंख फोड़ कर अंधे हो गये थे। ये भी कवि और भक्त थे। इनके चरित्र को लोगोंने भ्रम से अष्टछापी सूरदास के साथ जोड़ दिया है।

(ख) सूरदास मदनमोहन—ये लखनउ के पास 'संडीला स्थान के दीवान और अकबर के एक राजकर्मचारी के पुत्र थे। अकबरी दरबार से इन्ही का सम्बन्ध था

(ग) सूरदास अष्टछाप वाले—हिन्दी ब्रजभाषा साहित्य के 'सूर्य' और 'सूर सागर' के रचयिता हैं।

हरिरायजीकृत भावप्रकाश वाली वार्ता तथा अन्य प्रमाणों के आधार से—

जन्म—संवत् १५३५ वैशाख शु. ५ दिल्ली के पास सीहीं ग्राम। कांकरोली की सं० १६९७ की निज-वार्ता की प्रति में (पत्र ३६) लिखा है कि "सो सूरदासजी तो जब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कौ प्राकट्य है तब इनकौ जन्म है।"

माता, पिता, आदि—इनके मातापिता निर्धन सारस्वत ब्राह्मण थे। सूर जन्म से अन्धे थे इसलिये मावाप को उनकी ओर उदासीनता रहती थी। घर की उपेक्षा और निर्धनता के कारण इन्होने घर छोड़ दिया। इनके विवाह का उल्लेख नहीं है।

शिक्षा—सूरदास को साधु-संगति से ज्ञान प्राप्त हुआ। ये गान-विद्या में निपुण थे, और पद-रचना करते थे। इनको वाक्सिद्धि थी, इसलिये इनके बहुत से शिष्य हो गये थे। उस समय ये दास्य-भाव से भगवान की उपासना करते थे।

निवास—१८ वर्ष की वय तक ये अपने गाँव से चार कोस दूर एक तालाव के किनारे रहे। बाद में मथुरा और वहाँ से आगरा और मथुरा के बीच गऊघाट पर इनके शिष्यों ने कुटी नहीं बनाई तबतक सूरदासजी 'रुनकता' गांव में रहते थे। वल्लभसंप्रदाय में दीक्षा होने बाद ये श्रीनाथजी की कीर्तन-सेवा में पहुंचे। वहां ये गोवर्द्धन के पास चंद्रसरोवर-परासोली में रहे थे।

सम्प्रदाय में प्रवेश—८४ वार्ता तथा वल्लभ-दिग्विजय के आधार पर सं० १५६७ में गऊघाट पर श्रीआचार्यजी की शरण आए। तीसरी पृथ्वी- प्रदक्षिणा की पूर्ति के समय दक्षिण दिग्विजय सं० १५६६ के अन्तर (अडेल से व्रज आते समय) वल्लभाचार्यजी ने सूरदास को शरण में लिया था।

अन्तिम समय—सूरदास की वार्ता मे लिखा है कि- "सो बीचबीच में जब कुभनदास, परमानंददासजी के कीर्तन के ओसरा आवते तब सूरदासजी श्रीगोकुल में नवनीत-प्रियजी के दरशन कुं आवते।"

गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी का गोकुल में स्थायी निवास सं० १६२८ में हुआ था। (मधुसूदन कृत वशावली) इससे सिद्ध है कि-सूरदास लगभग १६३० तक अवश्य जीवित थे।

८४ वार्ता के भावप्रकाश में सूरदास के अन्तिम समय के वर्णन से ज्ञात होता है कि-गुसाँईजी के लीला-प्रवेश स० १६४२ के कुछ साल पहले (अनुमानतः दो साल) सूरदासजी का निधन हुआ था। अत. सूरदासजी का निधन परासौली ग्राम में सं १६४० में हुआ।

रचना—

(१) सूरसागर-काशीनागरी प्रचारिणी सभा से प्रकाशित हो चुका है।
(२) सूरसारावली-[दोनों मुद्रित हो चुकी हैं।]
(३) साहित्य लहरी-

——o——

(२) परमानन्ददास–

आधार– (१) भक्तमाल ।।(२) सं० १६६७ की ८४ वार्ता तथा श्रीहरिरायजी कृत वार्ता पर-भावप्रकाश ।

इनके रचित–पदों के देखने से विदित होता है कि-कवि ने अपने विषय में कुछ नहीं कहा है। वार्ता और भक्तमाल के द्वारा कुछ वृत्त विदित होता है।

जन्म सं० १५५० (अनुमान) कन्नोज । वल्लभसम्प्रदाय में प्रचलित है कि-परमानंददासजी वय में आचार्यजी से १५ वर्ष छोटे थे।

माता, पिता आदि–इनके मातापिता निर्धन कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे. परन्तु इनके जन्मदिन पर इनके पिता को बहुत धन मिला। जिससे इनका यज्ञो-पवीत बड़े समारोह के साथ सम्पन्न हुआ। एकबार कन्नोज के हाकिम ने इनके पिता का सब द्रव्य लूट लिया, तब इनके पिता पुनः निर्धन हो गये। पिता ने इनसे विवाह करने का आग्रह किया, परन्तु इन्होंने निषेध करा दिया तब से इनकी रुचि त्याग और वैराग्य की ओर हो चली इनके मातापिता धनोपार्जन के लिये विदेश चले गये, और ये कन्नोज में ही अकेले रह गये।

शिक्षा– परमानन्ददासजी ने कन्नोज में शिक्षा पाई इनके शिक्षा-गुरु का कहीं उल्लेख नहीं मिलता। सम्प्रदाय में आने से पहिले ही गायन और कीर्तन में इनकी बहुत ख्याति हो गई थी। ये बड़े सदाचारी और कवीश्वर थे। गायन-शिक्षा तथा

हरि-कीर्तन में भाग लेने के लिये इनके पास बहुत से लोग आते थे। ये 'स्वामी' कहलाते थे।

सम्प्रदाय में प्रवेश–सं० १५७७ ज्येष्ठ शुक्ल १२ प्रयाग के पास अड़ेल में।

अन्तिम समय–परमानददासजी ने गुसाँईजी विट्ठलनाथजी के सातों बालकों की वधाई गाई है। सातवें पुत्र श्रीघनश्यामजी का जन्म सं० १६२८ में हुआ। इससे सिद्ध होता है कि परमानंददासजी सं० १६२८ तक तो जीवित थे। सात बालकों की वधाई के एक अन्तिम समय गाये हुए पद में इन्होंने श्रीघनश्यामजी के विषय में इस प्रकार लिखा है– **"श्रीघनश्याम, पूरण काम पोथी में ध्यान।"** इन्होंने श्रीघनश्यामजी को विद्याध्यन करते देखा, इससे उस समय घनश्यामजी की आयु लगभग बारह तेरह वर्ष की अवश्य होगी। अतः सिद्ध होता है कि-वे लगभग सं १६४०,४१ तक जीवित थे। वार्ता से अनुमान होता है कि-इनकी मृत्यु कुंभनदासजी के निधन सं० १६४० के बाद हुई। अतः इनका अन्तिम समय सं० १६४०-१६४१ के बीच का माना जा सकता है। वार्ता के अनुसार परमानन्ददासजी ने भादों बदी नौमी को मध्यान्ह के समय देह छोड़ी थी।

निवासस्थान–सुरभीकुंड,

रचना—परमानंद सागर। वार्ता में 'परमानंद-सागर' का उल्लेख है। इस की कई प्रतियां कांकरोली विद्याविभाग में विद्यमान है। इन के लगभग २००० पद होंगे। जिसका प्रमाणित संबादन हो चुका है- सम्प्रति अप्रकाशित है। कुछ प्रकीर्ण पद प्रकाशित हो चुके हैं।

(३) कुंभनदास–

जन्म—सं० १५२५ गोवर्धन से कुछ दूर जमनावती ग्राम। गोवर्धननाथजी की प्राकट्य-वार्ता में लिखा है कि-जब श्रीनाथजी प्रकट हुए (सं० १५३५) तब कुंभनदासजी की आयु दस वर्ष की थी। सम्प्रदाय में किंवदन्ती है कि-कुंभनदासजी के पिता कुम्भ के मेला में गए वहां उन्हें एक महात्मा की सेवा से पुत्र-प्राप्ति का आशीर्वाद मिला। उसी की स्मृति में कुंभनदास नाम रक्खा गया था।

माता, पिता आदि–पिता का नाम अज्ञात है। यह गोरवा क्षत्रिय थे। इनके काका का नाम धर्मदास था। कुँभनदासजी के कुटुम्ब में सात पुत्र और सात ही पुत्रवधुएं थी। इनके एक पुत्र कृष्णदास को सिंह ने मारडाला था। पांच बड़े पुत्र इन्हों ने अलग कर दिये, केवल सबसे छोटे पुत्र, चतुर्भुजदासजी-जो इनकी तरह भक्त कवि थे- इनके साथ रहते थे। इनका व्यवसाय केवल खेती करना था। निर्धन होने पर भी ये त्यागी थे। एक वार राजा मानसिंह ने इन्हें द्रव्य दिया पर इन्होंने नहीं लिया। भरे दरबार में बादशाह अकबर की भी उन्होंने उपेक्षा करदी थी।

शिक्षा–ये गानविद्या में अच्छे निपुण थे। श्रीवल्लभाचार्यजी के संसर्ग से इन्होंने भक्ति का महत्व समझा और महानुभावी वैष्णव हुए।

सम्प्रदाय में प्रवेश-सं० १५५६ श्रीगोवर्धननाथजी के प्राकट्य की वार्ता में लिखा है। कि-श्रीवल्लभाचार्यजी ने सं० १५५६ वैसाख-

शुक्ल तीज के दिन श्रीनाथजी को गिरिराज पर छोटे मंदिर में पधराया, और वहीं कुंभनदासजी को स्त्री सहित दीक्षा दी।

अन्तिम समय—इन्होंने गो. श्रीविट्ठलनाथजी के सात बालकों की बधाई गाई है। इससे सं० १६२८ (घनश्यामजी के जन्म—तक वे जीवित थे। गोस्वामी श्री विट्ठल-नाथजी ने सम्वत १६३१ में और संवत १६३८ में गुजरात की दो यात्राएँ की प्रथम यात्रा के समय इनको, श्रीनाथजी का विरह हुआ था। इससे ये सम्वत १६३१ तक तो अवश्य विद्यमान थे। अनुमान है कि-फतहपुर सीकरी में अकबर बादशाह से कुंभनदासजी स० १६३८ में मिले होंगे श्रीओझाजी ने 'उदयपुर के इतिहास' (पृ. ४५६) मेंस० १६३८ माघ सुद ६ में अकबर के दरबार होने का उल्लेख किया है। इसी समय बादशाहने कुंभनदासजी को फतहपुर सीकरी बुलाया होगा। सूरदासजी की मृत्यु के समम जीवित होने के कारण इनका मृत्यु समय सं० १६४० के लगभग आन्योर के पास संकर्षणकुंड पर इन्होने शरीर छोड़ा आता है।

निवास स्थान— ब्रज में जमुनावतो।

रचना— कुंभनदासजी के रचित लगभग ४०० पद कांकरोली में संग्रहीत हैं। जिनका प्रमाणिक सपादन होचुका है और प्रकाशन होने वाला है। कुछ-प्रकीर्ण पद प्रकाशित हैं।

(४) कृष्णदास–

जन्म - लगभग सं० १५५४। चिलोतर गुजरात में। प्रमाण हरिरायजी कृत भावप्रकाश वाली वार्ता में, लिखा है कि-

कृष्णदास तेरह वर्ष की अवस्था में आचार्यश्री की शरण आये थे। इनका शरण-समय सं० १५६७ है।

माता, पिता आदि--इनके पिता कुनवी पटेल जातीय और गांव के मुखिया थे, धनलोलुप होने के कारण वे अपने असत्याचरण से भी धनोपार्जन करते थे। कृष्णदास बाल्यकाल ही से सत्य प्रेमी थे। पिता के इस आचरण के कारण वे १३ वर्ष की अवस्था में ही घर से निकल पड़े थे, इन्होंने अपना विवाह भी नहीं किया।

शिक्षा--इनकी आरम्भिक गुजराती भाषा की शिक्षा बाल्यकाल में चिलोतरा में ही हुई होगी, शरण आने पर वल्लभसम्प्रदाय में इन्होंने ब्रज-भाषा सीखी और काव्य में परम प्रवीणता प्राप्त की। व्यवहार में ये बडे कुशल थे।

सम्प्रदाय में प्रवेश--वल्लभ- दिग्विजय के अनुसार आचार्यजी सूरदास को सं० १६६७ में शरण लेकर जब मथुरा में विश्रान्तघाट पर आये तभी उन्होंने कृष्णदास को भी शरण लिया था।

सं० १५६० के लगभग गोस्वामी विट्ठलनाथजी ने इनको मंदिर का अधिकार सोंपा। नाथद्वार में मंदिर के कृष्ण भंडार का नाम इन्हीं के नाम पर अब तक चला आता है, और वहां का पत्र-व्यवहार आदि अधिकारी कृष्णदासजी के ही नाम से होता है।

अंतिम समय-गुसाईजी के सातों बालकों की बधाई में सातवें पुत्र घनश्यामजी के उल्लेख करने से पूर्ववत्

सं. १६२८ तक तो ये जीवित थे। एक पद "श्रीवल्लभ-कुल मंडन प्रगटे श्रीविट्ठलनाथ। श्रीघनस्याम लाल चल अविचल केलि कलोल" में इन्होने श्रीघनश्यामजी की बालक्रीडा का वर्णन किया है।

इस पद-रचना के समय घनश्यामजी की वय ४ वर्ष की भी मानें तो इस समय कृष्णदास की अवस्थिति स० १६३१ तक सिद्ध होती है।

कृष्णदास के बाद भंडारी चाँपाभाई श्रीनाथजी के मन्दिर के अधिकारी हुए, गुसांईजी सं० १६३१ की गुजरात-यात्रा में चाँपाभाई उनके साथ थे, सं० १६३८ की दूसरी यात्रा में नहीं। अतः अनुमान है कि सं० १६३८ के पहले कृष्णदास जी के निधन के बाद चांपाभाई को अधिकारी बना दिया गया था। अतः सं० १६३८ के लगभग पूँछरी के पास कुए में गिरकर इनकी मृत्यु हुई। यह कुआ 'कृष्णदास का कुआ' नाम से आज भी प्रसिद्ध है।

निवास—बिलछूकुंड

रचना--इनके लगभग ७०० पदों का संग्रह 'कृष्ण सागर' नाम से कांकरोली में उपलब्ध है। जो अप्रकाशित है कुछ पद प्रकाशित हैं।

(५) चत्रभुजदास

जन्म--सं० १५६७ (सम्प्रदाय कल्पद्रुम के आधार पर) जमुनावता गाँव गोवर्धन के समीप।

माता, पिता आदि--अष्टछाप के प्रसिद्ध भक्तकवि गोरवा क्षत्रिय कुँभनदासजी इनके पिता थे। ६ भाई इनसे बड़े थे। स्त्री के देहान्त के बाद अपनी जातिप्रथानुसार इन्होंने 'घरेजा' किया था। राघौदास नामक इनके एक पुत्र था।

संप्रदाय में प्रवेश--सम्प्रदाय कल्पद्रुम (पृष्ठ ५७) के अनुसार सं० १५६७ में गिरिधरजी के जन्म के बाद गोस्वामी विट्ठलनाथजी व्रज में आये, उस समय चतुर्भुजदास को उन्होंने शरण-दीक्षा दी। वार्ता से ज्ञात है कि-चतुर्भुजदास को इकतालीसवें दिन इनके पिताने गुसांईजो के द्वारा समर्पण कराया था।

शिक्षा--इनकी शिक्षा वल्लभसम्प्रदाय में ही हुई। पदों से ज्ञात होता है कि-यह संस्कृत के अच्छे जानकार थे। गानविद्या कविता-शक्ति इन्होंने अपने पिता से प्राप्त की थी।

अन्तिम समय-- गो० विट्ठलनाथजी के गोलोकवास के बाद ही सं० १६४२ में।

गोसाँईजी के सात बालकों की बधाई इन्होंने भी गाई है इसलिए सं० १६२८ तक इनकी स्थिति में तो कोई सन्देह नहीं है। सम्वत १६६७ की वार्ता के लेखानुसार गो० विट्ठलनाथजी के परलोकवास पर विरह में इन्होंने उन की प्रशंसा और स्मृति के पद गाकर रुद्रकुन्ड के ऊपर इमली के वृक्ष के नीचे इन्होंने देह छोड़ दी।

निवासस्थान--जमुनावती

रचना--पद कीर्तन। इनके लगभग २०० पदों का संग्रह कांकरोली में विद्यमान है। कुछ पद प्रकाशित हो चुके हैं।

(६) नन्ददास

जन्म संवत-- सं० १५९० (अनुमान तः) के आसपास रामपुर

माता, पिता आदि– इनके मातापिता का उल्लेख नहीं है ये सारस्वत ब्राह्मण थे। सं० १६९७ की वार्ता में तुलसीदासजी को इनका भाई कहा है। सोरों में प्राप्त ग्रन्थों आधार से:— इनके पिता का नाम जीवाराम था, जो नन्ददास के बाल्य काल में ही दिवंगत हो गए थे। इनका विवाह हुआ था। इनके कृष्णदास नामक एक पुत्र भी था।

शिक्षा—इनको गान-विद्या का बड़ा शौक था और ये अच्छे विद्वान थे। कविता किया करते थे। सम्प्रदाय में आने से पहिले ये रामानन्दी-सम्प्रदाय के शिष्य थे। सोरों में प्राप्त ग्रन्थों में इनके शिक्षा-गुरु का नाम पं. नरसिंह सूकरक्षेत्र-निवासी विदित होता है।

संप्रदाय में प्रवेश—वार्ता से अवगत होता है कि-ये पहले बहुत विलासी थे। किसी स्त्री के रूप पर मोहित होने के बाद गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी के प्रभाव से इनके मन की आसक्ति पलटी और ये भक्त बने। सं० १६०९ के लगभग गोस्वामीजी, की शरण आये और सूरदासजी के कथन से ग्रहस्थ हुए, उनके एक सन्तान हुई और फिर वे सं. १६२४ के आस पास पुनः श्रीनाथजी की कीर्तन सेवा में आए।

" नन्द-नन्दनदास-हित साहित्यलहरी कीन " सूरदास के इस कथन के अनुसार ' नंद-नंदनदास ' शब्द नंददास के लिये संभवसः प्रयुक्त हुआ है। ऐसा माना जाता है कि:

सूरदासने साहित्यलहरी की रचना (सं० १६०७ में) इन्हीं के लिये की थी।

अन्तिम समय :—वार्ता में लिखा है कि-नंददास की मृत्यु गोवर्धन मानसीगंगा पर अकबर और बीरबल के सामने हुई। इससे ज्ञात होता है कि नन्ददास की मृत्यु वीरबल की मृत्यु सं० १६४७ से बहुत पहिले हुई होगी। नन्ददास की मृत्यु के समय गोस्वामी श्रीविट्ठलनाथजी जीवित थे। ऐसा वार्ता में भी लिखा है। गुसांईजी के गोलोकवास के समय सं० १६४२ के लगभग इनका अन्तिम समय मानना चाहिये। अकबर बादशाह और वीरबल ब्रज में मानसी गंगा पर इसी समय आये होगें।

निवास—गोवर्धन मानसी गंगा।

रचना :—नन्ददास ने छंद और पद दोनों ही शैलियों में रचनाए की हैं। इनकी छन्दरचनाए प्रायः बहुत छोटे ग्रन्थ के आकार की हैं। इनके निम्न लिखित ग्रन्थ हैं। १. रास पंचाध्यायी, २. सिद्धान्त पंचाध्यायी, ३. भ्रमर गीत ४. पंचमंजरी (विरहमंजरी, रसमंजरी, रूपमजरी, अनेकार्थमंजरी, और मानमंजरी) ५. दशम स्कन्ध-भाषा २८ अध्याय. ६. रूक्मिणी मंगल ७. श्यामसगाई ८. सुदामा-चरित्र ९. गोवर्धन लीला।

इनके लगभग ४०० पद उपलब्ध होते है। कुछ पद प्रकाशित हो चुके हैं शेष बहुत से बाकी है, इनके ग्रन्थ 'नन्ददास ग्रन्थावली' नाम से प्रयाग विश्व विद्यालय से प्रकाशित हो चुके हैं। इनकी शैली लिखने की समकक्षता अन्य को प्राप्त नहीं

है। इनके विषय में कहावत प्रसिद्ध है " और सब गढ़िया नंददास जड़िया।"

(७) छीतस्वामी

जन्म—संवत १५७२ (अनुमानतः) मथुरा।

माता, पिता आदि-इनके मातापिता के विषय में विशेष वृत्तान्त ज्ञात नहीं है। ये चतुर्वेदी ब्राह्मण और बीरबल के पुरोहित थे। ये गृहस्थी थे ऐसा वार्ता से अनुमान होता है।

शिक्षा—सम्प्रदाय में आने से पूर्व ये लम्पट स्वभाव के पुरुष थे। ये शरण में आने से पहले काव्य-रचना भी किया करते थे। गोस्वामी विट्ठलनाथजी के चमत्कार से उनके चित्त की वृत्ति गुंडापने से हट कर सदाचार की ओर लग गई और बाद में कीर्तन-सेवा में रहकर अष्टछाप में इन्होंने स्थान पाया।

संप्रदायमें प्रवेश-सं० १५६२ में गुसांईजी की शरण आये (सम्प्रदाय कल्पद्रुम पृ. ५५)

निवास—गिरिराज पूंछरी स्थान

रचना—इनके प्रायः २०० पद मिलते हैं। इनकी भाषा सरल और स्पष्ट है। कुछ पद प्रकाशित हैं।

अन्तिम समय--सम्वत् १६४२.

श्रीगिरिधरलाल के १२० वचनामृत के अनुसारः-श्रीगुसांईजी के गोलोकवास के दुःखद समाचार को सुन कर छीतस्वामी को

मूर्छा आ गई। उसी समय श्रीनाथजीने इन्हे दर्शन दिये और इसी समय छीतस्वामीने गुसाँईजी के सात बालकों का "विहरत सातों रूप धरे" यह पद गाकर देह छोड़ दी।

—):o:(—

(८) गोविन्दस्वामी

जन्म— सं० १५६२ अनुमान से। आँतरी ग्राम (भरतपुर राज्य)

माता, पिता आदि–इस विषय में कोई वृत्तान्त ज्ञात नहीं होता। यह सनाढ्य ब्राह्मण थे। वार्ता के कथनानुसार ये सम्प्रदाय में दीक्षित होने से पहले गृहस्थ थे और इनके एक लड़की भी थी। कुछ समय बाद इन्होंने घर छोड़ दिया। उनके कान्हबाई एक बहन भी थी जो इन्हीं के साथ रहती थी।

शिक्षा—सम्प्रदाय में आने से पहले ये कवि और गायक भी थे। गानविद्या में ये आचार्य समझे जाते थे। ऐसा प्राप्त है कि अकबरी दरबारके एक रत्न और स्वामी हरिदासजी के शिष्य तानसेन इनसे संगीत सीखने के लिये इनकी ही प्रेरणा से श्रीगुसाईजी के शिष्य हुए थे।

संप्रदाय में प्रवेश—स० १५६२ (सम्प्रदाय–कल्पद्रुम पृ० ५५)। वार्ता से विदित होता है कि–गृहस्थाश्रम में रहने के समय तक इनकी काव्य-सँगीत में अच्छी ख्याति हो चुकी थी, बहुत से लोग इनके सेवक हो गये थे और ये स्वामी' कहलाते थे। भगवत्प्राप्ति की प्रेरणा से ये त्यागी होकर

ब्रज में आये और महावन में रहने लगे। वहाँ पर भी ये पद बनाकर भगवत्-कीर्तन करते थे। जब ये गोस्वामीजी की शरण में आये उस समय इनकी अवस्था कम से कम ३० वर्ष की अवश्य होगी।

निवास—ये महावन के टीलों पर बैठकर बहुधा पद गाया करते थे। गिरिराज की कदमखँडी पर इनका निवास स्थान था, जो गोविंदस्वामी की कदमखँडी के नाम से प्रसिद्ध है।

अन्तिम समय—सँ० १६४२। गोविंदस्वामी ने भी गुसाईंजी के सातों बालकों की बधाई गाई है, इस लिये इनकी स्थिति सँ० १६२८ तक तो सिद्ध ही है। श्रीगिरिधरलालजी के १२० वचनामृत नामक ग्रन्थ के अनुसार जब सँ० १६४२ में गोस्वामी विठलनाथजी लीला में पधारे तभी गोविन्द स्वामी ने भी देह-सहित गोवर्द्धन की कन्दरा में प्रवेश किया और अन्तर्हित हो गये।

अभीतक के अन्वेषण और विद्वानों के मन्तव्यों के आधार पर अष्टछाप के उक्त चरित्र की रूप रेखा सम्पन्न की गई है।

———*———

श्रीद्वारकेशो जयति

वक्तव्य।

वार्ता-प्रकाशन-

श्रीद्वारकेश प्रभु के अनुग्रह से प्रेरित होकर आज हम फिर प्राचीन वार्ता-रहस्य का द्वितीय भाग (अष्टछाप) साहित्य-सेवियों के आगे उपस्थित कर रहे हैं। सं० १९९६ में प्रकाशित प्रथम भाग में चौरासी वार्ताओं की प्रथम आठ वार्ताएं; हरिरायजी के भावप्रकाश परिशिष्ट में श्रीनाथदेव-कृत संस्कृत वार्ता-मणि-माला के साथ छपाई गई थीं, और सं० १९९८ में द्वि० भाग के रूप में अष्टछाप की वार्ताएं गुजराती-विवेचन के साथ प्रकाशित हुई। यह भाग लगभग दो वर्ष के भीतर ही अप्राप्य हो गया। कहना न होगा कि-इस अष्टछाप की वार्ता का मौलिक उपयोग हुआ, इस दिशा में निर्धारित तत्वों के आधार पर हिन्दी-साहित्य जगत ने अष्टछाप की वार्ता और उसके सूरदास आदि चरित नायकों के जीवन-चरित्र की रूप रेखा को स्थायित्व प्रदान किया *। हर्ष है कि-प्रस्तुत प्रयास से एक आवश्यक जिज्ञासा का समाधान हुआ, और तद्विषय के विद्वान् इदमित्थ निश्चय पर आ पहुचे।

---

* देखो डा० दीनदयाल गुप्त एम. ए लखनऊ द्वारा रचित "अष्टछाप और वल्लभ-संप्रदाय" नामक ग्रन्थ।
श्रीप्रभुदयाल मीत्तल मथुरा द्वारा रचित 'अष्टछाप-परिचय' और "सूर-निर्णय" आदि।

स. २००४ में प्रा० वा० रहस्य का तृतीय भाग प्रकाशित किया गया जिसमें ८४ वार्ताओं में से ६ से १६ तक वार्ताएं भाव-प्रकाश के साथ प्रकाशित की गईं। उल्लिखित वैष्णवों का गुजराती में विवेचन और श्रीनाथदेव की संस्कृत-वार्ता मणि-माला का आवश्यक अंश भी उसमें दिया गया था।

जैसा कि हमारा और प्रस्तुत कार्य के हमारे सहयोगी द्वारकादासजी परिख का आयोजन था, समग्र वार्ताएं इसी ढंग से खंड रूप में प्रकाशित कराते रहने का कार्य चल रहा था, सामयिक परिस्थितिओं के कारण उसमें थोड़ी-सी शिथिलता अवश्य आरही थी, पर न जाने ऐसा कौनसा महान कारण आ उपस्थित हुआ? कि परिखजी ने विद्या-विभाग से विमनस्क होकर इस दिशा मे अपना निजू स्वतंत्र प्रयास प्रारंभ कर दिया। सं० २००५ में उन्होंने तथ कथित सं० १७५२ वाली वार्ता प्रति के आधार पर भाव-प्रकाश सहित समग्र ८४ वार्ताएं 'अग्रवाल प्रेस' मथुरा के सहयोग से प्रकाशित कीं वार्ता-साहित्य के संकलीकृत्य इस पूर्ण प्रकाशन से यह एक उत्तम कार्य हुआ तथापि प्रकाशन की लोलुपताजन्य त्वरा के कारण व्रजभाषा की अमूल्य निधि वार्ताओं की मौलिकता, शुद्धता एवं तात्त्विक विश्लेषण का अवसर नहीं आने पाया जो– अत्यावश्यक था। तत्सम्बन्ध में हम दोनों की विचार धाराएं दो विभिन्न दिशाओं की ओर प्रवाहित हो गईं जिन्हे संगमस्थली प्राप्त न हो सकी, वार्ताओं की निश्चित रूपता, प्रामाणिकता, शुद्धरूपता भावप्रकाश का निश्चित अंश तथा ऐतिह्य दृष्टि-कोण आदि सभी विभिन्न २ हो गये।

सं० २००० के लगभग 'अष्टछाप' के दूसरे संस्करण की माँग सामने आई, पर द्वितीय विश्वयुद्ध की परिस्थितियों ने इसे पूरा न होने दिया। स० २००६ तक ऐसा अवसर न आ पाया न आ पाया इसी बीच में परिखजी ने भाव-प्रकाश सहित 'अष्टछाप' की वार्ताए स्वतन्त्रतया प्रकाशित कर हमारी इस इच्छा पर और भी अनावश्यकता का पुट दे डाला। उक्त दोनों प्रकाशनों को देखकर विद्याविभाग को अपना वार्ता-साहित्य का उस ढंग का प्रकाशन स्थगितसा कर देना पड़ा, जिसका फल लम्बे समय तक अकिंचित्करता के रूप में आया। फिर भी साहित्यिक कार्य तो चालू ही रहा, अष्टछाप के अन्यतम कवि परमानन्ददास, गोविन्ददास, कुंभनदास आदि के पदों का प्रामाणिक संपादन किया जाता रहा। लगभग २००० पदों के साहित्य वाला परमानन्ददास का पद-साहित्य (परमानन्द सागर) सम्पादित हो चुका है और प्रकाशन की वाट जोह रहा है। 'गोविन्दस्वामी' के लगभग ५०० पदों का संग्रह तो 'गोविन्दस्वामी' के नाम से अभी कुछ महिने पूर्व प्रकाशित हो चुका है, और कुंभनदास का संग्रह प्रेस में देने का विचार चल रहा है। आत्म-प्रशंसा नहीं तथ्य है- हिन्दी-साहित्य में इस दिशा से एक आवश्यक और अभिनन्दनीय कार्य सम्पन्न हुआ और होरहा है। सूरदासजी का 'सूरसागर' काशी नागरी प्रचारिणी सभा ने प्रकाशित कर एक महान कार्य किया है, और शेष अष्टछापी कवियों के साहित्य-प्रकाशन के लिये विद्याविभाग प्रयत्न शील है

वार्ता-प्रतियों का असामञ्जस्य—

द्वितीय भाग का सम्पादन करते समय परिखजी' और 'अग्रवाल प्रेस' द्वारा प्रकाशित ८४ वार्ता और

भाव-प्रकाश को देख कर एक बड़ा कुतूहल उत्पन्न हुआ, समाधान के लिये मैंने सं० १६६७ वाली वार्ता-प्रति* को सम्पादित कर देखना प्रारंभ किया तो आपाततः कई प्रश्न सामने आये, जिनका समाधान करना अनिवार्य सा हो गया वे इस प्रकार हैं।

सौकर्यार्थ सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति को हम 'क' सकेत और सं० १७५२ वाली प्रति को 'ख' नाम से संबोधित करेंगे।

१. 'क' और 'ख' वार्ता-प्रतियों में परस्पर वार्ता-कथानक की न्यूनाधिकता परिलक्षित होती है।

२ 'क' प्रति की अपेक्षा 'ख' प्रति में चलते प्रसगों में स्पष्टीकरण और विवरण के लिये बीच २ में शब्द और वाक्य अधिक मिलते हैं।

३. 'क' प्रति की अपेक्षा 'ख' प्रति मे कुछ प्रसंग अधिक है।

४ 'ख' प्रति के जिस अंश को भाव-प्रकाश समझ कर प्रकाशित किया गया है, वह 'क' प्रति में कहीं-कहीं मूल वार्ता का ही अंश है।

५. दोनों प्रतियों के शब्दों और विभक्तियों में साधारणतया अन्तर है।

---

* सरस्वती-भंडार हिन्दी विभाग बंध ६८ पु. २
विद्याविभाग कांकरोली में विद्यमान।

६. दोनों में कहीं पाठान्तर और कहीं पर्यायवाची शब्दों का भी प्रयोग हुआ है, आदि

सम्पादन की पद्धति—

सम्पादन में इस उलझन को कैसे सुलझाया जाय ? और परस्पर विभिन्नता का समकीरण कैसे हो ? इसके लिये कुछ समय तक विचारमग्न रहना पड़ा। अन्त में निम्न लिखित निर्धार स्वीकार कर वार्ता का सम्पादन प्रारंभ किया गया।

१. 'क' प्रति को मूलाधार मानकर उसी की वार्ताओं को प्रथम वार्ता, द्वितीय वार्ता आदि नाम देकर प्रधानता दी गई, और 'ख' प्रति मे जिन कथानकों में न्यूनाधिकता दीखी वहां फुट नोट में उसका निर्देश किया गया *

२. 'क' प्रति की अपेक्षा 'ख' प्रति में चलते प्रसंगों में स्पष्टीकरण और विवरण के लिये बढाए गये शब्दों को वाक्य की सामञ्जस्यता बैठाते हुए मूल वार्ता में कोष्ठान्तर्गत रूप में दिया गया है, जिससे दोनों की विभिन्नता भी परिलक्षित हो सके और उनकी प्रामाणिक एकवाक्यता भी बिगड़ने न पाए। जैसे..

.. अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक सूरदासजी (सारस्वत ब्राह्मण दिल्ली के पास सिहीं ग्राम है तहां रहते) तिनके पद गाइयत है *

---

* देखो प्रस्तुत ग्रन्थ पत्र .. ४१,४५,५७, ६५,७० आदि के फुट नोट.

* इस प्रकार सर्वत्र फुट नोट की सूचना और कहीं उसके विना भी मूल वार्ता में कोष्ठान्तर्गत शब्दादि 'ख' प्रति के ही दिये गये हैं।

यहाँ 'ख' प्रति के असाधारण शब्दों और वाक्यों को ही कोष्ठ के अन्तर्गत स्थान दिया गया है।

३. 'क' प्रति की अपेक्षा 'ख' प्रतिके भीतर अधिक उपलब्ध प्रसगों को 'वार्ता-प्रसंग' शीर्षक इस नाम से दिया गया है। वार्ताओं के बीच में मिलते है तो बीच में और बाद मे मिलते है तो बाद में. +

४. भाव प्रकाश के विषय में कुछ प्रासंगिक विवेचन आवश्यक है जो यहां देना अस्थाने न होगा.

भावप्रकाश का रूप।

वास्तव में देखा जाय तो श्रीहरिरायजी-कृत टिप्पण का नाम 'भाव-प्रकाश' मौलिक रूप में नहीं मिलता। 'ताको भाव कहत हैं', 'तहाँ संदेह होत है' ताको, हेतु यह है' आदि शब्दों से प्रारंभ होने वाले वाक्यों को भाव-प्रकाश समझा जाता है, पर प्रस्तुत वार्ता में जिनके नीचे नोट दिया गया है, वहाँ भी कई स्थानों पर ऐसे वाक्य मिलते हैं। वार्ता में कई स्थलों पर लिखा मिलता है कि-"ताकौ भाव श्रीहरिरायजी आज्ञा करत है". यह वाक्य एसा है जो न तो मूल वार्ता का ही हो सकता है और न श्रीहरिरायजी का ही। इसके अतिरिक्त कि इसे प्रतिलिपिकार का लेख माना जाय ? और कोई गति नहीं है. * गत दिनों में शुद्धाद्वैत एकेडेमी कांकरोली से

+ देखो प्रस्तुत ग्रन्थ-पत्र. ५७, ६५, ७०, ७६, ६० आदि.

* देखो.... शुद्धाद्वैत एकेडेमी कांकरोली द्वारा प्रकाशित 'दोसो बावन वैष्णव की वार्ता-पत्र १ .. 'अब दो सौ बावन वैष्णवन की वार्ता गोकुलनाथ जी प्रगट किये, ताकौ भाव श्रीहरिरायजी कहत हैं सो लिख्यते, आदि वार्ता प्रारंभ के शीर्षक...

प्रकाशित हुई भाव-प्रकाश वाली २५२ वैष्णव की वार्ता देखने से इस कथन की पुष्टि हो सकती है। प्रस्तुत विषय में यह संभव है कि श्रीहरिरायजी ने अपनी निज की वार्ता-प्रति में विवरण और स्पष्टीकरण के लिये किसी समय टिप्पण किया होगा, जिसे उनके सम-सामयिक किसी वार्ता-प्रति-लिपिकार ने विसेद बतलाने के लिये लिखा हो- "ताकौ भाव श्रीहरिराय जी कहत हैं। इस प्रकार वार्ता के अंशों पर प्रकाश डालने के' कारण संभवतः इस का नाम भाव-प्रकाश होगया। इसका एक प्रतिफल यह भी हुआ कि-'भाव' और 'हेतु' शब्द से प्रारंभ होनेवाले वार्ता के मूल अंश भी हरिरायजी कृत समझ लिये गये। ऐसा होने पर भी यह तो मानना ही पडेगा कि-हरिरायजी ने वार्ता पर टिप्पण किया है और वह प्राप्त है, फिर उसका नाम चाहे जो हो? परन्तु इसका विश्लेषण बड़ी गंभीरता और अध्ययन-वृत्ति से करने की आवश्यकता है।

'भावप्रकाश' वाली मूल प्रति परिखजी द्वारकादासजी के पास विद्यमान है, जो-सं० १७५२ की लिखी कही जाती है विद्याविभाग कांकरोली में भाव-प्रकाश संयुक्त कोई वार्ता की प्रति सम्प्रति प्राप्त नहीं है, जिस पर कुछ कहा जाय। यह तो निःसन्देह कहा जासकता है कि-ऐसी कोई प्रति नहीं है जिसमें वार्ता और भाव-प्रकाश दोनों ऐसे रूप में लिखे गये हों जिनसे उनका वर्गीकरण हो सके। धारावाहिक रूप में चालू पंक्तियों में लिखी गई कई प्रतियाँ तो अवश्य उपलब्ध होती हैं। इस भावप्रकाश से वार्ता के आधिदैविक और ऐतिहासिक अंश पर अच्छा प्रकाश पडता है, यह निर्विवाद है।

जैसा कि प्राचीन वार्ता-रहस्य के प्र० भाग में लिखा गया था, हरिरायजी कृत भाव-प्रकाश की रचना सं० १७२९

तक नहीं हुई थी। भावप्रकाश की रचना सं० १७३५ के लगभग हुई है *। श्रीहरिरायजी का समय सं० १६४५ या ४८ से लेकर सं० १७७२ या ७५ तक माना जाता है" ×। उन्होने प्रदेश-यात्राओं में जानकारी प्राप्त कर वार्ता सम्बन्धी ऐतिह्य का संकलन किया और शास्त्रों के पर्यालोचन द्वारा उसके आधिदैविक रहस्य का चिन्तन किया, फलतः जिज्ञासुओं के लिये उन्होंने एक ऐसी देन दी जो-उनके अभाव में प्राप्त न हो सकती, + अतः एसे विवरणों को हम निश्चित रूप में भावप्रकाश मान सकते हैं, शेष के लिये प्राचीन वार्ताओं के समन्वय द्वारा जब कभी भी निर्धार तो करना ही होगा।

पाठ-सम्वाद—

५. दोनों प्रतियों के शब्दों और विभक्तियों के पार्थक्य के सम्बन्ध मे 'क' प्रति का पाठ ही आधार माना गया है, और 'ख' प्रति के ऐसे शब्दों की उपेक्षा कर दी गई है जो-अनावश्यक है, अथवा पर्याय वाची। हाँ जो- शब्द वाक्यों में जुड जाते हैं, उन्हें कोष्ठक के भीतर दिया ही गया है। S

---

* हरिरायजी के शिष्य विट्ठलनाथ भट्ट ने स्वरचि 'संप्रदाय-कल्पद्रुम' में हरिरायजी कृत ग्रन्थों की सूची दी है, उसमें भाव-प्रकाश का नाम नहीं मिलता। इस ग्रन्थ की रचना सं० १७२६ मे हुई है।

× "श्रीहरिरायजी नु जीवन चरित्र" नामक डा० परिख द्वारा प्रकाशित ग्रन्थ से।

+ भाव प्रकाश केपर्यालोचन से विदित होगा।

S प्रस्तुत ग्रन्थ में यथा स्थान ऐसी विशेषता परिलक्षित होगी

६. जहाँ वाक्यों अथवा महावाक्यों में अर्थान्तर के कारण दोनों प्रतियों में समानता नहीं आई वहां 'ख' प्रति का पाठ-भेद फुट नोट में दिया गया है, वह एक प्रकार से पाठान्तर समझना चाहिये। *

इस प्रकार प्राचीनतम वार्ता-प्रति और भावप्रकाश वाली वार्ता-प्रति दोनों का सम्वाद करते हुए नवीन दृष्टि से प्रस्तुत संस्करण सन्नद्ध किया गया है इससे तद्विषय के अध्ययनप्रिय एवं जिज्ञासुओं के लिये कुछ तत्वों का परिज्ञान होगा, जो इस प्रकार है—

(क) दोनों प्रतियों में वार्ता का किस प्रकार क्रमिक विकास हुआ है, (ख) प्राचीनतम प्रति की अपेक्षा आधुनिक प्रति में प्रमाणिकता को ठेस पहुंचाने वाला कोई परिवर्तन नहीं हुआ है जिससे वार्ता का रूप ही अस्तव्यस्त होजाय। (ग) 'ख' प्रति में जो भी परिवर्द्धन हुआ है, वह स्पष्टीकरण किम्वा विवरण के लिये है। उससे किन्हीं जिज्ञासाओं का समाधान ही होता है। आदि, आदि।

'चौरासी' और 'दोसो' बावन वैष्णवन की वार्ता की रचना, उसके रचयिता, प्रमाणिकता और संस्करणों के सम्बन्ध में प्रस्तुत ग्रन्थ के प्रथम संस्करण की भूमिका में मैंने बहुत कुछ लिखा था, उसका यहाँ पुनः स्पष्टीकरण चर्वित चर्वण ही होगा। प्रमाण और विस्तृत विवेचना के साथ पृथक रूप में हम उसे 'पुष्टिमार्गीय हिन्दी-गद्य-साहित्य' नामक निबन्ध में संगठित कर पाठकों के सन्मुख उपस्थित

---

* देखो-प्रस्तुत ग्रन्थ, पत्र १११, १३६, १६७, १७१, आदि.

करेंगे, यहां देना भूमिका का कलेवर बढ़ाना ही है। हमारी इस लिखित विचार-धारा का परिणाम अच्छा हुआ, साहित्य-जगत में व्रजभाषा के प्रेमी विद्वानों ने उसका स्वागत किया और स्वकीय ग्रन्थों में उचित उपयोग, भी जो-आदरास्पद है।

प्रस्तुत संस्करण की विशेषता :—

प्रस्तुत ग्रन्थ में प्रथम संस्करण की अपेक्षा कुछ विशेषताएँ रखी गई हैं, जिन पर कुछ कहना असामयिक नहीं है।

१. उन भाविक वैष्णवों की इच्छा का समादर कर वार्ता का टाइप बडा दिया गया है, जो- भगवन्मण्डलियों में इसका प्रवचन कर अपना नित्य-नियम पूरा करते हैं।

२. 'क' प्रति में आए हुए 'अष्टछाप' के कवियों के पद समग्र रूप में यथोपलब्ध पाठान्तर के साथ दिये गये हैं, और अन्त में उनकी अनुक्रमणिका भी। 'ख' प्रति में आये हुए पदों को एक तो विस्तार-भय से और दूसरे उन्हे गौण समझ कर प्रतीकमात्र रूप में दिया गया हैं। ग्रन्थ के अन्तर और सूची में कोष्ठान्तर्गत प्रतीकें मात्र प्रतीक हैं, वे पूर्ण पद नहीं हैं।

व्रजभाषा के शब्दों का शुद्ध रूप, प्राचीन से प्राचीन प्रामाणिक हस्तलिखित व्रजभाषा के ग्रन्थों का पर्यालोचन करने के अनन्तर ही निर्धारित हो सकता है। विधि की विडम्बना है कि-हिन्दी साहित्य के गंभीरचेता विद्वानों के पास ऐसे ग्रन्थ सुलभ नहीं है जिनका वे उपयोग कर सके, और जिस वैष्णव सम्प्रदाय की यह निधियां है

वहाँ के सरस्वती-भंडार यत्राविस्त बने हुए हैं, इन-ग्रन्थों का उपयोग इल्लियाँ, मकडी; दीमक और चूहे कर रहे है। सच्चे अर्थ में रागभोग में फंसे हुए इनके अधिपति 'नोपभोक्तुं न च त्यक्तुं शक्नोति' की स्थिति में है। अस्तु।

ब्रजभाषाः—

हां तो- ब्रजभाषा के शब्दों के मौलिक रूप के निर्वाचन में प्राचीन शुद्ध हस्तलिखित ग्रन्थों की आवश्यकता है, इस दिशा में कांकरोली विद्या-विभाग में सप्राप्त सूरदास,परमानन्द दास आदि अष्टछापी कवियों के पद-संग्रह और वार्ता-साहित्य की प्रामाणिक प्रतियां ही अधिक उपयोगी वस्तुएं हैं। इन ग्रंथों की प्रतियों से ब्रजभाषा के शब्दों का एक निश्चित रूप सामने आ सकता है।

वार्ता की 'क' संज्ञक प्रति में प्रतिलिपिकार की असावधानी तो नहीं है, पर शब्दों के दोनों रूप यत्र तत्र मिलते हैं, इसी प्रकार उक्त पदसंग्रहों में भी।

दृष्टान्तार्थ-न और ण के रूप मे :-गुन गुण,मणि मनि कारन कारण, पूर्ण पूरन लिखा मिलता है। शब्दों में विशेष स्वर सयोजन में:-बहुत, बोहोत, बहोत, आजु आज, उपजतु उपजत, बिनु बिन, सगरे सिगरे आदि रूपान्तर मिलते हैं। स और श के परिवर्तन की भी यही दशा है :— दर्शन दर्सन, केशव केसव, सरन शरण, स्याम श्याम, सोभा शोभा आदि हैं। क्रियान्तस्थ 'ए'कार 'ओ'कार के रूप में :— गए गये, आये आए, लीनिये लीजिए आदि का उदाहरण दिया जासकता है। सम्प्रसारण में :— समय, समै समौ, आओ आवो राइ राय, अवसर औसर, वह उह इत्यादि का समावेश होता है संयुक्ताक्षर

में :— क्लेश क्लेश, संस्कार संसकार भी मिल जाते हैं। ह्रस्व दीर्घ विपर्यास में:- भितरिया भीतरिया, सरिखे सरीखे, गुसाँइजी गुसाँईजी आदि पर ध्यान जाता है। कहने का तात्पर्य यह कि व्रजभाषा में प्रान्तीय अवध, बुन्देलखंडी, राजस्थानी आदि भाषाओं और लिपियों का समावेश होजाने के कारण एक प्रकार से उसका इदमित्थ रूप निर्धारित करना सरल नहीं है, भाषा और लिपी की व्यापकता और असंकोच को देखते हुए उसे व्याकरण के कठोर नियमों मे जकड़ कर पंगु यद्यपि हमें नहीं बनाना चाहिये फिर भी उसका कुछ न कुछ सर्वमान्य रूप तो निश्चित करना ही पड़ेगा, जो विद्वानों के क्रिया-कौशल पर निर्भर है,

अष्टसखाओं का क्रमः—

अष्टछाप के महानुभावी कवियों के पौर्वापर्य का विचार करते समय हमे उस के कई क्रम मिलते है. जैसेः—

१. विद्याविभाग से प्रकाशित अष्टछाप के प्रथम संस्करण में जिस क्रम से वार्ताएं दी गई थीं उनमें सूरदास, परमानन्ददास, कुम्भनदास, कृष्णदास और छीतस्वामी गोविन्दस्वामी, चत्रभुजदास एवं नन्ददास इस प्रकार से सकलन किया गया था जो-वार्ता की 'ख' प्रति के आधार पर था।

२. डा० दीनदयाल जी गुप्त एम. ए लखनऊ अपने 'अष्टछाप और वल्लभ संप्रदाय' नामक ग्रन्थ में प्रथम चतुष्टय को यथावस्थित रखकर अवशिष्ट में नन्ददास,

चत्रभुजदास, गोविन्दस्वामी और छीतस्वामी का क्रम स्वीकार करते हैं.

३. प्रभुदयालजी मीतल मथुरा स्वकीय 'अष्टछाप परिचय' मे वयःक्रम से इनका परिचय प्रस्तुत करते हैं, यद्यपि सूरदास और कुम्भनदास के सिवाय अन्य किसी का जन्म-समय पूर्ण प्रमाणिक रूप से निर्णीत नहीं हो पाया है। वे कुंभन दास, सूरदास, परमानन्ददास, कृष्णदास के अनन्तर गोविन्दस्वामी, छीतस्वामी, चत्रभुजदास और नदन्दास इस प्रकार परिचय प्रस्तुत करते हैं।

४. गो० हरिरायजी गो० द्वारकेशजी . रसिकदास भट्टूजी महाराज अपने पद्यों में जिस क्रम को स्थान देते ,हैं उसके लिये तो छन्द-रचना की शब्द-बैठकी ही कारण है, उस क्रम केनिर्देशक पद्य इस प्रकार है:—

हरिरायजी:—

सूरदास सिर पगा विराजे कृष्णदास मुकुट मणि राजे।
ग्वालपगा परमानन्द भ्राजे कुंभनदास कुल्हे सिरताजे ॥
गोविन्दस्वामी टिपारे साजे चत्रभुजदास डुमाले गाजे।
फेटा नन्द अनंगन लाजे सेहरा छीतस्वामी सघन समाजे ॥
नित्यलीला भक्तहित-काजे. दरसन अष्ट उपाधी भाजे. ॥ १ ॥
कुंभन दास महारस कंद, प्रेम भरे निज परमानन्द ॥
छीतस्वामी गावै सब कोउ, बांधै हरिगुण सूर चहू ॥
कृष्णदास जो पावन करै, चत्रभुजदास कीर्तन उच्चरै. ।
नन्ददास सदा आनन्द, गुण गावै स्वामीगोविन्द. ॥
रसिक यहीं श्रवननि राखे, श्रीवल्लभ-वानी मुख भाखे. ॥ २ ॥

द्वा-केशजीः—

सूरदास सो कृष्ण तोक पमानन्द जानो।
कृष्णदास सो रिपभ छीतस्वामी सुबल बखानो॥
अर्जुन कुँभनदास चत्रभुजदास विशाला।
नन्ददास सो भोज स्वामी गोविन्द श्रीदामा (?)
अष्टछाप आठों सखा 'द्वारकेश' परमान।
जिनके कृत गुनगान करि होत सुजीवन थान॥१॥
श्रीमट्टूजी महाराज।
जो जन अष्टछाप गुन गावत।
चित्त निरोध होत ताही छिन हरि-लीला दरसावत।
सूर सूर जस हृदै प्रकासत परमानन्द बढावत।
छीतस्वामी गोविन्द जुगल बस तन पुलकित जल आवत॥
कुँभनदास चत्रभुजदास गिरि-लीला प्रगटावत।
तरुण किसोर रसिक नंदनंदन पूरन भाव जनावत॥
नन्ददास कृष्णदास रास-रस उछलित अंग अंग नचावत।
'रसिकदास' जन कहां लों बरनै श्रीवलभ मन भावत ?॥

—)-:o:-(—

जैसा कि पहिले कहा गया है— इन पद्यों में कोई मौलिक क्रम नहीं है। छन्द-रचना अथवा वर्ण्य विषय की सापेक्षता से अवस्थित नाम निर्देश किया गया है।

५. सं० १६९७ वाली वार्ता-प्रति के आधार पर प्रस्तुत ग्रन्थ में इनका क्रम इस प्रकार दिया गया है:— सूरदास,

परमानन्ददास, कुँभनदास, कृष्णदास, तथा चत्रभुजदास, नन्ददास, छीतस्वामी और गोविन्दस्वामी।

अष्टछाप की वार्ताः—

यह तो निर्विवाद है कि इन में प्रथम चार श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु के और शेष चार श्रीविट्ठलनाथजी के सेवक है। इसी को लक्ष्य में रखकर प्रस्तुत पुस्तक में प्रथम खंड और द्वितीय खंड, यह विभाजन किया गया है। प्रथम चतुष्टय की वार्ताए ८४ वार्ता के अन्त में और शेष चार की वार्ताए २५२ वैष्णवों की वार्ता में जहाँ-तहाँ संकलित हैं। इन दोनों वार्ताओं से संकलित कर 'अष्टछाप की वार्ताए' प्रथक रूप में भी लिखी मिलती हैं। ८४ वार्ता में अतिशय प्रसिद्ध उक्त चार महानुभावों को अन्तिम क्रम-संख्या में क्यों दिया गया है? यह एक समाधेय और गवेषणीय पहेलिका है। इसीप्रकार गुसाँईजी के सेवकों में अन्तिम चार को भी संख्या के दृष्टिकोण से कोई विशिष्ट स्थान नहीं मिला है। २५२ वार्ताओं के भीतर वे क्रमशः प्रतिष्ठापित नहीं है। अस्तु, इन के क्रम पर फिर कभी अन्यत्र स्वतन्त्र विचार किया जायगा पर इस में इतना तो स्पष्ट होता है कि-८४ और २५२ वार्ताओं में से संकलित कर 'अष्टछाप की वार्ताए' सर्व प्रथम लिखित रूप में इस 'क' प्रति में ही मिलती हैं। यह भी मानना पड़ता है कि-इस १६९७ की लिखित वार्ता के लेखन के पूर्व ही २५२ वैष्णव की वार्ताओं का संगठन हो चुका था और वे लिखी जाचुकी थीं।

प्रस्तुत ग्रन्थ के पत्र २७३ पर कुँभनदास की वार्ता में दिये हुए है "और चत्रभुजदास की

वार्ता तो आगे श्रीगुसांईजी के सेवकन की वार्ता में लिखे है" इस वाक्य से भी हमारे उक्त कथन की परिपुष्टि होती है। जो लोग २५२ की वार्ता को बहुत कुछ पीछे की रचित मानते हैं, उन्हे इस पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

आधुनिक हिन्दी :—

प्रस्तुत वार्ता प्रकाशन से जहाँ १७ वीं शताब्दी के अन्तिम, भाग की व्रजभाषा का एक लिखित रूप हमारे सामने आता है, वहाँ आजकल की हिन्दी (जिसे हम खड़ी बोली के नाम से पुकारते हैं) की भी थोड़ा सा दिग्दर्शन मिलता है। लेखक किम्वा तत्कालीन व श्रोता के अनवधान से यद्यपि उसमें दोनों भाषाओं का कुछ मिश्रण हो गया है तथापि उसका एक रेखा चित्र तो निर्धारित हो ही जाता है, प्रस्तुत ग्रन्थ के भीतर छीतस्वामी की वार्ता में बीरबल और बादशाह के वार्तालाप की ओर हम पाठकों का ध्यान आकृष्ट करते हैं। *

---

* देखो पत्र ६१३, १४   साहिब ! बीरबल का पुरोहित मथुरा से आया था सो इन बातन के ऊपर बीरबल से रूठ गया है ·· "बीरबल ! तेरा पुरोहित आया था, सो तो रूठ गया है ··· साहिब ब्राह्मण एसे ही होते हैं ··· साहिब उनने दो पद दीक्षितजी के आगे गाए थे, सो परमेश्वर करके गाए, तब मेने इतना कहा जो- देशाधिपति पूछेगा तो कहा कहोगे ? तिस पर रूठ गया हैं ·· तोकों वह बात भूल गई ऊठे मैं नवाडा ऊपर जाता था और तू मेरे पास बैठा था सो नवाड़ा श्रीगोकुल के तीर ऊपर जाता था ऊपर दीक्षितजी ठकुरानी घाट ऊपर बैठे थे ······ आदि।

इससे यह प्रगट होता है कि सं० १६६७ के लगभग वर्तमान काल की हिन्दी का रूप क्या था।

इस प्रकार कई रहस्य पूर्ण जिज्ञासाओं का समाधान करने वाली इस वार्ता-प्रति के आधार पर प्रस्तुत संस्करण तैयार किया गया है, जो अपनी दिशा में एक मौलिक कार्य है। इसे हम स्वयं कहते हुए भी कहना नहीं चाहते। भाषा साहित्य, वार्ता-साहित्य और वैष्णवता के हार्द स्वरूप विस्तृत विषयों पर विशेष प्रकाश डालना यहाँ संभव नहीं है, प्रस्तुत सं० १६६७ वाली वार्ता-प्रति का विशिष्ट परिचय हम अलग प्रकाशित करेंगे।

इस प्रकाशन में हमने पहिले की अपेक्षा कुछ न्यूनताएं भी कर दी हैं जो-अब आवश्यक-सी थी।

जैसा कुछ भी हो सका यथामति संपादन कर इस वार्ता साहित्य के अष्टछाप भाग को साहित्य सेवियों के समक्ष परीक्षा के रूप में रखा जारहा है। सन् १९४६ के अन्त में इस का संपादन प्रारंभ किया गया था पर मुद्रण-सम्बन्धी सभी सामग्रियों की महर्घता के कारण इसके छपाने का साहस नहीं हो सका था, प्रेसों को कागज की प्राप्ति दुःशक्य थी, जो भी मिल सकता था, चौगने मूल्य पर मिलता था। अतः इसका कार्य भगवदिच्छा प एक प्रकार से छोड़-सा दिया गया था, पर सौभाग्यतः श्रीविट्ठलनाथ प्रेस, कोटा के व्यवस्थापक पं० लक्ष्मण शास्त्रीजी साँचीहर से मिलाप हो गया औरउन्होंने इस कार्य को पुरा कर देने का वचन दिया। यद्यपि मुद्रण का कार्य प्रारंभ कर दिया गया, पर प्रेस की विप्रकृष्टता से प्रूफों के आवागमन में बहुत समय लग गया और इसी कारण जैसा चाहिये वैसा संशोधन भी नहीं किया जासका,

इधर ग्रन्थ का कुछ आकार भी बढ गया जिससे भूमिका के कुछ आवश्यक अश छोड देने पडे है, और सशोधन पत्र भी लगाना पडा है। फिर भी उक्त शास्त्रीजी के निरीक्षण और उचित व्यय पर आज इस के मुद्रण का कार्य पूरा हो पाया है, जो पाठकों के सामने है। ग्रन्थ में प्रेस की असावधानी के वश भाव-प्रकाश का कुछ अश छपने से रह गया है, जिसे यथा-स्थान संयुक्त कर लेने का निवेदन है। यह अंश सशोधन पत्र में छापा गया है।

यद्यपि आर्थिक विवशताओं के कारण विद्या-विभाग का प्रकाशन-कार्य कुछ शिथिल चल रहा है, जिससे हमें स्वयं भी भुंभलाहट होती है। आज हिन्दी-साहित्य में शुद्धाद्वैत-सिद्धान्त की जिस जिज्ञासा-पूर्ति की मांग हो रही है, उसकी पूति हम कर नहीं पा रहे है, पर यह भी संतोष का विषय है कि शारीरिक स्वास्थ्य में निरन्तर झपेटे खाते हुए भी हम इस विषय की पृष्ट भूमि तयार करनेमें पश्चात् । पद नहीं हुए-विद्याविभाग के इस दिशा के कार्यको देखकर हिन्दी साहित्य जगत के विद्वानों से हमारा विशेष परिचय और पत्रव्यवहार बढ गया हैं, अनः हमें उनकी सेवा करने का एक विशिष्ट आग्रह है। श्रीद्वारकेश प्रभु के अनुग्रह और इच्छा से प्रेरणा लेकर यथासमय हम यह सौभाग्य अधिगत करने से न चूकेंगे एसी शुभ आशा है।

काँकरोली
विद्या-विभाग
श्रीविट्ठलेश जयन्ती
पौप कृ० ६ सं० २००६

विधेय—
पो० कंठमणि शास्त्री
संचालक

विषय-सूचनिका

ऐतिहासिक दृष्टि में अष्टछाप—

अष्टछाप की वार्ता

अष्टछाप-वार्ता पद प्रतीक सूची

—)=।०।=(—

(१) सूरदास—

* कोष्ठान्तर्गत प्रतीक, केवल प्रतीक है, पूर्ण पद नहीं। प्रतीक रूप से दिये हुए पद सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं हैं।

---

(२) परमानन्ददास—

---

(३) कुंभनदास—

(४) कृष्णदास—

(५) चत्रभुजदास—

संकलन



संशोधन पत्रक

—।=*=।—

पत्र	पंक्ति	संशोधन
४५	६	'सो पद–' के आगे पत्र ४७ का 'मना रे कर०' यह पद है।
४६	२	राग नट– 'यह सब जानो'० पद पत्र ४५ के फुटनोट का अवशिष्ट भाग है।
४७	१६	गद्यांश, पत्र ४६ के फुट नोट का बाकी अंश है
६५	२	छोटे टाइप का अंश ६४ ने पेज के फुट नोट का शेष अंश है।
१०२	२	श्रीमुखतें (सगरे वैष्णवन सों) कहे।
१०६	६	पद के अनन्तर भावप्रकाश और वार्ता विशेष प्राप्त होती है जो नीचे लिखे अनुसार है *-

* भावप्रकाश

सो या कीर्तन में सूरदासजी ने अपने हृदय को भाव खोलि दियो। जो–भरोसो सो जीव कों विश्वास, दृढ चरण के शरण को। सो मोकों (सूरदास कों) दृढता श्रीआचार्यजी के शरण की है। सो श्रीआचार्यजी के नख जो दसों चरणारविंद के अलौकिक मणिरूप नख की प्रकाश, सो ता–बिना

सगरे त्रिलोकी में अंध्यारो दीखे है। सो तब भरोसो दृढ जानिये। सो या कलि में श्रीआचार्यजी के चरण के आश्रय बिना और उपाय फल-सिद्धि कौ नांही है। तासों मैं न्यारो कहा वर्णन करो? जो- श्रीगोवर्द्धनधर में और श्रीआचार्यजी के स्वरूप में भिन्न, जो द्विविध तामें तो मैं अंध हों।

सो जैसे श्रीकृष्ण और श्रीस्वामिनीजी में न्यारो स्वरूप जाने सो-अज्ञानी। सो तैसे श्रीगोद्धनधर और श्रीआचार्यजी है। सो तिनकौ मैं बिना मोल कौ चेरो हों। सो बिना मोल कहा? जो-केवल भाव करि के। जैसें रास-पंचाध्याई में व्रजभक्त गोपिकागीत मे कहे है जो- 'शुल्क दासिका' सो बिना मोल की दासी, अलौकिक, जाकौ मोल नाँही। सो काहे तें? जो-भक्ति करिके प्रभुन सों (अर्थ) चाहै, सो-सगरे, मोल के दास कहिये, उनकी भक्ति श्रेष्ठ नांही। तासों निष्काम भक्ति सर्वोपरि है, सो-ताकों अमोलिक दास कहिये। ता भाव के प्रभु बस होंइ। सो-जैसी पंचाध्याई में श्रीभगवान कहे हैं जो- तिहारो भजन पसो है, जो-मोसों पलटो दियो न जाय। जो- मैं सदा तिहारो रिनिया रहूंगो। सो यह अमोलिकदास के लच्छन है।

सो यह पद गायो। सो यह पद कैसो है? जो- या कीर्तन के भाव तें, सवा लाख कीर्तन सूरदासजी ने किये हैं सो सब कौ पाठ होय।

वार्ता

* (तब चत्रभुजदास प्रसन्न भये। पाछें सिगरे वैष्णव और श्रीगुसाईजी आपु कहे जो- सूरदासजी के हृदय कौ महा अलौकिक भाव है, तासों श्रीआचार्यजी आपु सूरदास-जी सों 'सागर' कहते। जैसे समुद्र अगाध है, तैसे सूरदास-

जी को हृदय अगाध है। सो तब चत्रभुजदास कहे जो- सूरदासजी ! तुम विना अलौकिक भाव कौन दिखावे ? जो- अब थोरे में, श्रीआचार्यजी कौ यह पुष्टिभक्ति-मारग है, ताकौ स्वरूप सुनावो। सो कौन प्रकार सों पुष्टिमारग के रस कौ अनुभव करिये।)

(तब वा समय सूरदासजी ने यह पद गायो। सो पद - राग सारंग–'भज सखी भाव भाविक देव'०)

(सो पद सूरदासजी ने सिगरे वैष्णवन कों सुनायो।)*

भावप्रकाश *

सो या पद में यह जताए–जो– गोपीजन के भाव सों जो प्रभु कों भजे, सो तिनके भाविक जो–श्रीगोवर्द्धनधर, सो तिनकों गोपीन के भाव करि सखी-भाव सों भजिये। कुंजलीला में सखीजन कौ अधिकार है। तासों (यहां) सखी कहे। और कोटि साधन वेद के करो, परन्तु एक हू सेवा नांही मानत हैं। ताको दृष्टांत:— जो– सोलह हजार अग्निकुमारिक[1] ऋचा हैं। 'धूम्र–केतु' एसी जो– अग्नि ताके पुत्र जो सोलह हजार ऋषि, सो वे रामचन्द्रजी के स्वरूप ऊपर मोहित होइ दंडकारण्य में कहे जो- हम सों बिहार करो। तब उनसों श्रीरामचंद्रजी यह आज्ञा किये जो- व्रज में तुम स्त्री होइ प्रकटोगी तब तिहारो मनोरथ पूरन होइगो।

तासों स्त्री कों वेद कर्म में अधिकार नाहीं हैं। और श्रीपूर्णपुरुषोत्तम की लीला में मुख्य स्त्री-भाव कौ अधिकार है। यह भक्तिमारग की वेद सों उलटी रीत है। जैसें रास पंचाध्याई में व्रजभक्त उलटे आभूषन वस्त्र धारन करे, सो

---

* ·· * इतना वार्ता का अंश सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

लोक में उनसों 'बावरो' कहें, सो स्नेह में सर्वोपरि कहिये। जैसे जो छाप में उलटे अक्षर होइ सो शरीर में सूधे आछे अक्षर होंय, तैसे या जगत में अज्ञानी, प्रभु की लीला में चतुर होइ सो प्रपंच भूले, सो ताकों प्रेम कहिये। मुख्य भक्तिरस में वेदविधि को नेम नांही है। तासों एसो जो-प्रेम होइ सो श्रीठाकुरजी कों वस करे, जैसे गोपीजनन ने श्री-ठाकुरजी वस किये। सो श्रीठाकुरजी कैसे हैं, जो-सबही कों मोहि डारें। और सूर है, सो काहू सों जीते जाइ नाहीं। और वे ही चतुर शिरोमणि है, सो काहू के वस होय नांही तोऊ प्रेम के वस हैं, सब कूँ भूलि जांय। यह पुष्टिमारग की भक्ति और पुष्टिमारग को स्वरूप है। सो या भांति सों सूरदासजी कहे।

१०८ पत्र १३ पक्ति के संशोधन अनन्तर भावप्रकाश
छूटगया है जो इस प्रकार हैं :—

भावप्रकाश—

सो इन सूरदासजी के चारि नाम हैं। श्रीआचार्यजी आप तो 'सूर' कहते। जैसे सूर होइ सो रण में सों पाछो पांव नाहीं देय, जो सबसों आगे चले। तैसेई सूरदासजी की भक्ति दिन दिन बढती दिशा भई। तासों श्रीआचार्यजी आप 'सूर' कहते।

और श्रीगुसांईजी आप 'सूरदास' कहते। सो दास-भाव में कबहूं घटे नाहीं। ज्यों-ज्यों अनुभव अधिक भयो, त्यों त्यों सूरदासजी कों दीनता अधिक भई। सो सूरदासजी कों कबहूँ अहंकार मद नाहीं भयो। सो 'सूरदास' इन को नाम कहे।

और तीसरो इन कौ नाम 'सूरजदास' है। जो–श्रीस्वामिनीजी के ७ हजार पद सूरदासजी ने किये हैं, तामें अलौकिक भाव वर्णन किये है । तासों श्रीस्वामिनीजी कहते जो– ये 'सूरज' हैं। जैसे सूरज सों जगत में प्रकास होय, सो या प्रकार स्वरूप कौ प्रकास कियो । सो जब श्रीस्वामिनीजी 'सूरजदास' नाम धर्यो, तब सूरदासजी ने वोहोत कीर्तनन में 'सूरज' भोग धरे।

और श्रीगोवर्द्धननाथजी ने पचीस हजार कीर्तन आपु सूरदासजी कों करि दिये। तामें 'सूरश्याम' नाम धरे। सो या प्रकार सूरदासजी के चारि नाम प्रगट भये। सो सूरदासजी के कीर्तन में ये चारो 'भोग' कहे है।

पत्र	पंक्ति	संशोधन
१२०	५	व्योंत है। (तासों जब ···रात्रि भई) [प्रारंभ में कोष्ठक चाहिये]
१३८	११	वात) ऐसे मति कहो।
१५१	३	तब आप
१५३	७	'भावप्रकाश' शब्द नहीं चाहिये।
१५६	१२	(पाछें)
१५८	६	सेवक किये।)× यहाँ द्वि० वार्ता समाप्त है। आगे तृतीय वार्ता है।
१६१	२	गाय।
१६२	३	मेरी बहियाँ।

१० मिलवहु री मेरी माई । मिलौं वहुरि
उर लाई ।

७ जा तन लागी ।

३ श्रीगिरिराज ।

११ गो-दोहन ।

१८ विहात न क्यों ।

१५ घर आयो ।)

११ जन्म पाए ।)

१४ (ता पाछें....

६ (सो यह...

१८ श्रीवल्लभ आप० ।)

१६ १ श्रीगुसांईजी

५ चित हीं चुरावत० ।)

१२ रहत गडी०)

४ प्राप्त भए ।)

३२६	१३	सराहना किये।)
३५१	३	काढ़ूंगो।)
३५८	८	(जो– हम तो ......
३६७	८	भीतरिया राखे, श्रीनाथजी......
४०६	२,३	(यह पंक्तियां नहीं चाहिये दुवारा कंपोज होगई हैं)
४८६	२०	शब्दावली। [इस पद की छाप-वाली तुक उपलब्ध नहीं हुई]
५०४	११	श्रीगिरिधरजी ने
५०६	१८	भगवदीय हे।
५१८	१७	'पद' के बाद फुटनोट की रेखा और फुट नोट चाहिये।
५१६	१४	सो पदः— के नीचे फुट नोट की रेखा और फुट नोट चाहिये।
५२०	६	व्रजवासिन विलसै है।
,,	१५	खग मृग की को।

अष्टछाप

—)–:o – –

प्रथम खण्ड

श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभुन के सेवक:—

(१) सूरदास की वार्ता

(२) परमानन्ददास

(३) कुंभनदास

(४) कृष्णदास



"अष्टछाप"

(१) श्रीसूरदासजी

—():+():—

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक सूरदासजी (सारस्वत ब्राह्मण, दिल्ली के पास सींही[1] गाम है तहां रहते)[2] तिन के पद गाइयत हैं, सो गऊघाट ऊपर रहते, तिन की वार्ता:—

---

१. 'सींही' 'गामका' 'सीहोरा' और 'शेरगढ' के नाम सेभी प्राचीन ग्रन्थों में उल्लेख मिलता है।

२ इन समस्त वार्ताओं में ( ) कोष्ठ के अन्तर्गत अंश भाव-प्रकाशवाली वार्ता का है, जो सं० १९९८ में विद्याविभाग कांकरोली से प्रकाशित हो चुकी है। तदतिरिक्त अंश सं० १६९७ वाली मूलवार्ता का है

दोनों वार्ताओं के साधारण शब्दान्तर पर ध्यान नहीं दिया गया है, केवल विशेष पाठ ही कोष्ठान्तर्गत रूप में दिखाये गये हैं। जहाँ कुछ प्रसगों में अन्तर है, और कुछ प्रसंग विशेष हैं वे चिन्हों द्वारा तत्तत्स्थलों पर निर्दिष्ट कर दिये गये हैं।

भावप्रकाश :—

सो ये सूरदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के अष्टसखा हैं, सो तिन में ये 'कृष्णसखा' को प्राकट्य है । तहां आधिदैविक यह संदेह होय जो– निकुंज लीला में तो मूलस्वरूप सखीजनन को अनुभव है, जो सखा तहां नहीं हैं । सो सूरदासजीने रहस्य-लीला, विना अनुभव कैसें गाई ?

तहां कहत हैं जो–श्रीभागवत में कहे हैं जो–जब श्रीठाकुरजी आप वन में गोचरन-लीला में सखान के संग पधारत हैं, सो सगरी गोपीजन लीला को अनुभव करत हैं, सो घर में सगरी लीला वन की गान करत हैं । ता पाछें जब श्रीठाकुरजी संध्या-समय वन तें घर कूं आवत हैं, ता पाछें रात्रिकों गोपीजनन सों निकुंज में लीला करत हैं सो तब अंतरंगी सखान कों विरह होत है, तब वे निकुंज-लीला को गान करत हैं,* अनुभव करत हैं ।

सो काहेतें ? कुंज में सखीजन हैं सो तिन के दोइ स्वरूप हैं, सो कहत हैं:- पुंभाव के सखा और स्त्री-भाव की सखी। सो दिन में सखा द्वारा अनुभव और रात्रि कों सखी द्वारा अनुभव है । सो काहेतें ? जो वेद की ऋचा हैं सो गोपी

* भा द. स्क वेणुगीत टिप्पणी- कारिका १. २.

हैं, और वेद के जो मंत्र हैं सो सखा हैं। परंतु गोपीजन देखिवे मात्र स्त्री हैं, सो इनके पति हैं, परंतु ये स्त्री नाहीं हैं। सो एसे–(जैसे) भुज्यो अन्न होय सो धरती में बीज नाहीं ऊगे। तैसे ही इनको लौकिक विषय नाहीं है। सो यहां तो रसरूप लीला सदा सर्वदा एक रस है। सो तैसे ही अंतरंगी सखा श्रीठाकुरजी के अंग-रूप हैं। सो सखी-रूप, सखा-रूप दोउ रूप सों रात्रिदिन लीला-रस करत हैं।

तासों सूरदास 'कृष्णसखा' को प्राकट्य हैं। और 'कृष्ण सखा' को दूसरो स्वरूप सखी है, सो लीला कुंज में है तिनको नाम 'चंपकलता' है। तासों सूरदास कों सगरी लीला को अनुभव श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कृपा तें होयगो।

सो प्रकार कहत हैं:—तहां यह संदेह होय, जो लीला-सम्बन्धी हैं सो पहले तें अनुभव क्यों नाहीं भयो। सो इन कों मोह क्यों भयो? तहां कहत हैं जो– श्रीठाकुरजी भूमि के ऊपर प्रकट होइके लौकिक की नांई लीला करत हैं, जस प्रकट करणार्थ। सो लीला गाइके जगत में लौकिक जीव कृतार्थ होत हैं। तैसेई श्रीठाकुरजी के भक्त हू जगत

में लौकिक लीला करि अलौकिक दिखावत हैं। जैसें श्रीरुक्मिनीजी साक्षात् श्रीलक्ष्मीजी को स्वरूप हैं, परंतु जब जन्मीं तब देवी पूजिके वर मांग्यो। फेरि श्रीठाकुरजी के पास ब्राह्मण व्याह के लिये पठायो। सो यह जग में लीला प्रकट करणार्थ। जैसे—कालिंदाजी सूर्य द्वारा प्रकट होइके श्रीयमुनाजी में मंदिर करि तपस्या करि, अर्जुन सों कही जो—'मैं श्रीठाकुरजी कों वरूंगी'। तब श्रीठाकुरजी आपु विवाह कियो। सो ये लीला मात्र, (क्यों जो ?) ये सदा श्रीठाकुरजी की प्रिया हैं। सो व्रजमें श्रीस्वामिनी जी और श्रीठाकुरजी आपु ए दोउ एकरूप हैं, परन्तु व्रज-लीला प्रकट करिवे के लिये श्रीठाकुरजी श्रीनंदरायजी के घर प्रकटे और श्रीस्वामिनीजी श्रीवृषभानजी के घर प्रकट होइके अनेक उपाय मिलिवे कों रात्रिदिन किये। सो यह लीला (केवल) जगत में प्रकट करिवे के लिये (ही)। (नातर) ये तो सदा एकरस लीला करत हैं।

सो तैसेई सूरदासजी श्रीआचार्यजी के सेवक होइके भगवल्लीला गाये। सो यामें स्वामी को जस बढै। सो जिन के सेवक सूरदास एसे भगवदीय, तिन के स्वामी श्रीआचार्यजी आपु तिन की सरन जैये। सो या प्रकार जगत में लीला करि जस प्रकट किये, सो आगे लौकिक

जीव कों गान करि भगवत्प्राप्ति होय । सो सूरदासजी जगत पर अब ही प्रकटे, परंतु लीला को ज्ञान नाहीं है ।

सो सूरदासजी दिल्ली के पास चारि कोस उरे में एक 'सीहीं' गाम है, जहां राजा परीक्षित के बेटा जन्मेजय ने सर्प यज्ञ कियो है। सो ता गाम में एक सारस्वत ब्राह्मण के यहां प्रकटे । सो सूरदासजी के जन्मत ही सों नेत्र नाहीं हैं ।

सूरदासजी का पूर्व चरित्र

और नेत्रन को आकार गठेला कछू नाहीं; ऊपर भौंह मात्र है । सो या भांति सों सूरदासजी को स्वरूप है । सो तीन बेटा या सारस्वत ब्राह्मण के आगे के हते, और घर में बहोत निष्किंचन हतो । वा सारस्वत ब्राह्मण के घर चौथे सूरदासजी प्रकटे । सो तब इनके नेत्र न देखे, आकार (हू) नाहीं । सो या प्रकार देखिके वा ब्राह्मण ने अपने मनमें बहोत सोच कियो, और दुःख पायो । जो-देखो, एक तो विधाता ने हमकों निष्कंचन कियो, और दूसरे-घर में एसो पुत्र जन्म्यो । जो-अब याकी कौन तो टहल करेगो ? और कौन याकी लाठी पकरेगो ?

सो या प्रकार ब्राह्मण ने अपने मन में बहोत दुःख पायो। सो काहेतें ? जो- जन्मे पाछे नेत्र जांय तिनको आंधरा कहिये, 'सूर' न कहिये, और ये तो 'सूर' हैं । सो माता-

पिता घर के सब कोई इनसों प्रीति करें नाहीं। जानें, जो-नेत्र बिना को पुत्र कहा ? तासों इनसों कोई बोलतो नाहीं।

सो एसे करत सूरदासजी बरस छह के भये । तब पिता कों वा गाम के एक द्रव्यपात्र क्षत्री यजमान ने दोइ मोहोर दान में दीनी। तब यह ब्राह्मण उन मोहोरन कों लेके अपने घर आयो, और अपने मन में बहोत प्रसन्न भयो, और स्त्री तथा घर में देह- संबंधी बेटा-बेटी हते, सो तिन सबन सों कही जो-भगवान ने दोय मोहोर दीनी हैं सो कालि इनकों बटाइके सीधो सामान लाऊंगो तातें अपने घर में दोइ चार महीना को काम चलेगो । सो या प्रकार सबन कों वे दोइ मोहोर दिखाईं। ता पाछें रात्रिकों एक कपडा में बांधिके ताक में धरिके सोयो, तब रात्रि को दोइ मोहोरन कों मूसा ले गये, सो घर की छातिन में मिल्ले में धरि दीनी।

तब सवारे उठिके देखे तो मोहोर नाहीं हैं। सो तब तों सूरदास के मातापिता छाती कूटन लागे, और अपने मन में अति कलेश करन लागे। सो वा दिन खानपान नाहीं कियो । सो या भांति सों घनो विलाप करन लागे । सो देखिके सूरदासजी माता-पिता सों बोले जो-तुम एसो दुख विलाप क्यों करत

हो ? जो श्रीभगवान को भजन सुमिरन करो, तासों सब भलो होय। सो या भांति सूरदास उनसों बोले। तब माता पिता ने सूरदास सों कही जो—तू एसी घडी को 'सूर' जन्म्यो है, सो हम कों वाही दिन सों दुख ही में जनम बीतत है। जो हम कों काहू दिन सुख नाहीं भयो, और हमकों भर पेट अन्नहू नाहीं मिलत है। श्रीभगवान ने हमकों दोय मोहोर दीनी हती, सो हू यों ही गई।

तब सूरदासजी बोले जो—तुम मोकों घर में न राखो तो मैं अब ही तिहारी मोहोर बताइ देऊं। परि पाछे मोकों घर में राखियो मति और तुम मेरे पीछे मति परियो। तब यह सुनिके मातापिता ने सूरदास सों कह्यो जो—और हमकों कहा चहियत है ? जो तू हमकों मोहोर बताय देउ, और हमारी मोहोर पावे फेरि तेरे मन में आवे तहां तू जइयो, हम तोकों बरजेंगे नाहीं। तब सूरदास बोले जो—छांति में भिल्लो है, सो भिल्ल के मोहोडे पे धरीं है। तब वह ब्राह्मण खोदिके मोहोर पाये।

तब सूरदासजी घरमें ते चलन लागे। मातापिता कों मोह उत्पन्न भयो। जो—देखो या 'सूरदास' को सगुन बहोत आछो भयो, याके कहे प्रमान माकों तुरत ही मोहोर मिली है। सो यह विचारिके मातापिता ; ने

सूरदासजी सों कह्यो जो— सूरदास ! अब तुम घरतें क्यों जात हो ? अब तो यह मोहोर पाइ गई है, तातें जहां तांई यह मोहोरन को अनाज रहै तहां तांई तुम हू खावो, पाछैं जहां जानो होय तहां तुम जैयो। तब सूरदास बोले जो— मोकों अब तुम घर में मति राखो, जो मोकों घर में राखेगे तो तिहारी मोहोर फेरि जायगी, और तुम दुख पावोगे।

यह सुनिके मातापिता कछु बोले नाहीं, और सूरदासजी तो हाथ में एक लाठी लेकें घर सों निकसे। सो 'सींही' ते चले, सो चार कोस ऊपर एक गाम हतो, तहां एक तालाव गाम बाहिर हतो, सो वहां एक पीपर के वृक्ष नीचे सूरदासजी आइ बैठे और वा तालाव को जल पियो। तहां दोइ चार घडी दिन पाछलो रह्यो हतो, तब ता गाम को ब्राह्मण जमींदार तहां आइके सूरदास-जी कों पहचानिके कहन लाग्यो, जो- मेरी १० गाय तीन दिन तें मिलत नाहीं, कोई बतावे तो दो गाय वाकों दऊं।

तब सूरदासजी ने कही जो— मोकों तेरी गाय कहां कानी है ? पर पूछत है, तब कहत हूं जो—यहां सों कोस ऊपर एक गाम है। सो वा गाम के जमींदार के मनुष्य

रात्रि कों आइके तेरी १० गाय ले गये हैं। वा जमींदार के घर के भीतर एक दूसरो घर है, सो तहां जमींदार के घोडा बंधे हैं, सो उन घोंडान के पास तेरी गाय बंधी हैं। तब वे जमींदार दस आदमी संग ले जाइ देखे तो गाय सब बंधी हैं। सो ले आइके सूरदासजी सों कह्यो जो-- सूरदास ! तिहारे कहे प्रमान मेरी दस गाय पाइ गई हैं, सो ये दोइ गाय तुम राखो। तब सूरदासजी ने कही जो--मैं अपनो ही घर छोडिके श्रीठाकुरजी को आश्रय करिके बेठो हूं सो मैं तेरी गाय काहेको लेऊँ ?

तब वह जमींदार सूरदास कों बालक जानिके शिक्षा की बात करन लाग्यो, जो--अरे ! तू फलाने सारस्वत को बेटा है, और नेत्र तेरे हैं नाहीं, और कोऊ मनुष्य हू तेरे पास नाहीं हैं, सो तू अपने घर कों छोडिके रूठिके यहां क्यों बेठ्यो है ? नेत्र हैं नाहीं, कैसे दिन कटेंगे ?

तब सूरदासने कह्यो जो--मैं तेरे ऊपर तो घर छोड्यो नाहीं। मैं तो नारायण के ऊपर घर छोड्यो है, सो वे सगरे जगत को पालन करत हैं, सो मेरो हू करेंगे। और जो होनहार होयगी सो होयगी।

तब जमींदार ने कही--मैं हू ब्राह्मण हों, दारि रोटी मेरे घर भई है, कहे तो लाउं ? तब सूरदास ने कही जो--मैं

तो गैल की चली रोटी नाहीं खात। तब वह जमींदार अपने घर जाइ पूरी कराइ और दूध ले जाइ सूरदास कों जल भरि देके कह्यो जो– सूरदास! तुम कोई बात को दुःख मति पाइयो। जो-जहां तांई भगवान मो कों खायवे कों देयगो, ताईं तहां मैं तुम कों लाउंगो, और सवेरे या तलाव पर तथा गाम में, जहां तुम कहोगे तहां छापरा डार दउंगो।

पाछे सवेरो भयो, तब यह जमींदार ने आइके कह्यो– जो तिहारो मन कहां रहिवो को है? तब सूरदास ने कही– जो अब तो याही तलाव पर, पीपरा नीचे कछुक दिन रहिवे को मन है। तब वा जमींदारने वहां एक झोंपड़ी छवाय दीनी और टहल करिवेकूं एक चाकर राखि दियो।

तापाछें वा जमींदार ने दस पांच जने के आगे बात करी जो-- फलाने को– बेटा 'सूरदास' बडो ज्ञानी है। हमारी गाय खोय गई हती सो बताय दीनी, सो वह सगुन में आछो जाने है। सो मैं वाकों तलाव के ऊपर पीपर के नीचे, झोंपड़ छवाय, वाके पास एक चाकर राखि दियो है। और नित्य पूरी दहीं दूध पठावत हों, सो तासों काहू कों सगुन पूछनो होय तो वाकूं जायके पूछि आइयो।

यह सुनिके सब लोग गाम के आवन लागे। सो जो कोइ पूछे तिनकों सगुन बतावे सो होई। तब सूरदास की बडी पूजा चली, भीर लगी रहै। खानपान भली भांति सों आवन लाग्यो। सो तब कछुक दिनमें सूरदास कों रहिवे के लिये एक बडो घर तलाव पर बनाय दियो, और वह झोंपडी हू दूरि कीनी। और वस्त्र, द्रव्य बहोत वैभव भेलो भयो। सो सूरदास 'स्वामी' कहवाये, बहोत मनुष्य इनके सेवक भये। जा के कंठी बांधनी होय सो सूरदास को सेवक होय। सो सूरदास विरह के पद सेवकन कों सुनावते। सो सब गाइवे के बाजे को सरंजाम भेलो होय गयो।

या प्रकार सूरदास तलाव पे पीपर के वृक्ष नीचे बरस अठारे के भये। सो एक दिन रात्रिकों सोवत हते, ता समय सूरदास कों वैराग्य आयो। तब सूरदासजी अपने मनमें विचारे जो– देखो, मैं श्रीभगवान के मिलन अर्थ वैराग्य करिके घरसों निकस्यो हतो, सो यहां माया ने ग्रसि लियो। मोकूं अपनो जस काहेकों बढावनो हतो? जो मैं श्रीप्रभु को जस वढावतो तो आछो। और यामें तो मेरो बिगार भयो, तासों अब कछ संवारो होय और मैं यहां सों कूच करूं।

सो एसे करत सवारो भयो। तब एक सेवक कों पठाय मातापिता कों बुलाय सब घर उनकों सोंपि दियो। पाछें सूरदास एक वस्त्र पहरिके लाठी लेके उहां ते कूंच किये। सो तब जो– सेवक माया के जंजाल में हते, सो संसारमें लपटे और उहांई रहे। और कितनेक सेवक जो– संसार सों रहित हते, सो सूरदास की संग ही चले। सो सूरदास मनमें विचारे जो– व्रज है सो श्रीभगवान को धाम है, सो उहां चलिये। तब सूरदास उहां तें चले, सो श्रीमथुराजी में आये। तहां विश्रांत घाट पे रहिके सूरदासने विचार कियो जो– मैं मथुराजीमें रहूंगो सो यहां हू मेरो माहात्म्य बढेगो और यह श्रीकृष्ण की पुरी है, सो यहां मो कों अपनो माहात्म्य प्रकट करनो नाहीं। और संसार में अनेक लोग सुख दुख पावें हैं सो सब पूछिवे आवेंगे। और यहां मथुरिया चौबे हैं, सो यहां माहात्म्य बढेगो तो ये दुख पावेंगे, तासों यहां रहनो ठीक नाहीं।

सो यह बिचारिके सूरदास मथुरा के और आगरे के बीचोंबीच गऊघाट है, तहां आइके श्रीयमुनाजी के तीर स्थल बनाइकें रहे।

सूरदास को कंठ बहोत सुन्दर हतो। सो गान विद्या में चतुर, और सगुन बताइवे में चतुर। सो उहां हू बहोत लोग सूरदासजी के पास आवते। उहां हू सेवक बहोत भये, सो सूरदास जगत में प्रसिद्ध भये।

(वार्ता प्रथम)

सो एक समें श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप अडेल तें व्रजकों पधारे, सो गऊघाट आगरे के और मथुरा के बीच में है। तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप गऊघाट ऊपर उतरे। तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप (श्रीयमुनाजी में) ※ स्नान करिके संध्या-वंदन करिके पाक करन बेठे। और श्रीआचार्य-जी महाप्रभुन के साथ बैष्णवन को समाज बोहोत हतो, सो सेवक हू अपने श्रीठाकुरजी की रसोई करन लागे।

सो गऊघाट के ऊपर सूरदासजी को स्थल हतो। सूर 'स्वामी' हे, सो सेवक करते, सो सूरदासजी भगवदीय हें। गान आछो

※ (   ) कोष्ठान्तर्गत विशेष पाठ भाव-प्रकाश वाली वार्ता प्रति का है जो सं० १९९८ मे विद्याविभाग कांकरोली से द्वितीय भाग के रूप मे प्रकाशित हुई थी।

करते, गुणी हते। तातें बोहोत लोग सूरदास जी के सेवक भए हते। श्रीआचार्यजी महाप्रभु गऊघाट ऊपर उतरे। सो सूरदासजी के सेवक ने देखिके सूरदासजी सों कह्यो जो–इहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु पधारे हें। जिनने दक्षिण-- दिग्विजय कियो है। सब पंडितन कों जीते हें। काशी में तथा दक्षिण में मायावाद-खंडन कियो है और भक्तिमार्ग स्थापन कियो है, सो श्रीवल्लभाचार्यजी पधारे हें।

तब सूरदासजी ने अपने सेवकन सों कह्यो, जो-- तुम जाइके दूरि बेठियो, जब श्रीआचार्यजी महाप्रभु भोजन करिके (निश्चिन्तता) सों बिराजें तब खबरि करियो। हम श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन कों जांइगे। सो सूरदासजी को एक सेवक गऊघाट ऊपर आइके तनक दूरि बेठि रह्यो।

पाछे श्रीआचार्यजी महाप्रभु पाक करत हे, सो सिद्ध भयो। तब श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो। समयानुसार भोग सराय, अनोसर कर, महाप्रसाद ले श्रीआर्यजी महाप्रभु आप गादी तकियान ऊपर बिराजे। तब तांई सेवक हू पोहोंचिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास अपने अपने ठिकाने आइ बेठे। तब सूरदासजी को सेवक आयो हतो, सो ता ने सूरदासजी सों जायके कह्यो जो—श्रीआचार्य जी महाप्रभु आप पोहोंचिके गादी ऊपर बिराजे हें।

तब सूरदासजी (वाही समय) अपने (संग सगरे सेवकन कों लेके) स्थल तें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन कों आए, तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कह्यो जो-सूर! आओ बेठो। तब सूरदासजी (ने) श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों (साष्टांग) दंडवत

करिके आगे बेठे। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कह्यो जो-सूरदासजी! कछु भगवद्-जस वर्णन करो। तब सूरदासजी नें कह्यो-"जो आज्ञा"।

सो सूरदासजी ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे एक पद गायो। सो पद।:—

॥ राग धनाश्री ॥

हों हरि + सब पतितन को नायक।
को करि सके बराबरि मेरी इते × मानको लायक॥१॥
जो ÷ तुम अजामेल सों कीनी, सो पाती लिखि लाऊं॥
होय A बिस्वास भलो जिय अपने औरो पतित बुलाऊं॥२॥
सिमिटि B जहां तहां सेवक कोऊ आइ जुरे इकठोर॥

+ हरि हौं सब० (सूर पञ्चरत्न ४६)
× मेरी और नहीं कोउ लायक (सूर पञ्चरत्न ४६)
÷ जैसो अजामेल को दीनो सोइ पटो लिखि पाऊं (सूर पञ्चरत्न ४७)
A तो विस्वास होय मन मोरे ओरो० (सूर पञ्चरत्न ४७)
B यह मारग चौगुनो चलाऊं तो पूरो ब्योपारी।
वचन मानि लें चलों गांठि दें पाऊं सुख अतिभारी॥
यह सुनि जहाँ तहाँ ते सिमटें आइ होहिं इक ठौर।
अब की तो अपनी लै आयो बेर बहुरि की और॥
होड़ा होडी ... ... (सूर पञ्चरत्न ४७)

अबके इतने आनि मिलाऊं बेर दूसरी ओर ॥ ३ ॥
होडा होडी मन-हुलास करि, करे पाप भरि पेट ॥
सबहिन ले पाइन तर पारो × यहे हमारी भेट ॥ ४ ॥
एसी + कितनीक बनाऊं प्रानपति! सुमिरन भयो आडो ॥
अबकी बेर निवेरि लेउ प्रभु! 'सूर' पतित को ताडो ॥ ५॥

फेरि दूसरो पद ओर गायो, सो पद :—

* राग धनाश्री *

प्रभु! हौं सब पतितन को टीको ॥
ओर पतित सब द्योस चारि के हों तो जन्मत ही को ॥१॥
बधिक, अजामिल, गनिका तारी ओर पूतना ही को ॥
मोहि छांडि तुम ओर उधारे मिटे सूल केसे* जी को ॥२॥
कोउ न समरथ अघ करिबे कों खेंचि कहत हों लीको ॥
मरियत लाज 'सूर' पतितन में कहत [] सबन में नीको ॥३॥

× सबै पतित पॉयन तर डारों० ... (सूर पञ्चरत्न ४७)

+ बहुत भरोसो जानि तुम्हारो अघ कीन्हें भरि भांडो ।
लीजै नाथ! निवेरि तुरंतहिं० टांडो ॥ (सूर पञ्चरत्न ४७)

* क्यों, (सूर पञ्चरत्न ३०) ।

[] मोहि तें को नीको (सूर पञ्चरत्न ३०)
हम हूँ तें को नीको (सूरसुधा १४)

ए दोय पद सूरदासजी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे गाए। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कह्यो, जो–'सूर' हे तो एसो क्यों घिघात हे? कछु भगवद्-लीला वर्णन करि *।

तब सूरदासजी नें कह्यो, जो-महाराज! में तो कछु समझत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कह्यो, जो- स्नान करि आउ, हम तोकों समझावेंगे।

तब सूरदासजी ने प्रसन्न होइके श्रीयमुनाजी में स्नान करिके अपरस ही में आइके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे ठाडे भये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कृपा करिके

*भावप्रकाश–

ताको आशय यह है जो:–जीव भगवान् सों बिछुर्‌यो, सो तब पतित तो भयो। सो ताकों वहोत कहा कहनो? तासों भगवल्लीला गावो, जासों सुद्ध होय।

सूरदासजी कों प्रथम नाम सुनायो, पाछें समर्पन करायो। पाछें दसम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाई* ? सो नाम सुनायो तातें सब दोष निवर्त्त, भए, और श्रवण तें लेके दास्य पर्यंत सात भक्ति भई। और निवेदन करवायोतातें श्रीनाथजी ने अंगीकार कियो। सख्य और आत्म-निवेदन भक्ति भई। रही प्रेम-लक्षणा भक्ति, सो दसम स्कन्ध की अनुक्रमणिका कही। तातें संपूर्ण लीला सूरदासजी के हृदय में उपस्थित भई, तब भगवद्लीला को वर्णन किए।

* भाव प्रकाश

अष्टाक्षरः— मंत्र सुनायो तासों सूरदास के सगरे जनम के दोष मिटाये, और सात भक्ति भई। पाछें ब्रह्म-सम्बन्ध करवायो, तासों सात भक्ति और नवधा भक्ति की सिद्धि भई। सो रही प्रेमलक्षणा, सो दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाए। तब संपूर्ण पुरुषोत्तम की लीला सूरदास के हृदय में स्थापन भई। सो प्रेम-लक्षणा भक्ति सिद्ध भई।

ए दोय पद सूरदासजी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे गाए। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कह्यो, जो–'सूर' हे तो एसो क्यों घिघात हे ? कछु भगवद्-लीला वर्णन करि ❀।

तब सूरदासजी नें कह्यो, जो-महाराज ! में तो कछु समझत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कह्यो, जो- स्नान करि आउ, हम तोकों समझावेंगे।

तब सूरदासजी ने प्रसन्न होइके श्रीयमुनाजी में स्नान करिके अपरस ही में आइके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे ठाडे भये। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कृपा करिके

❀भावप्रकाश–

ताको आशय यह है जोः–जीव भगवान् सों बिछुर्यो, सो तब पतित तो भयो। सो ताकों वहोत कहा कहनो ? तासों भगवल्लीला गावो, जासों शुद्ध होय।

सूरदासजी कों प्रथम नाम सुनायो, पाछें समर्पन करायो । पाछें दसम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाई* ? सो नाम सुनायो तातें सब दोष निवर्त्त, भए, और श्रवण तें लेके दास्य पर्यंत सात भक्ति भई। और निवेदन करवायोतातें श्रीनाथजी ने अंगीकार कियो । सख्य और आत्म-निवेदन भक्ति भई । रही प्रेम-लक्षणा भक्ति, सो दसम स्कन्ध की अनुक्रमणिका कही । तातें संपूर्ण लीला सूरदासजी के हृदय में उपस्थित भई, तब भगवद्लीला को वर्णन किए ।

* भाव प्रकाश

अथान्तरः— मंत्र सुनायो तासों सूरदास के सगरे जनम के दोष मिटाये, और सात भक्ति भई। पाछें ब्रह्म-सम्बन्ध करवायो, तासों सात भक्ति और नवधा भक्ति की सिद्धि भई। सो. रही प्रेमलक्षणा, सो दशम स्कन्ध की अनुक्रमणिका सुनाए। तब संपूर्ण पुरुषोत्तम की लीला सूरदास के हृदय में स्थापन भई। सो प्रेम-लक्षणा भक्ति सिद्ध भई।

अनुक्रमणिका तें संपूर्ण लीला स्फुरी सो क्यों जानिये ? सो जानिये, जो–दशम स्कन्ध की सुबोधनी में मंगलाचरण की प्रथम कारिका किये हें । सो कारिका:—

"नमामि हृदये शेषे लीला-क्षीराब्धिशायिनम्
लक्ष्मी-सहस्रलीलाभिः सेव्यमानं कलानिधिम्

यह मंगलाचरन । याके अनुसार श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे संनिधान ताही समे पद कहे । सोपद :—

॥ राग देवगंधार ॥

चकई री ! चलि चरण सरोवर जहां न प्रेम-वियोग ॥
जहां× भ्रम निसा होति नाहिं कबहूं ते सायर रस जोग ॥१॥
जहां सनक – सिव हंस, मीन मुनि नख रवि होत प्रकास ॥

× जहां भ्रम निसा होति नहीं कबहूं उह सायर सुख जोग
(अष्टछाप और वल्लभ सं० २०६)
निसि दिन राम राम की भक्ती भय रुज नहिं दुख सोग,
(सूरसुधा, २७)
– जहां सनक मीन, हंस सिव मुनिजन, नख रवि-प्रभा प्रकास (सूरसुधा २७)
सनक से हंस, मीन से सिवमुनि, मुनिजन, नख रवि-प्रभा०
(अष्ट० और वल्लभ० २०७)

प्रफुलित कमल निमिष+नहिंससि-डर गुंजत निगम सुवास॥२
जहिं सर सुभग मुक्ति मुक्ताफल सुकृत विमल* जल पीजे॥
सो रस छांडि कुबुद्धि विहंगम! इहां कहा रहि कीजें?॥३॥
तहां श्री-सहस्र सहित नित क्रीडत§ सोभित 'सूरजदास'॥
अब न सुहाय विषय रस छालर वा समुद्र की आस॥४॥

यह दसमस्कंध की कारिका में कह्यो हे :–"लक्ष्मी-सहस्र लीलाभिःसेव्यमानं कलानिधिम्" तेसे सूरदासजी नें या पद में कह्यो हे:–"तहां श्री सहस्र सहित नित क्रीडत सोभित सूरजदास"। या भांति सों पद किए। तातें जानि परी जो– संपूर्ण सुबोधिनी सूरदास कों फुरी।

सो यह पद पहलो करिके ताही समें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों सुनायो। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु बोहोत प्रसन्न (भए। और जानें जो–अब) लीला को अभ्यास

+सूर-सुधा २७ का पाठ? *सुकृत अमृत रस० (सूरसुधा २७) सुकृति विमल० (अग्र० और वल्लभ० २०७)
§ लक्ष्मी सहित होत नित क्रीडा सोभित० (सूरसुधा २७)

भयो (सो तब आचार्यजी आपु श्रीमुख तें सूरदास सों आज्ञा किये जो–सूर ! कछु नंदालय की लीला गावो) पाछे सूरदासजी नें नंद-महोच्छव वर्णन कियो। (सो पद)

* राग देवगंधार *

व्रज भयो महरि के पूत जब यह बात सुनी।
सुनि आनंदे सब लोक गोकुल गनक गुनी॥
ग्रह-लगन नखत पल सोधि कीन्ही वेद-धुनी।
व्रज पूरव पूरे पुन्य रूपी कुल सुथर थुनी *॥
सुनि धाईं सब व्रज-नारि सहज सिंगार किए।
तन पहिरे नौतन चीर, काजर नैंन दिए॥
कसि कंचुकी, तिलक लिलार, सोभित हार हिए।
कर कंकन, कंचन थार मंगल साज लिए॥
सुभ स्रवननि तरल तरोन, वेनी सिथिल गुही।
सिर वरषत सुमन सुरेस मानों मेघ फुही॥
उर अंचल उडत न जान्यो सारी सुरंग सुही।
मुख मंडितरोरी रंग सेंदूर मांग छुही॥
ते अपने अपने मेल निकसीं भांति भली।

* बृज पूरव पूरे० यह तुक, सूरसागर (नागरी प्र०) पत्र ४२२ में नहीं है।

मानों लाल मुनैयनि पांति पिंजरन चूरि चली ॥
वे गावें मंगल गीत मिलि दस पांच अली।
मानो भोर भए रवि देखि फूली कमल कली ॥
पिय पहिले पहुंचीं जाइ अति आनंद भरी।
लई भीतर भवन बुलाइ, सब सिसु पांइ परी ॥
एक वदन उघारि निहारि, देत असीस खरी।
चिरजीवो जसोदा नंद! पूरन काम करी ॥
धनि दिन, धनि यह राति, धनि यह पहर, घरी।
धनि धनि महरि की कूखि भाग सुहाग भरी ॥
जिन जायो एसो पूत सब सुख फरनि फरी।
थिर थाप्यो सब परिवार मन की सूल हरी ॥
सुनि ग्वालनि गांइ बहोरि बालक बोलि लिए।
गुहि गुन्जा, घसि घनसार B अंग अंग चित्र ठए ॥
सिर दधि माखन के माट, गावत गीत नए।
डफ, झांझ, मृदंग बजावत सब नंद-भवन गए ॥
मिलि नाचत, करत किलोल, छिरकत हरद दही।
मानो बरषत भादों मास नदी दधि S दूध बही ॥
जाको जहीं जहीं चित जात, कोतिक तहीं तहीं।
रस आनंद मगन गुवाल काहू बदत नहीं ॥

B वन-धातु अंगनि चित्र ठए (सूरसागर नागरी प्र०
S घृत दूध बही („)

एक धाइ नंद जू पें जाइ पुनि पुनि पांइ परें।
एक आपु आपु ही मांझ हंसि हंसि अंक P भरें॥
एक अभरन लेहिं उतारि देत न संक करें।
एक दधि रोचन दूब सबनि के सीस धरें॥
तब नंद न्हाय भए ठाढे अरु कुश हाथ धरे।
नांदी-मुख पितर पुजाय अंतर सोच हरे॥
घसि चंदन चारु मगाय, विप्रनि तिलक करे।
द्विज गुरुजन कों पहराय सबनि के पांइ परे॥
गन गैयां गनिय न जाय, तरुनी बच्छ बढीं।
ते चरहिं जमुना के S काछ, दूने दूध चढीं॥
खुर रूपे, तामे पीठि, सोने सींग मढीं।
ते दीनीं द्विजनि अनेक हरषि असीस पढीं॥
सब अपने मित्र, सुबंधु हंसि हंसि बोलि लिए।
मथि मृगमद मलय कपूर माथे तिलक किए॥
उर मनिमाला पहिराय, बसन विचित्र दिए।
मानों बरषत मास असाढ दादुर मोर जिए॥
वर बंदीं, मागध, सूत आंगन भवन भरे।
ते बोलें ले ले नाम हित कोऊ ना बिसरे॥
जिन जो जांच्यो सो दीनो, अस नंदराय ढरे।

P मोद भरे। (सूरसागर नागरी प्र० ४२३)
S जमुन के तीर (सूरसागर नागरी प्र० ४२४)

अति दान, मान, परिधान पूरन काम करे।
तब रोहिनी + अंबर मँगाइ सारी सुरंग घनी।
ते दीनी वधुनि बुलाइ जैसी जाहि बनी ॥
ते अति-आनंदित बहुरि निज गृह गोप धनी।
मिलि निकसी देत असीस, रुचि अपनी अपनी X
पुर, घर घर, भेरि, मृदंग, पटह, निसान बजे।
वर बांधी वंदनवार अरु ध्वज, * कलस सजे ॥
ता दिन ते वे व्रज-लोग सुख, संपति न तजे।
सुनि 'सूर' सबनि की यह गति जिन हरि-चरन भजे ॥

सो यह पद सूरदासजी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगें गाइ सुनायो ॥

+ अंबर और मँगाइ सुरंग सारी (४२४
X मिलि निकसी० यह शुद्ध नहीं है। [,, ,,]
* कंचन कलस सजे।

* इस स्थल पर भावप्रकाश वाली वार्ता में यह पाठ है :—
"सो यह बड़ी बधाई गाई। सो श्रीनंदरायजी के घर को वर्णन कियो। तहाँ ताँई तो श्रीआचार्यजी आपु सुने। ता पाछे गोपीजन के घर को वर्णन करन लागे तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुखतें सूरदास सों कहे जो—
सुनि सूर सबन की यह गति जिन हरि-चरन भजे।
सो या भोग को [illegible] करि दिये"। *

सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु बोहोत प्रसन्न भए। और आप श्रीमुख तें कहे, जो-जानो (सूर नंदालय की लीला में) निकट ही हते (ठाडे हें सो एसो कीर्तन गायो)।

भावप्रकाश *

सो यातें जो–वृज-भक्तन को आनन्द है सो भगवदीय के हृदय में अनुभव योग्य है। सो बाहिर प्रकाश होय, तासों सूरदास कों थामि दिये। और सूरदासजी के हृदय में यह भी आयो हतो जो-- मैंने सेवक किये हैं, तिन की कहा गति होइगी ?

तब श्रीआचार्यजी ने कही—"सुनि सूर ! सबन की यह गति जिन हरि-चरन भजे"।

पाछें सूरदासजी ने जो अपने सेवक किए हते तिन सबनि कों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास नाम दिवायो। पाछें सूरदासजी ने बोहोत पद किए। तामें संपूर्ण भगवद्-लीला को वर्णन किए।

पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें सूर-दासजी कों पुरुषोत्तम-सहस्त्रनाम सुनायो। तब सूरदासजी कों (के हृदय में) श्रीभागवत की स्फूर्त्ति भई (लीला स्फुरी सो सूरदास ने प्रथम स्कन्ध की भागवत सों द्वादश स्कन्ध पर्यन्त कीर्तन किये। तामें अनेक दानलीला, मानलीला आदि वर्णन किए हैं)। पाछे जो पद किए सो श्रीभागवत अनुसार किए।

तातें वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के एसे कृपापात्र भगवदीय हैं।

पाछे श्रीआचार्य जी महाप्रभु दिन द्वै चारि गौघाट विराजे, फेरि व्रज कों पधारे। तब सूरदासजी हू श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के साथ व्रज कों आए।

(वार्ता द्वितीय)

अब जो श्रीआचार्यजी महाप्रभु व्रजकों पधारे, सो प्रथम श्री गोकुल पधारे। तब श्री आचार्यजी महाप्रभुन के साथ सूरदासजी हू श्रीगोकुल आए। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने श्रीमुखसों कह्यो जो- सूर! श्रीगोकुल को दरसन करो।

तब सूरदासजी श्रीगोकुल कों (साष्टांग) दंडवत किए। दंडवत करत मात्र श्रीगोकुल की लीला सूरदासजी के हृदय में स्फुरी। श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें प्रथम सकल लीला श्रीभागवत की स्थापी हें। तातें श्रीगोकुल के दरसन करत मात्र श्रीगोकुल की सकल लीला स्फूर्ति भई।

तब सूरदासजी नें विचार्यो जो- श्रीगोकुल की लीला को वर्णन करिए (कैसे करों? सो काहे तें जो-) श्रीआचार्यजी महाप्रभुन

कों बाल लीला के स्वरूप में श्रीनवनीतप्रिय जी के स्वरूप में बड़ी आसक्ति हे, तातें श्रीनवनीतप्रियजी को कीर्तन श्रीगोकुल की बाल-लीला को वर्णन सुनायके सो पद–

* राग बिलावल *

सोभित कर नवनीत लिए ।
घुटुरुन चलत रेणु, तनु मंडित मुखपर [B]दधि को लेप किए ॥
चारु कपोल, लोल लोचन छवि [S]गोरोचन को तिलक दिए ।
लट लटकनि मनो मत्त मधुप गन, मादक मद हि पिए ॥
कठुला कंठ, वज्र, केहरि-नख राजत है [P] अरु रुचिर हिए ।
धन्य 'सूर' एको पल यह सुख, कहा [×] भयो सत कल्प जिए ॥

B. मुख दधि लेप० (सूर-सुधा ६५)

S. लोचन गोरोचन तिलक० (सूर-सुधा ६५)

P. निज उर रुचिर (सूरसुधा ६५)

×, को सत कल्प० (सूरसुधा ६५)

यह पद सूरदासजीनें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे गायो, सो सुनिके श्री आचार्यजी महाप्रभु बोहोत प्रसन्न भए। पाछें और हू पद बाल-लीला के सूरदासजी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे गाइ सुनाए। पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने विचार्यो जो-श्रीनाथजी के (को मंदिर तो समरायो) इहां और तो सब सेवा को मंडानभयो, कीर्त्तन की सेवा को मंडान नाहीं भयो। सो सूरदासजी कूं कीर्त्तन की सेवा दीजिए (श्रीनाथजी के पास राखिये। तब समे समे के सगरे कीर्तन को मंडान भयो चाहिये। सो आगे वैष्णव जन सूरदास के पद गाइके कृतार्थ बोहोत होइगें)।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप श्री-गोवर्द्धननाथजी के दरसन कों पधारे, सो सूरदासजी कों हू साथ लिए गए। सो श्रीनाथ-

जीद्वार जाइ पोहोंचे । तब आप तो स्नान करिके मंदिर में पधारे। तब सूरदासजी सों कह्यो जो–सूर ! ऊपर आउ, श्रीनाथजी को दरसन करि ।

तब सूरदास नें स्नान करिके परवत ऊपर जाइके श्रीनाथजी के दरसन किए।

तब श्रीनाथजी के संनिधान श्रीआचार्य जी महाप्रभुन नें कह्यो, जो- सूर ! कछु श्रीनाथ जी कों सुनावो । तब सूरदास नें प्रथम विज्ञप्ति करिके दीनता को पद करिके श्रीनाथ जी को सुनायो❋ । सो पद—

भावप्रकाश *

परन्तु भगवदीय जितने हैं, सो तितनेन की यही बोली हैं जो- अपुने को हीन कहत हैं। सो यह भगवदीयन को लच्छण है और जो कोई अपने को आछो कहै और आपुनी बड़ाई करे, सो भगवान तें सदा बहिर्मुख है।

तब सूरदासजी ने महात्म अरु लीला एसो पद, एक नयो करिके (श्रीआचार्यजी के और श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगे) सुनायो ।

सो पदः—

* राग गौरी *

कौन सुकृत इन ब्रज-बासिन को वदत विरंचि मुनि, शेस*।
श्रीहरि जिनके हेत प्रगटे मानुष-वेस ॥ ध्रुव
जोतिरूप जग-धाम, जगत-गुरु, जगत-पिता, जगदीस ।
जोग जग्य जप तप व्रत दुर्ल्लभ, सो गृह× गोकुल-ईस ॥
जाके उदर लोक त्रय, जल, थल, पंच तत्व चौखान ।
बालक व्है झूलत ब्रज पलना जसुमति-भवन निधान ॥
इक इक रोम कूप विराट सम,+ आनंद कोटि ब्रह्मंड ।
ताहि उछंग लिए मात जसोदा अपने भरि भुज-दंड ॥
रवि ससि कोटि कला बिच लोचन, त्रिविध तिमिर भजि जात ।
अंजन देत हेत सुत के चख ले कर काजर मात ॥
छिति मिति त्रिपद करी करुणामय बलि छलि दियो है पतार ।
देहरी उलंघि सकत नहीं सो प्रभु, खेलत नंदके द्वार ॥
अनुदिन स्रवत सुधा-रस पंचम चिंतामनि श्री धेनु S ।

* विशेष । राग कल्पद्रुम (लखनऊ) (३७२)
× हरि । ,, ,, ,, ,,
+ रोम विराट कोटि सम अनन्त कोटि० ,, ,, ,,
S अनुदिन सुरतरु पंच, सुधारस चिन्तामनि सुर धेनु ।
रागक. (३७२)

सो तजि जसुमति को पय पीवत, भक्तन कों सुख देनु ॥
वेद, वेदान्त, उनिषद पटरस अरपे भुगते नाहिं ।
सो हरि ग्वालवाल-मंडल में हंसि हंसि जूठनि खाहिं ॥
कमला-नायक वैकुंठ-दायक सुख दुख जिनके हाथ ।
कांध कमरिया, लकुटि, नग्न पद विहरत वन वछ-साथ ॥
करन, हरन, प्रभु दाता, भुगता विश्वंभर जग जानि ।
ताहि लगाइ माखन की चोरी बांध्यो है नंद जू-की रानि ॥
वकी, बकासुर, सकट, तृणावृत, अघ, धेनुक, वृषभास, ।
कंस, केसी कों यह गति दीनी राखे चरन-निवास ॥
भक्त-वछल हरि, पतित-उधारन रहे सकल भरि पूर ।
मारग रोकि परघो हरि-द्वारे पतित-सिरोमनि 'सूर' ॥

सो यह पद गाइ सुनायो । सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु प्रसन्न भये । * सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु ने एसो मार्ग प्रगट कियो, ताके अनुसार ही पद किए ।

श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के मार्ग को स्वरूप कहा है, जो- महात्म्य-ज्ञानपूर्वक सुदृढ

.... इतना अंश भाव-प्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था पर सं० १६६७ की प्रति में यह वार्ता का ही अंश है। केवल कोष्ठान्तर्गत नीचे के अंश भाव-प्रकाश से लिये गये हैं।

स्नेह÷ की तो परम काष्ठा है और स्नेह के आगे भगवान को महात्म्य रहे नाहीं। तातें भगवान् बेर बेर महात्म्य× जतावत हैं। तामें

भावप्रकाश –

(सो सर्वोपरि है। सो श्रीठाकुरजी कों बोहोत प्रिय है) परन्तु जीव माहात्म्य राखे। सो काहे तें? जो-महात्म्य बिना अपराध को भय मिटि जाय। तासों प्रथम दशा में महात्म्य–युक्त स्नेह आवश्यक चहिये। और व्रजभक्तन को स्नेह है सो सर्वोपरि है। तासों भक्तन के स्नेह के आगे श्रीठाकुरजी को महात्म्य रहत नाहीं। सो श्रीठाकुरजी स्नेह के वस होय भक्तन के पाछें २ डोलत हैं। सो जहां ताईं एसो स्नेह नाहीं होय तहाँ ताईं महात्म्य राखनो। सो जब स्नेह को नाम लेके महात्म्य छोडे और ठाकुरजी के आगे बैठे, बात करे, और पीठि देय तो भ्रष्ट होइ जाय। तासों महात्म्य विचारे और अपराध सों डरपे तो कृपा होय। और जब (सर्वोपरि) स्नेह होयगो तब आप ही तें। स्नेह एसो पदार्थ है जो-महात्म्य कूं छुडाइ देयगो। सो दसम स्कन्ध में बर्णन है—

× व्रजभक्तन कों और यशोदाजी कों दिखायो।

पूतना8 करिके, सकट त्रणावर्त्त करि, गर्गाचार्य करि, यमलार्जुन बक, धेनुक दावानल करि, गोवर्द्धन करि, वरुण-लोक वैकुंठ दरसन करिके भगवान् बोहोत महात्म्य दिखायो । परि इन+ भक्तन को स्नेह परम काष्ठापन्न है । तातें ताही समें तो महात्म्य रहे, पाछे विस्मृत होइ जाय । सो भगवान् कों न सुहाय । काहेतें ? जो-स्नेह लौकिक में अपने पति को पुत्रादिकन विषे होत है❀ । परि महात्म्य-ज्ञान

---

8 वध ।

+ व्रजभक्तन को स्नेह परम अद्‌भुत अनिर्वचनीय है । तासो महात्म्य तथा ईश्वर-भाव न भयो । सो एसो स्नेह प्रभु कृपा करि दान करें ताकों आपही तें माहात्म्य छूटि जायगो । और जाको स्नेह पति पुत्र स्त्री कुटुम्ब में तथा द्रव्य में है, और अपने देह सुख मे है, सो भगवान् को महात्म्य छोडि लौकिक रीति करे सो श्रीभगवान् को अपराधी होय । तासों वेद-मर्यादा सहित श्रीठाकुरजी के भय सहित सेवा करे, और सावधान रहे । सो यह श्री आचार्यजी महाप्रभु के मार्ग की रीति है, तासों महात्म्य पूर्वक स्नेह करिये । और महात्म्य पूर्वक स्नेह यह जो-समय समय ऋतु अनुसार सेवा में सावधान रहे, ताको नाम माहात्म्य पूर्वक स्नेह कहिये ।

विषे अतिक्रम होय। जैसे मातृचरन बांधे। और भगवान् एक कार्य में अनेक कार्य लीला करत हैं। तातें भगवान् कों महात्म्य-ज्ञान पूर्वक स्नेह बोहोत प्रिय है। सो एसो महात्म्य प्रभुन को सिद्धांत हैं।

सो सूरदासजी ने या पद में वर्णन कियो है। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु बोहोत प्रसन्न भए।

(पाछे श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-सूर! तुमको पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त फलित भयो है, तासों अब तुम श्रीगोवर्द्धनधर के यहां समय समय के कीर्तन करो। ता समय सेन भोग सरि चुक्यो हतो, सो तब मान के कीर्तन सूरदास ने गाए। सो पद:—

* राग विहागरो *

१ बोलत काहे न नागर बैना०। २ सुखद सेज में पौढे रसिक वर०। ३ पौढे लाल राधिका उर लाइ०)

पाछें सूरदासजी ने (नित्य प्रातः काल के जगाइवे तें लेके सेन पर्यन्त के) सहस्त्रावधि पद किए । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनाए । (इति वार्ता द्वितीय)

(वार्ता तृतीय)

ओर एक समय सूरदासजी मार्ग में चले जात हतें। सो मार्ग में कोऊ (दस पांच जने) चोपडि खेलत हते । सो वा चोपडि के खेल में एसे लीन व्हे रहे, जो काहू आवते जावते की खबरि नाहीं । एसे खेल में मग्न हे । सो देखिके सूरदासजी के संग भगवदीय हे, तिन सूं सूरदासजी नें कह्यो जो- देखो यह प्राणी आपनो जमारो बृथा खोवत हें। ओर श्रीठाकुरजी नें जो मनुष्य--देह दीनी है सो तो अपने सेवा भजन के लिए दीनी है । (सो या देह सों यह प्राणी बृथा हाड कूटत हें सो यामें लौकिक में तो निन्दा है जो-- यह

जुवारी हैं, और अलौकिक में भगवान् सों बहिर्मुखता है। तासों भगवान ने तो एसी इनको मनुष्य-देह दीनी है) तातें चोपड एसी खेली चाहिये। सो एक पद करिके वैष्णवन सों कह्यो। सो पद :—

* राग केदारो *

मन ! तू समुझि सोचि विचारि।
भक्ति विनु भगवन्त दुर्लभ कहत निगम पुकारि॥
साधु संगति डारि पासा फेरि रसना सारि।
दाव अबके पर्यो पूरो उतरि S पेली पारि॥
राखि सत्रह सुनि अठारह, पंच × ही कों मारि।
दूरितें + तजि तीनि काने, चतुर चोक विचारि॥
काम क्रोध A जंजाल भूल्यो, ठग्यो ठगिनी नारि।
'सूर' हरि के भजन विनु चल्यो दोउ कर झारि॥

S कुमति पिछली हारि (?) (सूर-सुधा २६)
× चोर पांचो मारि (सूर-सुधा ३०)
+ डारदे तू तीन काने चतुर चौक निहारि (,, ,,)
A कामरिस मदलोभ मोह्यो पर्यो नागरि नारि (,, ,,)
काम क्रोधडरु लोभ मोह्यो ठग्यो ,, ,,
(सुर सागर ना० प्र० १६३)

कहा समझेगो ? तातें विचार निश्चे चाहिए। ए तीन्यो वस्तु होइ तो भगवदी होइ। तातें ये तीन्यो वस्तु भगवदी कूं अवस्य चाहिए। समुझ कहे, गिननो न आवे, तो गोट कैसे चले ? और सोच सो आगम, जो- मेरे यह दाऊ परे, तो यह गोट चले। और विचार तो वाही में तम्मयता। जो- ये तीन्यो होइ तो चोपडि चली जाय। ❀

(इति वार्ता तृतीय)



*भावप्रकाश वाली वार्ता में यह वार्ता-प्रसंग कुछ विशेष विवरण के साथ इस प्रकार है :—

"जो जैसे पहले समुझे तब चोपडि खेलेगो, सो तैसे ही भगवान् कों जानेगो तो भजन करेगो। और चोपडि में सोच होय जो- एसो फांसा परै तो मैं जीतूं। सो तैसे ही या जीव कों काल को सोच होय, तब यह जीव प्रभु की सरन जाय। और (तीसरी वस्तु जो-)

विचार, सो यह जो– विचार के गोट कों फांसा के दाव कूं चले जो– यहां नांही मारी जायगी इत्यादि । सो तैसे ही विचार वैष्णव कों होय, जो- यह कार्य में करत हूं सो आछो है के बुरो है ? तब यह जीव बुरो काम छोडि कें भगवद्-धर्म की चाल में चले । और चोपडि में फांसा के दाव परें तब दोऊ ओर के मनुष्य पुकारत हैं । सो तैसे ही जगत में निगम जो- वेद, पुराण सो पुकारि कें कहत हैं जो- भक्ति विना भगवान् दुर्लभ हैं, सो तासों कोटि साधन करो । और चोपडि में दूसरो संग मिले तब चोपडि खेली जाय, सो तैसे ही भगवान् की भक्ति में भगवदी वैष्णव की संगति होय तब भक्ति बढे । और चोपडि खेलवे वारे के मन में (जैसे) अपने दाव को सुमिरन रहत है जो– यह दाव परे तो मैं जीतूं, सो तैसे ही रसना सों यह जीव भगवद्-वार्ता में मन लगाइ के सब रस को सार रूप (एसो भगवन्नाम) कह्यो करे । और (जैसे) चोपडि में सुन्दर पूरो दाव परे तब गोट पार जाय, और तब उतरि के घर में आवे और मरिवे को भय मिटे । सो तैसे ही मनुष्य-देह संसार सों पार उतरिवे कों पूरो दाव बड़ी पुन्याई सों मिले है । सो तो या देह सों भगवदाश्रय करि संसार तें पार उतरि जाय । "राखि सत्रे सुनि अठारे" चोपडि में सत्रे अठारे बडे

दाव हैं, सो तैसे ही जगत में सब पुरान हैं सो तिन हीं कों राखि, 'सुनि अठारे' जो- श्रीभागवत सुनन कों (और) पुरान हू कों धरि राख। और पांचो जो-इन्द्रिय, पञ्चपर्वा अविद्या है सो इन कूं मार। सो काहे तें ? जो शास्त्र के वचन हैं सो—

'पतङ्ग मातङ्ग कुरङ्ग भृङ्ग मीना हताः पञ्चभिरेव पञ्च'
एकः प्रमादी स कथं न हन्यते यः सेवते पञ्चभिरेव पञ्च॥

१ पतंग, नेत्र विषय तें दीपक में मरे। २ हाथी, स्पर्श-विषय करि मरे ३ कुरंग, श्रवन-विषय तें मरे। ४ भृंग, गंध नासिका-विषय तें मरे। ५ मीन-जिभ्या-विषय तें मरे। सो एक विषय तें मरि परै, सो मनुष्य तो पांचन को सेवन करत है, सो निश्चय काल इनको भक्षन करे।

तासों 'नाद' पांचो मारि, सो जैसे चोपडि में गोट मारत हैं। और चोपडि में सब तें छोटो दाव तीनि काने हैं, सो कोऊ नाहीं चाहत हैं। तैसे ही तू तीन- तामस, राजस, सात्विक यह माया के गुण हैं, सो सगरो संसार सोई चोक है, सो यामें चतुराई सों डार। चतुराई यह जो- इनकों डारि पाछे इन की ओर देखे मति। सो जैसे

(वार्ता चतुर्थ)

और सूरदासजी सों श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप 'सागर' कहते। सो सागर काहे तें कहियत हें ? जामें सब पदारथ होइ, ताकों 'सागर' कहिए। सो सूरदासजी ने लक्षावधि पद किए, सो सब जगतमें प्रसिद्ध भए। सो सूरदासजी के पद देसाधिपति ने सुने। सो सुनि यह विचारे, जो—काहू रीति सूं सूरदासजी सों मिलिए। सो भगवद् इच्छा तें सूरदासजी देसाधिपति सों मिले।

चोपडि में सब की सुध बुध भूलि जात है, सो तब ठग्यो गयो। सो तैसे काम क्रोधादि जंजाल है, और स्त्री रूप भगवद्-माया है, सो यह सगरे जगत को ठगेगी। सो जैसे चोपडि खेलिके हारिकें सब दोऊ हाथ झारिकें उठें सो तैसे ही श्रीठाकुरजी के पद कमल के भजन विना दोऊ हाथ झारिके या मनुष्य ने देह खोई। जो कछु भलो परोपकार संग नाहीं लियो।

सो या प्रकार वैष्णव सुनिके सूरदास के ऊपर बहोत प्रसन्न भये"।

सो सूरदासजी तें देसाधिपति ने कह्यो जो- सूरदासजी ! मैनें सुन्यो है, जो तुमनें विष्णु-पद बोहोत किए हैं। तातें कछु जस गावो।

तब सूरदासजी ने देसाधिपति-आगे एक पद गायो*। सोपद :—

---

*भावप्रकाश वाली वार्ता में यह वार्ता-प्रसंग विशेष विवरण के साथ इस प्रकार है :—

"और सूरदास कों जब श्रीआचार्यजी देखते तब कहते, जो- आवो 'सूर सागर' ! सो ताको आशय यह है जो- समुद्र में सगरो पदार्थ होत है। तैसे ही सूरदास ने सहस्रावधि पद किये हैं। तामें ज्ञान वैराग्य के न्यारे न्यारे, भक्ति-भेद, अनेक भगवद्-अवतार, सो तिन सबन की लीला को वरनन कियो है।

पाछे उनके पद जहां-तहां लोग सीखि के गावन लागे। सो तब (एक समय) तानसेन ने एक पद सूरदास को सीखिके अकबर पातशाह के- आगे गायो। सो पद:—

* राग नट *

यह सब जातो भक्त के लच्छन ॥

यह सुनि देशाधिपति अकबर ने कह्यो- जो- एसे लच्छन वारे भक्तन सों मिलाप होय तो कहा कहिये ? सो तान-सेन ने कही जो- जिनने यह कीर्तन कियो है सो व्रज में रहत हैं। और सूरदासजी उनको नाम है।

यह सुनि देशाधिपति के मन में आई जो- कोई उपाय करिके सूरदास सों मिलिये । पाछें देशाधिपति दिल्ली तें आगरा आयो । तब अपने हलकारान सों कह्यो— जो- व्रज में सूरदासजी श्रीनाथजी के पद गावत हैं, सो तिन की ठीक पारिकें मोकों श्रीमथुराजी में खबरि दीजियो । और (जो) यह बात सूरदास जानें नाहीं ।

तब उन हलकारान ने 'श्रीनाथजीद्वार' में आइके खबरि काढी । तब सुनी जो— सूरदासजी तो मथुराजी गये हैं । सो तब वे हलकारा श्रीमथुरा में आइके सूर-दास कों नजरि में राखे, जो— या समय यहां बैठे हैं। तब उन हलकारान नें देशाधिपति कों खबरि करी जो— हजी साहब ! सूरदासजी तो मथुराजी में हैं ।

॥ रागबिलावल ॥

मना रे ! कर माधव सों प्रीति । *
काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह तू छांडि सकल विपरीति ॥ ध्रुव
भौंरा भोगी बन भ्रमे मोद न माने ताप ।
सब कुसुमनि मिलि रस करे, कमल बंधावे आप ॥
सुनि परमित पिय-प्रेम की चात्रक चितवे वारि ।
घन-आसा सब दुख सहे, अनत न जाचे वारि ॥
देख हु करनी कमल की कीन्हीं रवि सों हेत ।
प्रान तजे प्रेम न तजे सूख्यो सर हि समेत ॥
दीपक पीर न जानहीं पावक जरे पतंग ।
तन तो तिहि ज्वाला जर्यो चित न भयो रस-भंग ॥
मीन वियोग न सहि सके नीर न पूछे बात ।
देखि जु तू ताकी गतिहि रति न घटी तन जात ॥
प्रीति परे वाकी गनो चित लै चढत अकास ।

तब सूरदास कूं अकबर पातशाह ने दस पांच मनुष्य बुलाइवे कों पठाये । सो सूरदासजी देशाधिपति के पास आए । तब देशाधिपति ने उनको बोहोत आदर सन्मान कियो) ।

---

* यह पद 'सूर-पचीसी' नाम से प्रसिद्ध है ।

तहं चढ़ि ताहि जु S देखिही भू परि तजत उसास ॥
सुमिर सनेह कुरंग को श्रवननि राच्यो राग ।
धरि न सक्यो पग पिछवनो सर सन्मुख उर लाग ॥
देखि जरनि जड नारिकी जरत प्रेत के संग ।
चिता न चित फीको भयो, राची पिय के संग ॥
लोक वेद वरजै सबै नैननि देख्यो त्रास ।
चोर न जिय चोरी तजे सरवस सहे विनास ॥
सब रस को रस प्रेम है, विषई खेले सार ।
तन मन, धन, जोवन खस्यो तऊ न माने हार ॥
तैं जु रतन पायो भलो जान्यो साधन साज× ।
प्रेम कथा अनुदिन सुनी तऊ न उपजी लाज ॥
सदा संगाती आपनो जिय को जीवन प्रान ।
सो तू विसरयो सहज ही हरि ईश्वर भगवान ॥
वेद, पुरान, स्मृति सबै सुर नर सेवहिं जाहि ।
महामूढ अग्यान मति क्यों न संभारे ताहि ? ॥
खग, मृग, मीन, पतंग लों मैं सोधे सब ठोर ।
जल, थल, जीव जिते तिते कहों कहां लगि और ॥
प्रभु पूरन पावन सखा प्रानन ही के नाथ ।

S तीय जु देखिये परत छांड उर श्वास, । (सूर-सुधा ३२)
× जान्यो साधु समाज, (सूर-सुधा ३३)

परमदयालु कृपालु प्रभु जीवन जिनके हाथ ॥
गर्भवास अति त्रास में जहां न एकौ अंग ।
सुनि सठ ! तेरे प्रानपति तहांउन छांड्यो संग ॥
दिन रातिनि पोषत रहे, यथा तंबोली पान ।
वा दुख तें तोहि काढिके गहि दीनो पय-पान ॥
जिहिं जडतें चैतन कियो रचि गुन तत्व विधांन ।
चरन, चिकुर, कर, नख दिए नैन, नासिका, कान ॥
असन, वसन बहु विध दिए ओसर ओसर आनि ।
मात, पिता, भैया दिये नइ रुचि+ नइ पहिचानि ॥
कुटुंब, स्वजन, परिजन बढ्यो सुत, दारा, धन, धाम ।
महामोहP विषई भयो चित आकरष्यो काम ॥
खान पान, परिधान में जोवन गयो सब बीति ।
(ज्यों) विरही B परत्रिय संग रस्यो, भोर भए विपरीति ॥
जैसे सुख ही धन बढ्यो, तैसे तनहिं अनंग ।
धूम बध्यो, लोचन खस्यो, सखान छूस्यो रंग ॥
जम जांच्यो A सब जग सुन्यो, वाढ्यो अजस अपार ।

+ नई रुची पहिचानि (सूर-सुधा ३४)
P महामूढ विषयी० (,, ,,)
B ज्यों बिट परि परतीय-वश भोर भए भय भीति (,, ,,)
A जान्यो (सूर-सुधा ३४)

बीच न काहू तब कियो-(जम) दूतनि X दीनी मार ॥
को जाने केवार मरयो D एसे कुमति कुमीच ।
हरि सों हेत विसारिके सुख चाहत है नीच ! ॥
जो पे जिय लज्जा नहीं, कहा कहों सौ वार ।
एक हु अंग न हरि भज्यो, सुनि सठ "सूर" गंवार २५

यह पद सूरदास ने देसाधिपति केआगे कह्यो ।

❀सो यह पद कैसो है या ! पद को अहर्निस, ध्यान रहै तो-भगवद् अनुग्रह की सदा स्फूर्त्ति रहै, और संसार तें वैराग्य आवे, और दुसंग को सदा भय रहै । भगवदी के संग की सदा इच्छा रहै, श्रीठाकुर जी के चरणारविंद पर सदा मन रहै, देहादिक ऊपर स्नेह न होइ❀ ।

X दूतनि काढ्यो वार (सूर-सुधा ३४)
D कह जानो कहँवा मुवो एसे (,, ,,)
* ❀ इतना अंश भावप्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था परन्तु सं १६६७ की प्रति में यह वार्ता का मूल अंश ही है ।

एसो पद सूरदासजी ने कह्यो, सो सुनिके देसाधिपति बोहोत प्रसन्न भयो (पाछे देशाधिपति के मन में आई जो- सूरदासजी की परीक्षा देखूं। सो भगवान को आश्रय होइगो तो ये मेरो जस गावेंगे नांही। सो यह विचारिके देसाधिपति ने) और कह्यो जो-सूरदासजी! मोकों परमेश्वर ने राज दियो है, सो सब गुनी मेरो जस गावत हैं। और तुम बडे गुनी हो, तातें तुम कछू मेरो जस गावो (सो तिहारे मन में जो-इच्छा होय सो मांगि लेहु) सो यह देशाधिपति ने कह्यो तब सूरदासजी ने एक पद और गायो। सो पद:-

॥ राग केदारो ॥

नांहिन रह्यो मन में ठौर।
नंद-नंदन अछत कैसे आनिए उर और॥
चलत, चितवत, द्यौस, जागत, सुपन सोवत राति।
हृदय तें वे मदन-मूरति छिन न इत उत जाति॥
कहत कथा अनेक ऊधो! लोक-लोभ दिखाइ।

कहा करूँ चित प्रेम पूरति, घट न सिंधु समाइ ॥
स्याम गात, सरोज आनन, ललित गति, मृदु हास ।
'सूर' एसे दरस बिनु ए मरत लोचन प्यास ॥

यह पद सूरदासजी ने गायो । सो सुनिके देसाधिपति ने मन में बिचार्यो, जो- ए मेरो जस काहे को गावेंगे ? जो- इनकों काहू बात को लालच होइ तो मेरो जस गावें? ए तो परमेश्वर के जन हैं (सो ये तो ईश्वर को जस गावेंगे)

और सूरदासजी ने या पद के समाप्ति में गायो है- "सूर एसे दरस बिनु ए मरत लोचन प्यास ।" सो देसाधिपति ने पूछ्यो, जो-सूरदासजी ! तुमारे लोचन तो देखिवे में आवत नाहीं, सो प्यासे कैसे मरत हैं ? (सो यह तुम कहा कहे ?

तब सूरदासजी ने कही जो- या बात

की तुमकों कहा खबरि है ? जो– ये लोचन तो सबके हैं, परन्तु भगवान् के दरसन की प्यास काहू कों है ? जो– श्रीभगवान् के दरसन के जे प्यासे नेत्र हैं, सो तो सदा भगवान् के पास ही रहत हैं। सो स्वरूपानन्द को रस-पान छिन छिन में करत हैं, और सदा प्यासे मरत हैं) और बिनु देखे तुम उपमा देत हो।

तब सूरदासजी तो कछू बोले नाहीं। तब देसाधिपति फेरि बोल्यो। जो– इनके लोचन हैं, सो परमेश्वर के पास हैं। सो उहां देखत हैं, सो वर्णन करत हैं (और कों देखत नाहीं)।

पाछे देसाधिपति ने मन में कही। जो– इनको कछू दीजिए। परि ये तो भगवद्दी हैं। इन कों काहू बात की इच्छा नाहीं। तब देसाधिपति ने कही। सो सब नाहीं कीनी।

तब पंडित कवीश्वरन ने कही जो—तुम कैसे जाने जो- यह सूरदास को पद नांही ? जो—यह तो सूरदास को ही पद है । तब पातशाह ने अपने पास सों सूरदास को पद अपने कागद के ऊपर लिखायो। और वे पंडित कवीश्वर सूरदास को भोग (छाप) को बनाइके लाये सो दोऊ कागद जल में धरिके कह्यो जो- ईश्वर सांचे होइ तो या बात को न्याव करि दीजो। सो यह कहि जल में डारि दिए। सो उन पंडितन (कवीश्वरन) को पद बनायो हतो सो कागद गलिके जल में भीजि गयो। और सूरदास को पद हतो सो कागद जल में नाहीं भींज्यो।X

Xभावप्रकाश

सो या भांति सो, जो- जिन भगवदीयन कों भगवान मिले हैं उन के पद जो- गाइगो सो संसार सों तरेगो। और चतुराई करि लौकिक मनुष्य के काव्य के कीर्तन कवित्त जो- गावेगो, सो या प्रकार सों संसार में डूबेगो।

तब सिगरे पंडित कवीश्वर लज्जा पाइके नीचो माथो करिके अपने घर कों गए।

सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे परम कृपापात्र भगवदी हते)* ।

(इति वार्ता चतुर्थ)

(वार्ता पञ्चम)

बहुरि सूरदासजी श्रीनाथजीद्वार आइके बोहोत दिन ताईं श्रीनाथजी की सेवा कीनी। (सो) बीच बीच में (जब कुंभनदासजी, परमानन्ददासजी के कीर्तन के ओसरा आवते तब सूरदासजी श्रीगोकुल में) श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन कों श्रीगोकुल आवते।

सो एक समे सूरदासजी श्रीगोकुल आये हते। श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन किए। तब बाल-लीला के पद श्रीनवनीतप्रियजी कों

---

* इतना प्रसंग सं० १६६७ वाली वार्ता की प्रति मे नहीं है

बोहोत सुनाए। सो सुनिके श्रीनवनीतप्रिय-जी (श्रीगुसांइजी) सूरदासजी के ऊपर बोहोत प्रसन्न भए।

पाछे श्रीगोसांईजी ने संस्कृत में एक पालना कियो। सो पालना श्रीगुसाईजी ने सूरदास कों सिखायो। सो पलना सूरदास ने ताही समे श्रीनवनीतप्रियजी पालने झूलत हैं, ता समे गायो। सो पद:—

॥ राग रामकली छन्द चर्चरी ॥

प्रेङ्ख पर्यङ्क शयनं ! चिर विरह-तापहरमतिरुचिरमीक्षणं प्रकटय प्रेमायनं ध्रु० तनुतर द्विज-पंक्तिमतिललितानि हसितानि तव वीक्ष्य गायकीनाम्॥ यदवधि परमेतदाशया समभव- ज्जीवितं तावकीनाम् ॥१॥ तोकता वपुषि तव राजते दृशि तु मदमानिनी-मानहरणम्। अग्रिमे वयसि किमु भावि कामेऽपि निजगोपिका-भावकरणम् ॥२॥ व्रज-युवति हृत्कनकाचलानारोढुमुत्सुकं तव चरण-युगलम्। तच्चुमुहुरुन्नमनकाभ्यासमिव नाथ! सपदि कुरुते मृदुल

मृदुलम् ॥३॥ अधिगोरोचनातिलकमलकोद्ग्रथितविविध-मणिमुक्ताफलविरचितम् ॥ भूषणं राजते मुग्धताऽमृत-भरस्यंदि वदेनेन्दुरासितम् ॥४॥ भ्रूतटे मातृरचिताऽञ्जन-बिंदुरतिशयितशोभया दृग्दोषऽमपनयन् ॥ स्मर-धनुषि मधु पिबन्नलिराज इव राजते प्रणयि-सुखमुपनयन् ॥५॥ वचनरचनोदारहाससहजस्मितामृत-चयैरार्त्ति भारमप-नयनं ॥ पालय सदाऽस्मानस्मदीय श्रीविट्ठले निजदास्यमुपनयन् ॥६॥

यह पद सूरदास ने गायो। पाछे या पद के अनुसार सूरदासजी ने बोहोत (पद) करिके श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनाए।

सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए।

पलना के अनुसार पद गाए। सो पद:—

॥ राग विलावल ॥

बाल विनोद आंगनि की डोलनि।
मनिमय भूमि सुभग नंदालय, बलि बलि गई तोनरी बोलनि॥
कठुला कंठ, रुचिर, केहरि-नख बनमाला बहु लई अमोलनि।
बदन सरोज तिलक गोरोचन, लट लटकनि मधुपगति लोलनि

लोन्यौ[S] कर परसत आनन पर कछुक खात कछुलग्यो कपोलनि
कहि जन 'सूर' कहा वनि आवे धन्य नंद-जीवन जग-तोलनि ॥

॥ राग बिलावल ॥

गोपाल दुरे हैं माखन खात ।
देखि सखी ! सोभा जु वढी अति स्याम मनोहर गात ॥
उठि-अवलोकि ओट ठाढी व्है, जिहिं विधि नहीं[D] लखि लेत ।
चकत नैन चहूंधा चितवत, ओर सखनि कों देत ॥
सुन्दर कर आनन समीप हरि × राजत इहि आकार ॥
मनु सरोज विधु वैर वंचि करि, लिए मिलत उपहार ।
गिरि गिरि परत, वदन तें उर पर द्वै+ दधि-सुत के विंदु ॥
मानहु सुभग सुधा-कन वरषत पियजन[X] आगम इंदु ।
बाल-विनोद विलोकि 'सूर' प्रभु थकित* भई ब्रज-नारि ॥
फुरति वचन न वरजिवे को मन,[Z] रही विचारि विचारि ।

S कर नवनीत परस आनन सों० (सूर-सुधा ६८)

D विधि हौं लखिलेत० (सूर-पंचरत्न ४१)

× अति राजत० (,, ,,)

+ द्वै द्वै दधि-सुत विंदु । (,, ,,)

X लखि गगनांगन इन्दु । (,, ,,) प्रियतम (राग-कल्प, ३२१)

* शिथिल (,, ,,)

Z फुरैम''' '''कारन (राग कल्प, ३२१)

॥ राग बिलावल ॥

देखो माई ! हरिजू की लोटनि ।
इह छवि निरखि २ नंदरानी अंसुवा पूरि ढरि परत करोटनि ।
परसत आनन मनु रवि कुंडल, अंबुज स्रवत सीपसुत जोटनि॥
चंचल अधर, चरन कर चंचल, मंचलि अंचल गहत बकोटनि ।
लेत छिडाइ महरि-कर सों कर दूरि भई देखत दुरि ओटनि ॥
'सूर' निरखि मुसिकाइ जसोदा मधुर मधुर बोलत मुख चोटनि

॥ राग बिलावल ॥

मैया ! मोहि बड़ो करिलैरी X ।
दूध, दही, घृत, माखन, मेवा जब मागों तब देरी ॥
कछुक हौंस× राखेहु जिनि मेरी, जोइ जोइ मोहि रुचैरी ।
होऊं सबल सबहिन में जैसे, सदा रहों निरभैरी ॥
रंग-भूमि में कंस पछारों घीसि S बहाऊं बैरी ।
'सूरदास' स्वामी की लीला मथुरा राज B करैरी ॥

X करिबे री (सूर-सुधा ७६), करि देरी (सूर-पंचरत्न ३७)
× कछू-हवस राखे जिन मेरी० (सूर-सुधा ७६)
S पछारों कहाँ कहां लों मैं री (सूर-सुधा ७६)
B मथुरा राखों जौरी । सुन्दर-स्याम हंसत जननी सों नंद बबा की सौ री (सूर-पंचरत्न २८)
मथुरा धसि खोजै री । सुन्दर ....नंद व्वा ही पैरी ॥
मथुरा राखों जैरी (सूरसागर नागरी ७ ५००) (सूरसुधा ७६)

॥ राग विलावल ॥

बलि बलि जांउ मधुर सुर गावहु ।
अबकी बेर मेरे कुंवर कन्हैया नंदहिं नाचि दिखावहु ॥
तारी देहु आपने कर की परम प्रीति उपजावहु ।
आन जंतु धुनि सुनि डरपत कित ? मो भुज कंठ लगावहु ॥
जिनि संका जिय करो लाल ! मेरे काहे कों भरमावहु ।
बांह उठाइ कालिह की नाई धोरी धेनु बुलावहु ॥
नाचहु नेंकु जाउं बलि तेरी, मेरी साध पुजावहु ।
रतन जटित किंकिनि पग नूपुर अपने रंग बजावहु ॥
कनक खंभ प्रतिबिंबित सिसु इक लोनी ताहि खवावहु ।
'सूरस्याम' मेरे उरतें कहुं टारे नेंकु न भावहु ॥

॥ राग विलावल ॥

बाल-विनोद खरे जिय भावत ।
मुख प्रतिबिंब पकरिवे कारन हुलसि घुटुरुवनि धावत ॥
कमलनेंन माखन○ के कारन करतें सेन बतावत ।
सब्द एक बोल्यो चाहत हें प्रगट वचन नहीं आवत ।
अनेक⊞ ब्रह्मांड खंडकी महिमा सबही आप जनावत ॥
'सूरदास' स्वामी सुख-सागर जसुमति-प्रेम बढावत ॥

○ कमल नैन माखन मांगत है ग्वालिन सैन० (सूरपचरत्न १८)
⊞ छिनक भांक त्रिभुवन की लीला सिसुता मांहि दुरावत
(सूरपंचरत्न ४८)

॥ राग बिलावल ॥

खेलत गृह-आंगन गोविंद ।
निरखि निरखि जसुमति सुख पावति वदन मनोहर राका इंद ॥
कटि किंकिनी चंद्रमनिमय की लट मुक्ताफल माल ।
परम सुदेस कंठ केहरि-नख, बिच बिच वज्र प्रवाल ॥
कर पहुंची, पैंजनी पाइन, सुन्दर तन राजत पट पीत ।
घुटुरुन चलत संग मिलि विहरत, मुख मंडित नवनीत ॥
'सूर' विचित्र चरित्र स्याम के बानी कहत न आवै ।
बाल-दसा अवलोकि सनक मुनि, योग ध्यान बिसरावै ॥

॥ राग बिलावल ॥

कहां लगि बरनौं सुन्दरताई ।
खेलत कुंवर कनक आंगन में नैन निरखि सुखदाई X ॥
कुलही लसत+ स्याम सुन्दर के बहु विध रंग बनाई ।
मानहु नव घन ऊपर राजत, मघवा धनुष चढाई ॥
अति सुदेस मृदु चिकुर हरत मन, मोहन मुख बगराई ।
मानों प्रकट कंज पर मंजुल अलि-अवली घिरि आई ।
नील, सेत पर पीत, लाल मणि लटकनि भाल रुराई ।
सनि, गुरु असुर, देव गुरु मिलि मनु भौमसहित समुदाई ॥

X छबि छाई (सूर-सुधा ६६)
+ कुलहि लसत सिर स्याम सुभग अति बहु० (सूर-सुधा ६६)

दूध दंत छवि कहि न जाति अति अद्भुत इक उपमाई।
किलकत, हसत, दुरत, प्रगटत मनु घन में विज्जु छटाई॥
खंडित वचन देत, पूरन सुख अलप अलप जलपाई।
घुटुरुन चलत, रेनु तन मंडित, 'सूरदास' वलिजाई॥

॥ राग रामकली ॥

देखि सखी! इक अद्भुत रूप।
एक अंबुज मध्य देखियत और दधि सुत जूप॥
एक अवली दोइ जलचर उभे अरक अनूप।
पंचवारिज उहीं देखियत कहो कहा सरूप॥
सिसुमति में भई सोभा करो कोऊ विचारि।
'सूर' श्रीगोपाल की छवि राखु हिय उर धारि॥

ऐसे ऐसे बोहोत पद सूरदासजी ने गाए। पाछे फेरि सूरदासजी श्रीनाथजीद्वार आए ❀।

(इति वार्ता पंचम)

*भावप्रकाश वाली वार्ता में इस वार्ता और पदों के स्थान पर इस प्रकार पाठ भेद है:—

"पाछे या पद के अनुसार सूरदासजी ने बहोत पद करिके गाये। सो पद— प्रेंख पर्यङ्क गिरिधरन सोहैं०:—

सो यह पलना को कीर्तन सूरदासजी ने गायो। पाछें बाल-लीला के पद बोहोत गाये। ता पाछें यह पद गायो। सो पद—

राग विलावल— १ देख सखी इक अद्भुत रूप०
२ सोभा आजु भली बनि आई०

इत्यादिक पद सूरदासजी ने श्रीनवनीतप्रियजी के आगे गाये। तब श्रीगुसांइजी और श्रीगिरधरजी आदि सब बालक कहन लागे जो— हम जा प्रकार श्रीनवनीतप्रियजी को सिंगार करत हैं, सो ताही प्रकार के कीर्तन सूरदासजी गावत हैं। तातें इन सूरदास के ऊपर बहोत ही कृपा है।

वार्ता प्रसंग *

(ता पाछे श्रीगुसांईजी आप तो श्रीनाथजीद्वार पधारे, सो सूरदासजी ने हू श्रीनाथजीद्वार जाइवे को विचार कियो। तब श्रीगिरधरजी आदि सब बालकन ने कह्यो, जो-सूरदासजी! दोइ दिन श्रीनवनीतप्रियजी

* यह सम्पूर्ण प्रसग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति मे नहीं है।

कों और हू कीर्तन सुनावो, पाछे तुम जाइयो। तब सूरदासजी श्रीगोकुल में रहे)

(सो तब श्रीगिरधरजी सों श्रीगोविंदरायजी, श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी ये तीनों भाई कहे जो– ये सूरदासजी, जैसो शृंगार श्रीनवनीतप्रियजी को होत है, तैसे ही वस्त्र आभूषण वरणन करत हैं। सो एक दिन अद्भुत अनोखो शृंगार करो, और सूरदासजी कों जनावो मति। सो देखें, ये कीर्तन कैसे करत हैं)

(तब श्रीगिरधरजी ने कह्यो जो– ये सूरदासजी भगवदी हैं, सो इनके हृदयमें स्वरूपानंदको अनुभव है। तासों जैसो तुम शृंगार करोगे, सो तैसो ही पद सूरदासजी वरणन करिके गावेंगे। तासों भगवदी की परीक्षा नांही करनी।)

(तब उन तीनों बालकनने श्रीगिधरजी सों कही जो– हमारो मन है, सो यामें कछू बाधा नांही है। तब श्रीगिरधरजी कहे जो– सवारे श्रीनवनीतप्रियजी को शृंगार करेंगे सो अद्भुत शृंगार करेंगे।)

(ता पाछे सवारे श्रीगिरिधरजी तीनों बालकन सहित श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे, और सेवा में न्हाये। पाछें श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाये, ता पाछें मंगल भोग धर्यो। फेरि न्हवाइके शृंगार धरावन लागे। अषाढ के दिन हते तातें गरमी बहोत, सो श्रीनवनीतप्रियजी कों कछू वस्त्र नांही धराए। सो मोतीन के दोइ लर मस्तक पर, मोती के बाजू, पोहोंची, कटि–किंकिनी, नूपुर, हार, सब मोतीन के, तिलक, नकवेसर, करनफूल कछु नांही।)

(सो सूरदासजी जगमोहन में बैठे हते, सो इनके हृदय में अनुभव भयो। तब सूर-दासजी अपने मन में विचारे जो—आजु तो श्रीनवनीतप्रियजी को अद्भुत शृंगार कियो है। एसो शृंगार तो मैंनें कबहू देख्यो नांही, और सुन्योहू नांही, जो केवल मोती धराए है, और वस्त्र तो कछु धराए हैं नांही। तासों आज मोकों कीर्त्तन हू अद्भुत गायो चहिये।)

(जब शृंगार के दर्शन खुले, तब श्रीगिरिधरजीने सूरदासजी कों बुलाये, और कह्यो जो—सूरदासजी ! दरशन करो, और कीर्त्तन गाओ। तब सूरदासजी ने बिलावल में यह कीर्त्तन करिके श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनायो। सो पद—

'देखेरी हरि नंगम नंगा'०)

(सो सुनिके श्रीगिरधरजी आदि सगरे बालक अपने मन में बहोत प्रसन्न भये।

और सूरदासजी सों कहन लागे जो–सूरदासजी ! यह तुम कहा गाये ? तब सूरदासजी ने विनती कीनी, जो– महाराज ! जैसो आपने अद्भुत श्रृंगार कियो, तैसो ही मैं अद्भुत कीर्त्तन गायो है । तब सगरे बालक यह सुनिके सूरदासजी के ऊपर बहोत प्रसन्न भये ।)

(सो ये सूरदासजी श्रीआचार्यजी महाप्रभु के एसे परम कृपापात्र भगवदी हते, सो इनकों श्रीठाकुरजी नित्य हृदय में अनुभव करावते ।)

(ता पाछे श्रीगिरिधरजी आप सूरदासजी को संग लेके श्रीनाथजीद्वार आये । तब श्रीगिरिधरजी ने सब समाचार श्रीगुसांईजी सों कहे जो–या प्रकार अद्भुत श्रृंगार श्रीनवनीतप्रियजी को सगरे बालकन के मनोरथ

सों कियो । सो सूरदासजी ने एसो ही कीर्तन कियो, सो इनके हृदय में अनुभव है। तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीगिरिधरजी सों कहे– जो सूरदासजी की कहा बात है? जो- ये पुष्टिमार्ग के जहाज हैं। सो भगवल्लीला को अनुभव इनकों अष्ट प्रहर हैं, ।)

(सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।)

वार्ता प्रसंग *

(और सूरदासजी के पास एक ब्रजवासी को लरिका हतो, सो सब कामकाज सूरदासजी को करतो, ताको नाम गोपाल हतो। सो एक दिन सूरदासजी महाप्रसाद लेन को बैठे, तब वा गोपाल सों सूरदासजी कहे जो- मोकूं तू लोटी में जल भरि दीजो । तब

* यह सम्पूर्ण प्रसग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है ।

गोपाल ब्रजवासी ने कह्यो जो–तुम महाप्रसाद लेनकों बैठो जो मैं जल भरि देऊंगो।

(सो यह कहिके गोपाल तो गोबर लेन कों गयो। सो तहां दोइ चारि वैष्णव हते सो तिनसों बात करन लाग्यो, तब सूरदास कों जल देनो भूलि गयो। और सूरदासजी तो महाप्रसाद लेन बैठे, सो गरे में कौर अटक्यो। तब बांए हाथ सों लोटा इतउत देखन लागे, सो पायो नांही। तब गरे में कौर अटक्यो सो बोल्यो न जाय। तब सूरदास व्याकुल भये। सो इतने में श्रीनाथजी सूरदासजी के पास आइके अपनी झारी धरि आए। तब सूरदासजीने झारी में ते जल पियो।)

(तब गोपाल ब्रजवासी कों सुधि आई, जो– सूरदासजी कों मैं जल नांही भरि आयो हूं, सो दोर्‌यो आयो। इतने में सूरदासजी महाप्रसाद लेकें आये। तब गोपाल

ब्रजवासीने आइके सूरदासजी सों कह्यो जो–सूरदासजी ! तुम महाप्रसाद ले उठे ? सो तुमने जल कहांते पियो ? जो मैं तो गोबर लेन गयो हतो, सो वैष्णव के संग बात करत में भूलि गयो । तासो अब मैं दोर्‌यो आयो हूं ।)

(तब सूरदासजी ने ब्रजवासी सों कह्यो जो-तेंने गोपाल नाम काहेकों धरायो ? जो गोपाल तो एक श्रीनाथजी हैं । सो तासों आज मेरी रच्छा करी । नातर गरे में एसो कौर अटक्यो हतो, सो जल बिना बोल निकसे नांही । तब मैं व्याकुल भयो, तब हाथ में जल की झारी आई, सो मैं जल-पान कियो । तासों मैंने जान्यो जो तेने धर्‌योहोइगो । और अब तू आइके कहत है- जो मैं नांही हतो । सो तातें मंदिरवारो गोपाल होइगो । जो देखि तो झारी कैसी है ?)

(तब गोपाल ब्रजवासी जहां सूरदासजी महाप्रसाद लिये हते तहां आइके देखे तो सोने की झारी है। सो उठाइके गोपाल सूरदासजी के पास आइके कह्यो जो– ये झारी तो मंदिर की है । सो तब सूरदासजी ने वा गोपाल ब्रजवासी सों कह्यो जो– तेनें बहोत बुरो काम कियो, जो श्रीठाकुरजी कों इतनो श्रम करवायो। जो– मेरे लिये झारी लेकें श्रीठाकुरजी कों आनो पर्‌यो ।)

(सो या प्रकार सूरदासजीने अपने मन में बोहोत पश्चात्ताप कियो। ता पाछे सूरदासजी ने गोपालदास सों कह्यो जो– ये झारी तू जतन सों राखियो । और जब श्रीगुसांईजी आपु पोंढिके उठें तब उन कों सोंपि आइयो। तब गोपालदास ने झारी लेके श्रीगुसांईजी के पास आइ, दंडवत करि आगें राखी। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे– ये झारी तेरे पास

कैसे श्राई ? जो ये झारी तो श्रीगोवर्द्धनधर की है। तब गोपालदास ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी जो- महाराज ! यह अपराध मोसों पर्यो है। पाछें सब बात कही।)

(तब यह बात सुनिके श्रीगुसांईजी आप तत्काल स्नान करिकें झारी कों मंजवाइ दूसरो वस्त्र लपेटिके मंदिर में वेगि ही झारी लेके पधारे। पाछे श्रीगोवर्द्धनधरकूं जलपान कराइके कहे जो-आज तो सूरदास की बडो रच्छा कीनी। सो तुम बिना कौन वैष्णव की रच्छा करे ? तब श्रीनाथजी ने कही जो- सूरदास के गरे में कौर अटक्यो सो व्याकुल भये, तासों झारी धरि आयो।)*

---

*भावप्रकाश

सो काहेतें ? जो सूरदास व्याकुल भये, सो मैं ही व्याकुल भयो। जो भगवदीय है सो मेरो स्वरूप है।

(ता पाछे उत्थापन के किंवाड खोले। सो सूरदासजी आइके उत्थापन के दर्शन किये। सो उत्थापन समे को भोग श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीकों धरि सूरदासजी के पास आइके कहे जो—आज गोपालने तिहारे ऊपर बडी कृपा करी है। तब सूरदासजी ने कह्यो जो—महाराज! यह सब आप की कृपा है। नांही तो श्रीनाथजी मो सरीखे पतितन कों कहा जानें? जो सब श्रीआचार्यजी की कानि तें अंगीकार करत हैं।)

(तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-तुम बडे भगवदीय हो। जो भगवदीय बिना एसी दैन्यता कहां मिले।)

(सो सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपापात्र भगवदी हते।)

वार्ता प्रसंग *

(श्रीनाथजी के मंदिर के नीचे गोपालपुर गाम है, सो तहां एक बनिया रहतो। सो एसे गृह-कार्य में और लोभ में आसक्त हतो जो कबहुं श्रीनाथजी को दरसन नांही कियो। और श्रीगुसांईजी की शरण हू नांही आयो। सो गोपालपुर में परवत के नीचे वा की दुकान हती। सो वह बनिया गोपालपुर में दुकान खोलतो, सो पहले जो कोई वैष्णव श्रीनाथजी के दरसन करि के परवत के ऊपर सों आवतो ताकों बुलाइ के पहले पूछतो जो—आज श्रीनाथजी को कहा श्रृंगार है? सो वह वैष्णव याकों बतावतो। सो ताही प्रकार वह बनिया सब वैष्णवन के आगे श्रीनाथजी के दरसन की बड़ाई करतो, जो—देखो आज श्रीनाथजी को कैसो श्रृंगार भयो है! कैसो अलौकिक दर्शन भयो है!)

* यह सम्पूर्ण प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

(या भांति सो सबतें कहतो, आपु दरसन को कबहू नांही आवतो, और बैष्णवन कों दिखाइवे के लिये माला पहिरि लेतो, और आछो तिलक, आछो छापा लगावतो। और बैष्णव आगे प्रेम की वार्ता करतो।)

(सो वे बैष्णव प्रसन्न होइके वाकों बैष्णव जानिके सीधो सामग्री लेते। सो या प्रकार पाखंड करि विश्वास दे देके सब बैष्णा-वन को ठगे। सो द्रव्य हू बहोत भेलो कियो, परंतु कोड़ी एक खरचे नांही। सो एसे करत साठ बरस को भयो।)

(तब एक दिन सूरदासजी सों वा बनिया ने कही जो—सूरदासजी ! आज तुम देखो कैसो सुन्दर शृंगार भयो है। और तुम तो कोई दिन मेरी हाट सों सीधो सामान लेत नांही हो, और कोई दिन मेरी हाट ऊपर तुम आवत नांही हो। सो तुम एसे बैष्णव

गुनी हों सो मेरो अपराध कहा, जो– मेरी हाट तें सोदा लेत नांही ? और यह हाट तिहारी है । मैं तो तुम वैष्णवनको दास हूं, तासों मो पर कृपा करो ।)

(या भांति बनिया के बचन सुनि सूरदासजी ने अपने मनमें बिचारी जो–देखो, बनिया कैसो सुन्दर बोलत है, जो ऊपर सों लोभ सों कपट करत है. तासों अब याको कपट छुड़ावनो । और बनिया ने कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये नांही सो याकों दरसन हू करावनो, और याकों वैष्णव हू कराय देनो ।)

(तब यह बिचारिके सूरदासजी ने वा बनिया सों कही जो–तैंने जनम भर में कोई दिन दरसन नांही कियो है, सो मैं तोकों जानत हों । और तू वैष्णव है नांही, सो तासों मैं तेरी हाट पर नांही आवत हों ।

तू सांची कहि दै, जो-तेनें जनम भर में कोई दिन श्रीनाथजी के दरसन किये हैं ?)

(तब यह वचन सुनिके बनिया अपने मन में बोहोत ही खिस्यानो होय गयो। और वह बनिया सूरदासजी सों बोल्यो जो-सूरदास जी! तुम यह बात और काहू के आगे मति कहियो। जो—मैं यासों दरसन कों नाहीं आवत हों, जो-हाट छोडि दरसन कों जाऊं तो यहां वैष्णव सोदा कों फिर जांय, जो-और को हाट सों लेन लागें, तब मैं खाऊं कहांतें? और कोऊ मेरे पास एसो मनुष्य नांहीं है, जो- जा समय दरसन के किंवाड खुलें ता समय मोकों आइके खबर करे, जातें मैं वेगि ही-दोरिके दरसन करि आऊं।)

(तब वा बनिया तें सूरदासजीने कही जो-मैं जा समय आइके खबरि करूं सो ता समय

तू चलेगो ? तब वा बनियाने कही जो–तुम आइके खबरि करियो, जो– मैं चलूंगो। जो- मेरे मन में दरसन की बोहोत है।)

(तब सूरदासजी कहे जो–मैं उत्थापन के समय आऊंगो। सो यह कहिके सूरदासजी तो गये। पाछे जब उत्थापन को समय भयो तब शंखनाद भये, तब सूरदासजी ने आइके वा बनियासों कही जो– अब शंखनाद भये हैं, तासों दरसन को समय है, सो अब चलो। तब वा बनियाने सूरदासजी सों कह्यो जो– या समय गांव के लोग सोदा लेन आवत हैं, सो भोग के किंवाड खुलें ता समय तुम मोकों खबरि करियो.)

(तब सूरदासजी ने पर्वत ऊपर आइके श्रीनाथजी के दर्शन किये, और कीर्तन किये। ता पाछे श्रीनाथजी के भोग के दरसन को

समय भयो, तब सूरदासजी पर्वत सों नीचे उतरिके वा बनिया सों कहे जो– दरसन को समय है, तासों अब तो दरसन कों चल। तब वा बनिया ने सूरदासजी सों कह्यो जो– सूरदासजी ! अब तो बन तें गाय आइवे को समय भयो है, तासों मंदिर में चलूं तो गाय आइके मेरो सगरो अनाज खाइ जांय। तासों अब तुम सेन आरती के समय जताइयो सो तहां तांई गाय सब अपने २ घर जांइगी।)

(तब सूरदासजी फेरि भोग के समय जाइके दरसन किये। ता पाछें संध्या के दरसन किये। पाछें सेन आरती के दरसन को समय भयो, तब सूरदासजी ने आइके बनिया कों खबरि कीनी जो--चल अब सेन आरती के दरसन को समय है।)

(तब वा बनिया ने सूरदासजी सों कही जो- सूरदासजी ! आज तुम कों बोहोत श्रम भयो है । परंतु अब दीवा बारिवे को समय है, सो काहे तें जो-- अब या समय लक्ष्मी आवत है, तासों दीवा न होय तो लक्ष्मी पाछी फिरि जाय । और कोई मेरी हाटतें अन्न चुराय लेय तो मैं कहा करूं ? तासों अब मैं सवारे प्रातःकाल दरसन करि ता पाछें हाट खोलूंगो । तासों मोकों संगला के समय आइके खबरि करियो । आज मैंने तुम सों बोहोत फेरा खवाये ।)

जो-- मंगला को समय है, सो अब तो चल। तब वा बनिया ने कही जो-- सूरदासजी! अब ही तो हाट बुहारि के मांडनो है। तासों बोहनी के समय कोई गाहक फिरि जाय तो सगरो दिन खाली जाय, तासों हाट लगाइ-के श्रृंगार के दरसन कों चलूंगो। तासों श्रृंगार के समय कहियो।

(तब सूरदासजी ने मंगला आरती के दरसन किये। पाछें सूरदासजी श्रृंगार के समय फेरि आये। तब वा बनियाने कही जो- अब ही मैं आछी काहू की बोहनी कीनी नांही है, और गाय डोलत हैं। तासों अब राज भोग के दरसन अवश्य करूंगो सो देखो तुम कालि तें मेरे लिये बोहोत फिरत हो, जो-- तुम बडे भगवदी हो।)

(सो सूरदासजी फेरि श्रीनाथजी के दरसन कों पर्वत पर आए। तब श्रीनाथजी

के शृंगार के दर्शन किये, कीर्तन किये। ता पाछें राजभोग आरती को समय भयो। तब सूरदासजी ने वा बनिया सों कह्यो जो—अब चलोगे ? तब वा बनिया ने कह्यो जो-या समय मैं कैसे चलूं ? जो अब वैष्णव राजभोग के दरसन करिके नीचे आवेंगे। सो सब या समय सीधा सामग्री लेत हैं। जो मैं बूढ़ो, कब आऊं पर्वत सों उतरि के, कैसे बेगि आयो जाय ? और याही वखत बिक्री को समय है। जो याही समय कछु मिले सो मिले। तासों उत्थापन के समय दरसन करूंगो)

(या प्रकार सूरदासजी वा बनिया के साथ तीन दिन ताईं रहे। परंतु वह बनिया एसो लोभी सो दरसन कों नांहि गयो। ता पाछे चोथे दिन न्हाइके सूरदासजी प्रातःकाल मंगला के दरसन कों चले। तब सूरदासजी अपने मन में बिचारे जो—देखो या बनिया कों तीन दिन भये, परंतु दरसन कों नांही गयो।

तासों आज जो यह न चले, तो याकों भय दिखावनो, और दरसन करावनो !)

(यह बिचारिके सूरदासजी वा बनिया की पास आइके कह्यो– जो तीन दिन बीति चुके मोकों फिरते, परि तू दरसन को नांही चल्यो, जो आज तो चल । तब वा बनिया ने कह्यो– जो कुछ बोहिनी करि श्रृंगार के दरसन करूंगो। तब सूरदासजी ने वा बनिया सों कही– जो अब तो मैं तेरी बात सगरे बैष्णवन में प्रकट करूंगो, जो– यह बनिया झूठो बोहोत है, सो कबहू याने श्रीनाथजी को दरसन नांही कियो । और यह बैष्णव हू नांही है । अब तेरे पास कोई बैष्णव सौदा लेंन आवेगो तो मैं तेरे दोहा, चोपाई, पद कुटिलता के करिके बैष्णवन को सुनाऊंगो ।

(सो या भांति कहिके भैरव राग में एक पद गायो । सो पदः– राग भैरव ।

'आज काम, कालि काम, परसों काम करनो'०

सो यह पद सूरदासजी ने वा बनिया कों वाही समय करिके सुनायो, सो तब तो वा बनिया अपने मन में डरप्यो। पाछें सूरदासजी के पाउन परि वा बनिया ने बिनती कीनी–जो तुम मेरे दोहा, कवित्त कछु बरनन मति करो, और तुम मेरी बात कोई सों प्रकट मति करो। जो–मैं अब ही तिहारि संग चलूंगो)

(पाछे वह बनिया सूरदासजी के संग आयो। तब मंगला के किंवाड खुले, तब सूरदासजी ने श्रीनाथजी सों कह्यो जो–महाराज! यह बनिया दैवी जीव है, सो तासों अब याके मनकों आकर्षन करिके याको उद्धार करो। सो काहेतें? जो–यह तिहारी ध्वजा के नीचे रहत है। तब श्रीनाथजी कहे जो–मेरे पास रहत है, सो कहा मोकों जानत

है ? तुम सब भगवदीयन की कृपा होय तब ही मोकों पावे ।)❀

(पाछें श्रीनाथजी ने वा बनिया कों एसो दरसन दियो, सो वाको मन हरलीनो । सो-जब मंगला के दरसन होय चुके तब वा बनिया ने सूरदासजी के चरन पकरिके बीनती कीनी जो—महाराज ! मेरो जनम सगरो बृथा गयो द्रव्य जोरवे में, मेरे पास द्रव्य बोहोत हैं, सो अब तुम चाहो तहां या द्रव्य को खरच करो। और मोकों श्रीगुसांईजी को सेवक कराइके बैष्णव करो ।)

भावप्रकाश❀

सो काहेतें ? जो गंगा यमुना में अनेक जीव हैं सो कहा कृतार्थ हैं ? जो माखी, मच्छर, चेंटी आदि श्रीप्रभु के बोहोत जीव हैं, सो कहा कृतार्थ हैं ? जो भगवदीयन को संग होय तब ही कृतार्थ होय । सो तब ही श्रीप्रभुन कों पावे । भगवदीयन के संग सों दास-भाव होय तब ही कृपा होय ।

'आज काम, कालि काम, परसों काम करनो'०

सो यह पद सूरदासजी ने वा बनिया कों वाही समय करिके सुनायो, सो तब तो वा बनिया अपने मन में डरप्यो। पाछें सूरदासजी के पाउन परि वा बनिया ने बिनती कीनी–जो तुम मेरे दोहा, कवित्त कछु बरनन मति करो, और तुम मेरी बात कोई सों प्रकट मति करो। जो–मैं अब ही तिहारि संग चलूंगो)

(पाछे वह बनिया सूरदासजी के संग आयो। तब मंगला के किवाड खुले, तब सूरदासजी ने श्रीनाथजी सों कह्यो जो–महाराज ! यह बनिया दैवी जीव है, सो तासों अब याके मनकों आकर्षन करिके याको उद्धार करो। सो काहेतें ? जो–यह तिहारी ध्वजा के नीचे रहत है। तब श्रीनाथजी कहे जो–मेरे पास रहत है, सो कहा मोकों जानत

है ? तुम सब भगवदीयन की कृपा होय तब ही मोकों पावे ।)❀

(पाछें श्रीनाथजी ने वा बनिया कों एसो दरसन दियो, सो वाको मन हरलीनो । सो-जब मंगला के दरसन होय चुके तब वा बनिया ने सूरदासजी के चरन पकरिके बीनती कीनी जो–महाराज ! मेरो जनम सगरो वृथा गयो द्रव्य जोरवे में, मेरे पास द्रव्य बोहोत हैं, सो अब तुम चाहो तहां या द्रव्य को खरच करो। और मोकों श्रीगुसांईजी को सेवक कराइके बैष्णव करो ।)

भावप्रकाश❀

सो काहेतें ? जो गंगा यमुना में अनेक जीव हैं सो कहा कृतार्थ हैं ? जो माखी, मच्छर, चेंटी आदि श्रीप्रभु के बोहोत जीव हैं, सो कहा कृतार्थ हैं ? जो भगवदीयन को संग होय तब ही कृतार्थ होय । सो तब ही श्रीप्रभुन कों पावे । भगवदीयन के संग सों दास-भाव होय तब ही कृपा होय ।

(तब सूरदासजी ने वा बनिया सों कह्यो– जो तू न्हाइके काहू कों छुइयो मति, यहां आइ बैठियो। सो इतने में श्रीगुसांईजी आपु शृंगार करि चुके, तब सूरदासजी ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी जो–महाराज ! या बनिया कों शरण लीजिये।)

(तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख सों सूरदासजी सों कहे जो– सूरदासजी ! तुमने भलो साठि बरस को बूढो बेल नांथ्यो। तुम बिना या बनिया को सगरो जनम योंही जातो।)

(पाछे श्रीगुसांईजी आप वा बनिया कों बुलाइके श्रीनाथजी के सन्निधान बेठाइके नाम ब्रह्मसंबंध करवायो। सो वा बनिया की बुद्धि निरमल होय गई। सो तब सगरे दरसन नित्य नेम सों करन लग्यो। और वा बनिया ने श्रीगुसांई कों बोहोत भेट करी। और श्री-

श्रीनाथजी के बागा, वस्त्र, सामग्री कराइ आभूषण कराये, और अलंकार कराये।)

(ता पाछें एक दिन वा बनिया ने सूरदासजी सों कही जो – सूरदासजी ! तिहारी कृपातें मैं श्रीगोवर्धननाथजी के दरसन पायो, और वैष्णव भयो। तासों अब एसी कृपा करो, जो–याही जनम में मेरो अंगीकार करें, और मोकों संसार को दुख सुख बाधा न करै।)

(तब सूरदासजी ने एक पद करिके वा वनिया को सिखायो। सो पदः—

॥ राग बिलावल ॥

'कृष्ण सुमिर तन पावन कीजे'। *

(तब वा बनिया कों दृढ भक्ति भई। लौकिक की वासना सब दूरि भई। सो ज्ञान

* यह पद, सूरसाठी, के नाम से प्रसिद्ध है।

(तब सूरदासजी ने वा बनिया सों कह्यो– जो तू न्हाइके काहू कों छुइयो मति, यहां आइ बैठियो। सो इतने में श्रीगुसांईजी आपु श्रृंगार करि चुके, तब सूरदासजी ने श्रीगुसांईजी सों बिनती कीनी जो–महाराज! या बनिया कों शरण लीजिये।)

(तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख सों सूरदासजी सों कहे जो– सूरदासजी! तुमने भलो साठि बरस को बूढो बैल नांथ्यो। तुम बिना या बनिया को सगरो जनम योंही जातो।)

(पाछे श्रीगुसांईजी आप वा बनिया कों बुलाइके श्रीनाथजी के सन्निधान बैठाइके नाम ब्रह्मसंबंध करवायो। सो वा बनिया की बुद्धि निरमल होय गई। सो तब सगरे दरसन नित्य नेम सों करन लग्यो। और वा बनिया ने श्रीगुसांई कों बोहोत भेट करी। और श्री-

श्रीनाथजी के बागा, वस्त्र, सामग्री कराइ आभूषण कराये, और अलंकार कराये।)

(ता पाछें एक दिन वा बनिया ने सूरदासजी सों कही जो— सूरदासजी! तिहारी कृपातें मैं श्रीगोवर्धननाथजी के दरसन पायो, और वैष्णव भयो। तासों अब ऐसी कृपा करो, जो—याही जनम में मेरो अंगीकार करें, और मोकों संसार को दुख सुख बाधा न करै।)

(तब सूरदासजी ने एक पद करिके वा बनिया को सिखायो। सो पदः—

॥ राग बिलावल ॥

'कृष्ण सुमिर तन पावन कीजे'। *

(तब वा बनिया कों दृढ भक्ति भई। लौकिक की वासना सब दूरि भई। सो ज्ञान

* यह पद, सूरसाठी, के नाम से प्रसिद्ध है।

वैराग्य सर्वोपरि भक्ति भई । सो श्रीनाथजी के चरण कमल में दृढ आसक्ति और स्वरूपानंद को अनुभव भयो । तब रस में मगन होइ गयो ।)

(सो या प्रकार सूरदासजी के संगतें एसो लोभी बनिया हू कृतार्थ भयो । सो वे सूरदासजी एसे भगवदीय हते ।)*

*भावप्रकाश

सो काहे तें ? जो–मूल में दैवी जीव है । सो श्री ललिताजी की सखी है । सो लीला में याको नाम 'विरजा' है । सो सूरदास को संग पाइके लीला को अनुभव भयो । तातें भगवदीयन को संग सर्वोपरि है ।

॥ वार्ता प्रसंग ॥ +

(और एक समय श्रीगोकुल तें परमानद आदि सब वैष्णव दस पंद्रह सूरदासजी सों मिलिवेकों और श्रीगोवर्धननाथजी के दरसन

+ यह सम्पूर्ण प्रसग सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है ।

कों आये। सो सैन आरती के दरसन करि सूरदासजी के पास आये। तब सूरदासजी ने सगरे वैष्णवन कों बोहोत आदर सन्मान कियो और ताही समय कीर्तन गाये।)

॥ राग कान्हरो ॥

(१) हरि-जन-संग छिनक जो होई०।
(२) प्रभु जन पर प्रसन्न जब होंई० ॥
(३) हरि के जन की अति ठकुराई। +
महाराज, रिपिराज, राजमुनि देखत रहे लजाई ॥
निरभय देत, राजगढ ताकों लोक मनन उतसाहु।
काम, क्रोध मद, लोभ मोह ये भए चोर तें साहु ॥
दृढ विश्वास कियो सिंहासन ता पर बैठे भूप।
हरिजस विमल छत्र सिर ऊपर राजत परम अनूप ॥
हरि पदपंकज पियो प्रेमरस ताही के रंग रातो।
मंत्री ज्ञान न ओसर-पावे कहत बात सकुचातो ॥
अर्थ काम दोउ रहें दुवारें धर्म मोक्ष सिर नावें।
बुद्धि विवेक विचित्र पौरिया समय न कब हू पावें ॥
अष्ट महासिधि द्वारें ठाडीं कर जोरे डर लीन्हें।

+ सूरसागर नागरी प्र० (२३)

छरीदार वैराग विनोदी, झिरकि बाहिरें कीन्हे ।।
माया काल कछू नाहिं व्यापे यह एस रीति जो जानें ।
'सूरदास' यह सकल समग्री, प्रभु-प्रताप पहिचानें ।।

(४) जा दिन संत पाहुने आवत ।
तीरथ कोटि अन्हान करें फल जैसो दरसन पावत ।।
नयो नेह दिन दिन प्रति उनकैं चरन-कमल चित लावत ।
मन वच कर्म और नहीं जानत सुमिरत और सुमिरावत ।।
मिथ्यावाद उपाधि रहित ह्वै विमल विमल जस गावत ।
बंधन कर्म कठिन जे पहिले सोऊ काटि बहावत ।।
संगति रहै साधु की अनुदिन भव-दुख दूरि नसावत ।
सूरदास या × जन्म मरण तें तुरत परम गति पावत ।।

(सो या प्रकार सूरदास जी ने अनेक पद वैष्णवन कों सुनाये। अब सब वैष्णव बोहोत प्रसन्न भये। पाछे सूरदासजी ने उन वैष्णवन सों कह्यो जो— कछू मो पर कृपा करिके आज्ञा करिये। तब सब वैष्णवन ने सूरदासजी सों

× संगति करि तिनकी जे हरि - सुरति करावत ॥
सूरसागर नागरी ० १६२

कह्यो जो- ज्ञान, योग, परम तत्व और श्रीठा-कुरजी को प्रेम, स्नेह को स्वरूप सुनाओ ।

तब सूरदासजी ने यह कीर्तन सुनायो । सो पदः—

॥ राग विहागरो ॥

(जोग सों कोउ नांही हरि पाये,०)

(सो या भांति अनेक कीर्तन करि वैष्णा-वन कों समुझाये । तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होइके कहे, जो— सूरदासजी के ऊपर बडी भगवत्-कृपा है । ता पाछें सबारे भये सगरे वैष्णवन ने श्रीनाथजी के दरसन किये । ता पाछे सूरदासजी सों बिदा होइके श्रीगोकुल आये , सो वे सूरदासजी श्रीआचार्यजी के एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते ।)

वार्ता प्रसंग *

(सो या प्रकार सूरदासजी ने बोहोत 'सूरश्याम' छापके दिन तांई भगवत सेवा कीनी। २५ हजार पद ता पाछें जानें जो-भगवद् इच्छा मोकों बुलाइवे की है। ❀

*भावप्रकाश

सो काहेतें? जो-प्रभुन की यह रीति है, जो-जब वैकुंठ सों भूमि पर प्रकट होइवे की इच्छा करत हैं, तब वैकुंठवासी जो भक्त हैं, सो पहले भूमि पर प्रकट करत हैं। ता पाछें आपु श्रीभगवान प्रकट होय भक्तन के संग लीला करत हैं। पाछें अपुने भक्तन को या जगत सों तिरोधान होय ता पाछें वैकुंठमें लीला करत हैं। सो जैसे-नंद, जसोदा, गोपीजन, सखा, वसुदेव, देवकी, यादव, सब प्रकट पहले ही किये। ता पाछे आप प्रकट होइके लीला भूमि पर करिके पाछें जादवनकूं मूसल द्वारा अंतर्ध्यान करि लीला किये। सो श्रीनंदरायजी, श्रीजसोदाजी, गोपीजन को अंतर्ध्यान लौकिक लीला नांहि दिखाये। सो

* यह सम्पूर्ण प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

तैसे ही श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांईजी श्रीपूर्णपुरुषोत्तम को प्राकट्य हैं। सो लीला-संबंधी वैष्णव प्रकट किये। अब श्रीआचार्यजी आप अंतर्ध्यान लीला किये। और श्रीगुसांईजी कों करनो है*। सो पहले भगवदीयन कूं नित्य-लीला में स्थापन करिके आपु पधारेंगे। सो भगवदीयन को (अपनी) लौकिक अंतर्ध्यान-लीला दिखावत नांही। सो जैसें चाचा हरिवंशजी सों कहे जो—तुम गुजरात जावो। सो या प्रकार गुजरात पठाइके अंतर्ध्यान लीला किये। सो सूरदासजी कूं नित्यलीला में बुलायवे की इच्छा श्रीगोवर्धनधर की है।

(सो तब सूरदासजी मन में विचारे जो—मैं तो अपने मन में सवा लाख कीर्तन प्रकट करिवे को संकल्प कियो है, सो तामेंतें लाख कीर्तन तो प्रकट भये हैं। सो भगवद्-इच्छा तें पचीस हजार कीर्तन और प्रकट करने। ता पाछें यह देह छोडिके अन्तर्ध्यान होय जानो।)

---

* इन शब्दों में सूरदासजी का लीला-प्रवेश सं० १६४० के लगभग स्पष्ट प्रतीत होता है

(सो या प्रकार सूरदासजी अपने मनमें विचार करत हते, वाही समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु प्रकट होइके दरसन देके कह्यो जो– सूरदास ! तुमने जो–सवा लाख कीर्तन को मन में मनोरथ कियो है, सो तो पूरन होइ चुक्यो है, जो–पचीस हजार कीर्तन मैंने पूरन करि दिये हैं। तासों तुम अपनो कीर्तन को चोपडा देखो.)

(तब सूरदासजी ने एक वैष्णव सों कह्यो जो–तुम मेरे कीर्तन के चोपडा देखो। सो तब वह वैष्णव देखे तो सूरदासजी के कीर्तन के बीचबीच में 'सूरश्याम' को भोग (छाप) है। सो एसे कीर्तन सगरी लीला में है, सो पचीस हजार हैं। सो बात वा वैष्णवने सूरदासजी सों कही जो– काल तो 'सूरश्याम' के कीर्तन हते नांही, और आज सगरी लीला की बीच में हैं।)

(तब सूरदासजी श्रीनाथजी कों दंडवत करिके कहे जो–अब मेरो मनोरथ आपकी कृपातें पूरन भयो। तासों अब आपु आज्ञा देउ सो करों।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो– अब तुम मेरी लीला में आइके लीला-रस को अनुभव करो। सो यह आज्ञा करिके श्रीनाथजी अन्तरधान भये।)

(तब सूरदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके मन में बोहोत प्रसन्न भये। परंतु पास दोइ वैष्णव साधारन हते, सो जाने नांहीं जो–श्रीठाकुरजी आपु सूरदासजी के पास पधारे, और कहा आज्ञा दीनी। सो काहेतें? जो-श्रीठाकुरजी के स्वरूप को अनुभव भगवदीय विना और काहू को नाहीं होय।)

(वार्ता षष्ठ)

अब सूरदासजी ने श्रीनाथजी की सेवा बोहोत दिन कीनी। ता उपरांत भगवद्-इच्छा जानी, जो-'अब इच्छा बुलाइवे की है'। तब यह विचारिके सूरदासजी नित्यलीला जहां श्रीठाकुरजी करत हैं, एसो जो-परासोली, ता ठौर सूरदासजी आए।

(सो तहां अखंड रास-लीला ब्रह्मरात्र-करि भगवान् ने रासपञ्चाध्याई की सगरी लीला करी है। सो जहां उडुराज चन्द्रमा प्रकट्यो है, सो तहां चंद्र सरोवर है। एसे अलौकिक स्थल में आए) *

* भाव प्रकाश– जो ये अष्ट सखा हैं। सो श्री-गिरिराज में आठ द्वार हैं। सो तहां के ये अधिकारी हैं। तासों आठों सखा अपने २ द्वार पर श्रीगिरिराज में ही देह छोडी है। और अलौकिक देह धरिके सदा सर्वदा लीला मे विराजमान हैं।

(१) सो 'गोविन्द कुण्ड' ऊपर एक द्वार है, ताके सन्मुख परासोली चन्द्रसरोवर है, तहां सूरदासजी सेवा में मुखिया हैं।

(२) और 'अप्सरा कुण्ड' ऊपर एक द्वार है, तहां सेवा में छीतस्वामी मुखिया हैं।

(३) 'सुरभि कुण्ड' ऊपर द्वार है, सो तहां परमानन्ददासजी सेवा में मुखिया हैं।

(४) और 'गोविन्दस्वामी की कदमखंडी' पास एक द्वार है, तहां गोविन्दस्वामी मुखिया हैं।

(५) और 'रुद्र कुण्ड' के पास एक द्वार है, सो तहां चत्रभुजदास सेवा में मुखिया हैं।

(६) 'बिलछू' सन्मुख एक बारी है, सो जा मारग होइके रासलीला कों पधारत हैं, सो तहां की सेवा के कृष्णदास अधिकारी मुखिया हैं।

(७) और 'मानसी गंगा' के पास एक द्वार है, सो तहां की सेवा में नन्ददासजी मुखिया हैं।

(८) और 'आन्योर' के सन्मुख एक द्वार है, सो तहां 'जमुनावतो' गाम है, सो ता द्वार के मुखिया कुंभनदास हैं।

या प्रकार श्रीगिरिराज में नित्यनिकुंज-लीला है। सो ता-निकुंज के आठ द्वार हैं तहां के आठ सखा सखी रूप हैं, सेवा में सदा तत्पर हैं। तासों सूरदासजी को ठिकानो 'परासोली' है।

(सो श्रीगोवर्द्धन नाथजी की ध्वजा कों साष्टाङ्ग दंडवत करिके ध्वजा के सन्मुख मुख करिके सूरदासजी सोये) परि अन्तःकरन में यह जो—श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगुसांईजी बोहोत अनुग्रह करिके दरसन दिए। (श्री-गोवर्द्धननाथजी की लीला को याही देह सों अनुभव कराये) और फेरि अनुग्रह करिके आगे हू दरसन देइगें। परि अब यह देह तो थकी तातें या देह सों एक श्रीगुसांईजी को दरसन होय तो परम भाग्य है। श्रीगुसांईजी का नाम 'कृपासिंधु' है। भक्तन के मनोरथ पूर्ण कर्त्ता है। (सो पूरन करेंगे) एसे कहिके सूरदासजी श्रीगुसांईजी के स्वरूपको चिंतन

करत हैं। और श्रीगुसांईजी कैसे कृपासिंधु हैं जैसे-सूरदासजी उह्यां स्मरण करत हैं, तैसे श्रीगुसांईजी हू एक क्षण भूलत नाहीं हैं।

श्रीनाथजी को शृंगार श्रीगुसांईजी करत हते, ता समे नित्य 'मणिकोठा' में ठाढे ठाढे कीर्त्तन करते। सो ता दिन श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी को शृंगार करत हते। और सूरदासजी कों (जगमोहन में बैठे) कीर्त्तन करत न देखे। तब श्रीगुसांईजी पूछे जो-आज सूरदासजी देखियत नाहीं, सो कहां हैं? तब एक सेवक ने कह्यो जो-महाराज! सूरदासजी कों तो आज (मंगला आरती के दरसन करिके सवारे सेवकन सों भगवत्-स्मरन करिके) परासोली की ओर उतरत देखे। तव श्रीगुसांईजी ने जान्यो जो-भगवद्-इच्छा (सूरदासजी को बुलाइवे की भई है) तातें अवसान समो है। तातें सूरदासजी परासोली गए हैं।

श्रीगुसांईजी आप श्रीमुखतें कहे जो-पुष्टिमार्ग को जहाज, जात है, जाकों कछू लेनो होइ सो लेउ ⊛

भावप्रकाश ※

सो यहां 'जहाज' कहिवे को आशय यह है जो--जैसे कोई जहाज में काहू व्योपारी ने व्योपार अर्थ अनेक वस्तु जहाज में भरी है, सो तैसे ही सूरदासजी के हृदय में अलौकिक वस्तु नाना प्रकार की भरी हैं।

और भगवद्-इच्छा तें राजभोग आर्त्ती पाछें रहत हैं तो मैं हू आवत हों। (सो तब सगरे वैष्णव सूरदासजी के पास आए) ता समय सूरदासजी ने श्रीगुसांईजी के और श्रीगोवर्धननाथजी के स्वरूप में मन लगाइ के बोलिवो छोडि दियो।

पाछें वेर वेर श्रीगुसांईजी सूरदासजी की खवरि मगायो करें। जो आवे सो यह कहे,

जो-महाराज ! सूरदासजी तो अचेत हैं, कछू बोलत नाहीं हैं। ऐसे पूछत पूछत राजभोग-आर्त्ती को समो भयो। सो राजभोग-आर्त्ती (श्रीगोर्धननाथजी की) करि, अनोसर करि आप श्रीगुसांईजी गिरिराज पर्वत के नीचें उतरे, सो परासोली पधारे। सो भीतर के सेवक रामजी प्रभृति और कुंभनदासजी और श्रीगुसांईजी के सेवक गोविंदस्वामी प्रभृति, चत्रभुजदास सब सेवक श्रीगुसांईजी के संग परासोली आए। (तब देखें तो सूरदासजी अचेत होय रहे हैं, कछु देह को अनुसन्धान नाहीं है)

सो आवत ही श्रीगुसांईजी सूरदासजी सों (हाथ पकरिके) पूछे, जो—सूरदासजी! कैसे हो ? तब तो सूरदासजी (तत्काल उठि के) श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके कह्यो जो-

बाबा ! आए हो ? मैं महाराज की बाट देखत हतो। (या समय आपने बडी कृपा करिके दरसन दियो, जो– महाराज ! मैं आपके स्वरूप को ही चिंतन करत हतो) यह कहिके सूरदासजी ने एक पद गायो। सो पदः—

॥ राग सारंग ॥

देखो देखो हरिजू को B एक सुभाई।
अति गंभीर उदार उदधि प्रभु जानि X सिरोमनि राइ॥
राई S जितनी सेवा को फल मानत मेरु समान।
समुझि × दास-अपराध सिंधु सम बून्द भए को जान॥
वदन प्रसन्न, कमल सन्मुख व्हे देखत ही हों एसे।
विमुख भए अकृपा न निमिषहू जब देखू Y तब तेसे॥
भक्त विरह कातर करुनामय डोलत पाछें लागे।
'सूरदास' एसे प्रभुकों + कत दीजत पीठ अभागे॥

B प्रभु को देखो एक सुभाइ। (सूरसागर।- नागरी प्र० ५)
X ज्ञान सिरोमनि (,, ,,)
S तिनका सो अपने जन को गुनमानत० (,, ,,)
× सकुचि गनत अपराध समुद्रहि बुन्द तुल्य भगवान्।
Y फिरि चितयों तो तैसे (सूरसागर नागरी प्र ५)
+ स्वामी कों देहि पीठि सो अभागे (,, ,,)

यह पद कहे सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। और कहे जो–एसे दैन्य प्रभुजी अपने सेवकन कों देत हैं। (सो ता कों पूरन कृपा जानिये) या (दैन्यता रस) के पात्र ये ही हैं। तब वा वेर श्रीगुसांईजी के सेवक सब पास ठाढे हे। सो चत्रभुजदास जी ने सूरदासजी सों कह्यो, जो–सूरदासजी! तुमनें बोहोत भगवद् जस वर्णन कियो। सहस्रावधि* पद किए। परि कछू श्रीआचार्य जी महाप्रभुन को हू वर्णन कियो है? तब सूरदासजी बोले जो–मैं तो यह जस सब श्री आचार्यजी महाप्रभुन को ही कियो है। कछू न्यारो देखूं न्यारो करूं। परि तेरे कहेतें कहत हों। (सो या कीर्तन के अनुसार सगरे कीर्तन जानियो) या भांति कहिके सूरदासजी ने एक नयो पद करिके गायो। सो पद:—

* पाठभेद-लक्षावधि।

॥ राग केदारो ॥

भरोसो दृढ इन चरनन केरो ।
श्रीवल्लभ-नखचन्द्र-छटा बिन सब जग मांझ अंधेरो ॥
साधन और नहीं या जगमें जासों होत निवेरो ।
'सूर' कहा कहे द्विविध आंधरो बिना मोल को चेरो ॥

(सो तब चत्रभुजदास आदि सगरे बैष्णव सूरदासजी कों धन्य धन्य कहे जो–इनके ऊपर बडी भगवत् कृपा है) यह पद कहे पाछे सूरदासजी कों मूर्छा आई। तब श्रीगुसांईजी कहे जो–सूरदासजी! (अब या समय) चित्त की वृत्ति कहां है? तब (वाही–समय) सूरदासजी ने एक नयो पद करि के गायो। सो पद :—

॥ राग विहागड़ो ॥

बलि बलि बलि हों कुवरि राधिका नंद-सुवन जासों रति मानी।०

यह पद कहे। इतनो कहि सूरदासजी ने श्रीठाकुरजी को श्रीमुख, तामें नेत्र, रस भरे देखे। तब श्रीगुसांईजी बोले जो– सूरदासजी ! नेत्र की वृत्ति कहां है ? तब सूरदासजी ने पद कह्यो। सो पद :–

॥ राग विहागड़ो ॥

खंजन नैन रूप रस माते।
अतिसै चारु चपल अनियारे पल पिंजरा न समाते॥
चलि चलि जात निकट स्रवननि के उलटि पलटि ताटंक फंदाते 'सूरदास' अंजन-गुन अटके नातर* अब उडि जाते।

इतनो कहत ही सूरदासजी ने सरीर त्याग दियो। भगवद्-लीला में प्रवेस कियो। पाछें श्रीगुसांईजी सब सेवकन सहित श्रीगोवर्द्धन आए। तातें सूरदासजी

*नतरु अबहि–पाठभेद।

श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के एसे कृपा--पात्र भगवदीय हे। तातें सूरदासजी के ऊपर श्रीगुसांई जी बोहोत प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्त्ता को पार नाहीं, सो कहां ताईं लिखिए।

* इस स्थान पर भाव-प्रकाशवाली प्रति में यह पाठ है:–

पाछे सूरदास जी जुगल स्वरूप को ध्यान करिके यह लौकिक शरीर छोडि लीला में जाय प्राप्त भये।

ता पाछे श्रीगुसांईजी आप तो गोपालपुर पधारे तब सगरे वैष्णवन ने मिलि के सूरदासजी की देह को अग्नि-संस्कार कियो। ता पाछे सगरे वैष्णव श्रीगुसांई जी की पास आए।

या प्रकार सूरदास जी मानसी सेवा में सदा मगन रहते। तातें इनके माथे श्रीआचार्यजी ने भगवत्-सेवा नाहीं पधराई। सो कोहतें-जो-सूरदासजी कों मानसी सेवा में फल रूप अनुभव हैं। सो ये सदा लीला-रस में मगन रहते हैं।

सो सूरदासजी की वार्ता में यह सर्वोपरि सिद्धान्त है। जो दैन्यता समान और पदार्थ कोइ नांहीं है। और परोपकार समान दूसरो धर्म नाहीं है। जो वा वनिया के लिये सूरदासजी ने इतनो श्रम कियो। परि वाको अंगीकार करवाय वाको उद्धार करि दियो।

तासों श्रीआचार्यजी, श्रीगुसांइजी आपु और सगरे वैष्णव जीव मात्र सूरदासजी के ऊपर वोहोत प्रसन्न रहते। सो जो सूरदासजी सों आइके पूछ तो, तिनकों प्रीति सों मार्ग को सिद्धान्त बतावते, और उनको मन प्रभुन में लगाय देते। तासों सूरदासजी सरीखे भगवदीय कोटिन में दुर्लभ हैं।

(२) श्रीपरमानन्ददासजी

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक परमानन्ददासजी कनोजिया ब्राह्मण कनौज में रहते, (जिनके पद गाइयत हैं अष्टछाप में) तिनकी वार्ता* :—

* भावप्रकाश:—

सो ये परमानन्ददासजी लीला में अष्टसखान में 'तोक' सखा को प्राकट्य हैं। सो तोक सखा को दूसरो निकुंज में सखी-रूप है। ता स्वरूप को नाम चंद्रभागा है। सो सुरभिकुंड के पास श्रीगिरिराज के एक द्वार+ है ताके मुखिया हैं।

आधिदैविक मूल स्वरूप

सो ये कनौज में कनौजिया ब्राह्मण के यहां जन्मे। जा दिन परमानन्ददासजी जन्मे, वा दिन उनके पिता को एक सेठ ने बोहोत द्रव्य दान दियो। तब वा ब्राह्मण ने बहोत प्रसन्न होइके कह्यो जो– श्रीठाकुरजी ने मोकों पुत्र दियो, और धन हु बहोत दियो। तासों यह पुत्र बडो भाग्यवान है, जाके जन्मत ही मोकों परम आनंद भयो है। सो मैं या पुत्र को नाम 'परमानन्ददास' ो।

\+ स्यामतमाल वृक्ष के नीचे है।

पाछे जब नाम करन लागे तब वा ब्राह्मण ने कही जो–नाम तो मैं पहले ही या पुत्र को 'परमानन्द' विचारि चुक्यो हों। तब सब ब्राह्मण बोले जो–तुमने विचार्यो है सोई नाम जन्मपत्रिका में आयो है। तब तो वह ब्राह्मण बहोत ही प्रसन्न भयो। पाछे वा ब्राह्मण ने जात-कर्म करि दान बहुत ही कियो। ऐसे करत परमानन्ददास बडे भये। तब पिता ने बडो उत्सव कियो। और इनको यज्ञोपवीत कियो।

*सो ये परमानन्ददास बडे कृपा-पात्र भगवदीय हैं, लीलामध्यपाती श्रीठाकुरजी के अत्यंत (अंतरंग) सखा हैं, सो जब श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्धननाथजी की आज्ञातें दैवी जीवन के उद्धारार्थ भूतल पर प्रकट भए, तैसे ही श्रीठाकुरजी सहित सगरो परिकर प्रकट भयो। सो दैवी जीव अनेक देशांतर में प्रकट भए।

सो गोपालदासजी वल्लभाख्यान में गाये हैं जो–'अनेक जीवने कृपा करवा देशांतर प्रवेश' ०। सो कनौज में परमानन्ददासजी बहोत ही प्रसन्न बालपने तें रहते।

---

* इतना अंश सं० १६६७ वाली वार्ता में कुछ शब्दान्तर के साथ आगे आया है।

पाछें ये बडे योग्य भये, और कवीश्वर हू भये। वे अनेक पद बनाइके गावते सो 'स्वामी' कहावते और सेवक हू करते। सो परमानन्ददास के साथ समाज बहोत, अनेक गुनीजन संग रहते।

एक समय कनौज में अकाल परथो, सो हाकिम की बुद्धि बिगरी। सो गाममें सो दंड लियो, और परमानन्ददास के पिता को सब द्रव्य लूटि लियो। तब मातापिता बहोत दुःख पाइके परमानन्ददास सों कहे जो–हम तेरो व्याह हू न करन पाए, और सब द्रव्य योंही गयो, तासो अब तू कमाइवे को उपाय कर। सो काहेतें? जो–तू गुनी और तेरे द्रव्य बहोत आवत है। सो तू वा द्रव्य को इकठोरे करे तो हम तेरो व्याह करें।

तब परमानन्ददासने मातापिता सों कह्यो जो–मेरे तो व्याह करनो नांही हैं, और तुमने इतनो द्रव्य भेलो करिके कहा पुरुषारथ कियो? सगरो द्रव्य योंही गयो। तासों द्रव्य आए को फल यही है जो–वैष्णव ब्राह्मण कों खवावनो। तासों मैं तो द्रव्य को संग्रह कबहू नांही करूंगो और तुम खाइवे लायक मोसों नित्य अन्न लेहु, और बैठे २ श्रीठाकुरजी को नाम लियो करो। जो अब निर्धन भए हो। तासों अब तो धन को मोह छोडो।

तब पिता ने परमानंददास सों कह्यो जो– तू तो वेरागी भयो। तेरी संगति वेरागीन की है, तासों तेरी एसी बुद्धि भई, और हम तो गृहस्थी हैं। तासों हमारे धन जोरे बिना कैसे चले? जो कुटुम्ब में, जाति में खरचें, तब हमारी बडाई होय।

पाछें पिता धन के लिये पूरब कों गयो। तहां जीविका न मिली तब दच्छिन कों गयो, और तहां द्रव्य मिल्यो सो तहां रह्यो। और परमानंददास ने अपने घर कीर्तन को समाज कियो। सो गाम गाम में प्रसिद्ध भए, सो परमानंददास गान–विद्या में परम चतुर हते।

*सो परमानन्ददासजी परम भगवदीय लीला-मध्यपाती श्रीठाकुरजी के परम सखा। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु प्रगट भए श्री-नाथजी की आग्यातें दैवी जीवन के उद्धारार्थ, और तैसे ही श्रीठाकुरजी को परिकर सब प्रकट भयो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगो-

वर्द्धन पर्वत पे प्रगट भए । सो गोपालदास वल्लभाख्यान में कहे हैं जो– "अनेक जीवने कृपा करेवा देस देसांतर परवेस" ।

तातें परमानन्ददास को जन्म कनोजमें भयो, सो कनोजिया ब्राह्मण के घर भयो। सो वे परमानन्ददास बोहोत योग्य भए । भगवत्कृपा के पात्र हैं । सो परमानन्ददास 'स्वामी' कहवावते। आप कीर्तन बोहोत गावते। आप सेवक करते, तातें परमानन्ददासजी के पास समाज बोहोत रहतो । *

सो (एक समय) भगवद्इच्छा तें परमानन्ददास कनोज तें (मकर स्नान कों) प्रयाग आए। सो मार्गमें उतरे। उहां कीर्तन करें। सो बोहोत आछे करें।

* ... * वार्ता का इतना अंश भाव प्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था।

(सो पार अडेल में श्रीआचार्यजी बिराजत हुते। अडेल तें लोग कछु कार्यार्थ गाम में आवते। सो परमानन्ददास के कीर्तन सुनिके अडेल में जाइके श्रीआचार्यजी सों कहते जो– एक परमानन्ददास कनोज तें आयो है। सो कीर्तन बोहोत आछो गावत है।)

(तब श्रीआचार्यजी कहे जो–परमानन्द दास दैवी जीव है, जो–इनको गुन होय सो उचित ही है)

श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सेवक जलघरिया क्षत्री कपूर (हतो) सो उनकों रागके ऊपर बडी आसक्ति हती।

(सो यह बात सुनिके वाके मन में आई जो– मैं श्रीआचार्यजी न जानें एसे

( ) कोष्ठान्तर्गत पाठ सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति का नहीं है। भावप्रकाश वाली वार्ता का है।

परमानन्द स्वामी को गान सुनूं। काहे तें ? जो– श्रीआचार्यजी आप सुनेगें तो खीजेंगे जो– तू सेवा छोडिके क्यों गयो ?)

सो वे कोई ब्योत न पावे, जो– प्रयाग में जाइके परमानन्ददासजी के कीर्तन सुनें। सो सेवा में अवकास नहीं जो– प्रयाग जाइ सके। (परन्तु वा जलघरिया च्त्री कपूर को मन परमानन्दस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों बोहोत हतो) ❀

❀भावप्रकाश—

सो काहे तें ? जो– इनको पूर्व को सम्बन्ध है। जो– लीला में यह च्त्री परमानन्ददास की सखी हैं। सो ये 'चन्द्रभागा' की सखी 'सोनजुही' याको नाम है।

सो यह च्त्री सुदामापुरी में एक च्त्री के घर च्त्री कपूर के प्रगटे, इन को पिता महाविषयी हतो। प्रसंग सो जहां तहां परस्त्री को संग करतो। और द्रव्य बोहोत हतो, सो सब विषय में खोयो, ता

पाछें गाम के राजा ने सगरो घर लूटि लियो। सो या छत्री के मातापिता पुत्र सहित बंदीखाने में दिए। तब याको पिता एक सिपाई कों कछु देकें रात्रिकों स्त्रीपुरुष और या पुत्र सहित बंदीखाने में सों भाजे। सो दिन दोइ तीन तांई भाजे, सो तहां एक वन में जाइ निकसे। तहां नाहर ने याके माता पिता कों मार्‍यो, और यह पुत्र वरस चौदह को बच्यो, सो वन में बेठ्यो रुदन करे, सो भूख्यो प्यासो चल्यो न जाय।

सो भागजोग तें पृथ्वी-परिक्रमा करत श्रीआचार्यजी गहवरवन (सघन वन) में आए। तब या छत्री सों पूछी जो-- तू कौन है? जो अकेलो वनमें रुदन करत है। तब इन ने दंडवत करिके अपनो सब वृत्तांत कह्यो।

तब श्रीआचार्यजी आप कृष्णदास मेघन सों कहे-- जो कछु महाप्रसाद होय तो याकों खवाइके वेगि जलपान करावो, जो याके प्राण बचें। तब कृष्णदास मेघन के पास प्रसाद हतो, सो या छत्री कों न्हवाइके, खवाइके जल पिवायो। तब या छत्री को मन ठिकाने आयो। तब या छत्री ने श्रीआचार्यजी सों विनाति कीनी जो-- महाराज! मोकों आप पास राखो। जो-- मैं जनम भर आप को गुलाम रहूंगो। अब मेरे मातापिता भगवान् आप हो।

तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख सों कहे जो—तू चिंता मति करे, और तू हमारे संग ही रहियो। तब यह क्षत्री श्रीआचार्यजी के संग ही रह्यो। ता पाछें दूसरे दिन श्रीआचार्यजी आप वा क्षत्री कों नाम, ब्रह्मसंबंध करवायो, और जल लाइवे की सेवा याकों दिये।

पाछें कछूक दिन में श्रीआचार्यजी आप अडेल पधारे। तब वह क्षत्री श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन करिके अपने मनमें बोहोत प्रसन्न भयो। और कह्यो जो—मैं अनाथ हतो, सो श्रीआचार्यजी आप मोकों कृपा करिके शरण लेके संग लाए, सो मोकों सक्षात् श्रीयशोदोत्संग-लालित श्रीनवनीतप्रियजी के दरसन भए। तब वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप में लगि गयो।

सो तब या क्षत्रीने अपने मन में विचारी जो—अब मोकों श्रीनवनीतप्रियजी की सेवा कछु मिले, तब मैं सदा सेवा करूं और दरसन करूं। सो श्रीआचार्यजी आप तो साक्षात् पुरुषोत्तम हैं, सो या क्षत्री के मन की जानि याकों पास बुलाइके कह्यो जो— तेरे मन में सेवा की आई सो तेरे बड़े भाग्य हैं। तासों अब तू श्रीनवनीतप्रियजी के जलघरा की सेवा कियो कर।

तब वा क्षत्रीने प्रसन्न होइके श्रीआचार्यजी कों दंडवत करिके विनती कीनी–जो महाराज! मेरे हू मन में एसें हती, सो आप तो परम कृपालु हो, तासों मेरो सर्व मनोरथ पूरन कियो।

ता पाछें अति प्रीति सों वह क्षत्री वैष्णव प्रसन्न होइके खारी तथा मीठो जल भरन लाग्यो। सो कछूक दिन में श्रीनवनीतप्रियजी आप सानुभावता जतावन लागे परंतु सेवा में अवकाश नांही, जो–ये परमानंदस्वामी के कीर्तन सुनिवे कों जाय।

सो एक दिन (एकादशी को दिन हतो ता दिन) एक वैष्णव प्रयाग तें (श्रीआचार्य-जी के दर्शन कों) अडेल आयो। (तब वा क्षत्री जलघरिया ने वा वैष्णव सों परमानन्द स्वामी के समाचार पूछे) सो वा वैष्णव ने कह्यो जो– (नित्य तो चार घडी तथा पहर को समाज होत है, रात्रि के समे और) आज एकादशी है सो परमानन्द स्वामी आज रात्रि कों जागरन करेंगे।

सो यह सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को सेवक जलघरिया क्षत्री कपूर ने अपने मन में विचारी जो– आज परमानंद स्वामी के कीर्तन सुनिवे को व्योंत है । ता सों जब श्री-आचार्यजी आप रात्रिकों पौढेंगे तब में रात्रि कों प्रयाग में जाइके परमानन्द स्वामी के कीर्तन सुनूंगो ।

ता पाछे रात्रि भई) सो वह क्षत्री कपूर अपनी सेवा तें पोहोंचिके रात्रि कों (श्रीआचार्यजी के श्रीमुखतें कथा सुनिके रात्रि प्रहर डेढ गई ताही समय) अपने घर आयो । तब घर आय अपने मनमें विचारी, जो– या विरियां (घाट ऊपर) नाव तो मिलेगी नाहीं । तातें कहा कर्त्तव्य है ?. पारि वह पेरिवे में वोहोत प्रवीन हतो ।सो मनमें विचारी जो– पेरिके पार जैये ।

सो अपने घरतें चले । सो श्री-यमुनाजी के तीर आए । तब परदनी तो पहरी, वस्त्र सब माथे पे बांधे (सो उष्ण काल

गरमी के दिन हते सो) श्रीयमुनाजी में पेरिके पार गए। वस्त्र सब पहरिके जा ठोर परमानन्ददासजी उतरे हते, ता ठोर आए। तहां इनको (पहलें) परमानन्ददासजी सों कछु मिलाप न हतो। जहां सब लोग बैठे हते, तहां ए जाइ बैठे। परि ए श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक सो ये प्रसिद्ध हैं। इनकों सब कोई जाने। सो सब इनको आदर सन्मान करिके बैठारे, सो ये बैठे। (और और गुनीन के पद गाये) ता पाछे परमानंद स्वामी ने विरह के पद गाए।

॰सो विरह के पद काहेतें गाए। जो– इनको प्रथम स्वरूप कहि आए हें। कहा? जो– लीला-मध्यपाती श्रीठाकुरजी के परम सखा हें। सो ये परमानन्दस्वामी उहां तें

बिछुरे। और इहां तो अब ही श्रीठाकुरजी को दरसन भयो नाही। और श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को दरसन होइगो। तब श्री-गोवर्द्धननाथजी को हू दरसन होइगो, श्रीआचार्यजी महाप्रभु करावेंगे। सो दरसन कैसो होइगो? जो-- श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के मार्ग को इह सिद्धान्त है। जो--भगवदीय को संग होइ, तो श्रीठाकुरजी कृपा करें। ताही के लिए श्रीआचार्यजी महाप्रभु वाके ऊपर अनुग्रह करिके अपने कृपा पात्र भगव-दीय के अंतःकरण में बैठिके परमानन्दस्वामी के पास बैठायो। सो ये श्रीआचार्यजी महा-प्रभुन के सेवक कैसे हैं? जो-- जिनको श्री-ठाकुरजी क्षण एक भूलत नाहीं हें। इनकूं छोडत नाहीं हें। इनके संग ही रहत हें। काहे तें? जो सूरदासजी गाए हें:—

"भक्त विरह कातर करुणामय डोलत पाछें लागे" ॥

और जगन्नाथ जोसी की वार्ता (चौ. वै. सं० ३१) में लिख्यो है । "जो जब वा राजपूत गरासिया ने तरवार काढी, तब श्रीठाकुरजी ने वाको हाथ पकर्‌यो" । तातें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवकन के निकट श्रीठाकुरजी रहत हें । तातें परमानन्दस्वामी ने विरह के पद गाए * सो पद :—

॥ राग विहागडो ॥

व्रज के विरही लोग विचारे ॥
विन गोपाल ठगे से ठाढे अति दुर्बल तन हारे ॥
मात जसोदा पंथ निहारति निरखति सांझ सकारे ॥
जो कोउ 'कान्ह' 'कान्ह' कहि टेरत अंखियन वहत पनारे ॥
यह मथुरा काजर की रेखा जोई निकसत सोई कारे ॥
परमानंद स्वामी' विन ऐसे जैसे चंद विनु तारे ॥

...... यहां तक भावप्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था, पर सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति का यह मूल अंश ही है ।

॥ राग कान्हरो ॥

गोकुल सब गोपाल-उपासी ।
जो गाहक साधन के ऊधो !
ते सब बसत ईस - पुर कासी ॥
जद्यपि हरि हम तजी अनाथ करि ।
अब छाडति क्यों रति की गासी ॥
अपनी सीतलता नहिं छांडत ।
यद्यपि विधु राहु भयो ग्रासी ॥
किहि अपराध जोग लिखि पठयो
प्रेम भजन तें करत उदासी ।
'परमानंद' ऐसी को विरहिनि
मांगति मुकति छांडि गुन रासी ॥

॥ राग कान्हरो ॥

कौन रसिक है इन बातनि कौ ।
नंदनंदन बिनु कासों कहिए सुनि री! सखी मेरे दुख या तन कौ॥
कहां वे जमुना पुलिन मनोहर कहां वे चंद सरद रातनि कौ ।
कहां वे सेज पौढिबौ बनकौ फूल बिछौना मृदु पातनि कौ ॥
कहां वे मंद सुगंध अनिल रस, कहां वे षटपद जल जातनि कौ
कहां वे दरस परस'परमानन्द'कमल नयन कोमल गातनि कौ

॥ राग कान्हरो ॥

माई को मिलिवै नन्दकिसोरै ।
एक बार को नैन दिखावै मेरे मनके चोरै ॥

जागत गगन गनत नहिं खूटत क्यों पाऊंगी भोरै ।
सुनिरी सखी ! अब कैसें जीजै सुनि तमचुर खग रोरै ॥
जोपै प्रीति होइ अंतर गत जिनि काहून निहोरै ।
'परमानन्द' प्रभु आइ मिलहिंगे सखी सीस जिनि ढोरैं ॥

इत्यादिक विरह के पद परमानन्द स्वामी नें सारी राति गाए । तब पिछली रात्रि घडी चारि रही । (तब कीर्तन राखे) तब सब जागरन में आए हते, सो अपने अपने घर गए ।

एसेई ए श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक जलघरिया चत्री कपूर हू श्रीआचार्यजी महाप्रभु के सेवक इन परमानन्दस्वामी सों 'श्रीकृष्ण स्मरण' कहिके चले । परमानन्द स्वामी के कीर्तन सुनिके बोहोत प्रसन्न भए । और परमानन्द स्वामी सो कह्यो जो--जैसे हम सुने हते, तातें अधिक देखे । तुम ऊपर भगवत्कृपा अनुग्रह पूर्ण है ।

❀(सो या प्रकार ये छत्री कपूर) परमानन्द स्वामी के ऊपर अनुग्रह करिवे के लिए भए नाहीं तो भगवदीय काहे कों काहू के घर जांइ। और यह ऊपर कहि आए हैं, जो-श्रीठाकुरजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवकन के निकट रहत हैं। ताको हेतु यह है। जो-- निकट हैं। तातें इन जलघरिया कपूर की गोद में बेठिके श्रीनवनीत-प्रियजी ने परमानन्द स्वामी के कीर्तन सुने हैं ❀।

तातें इन जलघरिया कपूर की गोद में बेठिके काहेकों सुने? जो-- श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के मार्ग की मर्यादा है, जो-- श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के अनुग्रह बिना श्रीठाकुरजी कृपा न करें। सो जलघरिया छत्री के ऊपर श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को अनुग्रह है। तातें

— इतना अंश भावप्रकाश रूप मे प्रकाशित हुआ था। पुर सं० १६६७ की वार्ता प्रति मे यह वार्ता का मूल अंश ही है।

श्रीनवनीतप्रियजी इनकी गोद में बैठिके परमानन्द स्वामी के कीर्तन सुने। सो श्री-नवनीतप्रियजी कों उनके कीर्तन काहे कों सुनने पडे? सो ताको हेतु यह है। सो परमानन्द स्वामी के ऊपर अनुग्रह करिवे के लिए श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक जलघरिया कपूर चत्री परमानन्द स्वामी सों कृष्णस्मरण, कहिके चले। ×

सो श्रीयमुनाजी के तीर आए। तहां आइके विचार कियो जो-- नाव की बाट देखिये तो अवार होइगी। और सेवा छूटेगी और श्रीआचार्यजी महाप्रभु जानेंगे तो खीजेंगे। तातें जैसे पेरिके आए। तैसे पेरिके गए। (धोती उपरना परदनी सहित न्हाइ के अपरस ही में आए। ताही समय श्री-

× इतना अंश नवीन प्रकाशित वार्ता और भावप्रकाश दोनों में नहीं है।

आचार्यजी आप पोंढिके उठे हते सो श्रीआचार्यजी के दरसन करि दंडवत करि अपने जलघरा की सेवा में तत्पर भये)*

*भावप्रकाश.

सो या प्रकार ये क्षत्री कपूर परमानन्दस्वामी के ऊपर कृपा करिवे के अर्थ परमानन्दस्वामी के पास गये। नांही तो इनकों श्रीठाकुरजी आप सानुभाव हते, सो एसे भगवदी काहे कों काहू के घर जांय ? परंतु परमानन्द-स्वामी के ऊपर कृपा होनहार हैं, तासों श्रीनवनीतप्रियजी वा क्षत्री कपूर जलघरिया को मन प्रेरिके याके संग आप-ही पधारि, याही की गोद में बैठिके परमानन्दस्वामी के कीर्तन सुने।

सो या प्रकार वह क्षत्री जलघरिया परमानन्दस्वामी के कीर्तन सुनि जब प्रयाग सों अडेल कों चले, सो तब परमानन्दस्वामी सगरी रात्रि के श्रमित हते, सो ये हू सोये ।+

+भावप्रकाश.

सो तहां यह संदेह होय जो- परमानन्दस्वामी सगरी रात्रि जागरन करिके चारि घड़ी पिछली

रात्रि रही तब सोये। सो सोये तें जागरन को फल जात रहत है। जो परमानन्द स्वामी तो सुज्ञान हैं, और चतुर हैं। तासों वे क्यों सोये? तहां कहत हैं जो– परमानन्द-स्वामी लीला-संबंधी पुष्टिजीव हैं। सो एक श्रीठाकुरजी कों चाहत हैं और जागरन के फल कों चाहत नांही हैं।

सो ये परमानन्द स्वामी एकादसी के जागरन को मिस मात्र लेके भगवन्नाम अधिक लियो जाय ताके लिये जागरन करत हते। सो इनकों विधि रीति सों कछू जागरन करिवे के फल कों कारन नांही है। तासों परमानन्ददास चारि घड़ी रात्रि पिछली रही तब सोये। सो यातें जो– जागरन को फल जायगो, परंतु भगवन्नाम लियो, सो गुन तो कोई काल में जायगो नांही। तासों भगवन्नाम लेयवे के अर्थ चारि घडी रात्रि पाछिली कों सोये। सो काहे तें जो– सोवें नांही तो द्वादसी के दिन आलस शरीर में रहे। फेरि द्वादशी की रात्रि कों डेढ़ पहर रात्रि तांई कीरतन करने हैं। तासों जागरन को आश्रय छोडिकें भगवन्नाम को आश्रय करिकें सोये।

ता पाछें रात्रि को जागरन के श्रम सों परमानन्द स्वामी को निद्रा आई। सो इतने में स्वप्न आयो। सो स्वप्न में देखे तो जैसे

रात्रि कों जागरन में श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक क्षत्री कपूर जलघरिया बैठे हते। तैसे ही बैठे देखे। और देखे तो क्षत्री कपूर की गोद में श्रीनवनीतप्रियजी बैठे हैं। ऐसे दरसन भए। और स्वप्न में श्रीनवनीतप्रियजी ने (मुसिकाइ के) कह्यो जो– आज (मैंने) तेरे कीर्तन सुने हैं। सो श्रीआचार्य जी के कृपापात्र सेवक कपूर जलघरिया तेरे यहाँ रात्रि कों जागरन में आए तासों इनके साथ में हू आयो। सो इतने दिन में आजु तेरे कीर्तन सुन्यो हों)❀

*भावप्रकाश

सो यह कहे। तहां यह संदेह होय जो– श्रीठाकुरजी तो सदा सुनत हैं, और सब ठौर व्यापक हैं। सो कहे जो– 'आज मैं सुन्यो' ताको कारन कहा? तहां कहत हैं जो– इतने दिन सो अंगीकार में ढील हती, सो अंतर्यामी साक्षिरूप सों सुने। तासों अब अंगीकार करनो है और कृपा करनी है, सो वेगि कृपा करन को लक्षण बताये।

तासों कहे जो–आजु मैं तेरे कीर्तन सुन्यों हों, सो आज मैं तोपर पूरन कृपा करी। तासों अब वेगि मोकों पावोगे। सो यह आशय जाननो।

इतनो श्रीनवनीतप्रियजी ने श्रीमुख सों कह्यो सो तब ही परमानन्द स्वामी की निद्रा खुली। सो वैसे में श्रीमुख को सौन्दर्य कोटि लावण्य परायण परमानन्द स्वामी ने देख्यो। सो हृदय में धरि लीनो, और मन में चटपटी लागी (और आर्ति भई जो-अब मैं कब श्रीनवनीतप्रियजी को दरसन करों। ता पाछें परमानन्द स्वामी ने अपने मन में विचार कियो जो– मैं इतने दिन तें जागरन कियो और कीर्तन हू गाये। परन्तु मोकों एसो दरसन कब हू न भयो। जो– आज भयो है सो, श्रीआचार्यजी को सेवक जलघरिया चत्री कपूर आयो तासों उनकी गोद में भयो) जो यह दरसन चत्री कपूर विना न होइगो। तातें होइ तो उनके पास

जैये। उनसों मिलें तब कार्य सिद्ध होइगो। एसे परमानन्द स्वामी अपने मनमें विचार करिके प्रयाग तें उठिके अडेल कों चले।

सो श्रीयमुनाजी के तीर आइ ठाढे भए। सो प्रातःकाल को समो हतो, सो प्रथम नाव चलती हती। तापर बैठिके परमानन्द स्वामी पार उतरे। सो आगे आइ देखे तो श्रीआचार्यजी महाप्रभु स्नान करिके श्री-यमुनाजी के तीर ऊपर संध्यावंदन करत हते। सो इन परमानन्द स्वामी कों श्रीआ-चार्यजी महाप्रभुन को दरसन भयो। सो साक्षात् श्रीपूर्ण पुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्र एसो दरसन परमानन्द स्वामी कों भयो। (सो जैसे श्रीगुसांइजी श्रीवल्लभाष्टक में वर्णन किये हैं जो— वस्तुतः कृष्ण एव०। एसो दरसन करिके परमानन्द स्वामी चकित होइ रहे। सो कछु बोल न निकस्यो) तब परमा-

नन्द स्वामी के मन में आई । जो– श्री-आचार्यजी महाप्रभुन के सेवक जलघरिया छत्री कपूर की गोद में श्रीठाकुरजी क्यों न विराजै? जिनके माथे श्रीआचार्यजी आपु एसे धनी विराजत हैं। (तासों में इनको सेवक होऊंगो । परि मेरो सामर्थ्य नांही है जो– मैं इन सों सेवक होन की विनती करों।) परि परमानन्द स्वामी के मन में यह जो– वे छत्री कपूर मिले तो आछो हैं । जो– काहेतें जो– जिनके दरसन तें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के दरसन भए।

(यह विचार परमानन्द स्वामी अपने मन में करत हते) ता पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु परमानन्द स्वामी सों कहे जो– परमानन्ददास कछू भगवद्–जस वर्णन करो। तब परमानन्द स्वामी नें (श्रीआचार्यजी कों साष्टांग दंण्डवत करिके) बिरह के पद गाए । सो पद :—

॥ राग सारंग ॥

कौंन बेर भई चले री गोपाल हिं ।
हौं मोसार गई ही न्योंते बार बार बूझति ब्रजबाल हिं ॥
तेरे तनकौ रूप कहां गयो भामिनि अरु मुख कमल सुझाइ रह्यो
सब सोभाग गए हरिके संग हृदौ सकोमल विरह दह्यो ॥
को बोलै को नैन उघारै को उत्तर देइ बिकल मन ।
जो सर्वसु अक्रूर चुरायो 'परमानन्द स्वामी' जीवन-धन ॥

जिय की साध जिय हीं रही री ।
बहुरि गोपाल देखन न पाए बिलपति कुंज अहीरी ॥
इक दिन सो जु सखी इन मारगु बेचन जात दही री ।
प्रीति के लय दान मिस मोहन मेरी बांह गही री ॥
बिनु देखें घरी जात कलप भरि बिरहाअनल दही री ।
'परमानन्द स्वामी' बिनु दरसन नैननि नदी बही री ॥

वेह बात कमल-दलनैन की ।
बार बार सुधि आवति सजनी वह दुरि देनी सैन की ॥
वह लीला वह रास सरद कौ गो-रज रंजित आवनि ।
अरु वह ऊंची टेर मनोहर मिस करि मोहि सुनावनि ॥
वे बातें सालति उर अन्तर को पर पीर हिं पावै ।
'परमानन्द' कह्यौ न परै कछु हियो झुरूंध्यो आवै ॥

सुधि करति कमल-दलनैन की।
भरि भरि लेति नीर अति आतुर न्हें रति वृंदावन चैन की
गाढे आलिंगन दै दै मिलति हि कुंज लता द्रुम ऐन की।
वे बतियां कैसे कें बिसरति बांह उसीसे सैन की ॥
बसि निकुंज में रास खिलाए बिथा गवांई मैन की।
'परमानन्द' प्रभु सों क्यों जीवहि सो पोखी मृदु बैन की

या भाति सों परमानन्द स्वामी नें विरह के पद श्रीआचार्यजी के आगें गाए। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु परमानन्द स्वामी सों कह्यो जो-(परमानन्ददास!) कछू भगवत्-लीला ❀ वर्णन करो। तब परमानन्द स्वामी ने कह्यो जो– महाराज बाल-लीला में कछू समझत नाहीं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन नें कह्यो जो– तुम (श्रीयमुनाजी में) स्नान करि आउ, तोकों हम समझावेंगे।

तब परमानन्द स्वामी नें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो जो–महाराज! आपको

❀ बालखीला के पद गाओ। पाठ भी है।

सेवक जलघरिया क्षत्री कपूर कहां हैं। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु कहे जो--कछू (सेवा) टहल सें होइगो।

पाछें परमानन्द स्वामी श्रीयमुनाजी स्नान कों गए। (और श्रीआचार्यजी तो सेवा को समय हतो सो बेगि ही उहां तें मन्दिर कों पधारे, और श्रीनवनीतप्रियजी कों जगाए) सो आगे जाइकें देखे तो जमुना-जलकी गागरि लेके वह क्षत्री कपूर आवत है। सो उनकों देखिके परमानन्द स्वामी बोहोत प्रसन्न भए। और दोऊ हाथ सों परमानन्द स्वामी नें परस्पर नमस्कार * कियो। और कह्यो जो—रात्रि कों आप कृपा करिके जागरन में पधारे हते। सो श्रीठाकुर जी आपकी गोदमें बैठिके मेरे कीर्तन सुनें। सो (मैं सोयो तब श्रीनवनीतप्रियजी ने

* पाठ भगवत-स्मरन।

दरसन दियो और) आपकी कृपा तें श्रीठाकुर जी नें मोसों कह्यो, जो– मैंने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कपूर की गोद में बैठिके मैं तेरे कीर्तन सुने। सो आपके अनुग्रह तें मेरे भाग्य सिद्ध भयो है। सो मैं आपके अनुग्रह तें अब तिहारे दरसन कों आयो (तासों अब जा प्रकार श्रीआचार्यजी आप मोकों नित्य दरसन देंय, सो प्रकार कृपा करिके बतावो।) सो आवत ही तुमारी कृपा तें मोकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को दरसन भयो। सो साक्षात् श्रीपूर्णपुरुषोत्तम श्रीकृष्णचन्द्र, श्रीगोवर्द्धनधर को दरसन भयो (सो यह तिहारे सत्संग को प्रभाव है)।

इतनी बात पमानन्द स्वामी की सुनिके वह जलघरिया क्षत्री कपूर ने परमानन्द स्वामी सो कह्यो जो– (तिहारी, ऊपर श्रीआचार्यजी की कृपा भई है। तासों तुम कों एसो दरसन

भयो है और तुम सों आपने आज्ञा करी है, शरण लेवे के लिये, तो जासों तुम वेगि ही न्हाइके अपरस ही में श्रीआचार्यजी के पास चलो। सो तुम कों प्रभु-कृपा करिके शरण लेइगें। तब तिहारो सब मनोरथ सिद्ध होयगो। और रात्रि कों मैं जागरन में तिहारे पास गयो, सो बात तुम श्रीआचार्यजी के आगे मति करियो जो-श्रीआचार्यजी महाप्रभु सुनेंगे तो खीजेंगे। जो- सेवा छोडिके कहां गयो हो ? तातें यह बात) मति कहो।

इतनी बात सुनिके परमानन्द स्वामी बोहोत प्रसन्न भए। जो-धन्य ये हैं-जिनके ऊपर इतनो श्रीठाकुरजी को अनुग्रह है और अपनो स्वरूप छिपावत हैं।

*पाछें परमानन्द स्वामी तो स्नान कों गए। और वह जलघरिया क्षत्री कपूर जलकी गागरि लेके मंदिर में गयो।

पाछें परमानन्द स्वामी स्नान करिके तत्काल जाइके श्रीआचार्यजी महाप्रभु कों साष्टांग दंडवत करिके आगे ठाढे भए ❀

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कहे जो- परमानन्द ! आगे आइ बैठि । तब श्रीआचार्य जी महाप्रभुन के आगे परमानन्द दास जाइ बैठे । तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कृपा करिके नाम सुनायो । पाछें मंदिर में पधारि (भोग सराय) श्रीनवनीतप्रियजी के संनिधान परमानन्द दास कों ब्रह्म-संनिधान

❀... ❀ इस स्थान पर भावप्रकाश वाली वार्ता में इस प्रकार वार्ता का पाठ है —

"यह वचन परमानन्द स्वामी सों कहिके वा क्षत्री वैष्णव ने तो श्रीयमुना जल की गागरि भरी और परमानन्द दास स्नान करिके अपरस ही में श्रीआचार्यजी के पास उन जलघरिया क्षत्री के पाछें पाछें आए । ता समय श्रीआचार्यजी श्रीनवनीतप्रियजी को शृंगार करिके श्रीगोपीवल्लभ भोग धरिके विराजे हते । ता समय परमानन्ददास न्हाइ के आए'

ब्रह्म-संबंध करवायो। पाछें अनुग्रह करिके परमानन्द दास कों अनुक्रमणिका सुनाई।

X काहेतें ? जो– प्रथम परमानन्द दास कों श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप अपने श्रीमुख ते कहे जो– 'परमानन्द ! कछु भगवद्-जस वर्णन करो' सो परमानन्द स्वामी ने विरह के पद गाए। तब श्रीआचार्य जी महाप्रभु श्रीमुख तें कहे, जो–, कछु लीला वर्णन करि, तब परमानन्ददास ने कह्यो जो– 'महाराज ! मैं तो कछू समझत नाहीं। और समझत नाहीं तो विरह के पद कैसे गावत हैं ? सो ऊपर कहि आए हैं। जो– श्रीठाकुरजी तें बिछुरे हैं सो बिछुरे को दुख स्फुर्त्त भयो, संयोग को सुख ताको विस्मरण भयो। काहे तें ? जो- सब लीलाविशिष्ट पूर्ण पधारे हैं। सो जब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने परमानन्द स्वामी कों श्रीनवनीतप्रियजी

के दरसन करवाए, तब सब लीला की स्फुर्त्ति परमानन्द स्वामी कों भई, और श्री-आचार्यजी महाप्रभु आप परमानन्द स्वामी कों अनुग्रह करिके अनुक्रमणिका सुनाई। ताको कारन कहा? जो– अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवत रूपी समुद्र श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने परमानन्ददास के हृदय में धर्‍यो। तातें वाणी तो सब अष्ट काव्य की समान है। और इन दोउन को सागर भयो है 'सूर-सागर' 'परमानन्द-सागर'। सो भागवत रूपी समुद्र श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने इनके हृदय में धर्‍यो है, सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कह्यो जो-परमानन्द! बाल-लीला वर्णन करो X

X.... X इतना अंश भावप्रकाश रूप में प्रकाशित हुआ था-पर, यह कुछ परिवर्तन के साथ सं० १६६७ की वार्ता का ही मूल पाठ है। भावप्रकाश आगे दिया जा रहा है।

X भावप्रकाश--

सो ताको हेतु यह है जो--प्रथम परमानंद-दास सों आचार्यजीने कह्यो जो– कछु भगवद्-वर्णन करो, तब परमानन्ददास ने विरह के पद गाये । पाछें श्री आचार्यजी आप परमानन्ददास कों कहे जो- बाल-लीला गावो । सो ताको हेतु यह है जो- बाल-लीला श्रीनंदराय जी के घर की लीला है, सो संयोग रस है । सो एक वार संयोग होय तो पाछें विरह फल रूप होय । सो काहे तें ? जो· रासपंचाध्यायी में व्रजभक्तन कों बुलायके लीला किये । ता पाछें अन्तरध्यान में विरह फल रूप भयो । तासों भगवान कहे– ' यथाऽधनो लब्धधने विनष्टे तच्चिन्तया न्यन्निभृतो नवेद' ० ।

जैसे धन पाइके धन जाय, तब धन को चिंतन बोहोत होय । सो पहले श्रीआचार्यजी आप कहे जो-- बाल-लीला गावो । क्यों ? जो– अनुभव करिके विरह को गान वेगि फले । परि परमानन्ददास ने विनती कीनी जो- महाराज! मैं कछु समुझत नांही हों ।

ताको आशय यह है जो-- संयोग रस अब ही है नांही, जो-मूल लीला में हतो सो-विस्मृत भयो है। परि लीला में तें बिछुरे हैं, और दैवी जीव हैं, तासों विरह जनम ही तें गाये। सो अब नाम समर्पन कराइके अज्ञान प्रतिबन्ध दूरि कियो, ता पाछें श्रीभागवत दशमस्कंध की अनुक्रमणिका सुनाये। सो तब साक्षात् श्रीनवनीतप्रियजी के स्वरूप को अनुभव भयो और दशम की सगरी लीला स्फुरी।

परमानंददास कों दशम की अनुक्रमणिका सुनाये ताको कारण यह है जो- सर्वोत्तम ग्रन्थ श्रीगुसांईजी प्रकट किये हैं। तामें श्रीआचार्यजी को नाम कहे हैं जो- 'श्रीभागवत-पीयूष-समुद्र-मथनक्षमः' सो श्रीभागवत को श्रीगुसांईजी अमृत को समुद्र करिके वर्णन किये, सो श्री आचार्यजी आप अनुक्रमणिका द्वारा श्रीभागवतरूपी समुद्र परमानन्ददास के हृदय में स्थापन कियो। सो तैसें ही प्रथम सूरदास के हृदय में अनुक्रमणिका द्वारा श्री भागवतरूपी समुद्र स्थापन कियो हतो। तासों वैष्णव तो अनेक श्रीआचार्यजी के कृपापात्र हैं, परन्तु सूरदास और परमानन्ददास ये दोऊ 'सागर' भये। इन दोऊन के कीर्तन की संख्या नांही, सो दोऊ सागर* कहवाये।

सो श्रीआचार्यजी ने आज्ञा करी जो-बाललीला गावो, अब संयोग रस को अनुभव भयो।

तब परमानन्ददास ने तत्काल बाल-लीला को पद करिके गायो। सो पद :—

॥ राग आसावरी ॥

माई। कमल नयन स्याम सुन्दर झूलत हैं पलनां।
बाल-लीला गावति सब गोकुल की ललनां॥
अरुन तरुन चरन कमल, नखमनि ससि-जोती।
कुंचित कच भंवराकृत लर लटकै गज-मोती॥
अंगुठा गहि कमल पानि मेलत मुख मांहीं।
अपनो प्रतिबिंब देखि पुनि पुनि मुसकांहीं॥
जसुमति के पुन्य पुंज 'निरखि निरखि लालै।
परमानन्द स्वामी' गोपाल सुत सनेह पालै॥

॥ राग बिलावल ॥

जसोदा! तेरे भागकी कही न जाइ।
जो मूरति ब्रह्मादिक दुर्लभ सो प्रगटे हैं आइ॥

* परमानन्द सागर का शुद्ध, प्रामाणिक संस्करण विद्या विभाग कांकरोली से शीघ्र ही प्रकाशित होगा।

सिव नारद सनकादि महामुनि मिलिबेकों करत उपाई ।
ते नंद-लाल धूरि धूसर वपु, रहत कंठ लपटाई ।।
रतन जटित पोढाइ पालने, वदन निरखि मुसकाई ।
झूलो मेरे लाल जाउं बलिहारी 'परमानंद' बलिजाई ।।

राग विलावल

मनिमै आगन नंद कें खेलत दोउ भैया ।
गउर स्याम-जोरी बनी बल कुंवर-कन्हैया ।।
नूपुर कंकन किंकिनी रुनझुन झुन बाजे ।
मोहि रही ब्रज-सुन्दरी मनसा-सुत लाजे ।।
संगे संगे जसोमति रोहिनी हित-जन्नैया ।
चुटकी दै दै नचावही सुत जानि नन्हैया ।।
नील पीत-पट ओढनी देखत मोहि भावै ।
बाल-लीला विनोद सों 'परमानंद' गावै ।।
हरि कौ बिमल जस गावति गोपांगनां ।
मनिमै आंगन नंदराय कें ।।
बाल गोपाल तहां करै रिंगनां गिरि गिरि उठत घुटुरुअनि टेकत
जानुपानि मेरो छगन मगन मंगनां ।
धूसर धूरि उठाइ गोद लै ।।
मात जसोदा के प्रेम कौ भजनां । त्रिपद पहूमि मापित
बन आलस ।
अबहु कठिन भयो देहरी कै लंदानां ।

'परमानंद' प्रभु भगति-बछल हरि।
रुचिर हार वर कंठ सोहै बघनां ॥

ये बाललीला के पद परमानन्ददास ने गाए सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप बोहोत प्रसन्न भए। पाछें परमानन्ददास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पास अडेल आइ रहे। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने परमानन्ददास को (सों कहे जो– अब समय समय के पद नित्य श्रीनवनीतप्रियजी कों सुनायो करो, सो–यह तुम कों) कीर्तन की सेवा दीनी। सो परमानन्ददास श्रीनवनीत प्रियजी कों नित्य नये भांति भांति के पद करिके सुनाए। जब अनोसर होई तब परमानन्ददास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगें (अनेक ब्रज-लीला के) कीर्तन करते। श्री-आचार्यजी महाप्रभु नित्य (श्रीसुबोधिनीजी की) कथा कहते। (सो जा समय जा

प्रसंग की कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुखतें सुनते ताही प्रसंग के कीर्तन कथा भये पीछें परमानन्ददास श्रीआचार्यजी कों सुनावते)*

सो एक दिन परमानन्ददास ने चरणारविंद को महात्म्य (कथा में श्रीआचार्यजी के श्रीमुखतें) सुन्यो। सो चरणारविंद के महात्म्य को कीर्तन करिके परमानन्दस्वामी ने गायो। सो पद:—

राग कान्हरो

चरन कमल बंदू जगदीस, जे गोधन के संग धाए।
जे पद कमल धूरि लपटाने, कर गहि गोपिनि उर लाए॥
जे पद कमल युधिष्ठिर पूजित, राजसूय में चलि आए।
जे पद कमल पितामह भीषम, भारत में देखन पाए॥
जे पद कमल संभु चतुरानन, हृदै कमल अंतर राखे।
जे पद कमल रमा-उर भूषण वेद, भागवत, मुनि भाखे॥

* इस से अधिक कीर्तन। की और क्यो प्रामाणिकता हो सकता है?

जे पद कमल लोक त्रै-पावन, बलि राजा के पीठ धरे।
सो पद कमल 'दास परमानंद' गावत प्रेम-पियूष भरे॥

यह पद गाइके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के स्वरूप को और प्रार्थना को पद गायो। सो पद :—

राग कान्हरो

इह मागों गोपीजन-वल्लभ।
मनुष्य-जन्म और हरि-सेवा व्रज बसिबो दीजे मोहि सुलभ
श्रीवल्लभ-कुल को हो चेरो वैष्णवजन को दास कहाऊं।
श्रीयमुना-जल नित प्रति न्हाऊं मन क्रम वचन कृष्ण-गुन गाऊं
श्रीभागवत श्रवन सुनों नित, इन तजि चित्त कहू अनत न लाऊं
'परमानंददास' यह मांगत नित निरखों कबहू न अघाऊं॥

ये सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप मन में विचारे, जो–मिस करिके पद सुनाइके ब्रजकी (दरसन की) प्रार्थना कीन्ही। (तासों परमानन्ददास कों ब्रज के दरसन अवश्य करवावने) तातें ब्रज कों चलनो।

(इति वार्ता प्रथम)

(वार्ता द्वितीय)

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप यह विचारिके व्रज के पधारिवे को उद्यम किए॥ सो दामोदरदास हरसानी, कृष्णदास मेघन परमानन्ददास और यादवेन्द्रदास, हडवाई तथा रसोई की सामग्री लेके साथ चलते। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप (अडेल तें) व्रज कों पधारे।

सो व्रज कों आवत मार्ग में परमानन्ददासजी को गांव कनोज आयो। तब परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों विनति करी, जो– महाराज! मेरे घर पधारिए। आपके अनुग्रह तें मेरो भाग्य सिद्ध भयो, अब मेरो घरहू पावन करिए।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप कृपा-निधान, भक्त-मनोरथ-पूर्णकर्ता कृपा करिके परमानन्ददास के घर पधारे। पाछें परमानन्द दास अपने भाग्य मानिके परम प्रीति सों अपने घर पधराइके सब सामग्री बजार तें लाए। और जो वैष्णव हते सो तिन सों बोहोत बिनती दैन्यता करिके सबन कों सीधो सामान देके रसोई करवाई। सो परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवा नीकी भांति सों करी। पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप सेवा तें पोहोंचिके (सखडी अनसखडी) रसोइ करि श्रीठाकुरजी कों भोग समर्पिके समयानुसार भोग सराइके अनोसर करि आप भोजन करि (ता पाछे परमानन्ददास आदि सब वैष्णवन कों महाप्रसाद देके) गादीतकियान ऊपर विराजे।

(पाछें परमानन्ददास महाप्रसाद ले

श्रीआचार्यजी के पास आइ दंडवत करि बैठे) तब आप परमानन्ददास सों कहे जो-परमानन्द दास । कछू भगवद्-जस वर्णन करो । तब परमानन्ददास ने मन में विचारी, जो– या समें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को मन तो ब्रज (लीला) में श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास है । तातें बिरह के पद गाऊं ।

सो विरह को पद एसो गायो जो– एक क्षण हू कल्प सम जाय ।

सोपद :—

राग कल्यान

हरि ! तेरी लीला की सुधि आवति ।
कमलनयन मोहन मूरति की, मन मन चित्र बनावति ॥
एक बार जाहि मिलत मया करि, सो कैसें बिसरावति ।
मृदु मुसकानि बंक अवलोकनि, चाल मनोहर भावति ॥
कबहुक निविड तिमिर आलिंगति, कबहुक पिक-स्वर गावति
कबहुक संभ्रम 'क्वासि क्वासि' करि संगहीन उठि धावति ॥
कबहुक नयन मूंदि अंतर गति, वनमाला, पहरावति ।
'परमानंद' प्रभु श्याम-ध्यान करि ऐसें विरह गमावति ॥

एसो पद बिरह को परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगें गायो। सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कों मूर्छा आई। सो जा लीला को परमानन्ददास ने पद गायो, ता लीला में मग्न भए। सो देहानु-संधान न रह्यो। सो तीन दिवस ताईं श्री-आचार्यजी महाप्रभुन कों मूर्छा रही। (सो नेत्र मूंदिके गादीतकियान पे विराजे हते) सो सगरे सेवक दामोदरदास हरसानी, कृष्ण दास मेघन प्रभृति श्रीआचार्यजी महाप्रभु के (स्वरूप कों जानत हते सो जाने। सो कोई वैष्णव बोले नाहीं) दरसन करें। और वैसे ही बैठे रहें। ❁

*भावप्रकाश

सो तहां श्रीगुसांईजी श्रीआचार्यजी को स्वरूप श्रीवल्लभाष्टक में वर्णन कियो है जो–'श्रीमद् वृंदावनेंदुः प्रकटित रसिकानन्द-सन्दोहरूप– स्फूर्जद्रासादिलीलामृत॰ एसे रस सों भरे हैं। और सर्वोत्तम में श्रीगुसांईजी

आचार्यजी को नाम कहे– 'रास-लीलैकतात्पर्याय नमः'। सो श्रीआचार्यजी को कार्य कहियत हैं, जो जो ग्रन्थ किये सो तामें रास-लीला ही तात्पर्य है। और कछु काहू बात में आप को तात्पर्य नाहीं है। सो–तासों रासलीला में मगन होय गये।

भावप्रकाश–

सो काहेतें ? जो–जैसे श्रीआचार्यजी आप पूर्ण पुरुषोत्तम हैं सो इनकों शरीर-धर्म बाधक नाहीं। जो मनुष्य-देह धारण किये तासों मनुष्य की क्रिया जगत में दिखावत हैं, परि इनकों देह को धर्म बाधक नाहीं है तासों सब सेवक तीन दिन लों बैठे रहे।

(सो) पाछें चतुर्थ दिवस श्रीआचार्यजी महाप्रभु सावधान भए तब सब बैष्णव प्रसन्न भये।×

×भावप्रकाश

सो तहां यह पूर्व पक्ष होय जो– रासादिक लीला में मगन तीन दिन तांई क्यो रहे ? सो तहां कहत हैं जो–रासादिक लीला में तीन ही ठौर मुख्य हैं। जो श्रीगिरिराज, श्रीवृंदावन और श्रीयमुनाजी। १ श्रीगिरिराज

स्वरूप होय सगरी लीला की सामग्री सिद्धि करत हैं। २ श्रीवृंदावनकी लीला रसात्मक कुंज-विहार में। और ३ श्रीयमुनाजी सब रास को मूल।

या प्रकार जल स्थल की लीला है। सो एक दिन श्रीगिरिराज संबंधी लीला-रस को अनुभव किये, जो कंदरा में नाना प्रकार के विलास, चत्रभुजदासजी गाये हैं–'श्रीगोवर्द्धन गिरि सघन कंदरा०' आदि। दूसरे दिन वृंदावन-लीला, और तीसरे दिन श्रीयमुनाजी की पुलिन (में) रास जल विहारादि। या प्रकार तीन दिनलौं तीनों रस को अनुभव किये। ता पाछें भूमि पर भक्तिमार्ग प्रकट करिके अनेक जीवन कों सरन लेके लीला-रस को अनुभव करवावनो है, सो चौथे दिन श्रीआचार्यजी आप नेत्र खोलिके सावधान भये।

और परमानन्ददास मन में डरपे, जो फेरि एसो पद न गाऊं *।

*भावप्रकाश

सो परमानन्ददास यामों डरपे जो–श्रीआचार्य जी आप रस को अनुभव करिके कदाचित् लीला-रस मे मगन होइ जांय। सो भूमि पर पधारिबे को मन न करें,

तो यह दैवी जीवन को उद्धार कौन भांति सों होयगो ? तासों परमानन्ददास ने अपने मन में विचार कियो जो-अब मैं फेरि विरह को पद आचार्यजी आगे नाहीं गाऊंगो।

सो काहेतें ? जो-श्रीआचार्यजी आप विरहात्मक स्वरूप हैं। सर्वोत्तम में श्रीगुसांईजी आप श्रीआचार्यजी को नाम कहे हैं जो 'विरहानुभवैकार्थ सर्व-त्यागोपदेशकः' सो विरह रस के अनुभव के अर्थ सर्व लौकिक में त्याग किये, सो उपदेश करत हैं। यामें विरह को स्वरूप जताये, विरह दशा में लौकिक वैदिक की कछू सुधि न रहे, सो तब विरह भयो जानिये।

तातें पाछें परमानन्ददास ने सूधे पद गाये। सो पद:—

* राग विभास *

माई ! हों आनंद गुन गांउ।
गोकुल की चिंतामनि माधौ जो मांगों सो पांउ॥
जब तें कमलनयन ब्रज आए सकल संपदा बाढ़ी।
नंदराइ के द्वारें देखौं अष्ट महा सिद्धि ठाढ़ी
फूले फले सदा वृंदावन कामधेनु दुहि लीजै।

मांगे मेघ इंद्र बरसावै कृष्ण कृपा सुख जीजें ॥
कहति जसोदा सखिय आगें हरि उतकरप जनावै।
'परमानन्ददास' कौ ठाकुर मुरली-मनोहर भावै ॥

यह पद गायो। पाछें सांझ कों और पद गायो। सो पद :—

॥ राग गोरी ॥

विमल जस वृंदावन के चंद कौ।
कहा प्रकास सोम सूरज कौ ? सो मेरे गोविंद कौ ॥
कहति जसोदा औरनि आगें वैभव आनंद-कंद कौ।
खेलत फिरत गोप-बालक-संग ठाकुर 'परमानन्द' कौ ॥

(पाछें) यह पद गायो। पाछें परमानन्द दास ने एसे सूधे पद गाए। फेरि एक दिन एक पद गायो। सो पद :—

॥ राग सारंग ॥

चलि री ! नंद-गाम जाइ बसिये।
वरिक खेलत व्रजचंद सों हसिये ॥
सत बठोन सब सुख माई कठिन इहे जो दूरि कन्हाई।
खन चोरत दुरि दुरि देखों, सजनी जनम सुफल करि लेखों
चर लोचन छिनु छिनु प्यासा कठिन प्रीति 'परमानंददास'

यह पद परमानन्ददास ने गायो । था पद में यह कहे जो—चलि री ! 'नंद-गाम जाइ बसिए' । सो सुनिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु व्रजकों पधारे ।

×(पाछें परमानन्ददास ने जो सेवक किये हते, तिन सबन कों श्रीआचार्यजी के पास लाइ बिनती कीनी जो– महाराज ! इन जीवन कों अंगीकार करिये । तब श्री-आचार्यजी आप परमानन्ददास सों कहे जो—इनकों तुम नाम सुनाइ के सेवक किये हैं, तातें अब हम पास तुम इनकों सेवक क्यों करावत हो ?

तब परमानन्ददास कहे जो—महाराज ! यह तो पहली दशा में स्वामीपनो हतो, तासों सेवक किये हते । और अब तो मैं आप को दास हों । 'स्वामी-पद' तो जो—स्वामी हैं तिनही कों सोहत है । दास होय

स्वामी-पद चाहे सो मूरख है । तासों मैं अज्ञान दशा में सेवक किये, सो अब आप इनकों शरण लेके उद्धार करिये ।

तब सबन कों श्रीआचार्यजी ने नाम सुनाइ सेवक किये । ×

(वार्ता तृतीय)

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभु ब्रज कों पधारे । सो सब वैष्णव श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के संग हते । परमानन्ददास हू संग हते । सो प्रथम श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोकुल पधारे । सो (गोविंदघाट ऊपर) श्रीयमुनाजी में स्नान करि श्रीयमुनाजी के नीचे छोंकर के नीचे बैठक है, तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभु बिराजे । और एक बैठक श्रीद्वारिकानाथजी के मन्दिर के आगें है, सो

× इतना प्रसंग सं० १६९७ की वार्ता में नहीं है ।

भीतर की बैठक है सो रात्रिकों विश्राम तथा रसोई की। तहां श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को घर हुतो। सो जब श्रीगोकुल आवते तब उहां उतरते।

(सो यह भीतर की बैठक है। सो श्रीआचार्यजी आप श्रीनवनीतप्रियजी कों पालने झुलाय दधिकांदो जन्माष्टमी को उत्सव किये हैं। सो ऊपर गजन धावन की वार्ता में वरनन करि आए हैं। सो श्रीआचार्यजी आप स्नान करि छोंकर के नीचे अपनी बैठक में विराजे हते) पाछें सब वैष्णवन नें श्रीयमुनाजी में स्नान कियो। +परमानन्ददास हू श्रीयमुनाजी स्नान करिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगें श्रीयमुनाजी को जस वर्णन कियो +। सो पद:—

+ + यह पाठ भेद है—पाछे श्रीआचार्यजी ने श्रीयमुनाष्टक को पाठ परमानन्ददास कों सिखायो। तब परमानन्ददास के हृदय में यमुनाजी को स्वरूप स्फुरयो।

॥ राग रामकली ॥

श्रीयमुना इहे प्रसाद हौं पांउ ।
तुम्हारे निकट बसौं निसि-वासर रामकृष्ण-गुन गांउ ॥
मज्जन करौं विमल पावन जल चिंता कलुप बहांउ ।
तेरी कृपा भानुकी तनुजा ! हरि-पद-प्रीति बढांउ ॥
विनती करौं इहे वर मागौं अधम-संग बिसरांउ ।
'परमानन्ददास' सुख-दाता मदनगोपाल हि पांउ * ॥

श्रीयमुना दीन जानि मोहिं दीजै ।
नंद कौ लाल सदा वर मागौं, सब गोपिनि की दासी कीजै
तुम हो परम कृपाल कृपा-निधि, संतन जन-सुख कारी ।
तिहारे बस वर्त्तत राधा-वर निर्त्तत गिरवर-धारी ॥
बृज-नारी सब खेलति हरि-संग अद्भुत रास-विहारी ।
तिहारे पुलिन मध्य निकट कुंज-द्रुम केलि पुहुप सुवासी ॥
श्रम-जल सहित न्हात सब सुन्दरि जल-क्रीडा सुखकारी ।
मन हुं तारा-मध्य चंद बिराजत, भरि भरि छिरकत नारी ॥
रानी जू के पांइ परौं नित गृह-कारज सब कीजै ।
'परमानन्ददास' यह रस नैननि भरि भरि पीजै ॥

ऐसे पद श्रीयमुनाजी के परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभु के आगे (श्री-

* परमानन्द च्यारिफल।दाता मदनगोपाल लडांउ (वार्ता पाठ)

यमुनाजी के तट पे) गए। ता उपरांत श्री-आचार्यजी महाप्रभु आप (प्रसन्न होइके) परमानन्ददास कों बाललीला-बिशिष्ट श्री-गोकुल को दरसन करवायो (सो बाललीला बिशिष्ट परमानन्ददास कों एसे दर्शन भये जो-) और ब्रज-भक्त (श्रीयमुना-) जल भरि ले जात हैं। और श्रीठाकुरजी मार्ग में खेलत हैं, या भांति दरसन भयो, सो परमानन्ददास ने जैसे दरसन किए, तैसे पद करिके श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगे गाए। सो पद :—

॥ राग बिलावल ॥

जमुना जल-घट भरि चली चंद्रावलि नारि।
मारग में खेलत मिले घनस्याम मुरारि।
नैंन सों नैनां जुरे मनु रह्यो लुभाइ ॥
मोहन-मूरति जिय बसी पगु धर्यो न जाइ।
तब की प्रीति अधिक भई इह पहली भेंट ॥
'परमानन्द' ऐसें मिले जैसे गुरु में चेंट।

॥ राग सारंग ॥

नैंक गोपाल टेकहु मेरी बहियां ।

औघट घाट चढ्यौ नहिं जाई रपटति हों कालिंदी-महियां ।
सुंदरस्याम कमल दल लोचन देखि सरूप ग्वालि अरुझानी
उपजी प्रीति काम अंतर गति ते नागर नागरि पहिचानी ॥
हसि ब्रजनाथ गह्यो कर-पल्लव जैसें मेरी गगरी गिरन न पावै ।
'परमानंद' ग्वालि सयानी कमल नयन-परस्यौ भावै ॥

ऐसे पद परमानन्ददास ने गाए । पाछें परमानन्ददास ने (गोकुल की) बाल-लीला के पद गाए । सो पद :—

॥ राग कान्हरो ॥

गावति गोपी मृदु मधु बानी ।

जाके भवन बसत त्रिभुवन-पति राजा नंद, जसोदा रानी ॥
गावत वेद, भारती गावति, गावत नारदादि मुनि ज्ञानी ।
गावत गुन गंधर्व, काल, सिव गोकुलनाथ-महातमु जानी ।
गावत चतुरानन जगनायक, गावत सेस सहस्र मुख-रास ॥
मन, क्रम, वचन प्रीति पद-अंबुज गावत 'परमानंददास'

॥ राग कान्हरो ॥

जसुमति-गृह आवति गोपीजन ।

बासर-ताप निवारन-कारन बारंबार कमलमुख-निरखन ॥
चाहत पकरि देहरी लांघत किलकि २ हुलसत मन ही मन ।
राई लौन उतारि दुहों कर वारि फेरि डारति तन, मन धन ॥
गहि × उछंग चांपति हियो भरि प्रेमविबस लागे दृग ढरकन
चली लै पलना पोंढावन कों अरकसाइ पौढे सुंदर घन ॥
सबै + असीस देत तेरो सुत, चिरजीयो, जोंलों गंग जमुन
'परमानन्ददास' कौ ठाकुर भक्त वछल भक्त प्रतिपालन ॥ ()

॥ राग हमीर ॥

गिरधर सब अंगनि को बांकौ ।

बांकी चाल चलत गोकुल में छैल छबीलो काकौ ॥
बांके चरन कमल, गति बांकी, बांको हिरदो ताकौ ।
'परमानन्ददास' कौ ठाकुर कियो खोर ब्रज सांकौ ॥

× लै उठाइ चॉपति० (वार्ता पाठ)

+ देत असीस सबै गोपीजन, (वार्ता पाठ)

() भक्त-मन पूरन („)

*चितै चित चोरयो री माई। वाके वांके लोचन नीके।
वह मूरति खेलत नैननि में लाल भावते जीके।
एकवार मुसिकाइ चले सव हृदय गडे गुन पीके।।
'परमानन्द' प्रभु आंनि मिलावो प्रौढ वरप एतीके।

ए पद परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के आगें गाए। ता पाछें श्रीगोकुल के दरसन करिके (परमानन्ददास कों गोकुल पर) बडी आसक्ति भई। तब एसे पद गाए, जामें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की प्रार्थना करी, जो— मोकों श्रीगोकुल के (आपके) चरणारविंद के नीचे राखो। (जासों) नित्य प्रति प्रभुन के दरसन करूं, सर्व-लीला विशिष्ट। सो पद :—

॥ राग कान्हरो ॥

यह मागों जसोदा-नंदन।
चरण कमल मेरौ मन मधुकर या छवि नैननि पांऊ दरसन
चरन कमल की सेवा दीजे दोऊ तन राजत विज्जु लताघन
नंद-नंदन वृषभानु-नंदिनी मेरे सर्वसु प्राण जीवन-धन ॥
व्रज वसिवौ जमुना-जल अचिवौ श्रीवल्लभकौ दास यहै पन।

* यह पद भावप्रकाश वाली वार्ता में नहीं है।

महाप्रसाद पांऊ हरिगुन गांऊ 'परमानन्ददास' दासीजन ॥

---

*जबलगि जमुना गाय गोवर्द्धन ।
तब लगि गोकुल गाम गुसांई ॥
तब लगि श्रीभागवत कथा-रस ।
तब लगि जगमें कलिजुग नांही ॥
जब लगि रस सेवक सेवा-रस ।
नंद-नंदन सों प्रीति निबाही ॥
'परमानन्द' तातें हरि क्रीडत ।
श्रीवल्लभ-चरण-रेणु जन पाई ॥

एसे पद परमानन्ददास ने प्रार्थना के गाए। सो सुनिके श्रीआचार्यजी आप परमानन्ददास के ऊपर बोहोत प्रसन्न भये। ता पाछें कितनेक दिन श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोकुल में बिराजे। पाछें सब वैष्णवन कों संग लेके श्रीनाथजीद्वार पधारे।

(इति वार्ता तृतीय)

---

* इस पद के स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में "यह माँगों संकर्षन वीर, यह पद है।

(वार्ता चतुर्थ)

* अब श्रीआचार्यजी महाप्रभु स्नान करिके पर्वत ऊपर श्रीनाथजी के मन्दिर में पधारे। सो आवत ही परमानन्ददास ने श्रीनाथजी को दंडवत कीनी, श्रीनाथजी को श्रीमुख देखिके नेत्र व्हां के व्हां रहे। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु आप परमानन्ददास सों कहे। जो—कछू भगवद्-लीला को गान करो।

तब परमानन्ददास नें (अपने मन में विचारी जो-- कहा करूं। (गाऊं) क्यों जो-रसना तो एक है और श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप तो अपार है, और इनकी लीला हू अपार है। जो— वस्तु स्मरन करों सो ताही में बुद्धि विक्षिप्त होइ जात है। परन्तु आचार्यजी की आज्ञा है तासों कछू गावनो

* इतने अंश में भावप्रकाश वाली वार्ता का पाठ यह है।

सही)* तब एसो पद विचारे जामें प्रथम अवतार-लीला (पाछें कुंज-लीला) ता पाछें चरणारविंद की वंदना। पाछें भगवत्-स्वरूप को वर्णन। ता पाछें बाल-लीला, क्रीडा पाछें श्रीठाकुरजी को महात्म्य। एसो पद परमानंद दास ने विचारिके गायो।

पाछें श्रीआचार्यजी आप परमानन्ददास सहित सब वैष्णव–समाज लेके श्रीगोकुल तें गोवर्द्धन पधारे। सो उत्थापन के समय श्रीआचार्यजी आप गिरिराज पधारे। तहां स्नान करि श्रीआचार्यजी श्रीगिरिराज-ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के मन्दिर पधारे। तब परमानन्ददास न्हाइके श्रीगिरिराज कों साष्टांग दंडवत करिके पर्वत के ऊपर मन्दिर में आइ उत्थापन के दर्शन किये। सो श्रीगोर्द्धननाथजी के दर्शन करत ही परमानन्ददास आसक्त होइ रहे। तब श्रीआचार्यजी आप श्रीमुख तें परमानन्ददास सों कहे जो– परमानन्ददास ! कछू भगवल्लीला के कीर्तन श्रीगोर्द्धननाथजी कों सुनावो।

---

* * इतने अंश में भाव प्रकाश वाली वार्ता का पाठ इस प्रकार है :—

॥ राग केदारो ॥

मोहन नंदराइ-कुमार ।
प्रगट ब्रह्म निकुंज-नाइक भक्त हेत अवतार ॥
प्रथम चरन सरोज वंदों स्याम घन गोपाल ।
मकर कुंडल गंड मंडित, चारु नैंन विसाल ॥
बलराम सहित विनोद-लीला सेस शंकर-हेत ।
'दास परमानन्द' स्वामी * वेद बोलत नेति ॥

यह पद गायो और आसक्ति को पद गायो । सो पद :—

॥ राग कान्हरो ॥

मेरो माई ! माधो सों मन मान्यों ।
अपनों तन अरु कमलनयन कौ एक ठौर करि सान्यों ॥
लोक-वेद की लाज तजी में न्योंति आपने आन्यों ।
एक गोविन्द चंदके कारन बैर सबनि सों ठान्यों ॥
अब क्यों भिन्न होहि मेरी सजनी ! दूध मिल्यौ जैसें पान्यों
'परमानंद' मिलिहों गिरधर कों है पहलौ पहिचान्यों ॥

---

* प्रभु हरि निगम बोलत नेति (वार्तापाठ)

राग गोरी— मैं अपुनो मन हरि सों जोर्‍यो ०।

राग कान्हरो— तिहारी बात मोहीं भावत लाल ०।

ता पाछें श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी की सैन आरती किये। ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो। सो पद:—

राग केदारो— पौढे रंग-महल गोविंद ०)

ऐसे ऐसे पद परमानन्ददास ने बोहोत गाए। (सो सुनिके श्रीआचार्यजी आप बोहोत प्रसन्न भये) पाछें श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने आरती करि आप नीचें उतरे। परमानन्ददास हू नीचे आइ बैठे।

×तब रामदास भीतरिया ने परमानन्ददास कों श्रीनाथजी को महाप्रसाद और प्रसादी दूध पठवायो, सो दूध परमानन्ददास पीवन लागे, सो तातो लाग्यो। सो दूध सीरो करिके परमानन्ददास ने लियो।

भावप्रकाश

सो परमानन्ददास कों श्रीआचार्यजी आप प्रसादी दूध यासों दिवायो, जो- श्रीठाकुरजी कों दूध बोहोत प्रिय है। तासों सेवक कों दूध निकुंज-लीला संबंधी रस के दान करन कों, और सामग्री बिगरी सुधरी वैष्णव द्वारा श्रीठाकुरजी कहत हैं। जो-सामग्री वैष्णव सराहें तब जानिये जो-श्रीठाकुरजी भली भांति सों अनुभव किये। सो या भावतें दूध दिये।

पाछें परमानन्ददास कों रामदास मिले। तब रामदास ने परमानन्दादस सों पूछ्यो जो- तुमकों महाप्रसाद और महाप्रसादी दूध पठायो हतो, सो आयो? तब परमानन्ददास ने कह्यो जो- आयो, परि दूध बोहोत तातो हतो। सो तातो दूध श्रीठाकुरजी कैसे आरोगत होंइगे? तातें दूध सुहातो धर्‌यो चाहिए।

तब रामदास कहे जो-बोहोत नीके। आप भगवदी हो, जैसे आग्या करोगे तैसे

करैंगे । तब तें सुहातो दूध समर्पन लागे* ।

---

* "*भावप्रकाश वाली वार्ता में इस स्थान पर निम्न लिखित पाठ मिलता है :—

"सो एसे पद परमानन्ददास ने बोहोत गाये, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आप बोहोत प्रसन्न भये । ता पाछें श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों पोढाइके अनोसर करि पर्वत नीचें पधारे । तब श्रीआचार्यजी ने रामदास भीतरिया सों कह्यो जो- परमानन्ददास कों प्रसादी दूध पठाइ दीजो । तब रामदास ने वह प्रसादी दूध पठायो । परमानन्ददास प्रसादी दूध लेन लागे, सो तातो लाग्यो । तब सीरो करिके लियो ।

पाछें परमानन्ददास श्रीआचार्यजी पास आइ दंडवत करिके बैठे । तब श्रीआचार्यजी आप परमानन्ददास सों पूछे जो- परमानन्ददास ! महाप्रसाद दूध लियो सो कैसो हतो ? तब परमानन्ददास ने श्रीआचार्यजी सों कह्यो जो-महाराज ! दूध तो तातो हो । तब श्रीआचार्यजी ने सब भीतरियान सों बुलाइके पूछ्यो, जो-दूध तातो क्यों भोग धरत हो ? सो आछो सुहातो होय तब भोग धरनो । तब सगरे भीतरिया ने कही जो-महाराज ! अब तें सुहातो सीरो करिके भोग धरेंगे ।

ता पाछें परमानन्ददास कों दूध अधरामृत पिये तें सगरी रात्रिलीला-रस को अनुभव भयो । तब रात्रि की लीला में मगन होइके ये पद गाये । सो पद :—

राग कान्हरो–	१	'आनंदसिंधु बढ्यो हरि-तन में०'।
	२	'पिय मुख पेखत ही रहिये'।
राग गोरी—	३	'कौन रस गोपिन लीनो घूँट०'।
	४	'यातें माई! भवन छांडि वन जइये०'।
राग हमीर—	५	'अमृत निचोइ कियो इक ठोर०'।
राग विहागरो–	६	'यह तन नवलकुंवर पर वारों०'।

सो या भांति परमानन्ददास ने सगरी रात्रि-लीला को अनुभव कियो, सो बोहोत कीर्तन गाये। ता पाछें प्रातःकाल भयो।

पाछें सब सेवक स्नान करिके श्रीनाथजी की सेवा में तत्पर भये। और श्रीआचार्यजी महाप्रभु स्नान करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाए। परमानन्ददास ता समें श्रीठाकुरजी कों जगाइवे के पद गाए। सो पद:—

॥ राग विभास ॥

जागो गोपाललाल देखों मुख तेरो। 8
पाछें गृह-काज करों नित्त नेम मेरो॥
विगत निसा, अरुण दिसा, उदित भयो भानु।

गुञ्जत पिक, पंकज वन जागहु भगवानु ॥ B
द्वारें खडे वंदी जन करत हैं किवार । X
वंस-प्रसंग गावत हरि-लीला अवतार ॥
'परमानन्द स्वामी' दयाल जगत मंगल रूप ।
वेद पुरान पढत ज्ञान-महिमा अनूप ॥ D
(राग रामकली– लाल को मुख देखन कों आई.)

॥ राग रामकली ॥

पिछवारे व्हे ग्वालिनि बोल सुनायो ।
कमल नैंन प्यारो करत कलेऊ, कोर न मुख लों आयो ॥
गैया इक वन व्याइ रही है वछरा उहीं वसायो ।
मुरली न लई लकुट न लीनी भरबराय कोउ सखा न बुलायो
चकृत भई नंदजू की रानी सत्य आइ, किधों सपनो पायो
फूले न मात रसिकवर त्रिभुवन-पति सिर छत्र छायो ॥
जाइ बैठे एकांत सघन वन, विविध भांति कियो मन भायो
'परमानंद' सयानी भामिनी उलटि अंग गिरिधर पिय पायो

B कमल में के भंवर उडे जागहु॰ (,, ,,)
X वंदी जन द्वार ठाडे करत हैं कैवार ।
सरस बैन गावत हैं लीला-अवतार (,, ——,, 'क')
D वेद पुरान गावत हैं लीला अनूप (परमानन्द सागर 'क')

यह पद परमानन्ददास ने गाए ।

पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी सों पूछ्यो जो- महाराज ! आप 'तातो' दूध क्यों आरोगत हो ? पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी ने हँसिकै कह्यो जो—ये हम कों समर्पत हैं, तैसो हम आरोगत हैं ।

पाछे (श्रीआचार्यजी ने परमानन्ददास कों श्रीगोवर्द्धननाथजी के कीर्तन की सेवा दीनी सो) परमानन्ददास ने कीर्त्तन की सेवा करी । नित्य नये पद समै समै के करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनाये ।

एक दिन काहू देस को राजा कुटंब सहित व्रज यात्रा कों आयो हतो * (वह राजा श्रीआचार्यजी को सेवक हतो) । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन कों आयो ।

* सं० १५८५ के लगभग ।

सो श्रीगोवर्द्धननाथजी को दरसन वा राजा ने कियो, फेरि आइके अपनी रानी सों कह्यो, जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी बोहोत सुन्दर दरसन देत हैं। सो तू (गिरिराज पर) जाइके दरसन करि आउ। तब रानी नें (राजा सों) कह्यो जो—जैसे हमारी रीति है, सो (परदान में) होइतो दरसन करूं। तब राजाने (रानी सों) कह्यौ, जो- (ये ब्रज के ठाकुर हैं सो) श्रीठाकुरजी के दरसन में कैसो परदा करिये? (सो ये ठाकुर ब्रज के हैं सो काहू को परदा राखत नाहीं। या प्रकार राजा ने रानी कों बोहोत समझाई पर) तब मानी नांही।

तब राजा ने श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कह्यो जो- महाराज! मैं तो रानी सों दरसन के लिए बोहोत कह्यो, परि वह मानत नांही। तातें जो- आपकी कृपा होइ तो वाकों दरसन होइ। तब श्रीआचार्यजी महा-

प्रभु कहे, जो– हाँ, हाँ, पाकों बुलावो। प्रथम एकांत में वाकों दरसन करावेंगे। पाछे सब लोग दरसन करेंगे।

तब राजाने अपनी स्त्री सों आइके कह्यो सो आइके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किए, सो सब लोग सरकि गए। इतनें आइके श्रीनाथजी ने (सिंहासन सों उठिके) सिंघ पोरिके किवाड खोलि दिए। सो सब भीड दोरिके रानीके ऊपर परी। सो रानी के वस्त्र सब निकसि गए। बोहोत निर्लज्ज भई। (जब राजा सों रानी ने डेरान में आइके सब समाचार कहे) तब राजा ने रानी सों कह्यौ जो– मैं तो बरजी हुती, जो-ठाकुर के मंदिर में क्रैसो परदा! ये ब्रज के ठाकुर हैं। इन ने काहूको परदा राख्यो नांही।

तब ता समें परमानन्ददास ने पद गायो।

कौन इह खेलिवे की बानि ।

मदनगोपाल लाल काहू की राखत नांहिन कानि ॥

यह तुक परमानन्ददास ने गाई। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कह्यो जो- परमानन्ददास ! एसे कहो जो- "भली इह खेलिवे की बानि"।

तब परमानन्ददास ने एसे ही गायो। सो पद:—

॥ राग देवगंधार ॥

भली इह खेलिवे की बानि ।

मदनगोपाल लाल काहू की राखत नांहिन कानि ॥

सुनिरी जसोदा करतब सुत के इहे लै माड मथानि ।

ढोरि फोरि दधि डारि अजिर में कौन सहे नित हानि ॥

अपने हाथ लै देत वनचरनि दूध भात घृत सानि ।

जो बरजों तौ आंखि दिखावत पर-घर कूदन-दानि ॥

ठाढी हसति नंदजू की रानी मूंदि कमलमुख पानि ।

'परमानंददास इह जानें बोलि बूझि धों आनि ॥

प्रभु कहे, जो– हां, हां, वाकों बुलावो। प्रथम एकांत में वाकों दरसन करावेंगे। पाछे सब लोग दरसन करेंगे।

तब राजाने अपनी स्त्री सों आइके कह्यो सो आइके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किए, सो सब लोग सरकि गए। इतनें आइके श्रीनाथजी ने (सिंहासन सों उठिके) सिंघ पोरिके किवाड खोलि दिए। सो सब भीड दोरिके रानीके ऊपर परी। सो रानी के वस्त्र सब निकसि गए। बोहोत निर्लज्ज भई। (जब राजा सों रानी ने डेरान में आइके सब समाचार कहे) तब राजा ने रानी सों कह्यो जो– मैं तो बरजी हुती, जो- ठाकुर के मंदिर में कैसो परदा! ये ब्रज के ठाकुर हैं। इन ने काहूको परदा राख्यो नांही।

तब ता समें परमानन्ददास ने पद गायो।

सो यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आप बोहोत प्रसन्न भये ।

या प्रकार सहस्रावधि कीर्तन परमानंददास ने किये । तासों परमानंददास के पदन में बाल-लीला-भाव, (और) रहस्य हू झलकत है । सो जा लीला को अनुभव परमानंददास कों भयो, ताही लीला के पद परमानंददास गाए । परंतु श्रीआचार्यजी आप परमानंददास कों बाल-लीला-रस को दान हृदय में कियो है, तासों बाल-लीला गूढ पदन में हू झलकत है ।

सो एक दिवस भगवदीय (सूरदासजी) रामदासजी, कुंभनदासजी, कृष्णदासजी और वैष्णव मिलिके परमानन्ददास जहां रहते तहां आए । तब सब वैष्णवन कों अपने घर आए देखिके परमानन्दस्वामी (अपने मन में) बोहोत प्रसन्न भए । जो– आज मेरो बडो भाग्य है ।

(सो सब भगवदीय मेरे ऊपर कृपा करिके पधारे । ये भगवदीय कैसे हैं ? जो– साक्षात्

यह पद परमानन्ददास ने गायो । ❀

✻ भावप्रकाश

सो काहेतें ? जो अब ही परमानंददास कों 'दास' पदवी दिये हैं । सो दास-भाव सों रहै, और बोलै, तो प्रभु आगे कृपा करें । जब परम भाव दृढ होय, तब बराबरी सों वार्ता होय । तासों बिना अधिकार अधिक भाव नाहीं है । जो करै तो नीचे गिरै । सो जब श्रीठाकुर-जी सरल भाव को दान करें, तब ही बनै ।

दूसरो आशय—श्रीआचार्यजी आप अपनो स्नेह श्रीगोर्द्धननाथजी में राखें सो सर्वोपरि दिखाए, जो—स्नेही सों ऐसे न बोलें । जो— कार्य स्नेही प्रीति सों न करै सो तासों हू कहिये जो— भलो कार्य किये ? ऐसी स्नेह की रीति है ।

तासों श्रीआचार्यजी आप परमानंददास कों बरजे- 'कौन इह खेलिवे की बान०' या भांति सों कबहू न कहिये । कहिवे, बरजिवे लाइक तो ब्रजभक्त हैं, सो तासों चाहें तैसें बोलें । तासों तुम ऐसे कहो जो— 'भली इह खेलिवे की बान०'

तब परमानंददास ने ऐसो ही पद गायो । सो पदः—
राग सारंग—'भली इह खेलिवे की बान०' ।

सो यह पद सुनिके श्रीआचार्यजी आप बोहोत प्रसन्न भये।

या प्रकार सहस्रावधि कीर्तन परमानंददास ने किये। तासों परमानंददास के पदनि में बाल-लीला-भाव, (और) रहस्य हू झलकत है। सो जा लीला को अनुभव परमानंददास कों भयो, ताही लीला के पद परमानंददास गाए। परंतु श्रीआचार्यजी आप परमानंददास कों बाल-लीला-रस को दान हृदय में कियो है, तासों बाल-लीला गूढ पदन में हू झलकत है।

सो एक दिवस भगवदीय (सूरदासजी) रामदासजी, कुंभनदासजी, कृष्णदासजी और वैष्णव मिलिके परमानन्ददास जहां रहते तहां आए। तब सब वैष्णवन कों अपने घर आए देखिके परमानन्दस्वामी (अपने मन में) बोहोत प्रसन्न भए। जो– आज मेरो बडो भाग्य है।

(सो सब भगवदीय मेरे ऊपर कृपा करिके पधारे। ये भगवदीय कैसे हैं? जो– साक्षात्

श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्वरूप ही हैं, तासों आज मो ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी ने बडी कृपा करी है।)

❀ सो काहे तें ? जो- श्रीठाकुरजी भगवदीयन के हृदय में सदा बिराजत हें। तातें भगवदीयन की कृपा होइ तो श्रीठाकुरजी कृपा करें। सो एसे भगवदीय मेरे घर पधारे हें, सो प्रथम भगवदीयन की कछू न्योछावरि करी चाहिए? सो तो कछु नाहीं, जो- भगवदीन की न्योछावरि करूं❀

*भावप्रकाश

सो काहे तें ? जो–अनेक रूप होइके श्रीठाकुरजी मेरे घर पधारे हें। सो भगवदीयन के हृदय में श्रीठाकुरजी आप विराजत हें, तासों मेरे बडे भाग्य हें। अब मैं कृतकृत्य होइ गयो, जो– सब भगवदीय कृपा किये हें। सो प्रथम तो इन भगवदीयन की न्योछावरि करी चाहिये। सो एसी कहा वस्तु है ? जासों सब भगवदीयन की न्योछावरि होय।

* वार्ता का इतना अंश कुछ परिवर्तित शब्दों में भावप्रकाश रूप से भी प्रकाशित हुआ है।

ऐसे बिचारिके परमानन्ददास ने (भगवदीय वैष्णवन सों मिलिके ऊंचे आसन बैठारिके) ऐसो ही पद गायो। सो पद :—

॥ राग हमीर ॥

आए मेरें नंद-नंदन के प्यारे ।
भाल तिलक मनोहर मानों त्रिभुवन के उजियारे ॥
प्रेम-सहित बसत मन-मोहन, कब हूं टरत न टारे ।
हृदय कमल के मध्य विराजत श्रीब्रजराज-दुलारे ॥
कहा जानों को पुन्य प्रगट भयो, घर मेरे जु पधारे ।
'परमानंद' करत न्योछावरि वारि वारि बहु वारे ॥

(ता पाछें दूसरो पद गायो। सो पद :—

राग विहागरो—हरिजन-संग छिनक जो होई० ।)

(सो ऐसे पद परमानन्ददास ने गाए सो सुनिके सब भगवदीय परमानन्ददास के ऊपर बोहोत प्रसन्न भए। तब परमानन्ददास ने सब वैष्णवन सों बिनती कीनी, जो–

आज कृपा करिके मेरे घर पधारे, सो कछू आज्ञा करिये।)

(तब रामदासजी ने पूछी, जो- परमानन्ददास! ब्रज में सगरो प्रेम ब्रज-भक्तन को है, सो श्रीनंदरायजी, गोपीजन, ग्वाल सखान को। तामें सब तें श्रेष्ठ प्रेम किन को है?) ❀

❀भावप्रकाश

सो काहे तें? जो— तिहारी बाल-लीला में लगन बोहोत है, और तुम कृपा-पात्र भगवदीय हो। तासों यह संदेह है, सो दूरि करो। सो या प्रकार रामदासजी ने परमानंददास सों यों पूछी जो- श्रीआचार्यजी के अभिप्राय में तो गोपीजन को प्रेम बोहोत है। और परमानंददास ने नंदालय की लीला और बाल-लीला बोहोत वर्णन किये हैं, तासों श्रीआचार्यजी के हृदय के अभिप्राय की खबरि परी के नांही? तासों परमानंददास की परीक्षा लेनी।

(ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो । सो पद :—

राग नायकी– गोपी प्रेम की ध्वजा० ।

राग कान्हरो– ब्रजजन-सम घर पर कोउ नांही० ।)

(सो यह पद परमानन्ददास ने गाए । तब सगरे वैष्णव कहे जो– परमानन्ददास ! तुम धन्य हो ।)

यह पद भगवदीन की भेट करि अपनो आपो भगवदीन कूं न्योछावरि करि विदा किए । पाछें भली भाति सों परमानन्ददास ने भगवदीन की सेवा कीन्ही । और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा हू बोहोत भली भाति सों कीन्ही X ।

X X इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

"या प्रकार सगरे वैष्णव प्रसन्न होइके परमानन्ददास की सराहना करत विदा होइ अपने घर आए । ता पाछें परमानन्ददास ने बोहोत दिन तांई श्रीगोवर्द्धननाथजी के कीर्तन की सेवा कीनी" ।

जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी इनके ऊपर सदा प्रसन्न रहते ।

वार्ता प्रसंग*

—:०:—

(ता पाछें एक दिन परमानन्ददास श्रीगुसांईजी के और श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन कों गोपालपुर तें श्रीगोकुल आये, सो दर्शन करिके रात्रि तहां रहे ।)

(पाछें प्रातःकाल श्रीगुसांईजी स्नान करिके श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे तब परमानन्ददास कों बुलाए । तब परमानन्ददास आगे आइ दंडवत किए । सो तब श्रीगुसांईजी आप परमानन्ददास सों कहे जो–श्रीठाकुरजी कों सगरी लीला ब्रज

* यह प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है ।

की बोहोत प्रिय है। सो नित्य-लीला ब्रज की श्रीठाकुरजी कों सुनावे, सो तो कोई काल में हू पार पावे नांही। सो काहेतें ? जो–एक लीला को पार पैये, तो सगरी लीला कौन गावै। परंतु मैं एक कीर्तन करि देत हों, तामें सगरी ब्रज की लीला को अनुभव है। सो तुम या समय नित्य गाइयो।)

(तब परमानन्ददास कहे जो–महाराज ! वह पद कृपा करिके बताइये। सो श्रीगुसांई जी तो मार्ग के चलाइवे वारे हैं सो भाषा के पद करे नांही। तासों संस्कृत में कीर्तन गायो। सो पदः—

१ 'मंगल-मंगलं ब्रज-भुवि मंगलम्'।)

(सो यह पद श्रीगुसांईजी आप गाइके परमानन्ददास कों गवाये। सो परमानन्ददास 'मंगल-मंगलं०' गाये। तब मंगलरूप परमानन्ददास ने और हू पद गाये। सो पद :—

राग भैरव—१ 'मंगल माधो नाम उचार'।)

(सो यह परमानन्ददास ने गायो, ता पाछें श्रीगुसांईजी आप मंगलभोग सराइके मंगला आरती किये। ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो। सो पदः—

राग भैरव—'मंगल आरती करि मन मोर'।)

(सो या प्रकार श्रीगुसांईजी कृत 'मंगल-मंगलं' के अनुसार परमानन्ददास ने बोहोत कीर्तन किए, और श्रीगुसांईजी-कृत मंगल-मंगलं० पद नित्य गावते।) ❀

भावप्रकाश ❊

यामें सगरी व्रज-लीला है, सो श्रीठाकुरजी कों नित्य सुनावत हैं। और मंगल-मंगलं० के पाठतें व्रजलीला को सब पाठ होय। सो तहां मंगला को पद परमानन्ददासजी ने कियो सो तामें कहे—'मंगल तन वसुदेव-कुमार०'। सो तहां यह संदेह होय जो—परमानन्ददास तो नंदनंदन के उपासक हैं। सो 'वसुदेव-कुमार' व्रज-लीला में कहे, ताको कारन कहा?

तहां कहत है, जो– वेणुगीत और युगलगीत में 'देवकी-सुत' गोपिकान ने कहे, सो ये कुमारिका के भावतें। सो काहेतें ? जो–कुमारिका श्रीयशोदाजी कों माता कहते, (तासों) श्रीठाकुरजी में पति-भाव है। याही सों वसुदेव-सुत कहि पति-भाव दृढ करत हैं। जो यशोदा–सुत कहें, तो भाइबहन को भाव होय।

(पाछें परमानन्ददास श्रीगोवर्द्धनधर के दर्शन कों श्रीगोकुल तें श्रीगिरिराज आए। सो तहां मंगला आरती पहिलें 'मंगल-मंगलं.' पद परमानन्ददास ने गायो। सो तब तें * श्रीगोवर्द्धनधर के यहां 'मंगल-मंगलं०' की रीत भई। सो वे परमानन्ददास एसे कृपापात्र भगवदीय हते।)

वार्ता प्रसंग–*

(और जब जन्माष्टमी आवती तब श्रीगुसांईजी आप श्रीनवनीतप्रियजी कों

* सं. १६०५ के आसपास।

*यह प्रसंग भी सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

पंचामृत-स्नान करवाइके शृंगार करि श्री-गिरिराज पर्वत ऊपर पधारिके श्रीगोवर्द्धन-नाथजी के शृंगार करते । ता पाछें राज-भोग सों पहोंचिके फेरि श्रीगिरिराज तें श्रीगोकुल आवते । सो तहां श्रीनवनीतप्रियजी कों मध्यरात्रि कों जन्म की रीति करिके पलना झुलाइ श्रीनाथजी के यहां नंद-महोत्सव करते ।)

(सो जब जन्माष्टमी आई, तब श्री-गुसांईजी आप परमानन्ददास कों संग लेइ के श्रीगिरिराज सों श्रीगोकुल पधारे । सो जन्माष्टमी के दिन श्रीगुसांईजी आप श्रीनव-नीतप्रियजी कों अभ्यंग कराए । ता समय परमानन्ददास ने यह बधाई गाई। सो बधाई:—

राग धनाश्री— १ 'सब मिलि मंगल गावो माई०' ।

(ता पाछें श्रीगुसांईजीने श्रीनवनीतप्रियजी के शृंगार करिके तिलक कियो, ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो। सो पदः—

राग सारंग— १ 'आजु वधाए कौ दिन नीकौ॰'
२ 'घर घर ग्वाल देत हैं हेरी॰')

(या प्रकार परमानन्ददास ने बोहोत पद गाए। ता पाछें अर्द्धरात्रि के समय श्रीगुसांईजी आप जन्म कराइके श्रीनवनीतप्रियजी कों पालने में पधराइके श्रीनंदरायजी श्रीयशोदाजी, गोपीग्वाल को भेष धराए। ता समय परमानन्ददास ने यह पद गायो। सो पदः—

राग धनाश्री— १ 'जसोदा सोवन फूलन फूली' *)

*भावप्रकाश

सो या पद में परमानंददासजी यह कहे जो– 'एसे दायक होंइ जो–और सब कोऊ सुख पावै'। सो भगवदीयनके वचन सत्य करिवे के लिये श्रीगुसांईजी के बालक

सातों और श्रीगुसांईजी तथा श्रीआचार्यजी तथा श्री-गोवर्द्धननाथजी सो ये दस स्वरूप प्रकट होइके सबकों सुख दिए हैं। सो 'सब' माने सगरे दैवी पुष्टिमार्गीय। सो या प्रकारसों भाव-सहित परमानंददासजी ने कीर्तन गाए।

(पाछें श्रीनंदरायजी और गोपीग्वाल वैष्णवन के जूथ अपने लालजी सब (कों) लेके दधि-कांदो किए। तब परमानन्ददास को चित्त आनंद में विच्छिप्त होइ गयो। वा समय परमानन्ददास नाचन लागे और यह पद गायो। सो वा प्रेम में परमानन्ददास राग को हू क्रम भूलि गए। सो रात्रि को तो समय और सारंग में गाए। सो पद:—

राग सारंग– 'आजु नंदराइ कें आनंद भयो')

(यह पद गाए पाछें परमानन्ददास प्रेम में मूर्छा खाइके भूमि में गिर पड़े। तब श्रीगुसांईजी आप अपने श्रीहस्तकमल सों परमानन्ददास कों उठाइके अंजुलि में जल

लेके वेद्-मंत्र पढिके आप परमानन्द्दास के ऊपर छिरके। सो तब उच्छलित प्रेम, जो- विकल करतो, सो हृद्य में स्थिर भयो। सो परमानन्द्दास सगरी लीला को अनुभव किए, और गान किए।)

(या प्रकार परमानन्द्दास के ऊपर श्रीगुसांईजी ने कृपा करी। ता पाछें यह पद् पलना को परमानन्द्दास ने गायो। सो पद्:—

राग विलावल– १ 'हालरू हुलरावति माता०'। *)

*भावप्रकाश

सो या भांति सों 'अखिल भुवन-पति गरुडागामी' एसे परमानंददासजी ने कह्यो। सो अखिल भुवन-पति यातें जो– श्रीभगवान गरुड पे विराजमान सो (तो) सब जगत के पति हैं, और 'नंद-सुवन सबन के ठाकुर सो परमानंद-दासजी ने कही, जो–मेरे स्वामी हैं।

(सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगुसांईजी आप परमानन्ददास के ऊपर बोहोत प्रसन्न भए। ता पाछें परमानन्ददास ने यह पद कान्हरो राग में करिके गायो। सो प्रेम में राग को क्रम नांही, लीला को क्रम। सो जैसी लीला करी, सो स्फुरी। सो तैसो परमानन्ददास गाए। सो पद:—

राग कान्हरो– १ 'रानी तिहारो घर सुवस बसो'०)

(सो यह असीस को पद परमानन्ददास ने गायो। तब श्रीगुसांईजी आप अपने पुत्र श्रीगिरधरजी कों श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखिके दधि-कांदो किए।)

(ता पाछें परमानन्ददास कों संग लेके श्रीगुसांईजी आप श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किये। सो दधि-कांदो देखिके परमानन्ददास लीला-रस में मग्न होइ गए।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आप श्रीगोवर्द्धननाथजी कों राजभोग धरिके बाहिर आए। तब श्रीगुसांईजी आप परमानन्ददास की अलौकिक दशा देखिके कहे जो—जैसे कुंभनदास को किशोर-लीला में निरोध भयो, सों तैसे बाल-लीला में परमानन्ददास को निरोध भयो है।)

(पाछें परमानन्ददास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि, पर्वत तें नीचे उतरे; सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि, सुरभीकुंड ऊपर आइके अपने ठिकाने कुटी में आइ बोलिवो छोडि दियो। सो नंद-महोत्सव के रस में मग्न होइके परमानन्ददास अपनी देह छोडिवे को विचार करिके सुरभीकुंड ऊपर आइके सोए। और यहां श्रीगुसांईजी आप श्रीनाथजी की राजभोग-आरती करिके अनोसर करवाए।)

(पाछें श्रीगुसांईजी आप सेवकन सों पूछे जो–आज राजभोग-आरती के समय परमानन्ददास कों नाही देखे, सो कहाँ गए?)

(तब एक वैष्णवने श्रीगुसांईजी सों आइ विनती कीनी जो–महाराज! परमानंददासजी तो आजु विकल से दीसत हैं, और काहू सों बोलत नांही, और सुरभीकुंड पे जाइके सोए हैं। तब श्रीगुसांईजी आप वा वैष्णव को संग ले सुरभीकुंड ऊपर पधारिके परमानन्ददास के पास आए। सो परमानन्ददास के माथे पर श्रीहस्त फेरिके श्रीगुसांईजी आप परमानन्ददास सों कहे जो–परमानन्ददास! हम तिहारे मनकी जानत हैं। जो अब तिहारो दरसन दुर्लभ भयो।

तब परमानन्ददास उठिके श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत किए। ता समय यह पद परमानन्ददास ने गायो. सो पदः—

राग सारंग—'प्रीति तो श्रीनंद-नंदन सों कीजे०' ।)

(सो यह पद परमानन्ददास ने श्रीगुसांई-जी कों सुनायो ।)❀

❀भावप्रकाश—

सो परमानन्ददासजी ने या पदमें श्रीगुसांईजी सों प्रार्थना कीनी, जो– प्रीति हू तुमसों करनो सो सदा कृपा एक रस करो । सो परम कृपालु, अपने हस्त कमल की छाया तें जन कों राखत हैं । या समय हू मोकों दरसन देइ मेरे मस्तक ऊपर श्रीहस्तकमल धरे । सो मेरे अंतः-करण में जो मेरो मनोरथ हतो सो पूरन किए । सो वेद पुरान सब ही कहत हैं जो–सदा भक्तन को भायो करि भक्तन कों आनंद दिये हैं ।

जैसे-एक समें इन्द्र की पदवी लाइक जीव कोई न देखे तब भगवान ही इन्द्र होइके इन्द्रको कार्य चलाए । सो प्रसाद वैष्णव सुदामा भक्त कों दिए । तामें सुदामा कों वैभव पाये हू मोह न भयो । सो तेसें आप जो–व्रज में लीला करत हैं सो-परमानंदरूप, सो कृपा करिके मोकों दान दिये । सो आप के गुन मैं कहां तांई कहौं ? सो एसी प्रार्थना परमानन्ददासजी श्रीगुसांईजी सों किये ।

(यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आप बहोत प्रसन्न भए। ता समय एक वैष्णव ने पमानन्ददास सों कह्यो, जो– मोकों कछु साधन बतावो सो मैं करों। जातें श्रीठाकुर-जी आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइके कृपा करें।)

(तब परमानन्ददास वा वैष्णव सों प्रसन्न होइके कहे जो–तुम मन लगाइके सुनो। जो–सुगम उपाय है सो मैं कहूं। या बात को मन लगाइके सुनोगे तो फल-सिद्धि होयगी। सो या प्रकार प्रीति सों समाधान करिके परमानन्ददास ने एक पद वा वैष्णव कों सुनायो। सो पद:—

राग भैरव–'प्रात समै उठि करिए श्रीलक्ष्मन-सुत गान०')

(सो या प्रकार यह कीर्तन परमानंद-दास ने गायो। यह सुनिके श्रीगुसांईजी और सगरे वैष्णव प्रसन्न भए।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आप परमानंद-दास सों पूछे जो–पमानंददास ! अब तिहारो मन कहां है ? तब पमानंददास ने यह कीर्तन सारंग राग में गायो । सो पद:—

राग सारंग–१ 'राधे बैठी तिलक संभारति०' ।)

(सो या प्रकार जुगल स्वरूप की लीला में मन लगाइके परमानंददास देह छोडिके श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला में जाइके प्राप्त भये ।)

(पाछें श्रीगुसांईजी गोपालपुर में आइके स्नान करिके पर्वत के ऊपर श्रीगो-वर्द्धननाथजी को उत्थापन कराए। पाछें सैन पर्यंत सेवा सों पहोंचिके अनोसर करवाइ पर्वत तें उतरि अपनी बैठक में आइ विराजे तब सब वैष्णवन ने परमानंददास की देह को अग्नि-संस्कार कियो और पाछें गोपालपुर में आइके श्रीगुसांईजी के आगे बोहोत बड़ाई करन लागे ।)

(यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आप वहोत प्रसन्न भए। ता समय एक वैष्णव ने पमानन्ददास सों कह्यो, जो– मोकों कछू साधन बतावो सो मैं करों। जातें श्रीठाकुर-जी आप मेरे ऊपर प्रसन्न होइके कृपा करें।)

(तब परमानन्ददास वा वैष्णव सों प्रसन्न होइके कहे जो–तुम मन लगाइके सुनो। जो–सुगम उपाय है सो मैं कहूं। या बात को मन लगाइके सुनोगे तो फल-सिद्धि होयगी। सो या प्रकार प्रीति सों समाधान करिके परमानन्ददास ने एक पद वा वैष्णव कों सुनायो। सो पद:—

राग भैरव–'प्रात समै उठि करिए श्रीलच्मन-सुत गान०')

(सो या प्रकार यह कीर्तन परमानंद-दास ने गायो। यह सुनिके श्रीगुसांईजी और सगरे वैष्णव प्रसन्न भए।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आप परमानंद-दास सों पूछे जो–पमानंददास ! अब तिहारो मन कहां है ? तब पमानंददास ने यह कीर्तन सारंग राग में गायो । सो पदः—

राग सारंग–१ 'राधे बैठी तिलक संभारति०' ।)

(सो या प्रकार जुगल स्वरूप की लीला में मन लगाइके परमानंददास देह छोडिके श्रीगोवर्द्धननाथजी की लीला में जाइके प्राप्त भये ।)

(पाछें श्रीगुसांईजी गोपालपुर में आइके स्नान करिके पर्वत के ऊपर श्रीगो-वर्द्धननाथजी को उत्थापन कराए। पाछें सैन पर्यंत सेवा सों पहोंचिके अनोसर करवाइ पर्वत तें उतरि अपनी बैठक में आइ विराजे तब सब वैष्णवन ने परमानंददास की देह को अग्नि-संस्कार कियो और पाछें गोपालपुर में आइके श्रीगुसांईजी के आगे बोहोत बड़ाई करन लागे ।)

(सो ता समय श्रीगुसांईजी आपु उन वैष्णवन के आगे यह वचन श्रीमुख सों कहे, जो—ये पुष्टिमार्ग में दोइ 'सागर' भए। एक तो 'सूरदास' और दूसरे 'परमानंददास'। सो तिन कों हृदय अगाध रस, भगवल्लीला रूप जहां रत्न भरे हैं। सो या प्रकार श्रीगुसांई-जी आपु श्रीमुख सों परमानंददास की सराहना किए)

सो वे परमानंददास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के एसे कृपापात्र भगवदीय हे। (जिन के ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते) तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं (सो अनिर्वचनीय है,) सो कहां तांई कहिये।)

(इति वार्ता चतुर्थ)



(३) श्रीकुंभनदासजी

—:*—

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कुंभनदासजी गोरवा (क्षत्री) जमुनावते में रहते, तिनकी वार्ता *

—:०:—

* भावप्रकाश—

आधिदैविक मूल स्वरुप

ये कुंभनदासजी लीला में श्रीठाकुरजी के 'अर्जुन' सखा अंतरंग तिनको प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो अर्जुन सखा हैं और रात्रि की लीला में विशाखा सखी हैं, सो श्रीस्वामिनीजी की। सों तिनको (विशाखाजी को) दूसरो स्वरूप कृष्णदास मेघन, सदा पृथ्वी परिक्रमा में श्रीआचार्यजी के संग रहते, और कुंभनदासजी सदा श्रीगोर्द्धननाथजी के संग रहते। सो या भावतें कुंभनदासजी सखा-भाव में अर्जुन सखा-रूप, और सखी-भाव में विशाखा-रूप हैं। सो गिरिराज में आठ द्वार हैं, तामें एक द्वार आन्योर पास है। सो तहां की सेवा के ये मुखिया हैं।

और गाम को नाम 'जमुनावता' यासों कहत हैं, जो-श्रीयमुनाजी के प्रवाह, सारस्वत कल्प में दो हते। एक तो जमुनावता होइके आगरे के पास जात हतो, और एक चीरघाट होइके श्रीगोकुल। आगे दोऊ धारा एक मिलि सारस्वत कल्प में वहती।

और ता समय आगरा आदि गाम नांही हतो। दोऊ धारा एक मिलिके आगे को गई हती। सो चीरघाट तें धारा होइके गिरिराज आवती, तासों पंचाध्याई को रास 'परासोली' में 'चंद्रसरोवर' ऊपर किये। सो व्रजभक्त, अंतरध्यान के समय चंद्रसरोवर सो द्रुमलतान सों पूछत चली। सो गोविंदकुंड के पास होइके अप्सराकुंड ऊपर आइके श्रीठाकुरजी के चरणारविंद के दर्शन भए। तासों अप्सराकुंड ऊपर चरन चिन्ह हैं।

तहां तें आगे चलिके राधा सहचरी की वेनी गुही, सो सिंदूर, काजर सगरो शृंगार कियो तासों वहां सिंदूर, कजली और बाजनी सिला है। ता पाछें जब रुद्रकुंड ऊपर आइके राधा सहचरी कों मान भयो सो श्रीठाकुरजी सों कह्यो जो-मोसों तो चल्यो नांही जात है, तब श्री-ठाकुरजी के कांधे चढन के मिस वृक्ष तरे ही अंतर्ध्यान भए। तब राधा सहचरी रुदन कियो, जो:—

'हा नाथ ! रमणश्रेष्ठ ! क्वासि-क्वासि महाभुज !

दास्यास्ते कृपणाया मे सखे ! दर्शय सन्निधिम्' ।

तासों वा कुंड को नाम 'रुद्रकुंड' है । सो अब तांई लोग वासों रुद्रकुंड कहत है । पाछें तहां सब गोपी आइ मिली । पाछें आगे चलिके 'जान' 'अजान' वृक्ष सों पूछते पूछते जमुनावता श्रीजमुनाजी की पुलिन में गोपिका गीत ('जयति तेऽधिकं') गाइके सब भक्तन ने रुदन कियो । तब श्रीठाकुरजी आप प्रकट होइके फेरि 'परासोली' चंद्रसरोवर पें रास किये, सो श्रम भयो । तब श्रीयमुनाजी के जल में जल विहार किये । सो या प्रकार सारस्वत कल्प की पंचाध्याई को रास श्रीगिरिराज के पास है ।

और व्रजभक्त ढूढत २ श्रीठाकुरजी के मिलनार्थ दूरि गई । सामई और श्याम ढाक सों अंधियारो देखिके उहां तें फिरे ।

'तमः प्रविष्टमालक्ष्य ततो निववृतुर्हरेः' । इति ।

सो यह अंधियारो स्याम ढाक के आगे 'सामई' गाम हैं । सो तहां स्याम वन है, सो महासघन । तातें वहां पंचाध्याई के अनुसार सगरे स्थल दर्शन देत हैं ।

और कालीदह के घाट तें हू श्रीवृंदावन कहत हैं। तहां हू वंसीवट है । तहां अनेक श्वेतवाराह कल्प में पंचाध्याई को रास उहां ही किये हैं । और सारस्वत कल्प में शरद ऋतु किए सो 'परासोली' श्रीगिरिराज ऊपर किए । पाछें वसंत चैत्र वैशाख को रास केसीघाट पास वंसीवट नीचे किए । सो या प्रकार रास दोऊ ठिकाने । परन्तु मुख्य पंचाध्याई सारस्वत कल्प को रास गिरिराजको।

या प्रकार लीला के भेद हैं । तासों 'जमनावता' में एक धारा श्रीयमुनाजी की सारस्वत कल्प में बहती, तासों वा गाम को नाम 'जमुनावता' है । सो नंदगाम बरसाने के मध्य संकेत पास धारा होइके श्रीयमुनावता आई । तासों संकेत के पास श्रीयमुनाजी के पधारिवे को चिन्ह हैं ।

सो या प्रकार-यातें कह्यो जो- अबके जीव को विश्वास दृढ होत नांही है । सो सब चिन्हन को देखै, सुनै तब विश्वास होय । और जब फल सिद्ध होय, तब भाव बढ़ै । तासों खोलिके कहे ।

(वार्ता प्रथम)

सो वे कुंभनदासजी जमुनावते में रहते। सो जमुनावतो काहे कों कहत हैं ? जो श्री-यमुनाजी को प्रवाह सारस्वत कल्प में याके निकट हतो। तातें जमुनावतो गांमको नाम है। सो तामें कुंभनदास रहते। और परासोली चंद्रसरोवर के ऊपर (कुंभनदास के बाप दादान के खेत हते* तहां) कुंभनदास बैठे रहते। कुंभनदास की उहां धरती हती सो खेती करते।

(उन कुंभनदास + को बालपने ते गृहासक्ति नांही। और झूठ बोलते नांही, और पापादिक कर्म नांही करते। सूधे व्रज-

---

* अब भी ये खेत और पेड़ विद्यमान है। जहाँ श्रीनाथजी खेलते थे। ये खेत चद्रसरोवर से कुछ दूर श्रीनाथजी के बगीचा के पास हैं।

+ कुंभनदासजी के काका का नाम धरमदास था। कुंभन-दासजी का जन्म सं० १५२५ के लगभग मानाजाता है।

और कालीदह के घाट तें हू श्रीवृंदावन कहत हैं। तहां हू वंसीवट है। तहां अनेक श्वेतवाराह कल्प में पंचाध्याई को रास उहां ही किये हैं। और सारस्वत कल्प में शरद ऋतु किए सो 'परासोली' श्रीगिरिराज ऊपर किए। पाछें वसंत चैत्र वैशाख को रास केसीघाट पास वंसीवट नीचे किए। सो या प्रकार रास दोऊ ठिकाने। परन्तु मुख्य पंचाध्याई सारस्वत कल्प को रास गिरिराजको।

या प्रकार लीला के भेद हैं। तासों 'जमनावता' में एक धारा श्रीयमुनाजी की सारस्वत कल्प में बहती, तासों वा गाम को नाम 'जमुनावता' है। सो नंदगाम बरसाने के मध्य संकेत पास धारा होइके श्रीयमुनावता आई। तासों संकेत के पास श्रीयमुनाजी के पधारिवे को चिन्ह हैं।

सो या प्रकार-यातें कह्यो जो- अवके जीव को विश्वास दृढ होत नांही है। सो सब चिन्हन कों देखै, सुनै तव विश्वास होय। और जब फल सिद्ध होय, तब भाव बढै। तासों खोलिके कहे।

(वार्ता प्रथम)

सो वे कुंभनदासजी जमुनावते में रहते। सो जमुनावतो काहे कों कहत हैं ? जो श्री-यमुनाजी को प्रवाह सारस्वत कल्प में याके निकट हतो। तातें जमुनावतो गांमको नाम है। सो तामें कुंभनदास रहते। और परासोली चंद्रसरोवर के ऊपर (कुंभनदास के बाप दादान के खेत हते* तहां) कुंभनदास बैठे रहते। कुंभनदास की उहां धरती हती सो खेती करते।

(उन कुंभनदास + को बालपने ते गृहासक्ति नांही। और झूठ बोलते नांही, और पापादिक कर्म नांही करते। सूधे व्रज-

* अब भी ये खेत और पेड़ विधमान है। जहाँ श्रीनाथजी खेलते थे। ये खेत चद्रसरोवर से कुछ दूर श्रीनाथजी के बगीचा के पास है।

+ कुंभनदासजी के काका का नाम धरमदास था। कुंभन-दासजी का जन्म सं० १५२५ के लगभग मानाजाता है।

वासी की रीति सों रहते । सो जब कुंभनदास बड़े भये तब जेत (गांव) के पास बहुलावन है तहां कुंभनदास को ब्याह भयो सो भी साधारन आई, लीला–सम्बधी तो नांही । परन्तु कुंभनदास सरिखे वैष्णव भगवदीयन को संग निष्फल जाय नांही सो उद्धार होयगो ।

(और कुंभनदास श्रीनाथजी के परम सखा कृपा-पात्र हते । परि अभी श्रीगोवर्द्धन-नाथजी (श्रीगिरिराज) पर्वत में प्रगट नहीं भए और श्रीआचार्यजी महाप्रभु ब्रज में नांही पधारे । अब श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रगट होइके श्रीवल्लभाचार्यजी कों (अपने पास) बुलावेंगे (तब श्रीआचार्यजी आप शरण लेइंगे) तब (वे) भगवदी प्रसिद्ध होंइगे ।

सो एक समै श्रीआचार्यजी महाप्रभुन (दच्छिन में) झारखंड में पृथ्वी-परिक्रमा

करत आए। सो झारखंड में श्रीगोवर्द्धननाथ-जी ने श्रीआचार्यजी महाप्रभु कों आग्या दीनी, जो—हम श्रीगोवर्द्धन पर्वत में तीन दमन हैं (१) देव-दमन, (२) नाग-दमन, (३) इंद्र-दमन। तामें मध्य 'देव दमन' हम हैं। हम गिरिराज ऊपर प्रगट भए हैं। सो तुम हम कों आइके हमारी सेवाको प्रकार प्रगट करो।

तब श्रीआचार्यजी महाप्रभु उहांई झारखंड में परिक्रमा राखि, आप (सूधे) ब्रज कों पधारे। तब दामोदरदास (हरसानी) कृष्णदास मेघन (माधव भट्ट, नारायनदास) गोविंद दुबे, जगन्नाथ जोसी, रामदास-सिकंदर पुरमे रहते सो, ये पांच वैष्णव संग हते। सो श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धन की तरहटी आइके (आन्योर में) सदू पांडे के (घर पे एक) चोतरा (हतो ता) ऊपर बिराजे।

सो आगे श्रीगोवर्द्धननाथजी को प्रागट्य (को प्रकार श्रीआचार्यजी) सद्दू पांडे (उनके भाई माणिक चंद पांडे) भवानी नरो ये सब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक भए हते तिनसों पूछ्यो। सो सब प्रकार ऊपर सद्दू-पांडे की वार्ता में कहि आए हैं। तिनकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने श्रीगोवर्द्धननाथ-जी की सेवा सौंपी। और व्रज में श्रीआचार्य-जी महाप्रभुन के सेवक व्रजवासी बोहोत भए। तब कुंभनदासजी हू कुटुम्ब सहित श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक भए। सो इनकी वार्ता।*

(पाछें रामदास चौहान पूछरी के पास गुफा में रहते सो सेवक भए, तिन कों श्रीआचार्यजी ने श्रीगोर्द्धननाथजी की सेवा

* कोष्ठान्तर्गत प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

सोंपी। सो रामदास ब्रजवासी आदि और हू सेवक भए। सो कुंभनदास 'जमुनावता' गाम में रहते। तहां ये समाचार सुने जो-एक बडे महापुरुष 'अन्योर' में आए हैं सो श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीठाकुरजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत में सों प्रकट करे हैं, और सदू पांडे आदि ब्रजवासी बोहोत लोग सेवक भए हैं।)

(तब कुंभनदास सुनिके अपनी स्त्री सों कहे जो- 'आन्योर में चलिके श्रीआचार्यजी के सेवक हूजिये, सो इनकी कृपातें श्रीठाकुरजी कृपा करेंगे। सो तब स्त्री ने कही, जो-मैहू चलूंगी, जो-मेरे कोई संतति बेटा नहीं है, सो वे महापुरुष देंए तो होय।)

(सो या प्रकार विचार करिके दोऊ जनें श्रीआचार्यजी के पास आइके दंडवत करी। सो तब श्रीआचार्यजी आप पूछे जो-कुंभन-

दास ! आए ? सो तब कुंभनदास ने दंडवत करि बिनती करी जो–महाराज ! बोहोत दिन तें भटकतो हतो, सो अब आप मो ऊपर कृपा करो । सो कुंभनदास तो दैवी जीव हैं, सो श्रीआचार्यजी के दरशन करत ही श्रीआचार्यजी के स्वरूप को ज्ञान होइ गयो ।)

(तब श्रीआचार्यजी आप कुंभनदास सों कहे जो–तुम स्त्री पुरूष दोऊ जने न्हाइ आवो । तब दोऊ जने संकर्षकुंड में न्हाइके श्रीआचार्यजी के पास आए । तब श्रीआचार्य जी आप कुंभनदास और उनकी स्त्री कों नाम सुनायो ।)

(तब वा स्त्रीने आचार्यजी सों बिनती करी जो–महाराज ! आप बड़े महापुरुष हो, मेरे बेटा नांही है, तासों आप कृपा करिके देऊ । तब श्रीआचार्यजी आप कृपा करिके

प्रसन्न होंइके कहे जो–तेरे सात बेटा होंइगे, तू चिंता मति करै। सो तब वह स्त्री अपने मन में बोहोत प्रसन्न भई।)

(तब कुंभनदास ने अपनी स्त्री सों कही जो–यह कहा तैने श्रीआचार्यजी के पास मांग्यो। जो श्रीठाकुरजी मांगती तो श्रीठाकुरजी देते। तब वा स्त्रीने कही जो–मोकों चहियत हतो सो मैंने मांग्यो, और जो तुम कों चाहिये सो तुम मांगि लेहु। तब कुंभनदास चुप होइ रहे।) ❀

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धननाथजी को गोवर्द्धन पर्वत के ऊपर छोटो सो मन्दिर बनवायो। तामें श्रीगोवर्द्धननाथजी पधराए। रामदास चौहान कूं सेवा की आग्या दीनी (सो रामदास सदू पांडे आदि ब्रजवासी सब सीधो सामग्री ले आवते) और

* कोष्ठान्तर्गत प्रसंग सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

सब ब्रजवासी लोग दूध दही माखन बोहोत भोग धरन लागे। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगन लागे। और रामदासजी कों जो कछु भगवद् इच्छातें आइ प्राप्ति होइ सो श्रीनाथ जी कों समर्पिके आप प्रसाद लेंइ।

और जो–ब्रजवासी सेवक भए हते, तिनकों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने आग्या दीनी, जो-'यह मेरो सर्वस्व है'। इनको तुम सब बातन सों यत्न राखियो। सेवा में तत्पर रहियो' और कुंभनदास कों सब सेवकन कों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने आग्या दीनी जो-'तुम देव-दमन के दर्शन बिना प्रसाद मति लीजियो'। या भांति सों आग्या करिके श्रीआचार्यजी महाप्रभु पृथ्वी-परिक्रमा झार-खंड में राखी हती, सो उहाँ पधारे।

*अब कुंभनदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की आग्या तें नित्य जमुनावते तें श्रीगो-

वर्द्धननाथजी के दर्शन कों आवते । सो वे कुंभनदास कीर्त्तन बोहोत नीके गावते । गरो कुंभनदास को बोहोत सुन्दर हतो ।

सो जब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने कुंभनदासकों ब्रह्म-संबंध करवायो । तब कुंभन-दास कों सब लीला-स्फूर्त्ति भई । सो कुंभनदास नित्य नए पद करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनायो करें ।

जब रामदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी को अनोसर करें, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी परासोली में कुंभनदास के घर पधारते, सो तहां क्रीडा करते । कुंभनदास के साथ श्री-गोवर्द्धननाथजी खेलते, वार्त्ता करते । बोहोत कृपा कुंभनदासजी के ऊपर करते * ।

---

* .... * इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में यह प्रसंग इस प्रकार है :—

तासों कुंभनदास सों श्रीआचार्यजी आप कहे जो–तुम समय समय के कीर्तन नित्य श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सुनाइयो।

सो प्रातःकाल श्रीआचार्यजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाइके कुंभनदास कों कहे जो–कछु भगवल्लीला वर्णन करो। तब कुंभनदास श्रीगोवर्द्धननाथजी कों दंडवत करिके पहिले यह पद गायो। सो पद—

राग विलावल—'साँझ के सांचे बोल तिहारे०'

सो यह कीर्तन कुंभनदास के मुखतें सुनिके श्रीआचार्य-जी आप कहे जो– कुंभनदास! निकुंज-लीला सम्बन्धी रस को अनुभव भयो?

तब कुंभनदास ने दंडवत कीनी और कह्यो जो–महाराज! आप की कृपा तें। तब श्रीआचार्यजी आप कहे जो– तिहारे बड़े भाग्य हैं। जो– प्रथम प्रभु तुम कों प्रमेय-बल को अनुभव बताए। तासों तुम सदा हरि-रस में मगन रहोगे। तब कुंभन-दास ने विनती कीनी जो– महाराज! मोकों सर्वोपरि याही रस को अनुभव कृपा करिके कीजिये।

सो कुंभनदास सगरे कीर्तन जुगल स्वरूप संबंधी किए। सो बधाई, पलना, बाल-लीला गाई नांही। सो ऐसे कृपापात्र भगवदीय भए।

या प्रकार कुंभनदास आदि वैष्णवन ऊपर कृपा करि श्रीआचार्यजी दक्षिन के झार-खंड में पृथ्वी-परिक्रमा छोडि के पधारे हते, सो फेरि जीवन की ऊपर कृपा करन के अर्थ परिक्रमा करन लागे।

अब रामदासजी चौहान श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा करें। सो एक दिन म्लेछ को उपद्रव उठ्यो सो (सगरे गाम कों लूटत मारत पश्चिम तें आयो। ताके डेरा श्रीगिरिराज तें पांच कोस आगे भए) सो इहां सदू पांडे मानिकचंद पांड़े और रामदास चौहान कुंभनदास और श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक ब्रजवासी सब मिलिके विचार कियो, जो—यह मलेच्छ (बुरो) आयो है, और (भगवद्) धर्म को द्वेषी है। तातें कहा कर्त्तव्य ?

तब सबन ने कह्यो जो—यामें कर्त्तव्य कहा पूछनो ? और अपनो विचार्यो कहा होत है ? तातें श्रीगोवर्द्धननाथजी तें पूछो, आप आग्या करें सो करिये (सो ये चारों वैष्णव श्रीनाथजी के अन्तरंग हते सो इन सों श्रीगोवर्द्धननाथजी वार्ता करते)

तब सबन ने (मंदिर में जाइके) श्रीगोवर्द्धननाथजी सों पूछी जो-महाराज ! कहा करें ? (जो धर्म को द्वेषी म्लेच्छ लूटत आवत है तासों आप कृपा करिके आज्ञा करो सो करें) तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कह्यौ जो—हमकों इहां ते ले चलो, हम इहां ते उठेंगे । तब सबन ने पूछी जो- कहां पधारोगे ? तब श्री-गोवर्द्धननाथजी ने श्रीमुख तें कह्यो जो-टोंड के घने में चलेंगे ।

(तब चारयों वैष्णवन ने बिनती कीनी जो-महाराज ! या समय असवारी कहा चहिये । तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो—सदू पांड़े के घर भैंसा है, सोई ले आवो । तापे चढिके चलूंगो ।) तब एक भैंसा कों मगवायो ❀ ।

❀ सं० १५६० के लगभग श्रा. शु. १३ के दिन पधारमा माना जाता है-।

*भावप्रकाश—

सो वह भैंसा दैवी जीव हतो। सो वह लीला में श्रीवृषभानजी के घर की मालिन है। सो नित्य फूलन की माला श्रीवृषभानजी के घर करिके ले आवती। सो लीला में 'वृंदा' याको नाम है। एक दिन श्रीस्वामिनीजी बगीची में पधारीं। ता समय वृंदा के पास एक बेटी हती, सो ताकों खवावती हती। सों याने उठिके न तो दंडवत कीनी और न समाधान कियो। तो भी श्रीस्वामिनीजी ने यासों कछु कह्यो नांही।

ता पाछे श्रीस्वामिनीजी ने वृंदा सो कही, जो–तू श्रीनंदरायजी के घर जाइके श्रीठाकुरजी सों समस्या सों हमारे यहां पधारिबो कहियो। तब श्रीस्वामिनीजी के वचन सुनिके वृंदा ने कही, जो–अभी मेरे माला करिके श्रीवृषभानजी कों पठावनी है, तासों मैं तो जात नांही।

यह वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही जो-मैं यहां आई तब तैंने उठिके सन्मान हू न कियो, और एक कार्य कह्यो सोऊ तोसों नांही बन्यो। तासों तू या बगीची में रहिवे योग्य नांही है। और तू यहां सों गिरिके भैंसा को जन्म लेहु।

सो यह श्राप श्रीस्वामिनीजीने वा मालिन कों दियो। तब तो वह मालिन श्रीस्वामिनीजी के चरणारविंद में जाइ परी, और बहोत ही बीनती स्तुती करन लागी। और कही जो—अब एसी कृपा करो, जो फेरि में यहां आऊँ।

तब श्रीस्वामिनीजी ने यासों कही जो—जब तेरे ऊपर चढिके श्रीठाकुरजी वनमें पधारेंगे, तब तेरो अंगीकार होयगो। सो भेंसा की देह छोडिके सखी-देह धरिके फेरि या बाग की मालिन होयगी। सो या प्रकार वह मालिन सदू पांडे के घर में भैंसा भई।

सो ता पर श्रीगोवर्धननाथजी विराजे। सो टोंड के घने में पधारे। सब सेवक साथ आए। श्रीगोवर्द्धननाथजी कों एक ओर तो रामदास चौहान पकरे रहें, और एक ओर* कुंभनदासजी पकरे रहें। और सब सेवक साथ चले गए।

..... इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

सदू पांडे पकडे रहे। और कुंभनदास और मानिकचंद पांडे बीच में थांमेजांय।

सो वा 'टोड' के घना में बीच में एक निकुंज है। वहाँ नदी (?) है, सो कुंभनदास और मानिकचंद पांडे ये दोउ जने श्रीनाथजी के आगे मार्ग बताव, लता कांटा टारत जांय। सो या प्रकार 'टोड' के घने में भीतर एक चोतरा है तहां छोटोसो सरोवर है, और एक गोल चौक मंडलाकार है। तहाँ रामदासजी और कुंभनदासजी श्रीनाथजी सों पूछे जो-आप कहाँ विराजोगे? तब श्रीनाथजी आप आज्ञा किये जो-याही चोंतरा पे विराजेंगे। सो तब श्रीनाथजी के नीचे-भैंसा के ऊपर गादी डारे हते सो वाही गादी चोंतरा ऊपर डारि बिछाई, तापें श्रीनाथजी कों पधराए।

पाछें श्रीनाथजी रामदासजी सों आज्ञा किये जो-तू कछु भोग धरिके न्यारे ठाडे होउ। तब रामदासजी तथा कुंभनदासजी मन में विचारे जो- कोई व्रजभक्तन के मनोरथ पूरन करिवे के लिये यहाँ लीला करी है। पाछें रामदासजी थोडी सामग्री भोग धरे। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-सब सामग्री धरि देउ, सो रामदासजी उतावली में दोइ सेर चून को सीरा करि लाये हते सो सगरो भोग धरे।+

+कहते हैं कि इस समय विष्णुस्वामि- मतानुयायी नागाओं का महंत 'चतुरा' नामक एक नागासाधु यहाँ रहता था. उसने उसी समय ककोडा ला कर दिये सो रामदासजी ने सिद्ध करके सीरा के संग भोग धरे। तब से संप्रदाय में आ० शु० १३ का दिन सीरा और ककोडा के भोग के लिये प्रसिद्ध है।

सो उहां घना में कांटा बोहोत, सो कांटान में पैठे। तातें बस्त्र सबन के फटे, और सरीर में कांटा लागे, दुख बोहोत पायो।

सो घना में एक तलाव हतो। तहां रूखन को एक चौक हतो, सो तहां बड़े रूख नीचे श्रीगोवर्द्धननाथजी बिराजे। कछु सामग्री संग हुती सो भोग धरे। जल को करवा धरयो। भोग धरिके सब बैष्णव बैठे तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कुंभनदास सों कह्यो, जो--कुंभनदास। कछू गाउ। सो कुंभनदास मन में कुढि रहे हते।

(पाछें रामदासजी श्रीगोवर्द्धननाथजी तें कहे जो–सगरी सामग्री भोग धरी, परि यहां रहनो होइ तब कहा करेंगे? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो--यहां रहनो नांही है। जो–इतनो ही काम हतो।)

(पाछें कुंभनदास सहित सदू पांडे मानिकचँद पांडे और रामदासजी ये चारों जन एक वृक्ष की ओट में जाइ बैठे। सो तब निकुंज के भीतर श्रीस्वामिनीजी अपने हाथ सों मनोरथ की सामग्री करी हती सो लेके श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास पधारे। पाछें मिलिके भोजन करनो विचार कियो। सो सामग्री करत रंचक श्रीस्वामिनीजी कों श्रम भयो। तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आप श्रीमुखतें कुंभनदास सों आग्या किये जो-कुंभनदास ! तू कछु या समय कीर्तन गावे तो मन प्रसन्न होइ। और मैं सामग्री अरोगत हों, तासों तू कीर्तन गाउ)

(सो कुंभनदास अपने मनमें बिचारे, जो–प्रभुन को मन कछु हास्य प्रसंग सुनिवे को है। और कुंभनदास आदि चारयों वैष्णव भूखे हते और कांटा हू लगे हते)

सो एक पद गायो। सो पद:—

॥ राग सारंग ॥

भावत है तोहि टोड को घनो ×
कांटे लगे गोखरू टूटे फाटत है सब तनो ।
सिंहै कहा लोखरी को डरु यह कहा बानिक बन्यो॥
'कुंभनदास' तुम गोवर्द्धनधर ।
वह कौन ढेडनी रांड को जन्यो ॥

यह पद कुंभनदास ने गायो । सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी मुसिकाए ।

❀(सो यह कीर्तन सुनिके श्रीगोवर्द्धन-नाथजी और श्रीस्वामिनीजी बोहोत प्रसन्न भए । और सब वैष्णव हू प्रसन्न भए । ता पाछें माला के समय कुंभनदास ने यह पद गायो । सो पद—

× 'टोड के घने' का स्थान जतीपुरा से गुलालकुंड होकर नहर की पटली पटली सात फर्लांग पर है । वहाँ कोटास्थ गो. श्रीद्वारकेशलालजी महाराज की सम्मति लेकर प. भ. श्रीजदुनाथदासजी ने सं. १९८४ में श्रीनाथजी की बैठक उसी स्थल पर बनवाई है, और छोटा सा कुंड भी खुदवाया है । वहां गोलाकार मंडल चौक में अति प्राचीन श्याम तमाल, कदम आदि दर्शनीय वृक्ष हैं । जब यहाँ से बैठक बनी है तब से प्रत्येक यात्रा की रास लीला यहां होती है ।

॥ राग मालकोस ॥

'बोलत स्याम मनोहर बैठे कमलखंड और कद्‌म की छैंया०' ।)

(यह पद कुंभनदास ने गायो, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आप बोहोत प्रसन्न भए। तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीगोवर्द्धनधर सों पूछी जो-तुम कौन प्रकार पधारे ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजीने कही जो–सदू पांडे के घर भैंसा हतो सो वा ऊपर चढिके पधारे हैं। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी के वचन सुनिके श्रीस्वामिनीजी आपु वा भैंसा की ओर देखिके कृपा करिके कहे जो–यह तो मेरे बाग की मालिन है, सो मेरी अवज्ञा तें भैंसा भई, परंतु आज याने भली सेवा करी, तासों अब याको अपराध निवृत्त भयो।

सो या प्रकार कहि, नाना प्रकार की केलि टोड के घने में करिके श्रीस्वामिनीजी तो बरसाने में पधारे)*

*......*इतना प्रसंग सं. १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

*भावप्रकाश—

सो तहां कांटा बहोत हते, सो श्रीस्वामिनीजी ऊहां कैसे पधारे ? यह शंका होइ तहां कहत हैं। जो-ये ब्रज के वृक्ष परम स्वरूपात्मक हैं, सो जहां जैसी इच्छा होइ सो तहां तैसी कुंज लता फल-फूल होइ जात हैं। सो कबहू सकल कांटा तो यह लौकिक लोगन कों दीसत हैं। सो तहां कुंज में सब ब्रजभक्तन सहित श्रीठाकुरजी आप लीला करत हैं। सो तहां गोपन कों और मर्यादा वारेन कों यह कांटन की आड होत है, (नातर) सघन वन होत हैं सो ब्रज के भक्त सदा सेवा में तत्पर रहत हैं, सो तासों यह संदेह नांही है।

और गोवर्द्धननाथजी भैंसा ऊपर चढिके टोड के घना में पधारे। सो ता समय चार वैष्णव संग हते। सो मार्ग में ब्रजवासी लोग बोहोत मिलते, सो श्रीगोवर्द्धन-नाथजी कों देखे नांही, जाने जो- भैंसा लिये चारि जन जात हैं। सो कांटा न होइ तो सगरे ब्रजवासी तहां आवें। या प्रकार केवल ब्रजभक्तन कों सुख-दानार्थ श्रीठाकुरजी की लीला रस है। सो लौकिक में डरिके छिपिके पधारनो, सो यह रस है। ईश्वरता को भाव नांही विचारनो है। ईश्वरतामें कहे सो भजनो कहा ? डर, जहां माधुर्य रस में है सो प्रेम सों; ईश्वरता में डरत नांही है। या प्रकार रसिक-

जन नेत्रन सों जो देखत हैं सो तिन कों आनंद उपजत है, सो ज्ञाननेत्रन--अलौकिक नेत्रन सों लीला-रस को अनुभव होत है ।

(सो जब श्रीस्वामिनीजी बरसाने पधारे, तब चारयों भगवदीयन कों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अपने पास बुलाए)×

× भावप्रकाश—

सो तहां यह सदेह होइ जो-ये भगवदीय तो अंतरंग हैं । सो जब लीला को अनुभव है तो फेरि श्रीगोवर्द्धननाथजी इन कों न्यारे ओट में क्यों विदा किये? तहां कहत हैं जो-ये भगवदीय यद्यपि सखी-रूप सों लीला को दर्शन करत हैं, तोऊ श्रीस्वामिनीजी कों अपने श्रीहस्त सों हास्यविनोद करत अरोगवानो है, सो पास सखी होइ तो लज्जा, संकोच रहै । सो ताही सों निकुंज में जब स्वरूप-लीला करत हैं, तब सखी सब जाल-रंध्र व्हेके लतान की ओट लीला को सुख अवलोकन करत हैं । सो तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भगवदीयन कों नेक ओट में बैठाए हते, सो बुलाए ।

(सो जब चारयों वैष्णव आए, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने सदू पांडे सों कह्यो जो-अब देखो उपद्रव मिट्यो ? तब सदू पांडे टोड के घने सों बाहिर आए सो इतने में श्रीगोवर्द्धन सों समाचार आए जो—वह म्लेच्छ की फौज आई हुती सो भाजि गई ।)

(तब सदू पांडे ने आइके श्रीगोवर्द्धन-नाथजी सों कह्यो जो—वह फौज तो म्लेच्छ की भाजि गई । तब श्रीगोवर्द्धनधर कहे जो-अब तुम मोकों गिरिराज ऊपर मंदिर में पधरावो ।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कों भैंसा ऊपर बैठाए । पाछें चारयों वैष्णवनने) श्री-गोवर्द्धननाथजी कों श्रीगोवर्द्धन पर्वत के ऊपर मंदिर में पधराए ।)

(तब भैंसा पर्वत सों उतरिके देह छोडिके फेरि लीला में प्राप्त भयो ।)

(इति वार्ता प्रथम)

(वार्ता द्वितीय)

अब श्रीगोवर्द्धननाथजी पर्वत ऊपर अपने मंदिर में पधारे। सो ता समय ब्रजके लोगन कों बोहोत सुन्दर दर्शन भयो और सबन ने मन में कह्यो धन्य देवदमन! जो-जिनके प्रताप तें एसो उपद्रव आयो सो (एक च्रण में) मिटि गयो (सो) कछु जान्यों न पर्यो। तब कुंभनदास ने प्रसन्न होइके (श्रीनाथजी के आगे) एक पद गायो। सो पद—

॥ राग धनाश्री ॥

जयति जयति हरिदासवर्य-धरणे।
वारि-वृष्टि, निवारि, घोप-आरति टारि,
देवपति-मान भंग करणे ॥

जयति पट पीत दामिनी रुचिर वर।
मृदुल अंग सांवल जलद-वरणे ॥

कर अधर वेनु धरि, गान कल रव सब्द।
सहज ब्रज-युवति जन-चित्त हरणे ।।

जयति वृंदा-विपिन भूमि-डोलनि ।
अखिल लोक-वंदनि अंबुरुह चरणे ॥
तरनि-तनया--तीर विहार नंद गोप-कुमार ।
दास कुंभन नमित तुव शरणे ॥

॥ राग श्रीराग ॥

कृष्ण तरनि-तनया-तीर रास-मंडल रच्यो,
अधर मधुर सुर वेनु बाजै ।
युवति जन-यूथ संग निर्तत अनेक रंग,
निरखि अभिमान तजि काम लाजै ॥
श्याम तन पीत कौशेय सुभ पद नख-
चन्द्रिका, सकल भुव-तिमिर भाजै ।
ललित अवतंस भ्रुव-भ्रू-धनुप लोचन-
चपल चितवनि मनों मदन-वान साजै-
मुखर मंजीर कटि-किंकनी कुनित रव.
वचन गंभीर मनु मेघ गाजै-
'दास कुंभन' नाथ हरिदासवर्य-धरन-
नखसिख स्वरूप अद्भुत विराजै ॥

ऐसे वोहोत पद गाए । सो नित्य नये पद गाइके श्रीनाथजी कों सुनावते ।

सो कुंभनदासजी को पद काहू कलावंत ने सीख्यो, सो देसाधिपति के आगे सीकरी फतेहपुर में गयो। उहां देसाधिपतिके डेरा हुते। तहां वा कलावंत ने कुंभनदास को पद गायो। सो पद—

॥ राग धनाश्री ॥

देख री आवनि मदनगुपाल की०)

सो (यह कीर्तन) सुनिके देसाधिपति को चित्त वा पद में गडि गयो, और माथो धुन्यो (और कह्यो)। जो—एसे हू महापुरुष होइ गये, जिनकों एसे दर्शन परमेश्वर देते?

तब वा कलावंत ने देसाधिपति सों कह्यो जो—अजी साहिब! वे (महापुरुष पद के करिवेवारे यहां हीं) अब हैं। सो यह सुनि के देसाधिपति ने कह्यो जो वे कहा हें? तब कलावंत ने कह्यो जो—श्रीगोवर्द्धन पर्वत

के पास एक जमुनावता गाम है, ता गाम में रहत हैं। और कुंभनदासजी उन को नाम है) तब देसाधिपति ने कह्यो जो– उनकों बुलावो, हम उनतें मिलेंगे।

तब देसाधिपति ने मनुष्य और (सब तरह की) असवारी कुंभनदास के बुलाइवे कों पठाई, सो वे जमुनावता में आए। तब कुंभनदास तो घर में हते नांही, ए परासोली (चन्द्रसरोवर में) अपने खेत पे बैठे हते। सो एक मनुष्य उहांते संग आइके कुंभनदास कों बताय दिए। तब देसाधिपति के मनुष्यन ने (आइके कुंभनदास सों कह्यो जो– तुमकों देसाधिपति ने बुलाए हैं। तब कुंभनदास ने कही जो–हम तो गरीब ब्रजवासी हैं, सो काहू के चाकर नाहीं हैं) जो-मेरो देसाधिपति सो कहा काम है? (जो मैं चलूं)। तब देसाधिपति के मनुष्य ने कह्यो,

जो– बाबा साहिब! हम तो कछू समुझत नाहीं। हम कों (जो) देसाधिपति को, हुकुम है, जो- कुंभनदासजी कों इहां लै आवो। तातें यह पालिकी है घोड़ा है। जा पर चाहो ता पर चढो। हम तो आए हैं (जो देसाधिपति ने भेजे हैं) सो (तुमकों) ले जाइगें (और जो हम न ले जांय तो देसाधिपति को हुकुम टरे सो देसाधिपति हम कों मरवाय डारे, तासों आप चलिये। और उन सों मिलिके चले आइए।)

तब कुंभनदास मन में विचारे। जो-(यह आपदा आई है सो) अब उहां जाइवे बिना न चलेगो। (ता सों आपदा होइ सोऊ भुगतनो) सो कुंभनदासजी तत्काल पनहो पहरिके उठि चले। तब कुंभनदासजी कों लेन आए, तिन ने कह्यो जो-बाबा साहिब! असवारी में बैठिके चलिए। तब कुंभनदास ने कह्यो जो--भैया!

मैं तो कबहूं असवारी पे चढ्यो नाहीं (हम सों तुम कुछ बोलो मति जो-हम जोडा पहरिके पावन चलेगें। तब उन मनुष्यन ने बोहोत विनती कीनी, परि कुंभनदास तो असवारी में बैठे नाहीं) पाछें एसे ही चले। सो फतेपुर सीकरी जाइ पहुंचे। तहां देसाधि-पति कों खबरि कराई, जो– कुंभनदासजी (महापुरुष) आए हैं।

और तब देसाधिपति ने कुंभनदासजी कों भीतर बुलायो। तब कुँभनदास कों देसाधिपति के मनुष्य ले गए, तब नजीक जाइ पोहोंचे। तब देसाधिपति कह्यो, जो– कुंभनदासजी ! आओ, बैठो।

सो वह स्थल कैसो है ? जो- जडाव की रावटी, तामें मोतीन की झालरि लगी (और सुगंध की लपट आवत है) एसो स्थल हो।

तामें कुंभनदासजी बैठे, परि मनमें बोहोत दुख पायो। (जो जीवते नरक में बैठ्यो हूँ और विचारे) जो–यासों तो हमारे ही मन के रूख आछे। जो–जिन में श्रीगोवर्द्धननाथजी खेलें।

इतने में देसाधिपति बोल्यो। जो–कुंभनदासजी ! तुमने बिष्णुपद बोहोत किए हैं। तुम पे कन्हैया की बोहोत कृपा है, तुमकों मैंने बुलाए हैं। तातें कछु विष्णुपद सुनावो (तब कुंभनदासजी तनिया पहरे फटी मैली पाग, पिछोरा, टूटे जोडा सहित देसाधिपति के आगे जाइ ठाढे भए) पद सुनायो।

तब कुंभनदास एक तो मन में तो कुढि रहे हे। और दूसरे देसाधिपति ने गाइवे की कही। तब कुंभनदास के मन में बोहोत बुरी लगी) सो विचारे जो–(गाए बिना छुटकारो होइगो नाहीं और या म्लेच्छ के आगें तो

श्रीठाकुरजी की लीला के पद गाए जांय नाहीं। सो तासों में) कहा गाऊं ? मेरी बाणीके भोक्ता तो श्रीगोवर्द्धनधर हैं, परि कछु गाए बिना तो मोहन न छोडेगो। तातें एसो गांउ जो- यह कुढिके मेरो नाम कबहू न लेइ। काहेतें जो- याके संगतें मेरे प्रभु छूटत हैं। तब यहां एसे कठोर वचन कहों जो-यह बुरो माने (तो आछो और यह बुरो माने गो,) तो मेरो कहा करेगो ? तब (कुंभनदासजी के) यह मनमें आई जो-

"जाको मनमोहन अंगीकार करें।
एको केस खसै नहीं सिरतें जो जग बैर परें"

यह विचारिके ता समें पद नयो करिके कुंभनदास ने (देसाधिपति के आगें) गायो। सो पद:—

॥ राग सारंग ॥

भक्त कौ कहा सीकरी काम ।
आवत जात पन्हैयां टूटीं बिसरि गयो हरि-नाम ॥
जाकौ मुख देखत दुख उपजै ताकों करनी पडी प्रनाम ।
"कुंभनदास" लाल गिरधर बिनु यह सब झूठो धाम ॥

यह पद गायो । सो देसाधिपति सुनिके बोहोत कुढ्यो । फेरि मन में विचार्यो, जो इनकों काहू बात को लालच होइ तो मेरी खुसामदी करें । इनकों तो अपने ईश्वर सों सांचो रहनो (यह विचारिके अकबर पातसाह ने कुंभनदास सो कह्यों जो—बाबा साहिब ! मोकों कछू आज्ञा फरमावो सो मैं करूं । तब कुंभनदास ने कही जो— आज पीछे मोकों कबहू बुलाइयो मति ।)

तब देसाधिपति ने कुंभनदास कों सीख दीनी । तब कुंभनदास उहांतें चले सो मारग में आवत (मन में श्रीगोवर्द्धननाथजी

को विरह) अति क्लेश, जो कब प्रभुनकौ श्रीमुख निरखों । सों एसो विचार करत कुंभनदास आवत हते, सो ता समै पद गायो। सो पद :—

॥ राग धनाश्री ॥

कबहूं देखि हों, इन नैननु ।
सुन्दर स्याम मनोहर मूरति अंग-अंग सुख दैननु ॥
बृंदावन-बिहार दिन-दिन प्रति गोप-बृंद-संग लैननु ।
हँसि हँसि हरखि पतौवनि पीवनु बाँटि बाँटि पय-फैननु
'कुंभनदास' किते दिन बीते किए रैंन सुख-सैननु ।
अब गिरधर बिनु निसि अरु बासर मनन रहत क्यों चैननु ॥

सो यह पद कुंभनदास ने मारग चलत में गायो । सो गिरिराज ऊपर आइके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन किए। दोइ दिन * दरसन भए कुंभनदास कों, तो दोइ दिन बीते सो दोइ जुग बीते। सो (श्रीगो-

* भावप्रकाश वाली वार्ता प्रति में दिन के स्थान पर प्रहर का उल्लेख है।

वर्द्धननाथजी को) श्रीमुख देखत ही सब दुख बिसरि गयो। तब पद गायो। सो पदः—

॥ राग धनाश्री ॥

नैंन भरि देखों नंदकुमार।
ता दिनतें सब भूलि गए हैं बिसर्‌यो पति-परिवार॥
बिनु देखें हों बिवस भई हों अंग-अंग सब हारि,
तातें सुधि है सांवरी मूरति लोचन भरि-भरि वारि॥
रूप-रासि परिमित नहीं मानों कैसे मिले कन्हाई।
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर मिली बहुरि उर लाई॥

॥ राग सारंग ॥

हिलगन कठिन है या मन की।
जाके लिए देखि मेरी सजनी, लाज गई सब तन की॥
धरम जाउ, अरु लोग हसौ सब, अरु गावौ कुल-गारी।
सो क्यों रहै ताहि बिनु देखै जो जाकौ हित-कारी॥
रस-लुब्धक ये निमिष न छांडत ज्यों अधीन मृग गानों।
'कुंभनदास' सनेह परम श्री गोवर्द्धन-धर जानों॥

एसे बोहोत पद गाए। सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी बोहोत प्रसन्न भए। (आपु

कहे) जो–धन्य ये हैं जिनकों "मो बिनु छिनु न सुहाइ"। (सो या प्रकार कुंभनदास जी और श्रीगोवर्द्धननाथजी की परस्पर प्रीति हती)

(इति वार्ता द्वितीय)

—:०:—

(वार्ता तृतीय)

और एक समै राजा मानसिंह सब ठौर दिग्विजय करिके आगरे में देसाधिपति के पास आए। तब देसाधिपति सों सीख मांगि-के अपने देस चले *सो प्रथम मथुरा आए। सो विश्रान्त-स्नान करिके श्रीकेसोरायजी के दर्शन करिके * वृंदावन कों गए। सो

* * इस स्थान पर भाव-प्रकाश वाली वार्ता प्रति में इस प्रकार पाठ है·—

* (तब राजा मानसिंह ने अपने मन में विचार्‌यो जो–वोहोत दिन में आयो हूँ, सो श्रीमथुराजी में न्हाइके अपने देश जाऊं तो आछो है। सो राजा मानसिंह यह विचारि के

उष्ण काल के दिन हते। सो वृन्दावन के महंतन ने जानी जो–आज राजा मानसिंह हमारे इहां दरसन कों आवेगो। सो यह जानिके ठाकुरकों आछे आछे भारी जरीन के बागा और बोहोत आभरन पहिराए। पिछवाई चंदोवा सब जरीन के बांधे। इतने में राजा मानसिंह दरसन कों आए। सो भीतर आइके श्रीठाकुरजी कों दंडोत करी,

श्रीमथुराजी में आयो। तहां विश्रान्त घाट ऊपर न्हायो। तब चौबेन ने मिलिके कह्यो जो– श्रीकेसोरायजी ठाकुरजी के दरसन कों चलो। सो गरमी जेठ मास के दिन और मथुरिया चौबेन ने × राजा कों आवत जानिके श्रीकेसोरायजी कों जरी की ओढनी, बागा, पिछवाई, चंदोवा सब जरी के किये। सोने के आभूषण पहिराए। सो दर्शन करिके राजा मानसिंह ने अपने मन में कह्यो जो– इनने मेरे दिखाइवे के लिये श्रीठाकुरजी कों इतनी जरी लपेटी है। पाछें मेट धरिके चले। पाछें उनने कही जो– वृंदावन में श्रीठाकुरजी के मंदिर है, सो तहां दर्शन को चलेगे। पाछें राजा मानसिंह)

× इस समय (सं० १६२० से ३० तक लगभग) श्रीकेशवरायजी की सेवा मथुरिया चौबे करते थे, ऐसा ज्ञात होता है।

बडो मंदिर भयो हतो। सो श्रीनाथजी के आगें गुलाब जलको छिडकाव भयो हतो। निजमंदिर मणिका तिवारी सब जलमय होइ रहे हते, और अरगजा की लपट आवत है और सुगंध आवत है, और दोहरो पंखा होत है। सुपेद पाग परधनी को शृंगार, श्रीकंठ में मोतीन की माला, और मोतीन के करनफूल, और मोतीन के सूक्ष्म आभरन, सो सुगंध सहित सीरी ब्यारि लागी, सों ता समैं राजा मानसिंह भीतर गए श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करे। और गरमी में व्याकुल हते। सो वा सीतलताई सों चैन होइ गयो। और श्रीमुख देखिके बोहोत आनंद भयो और कह्यो जो-(सेवा तो यहां है, जो- श्रीठाकुरजी सुखसों बिराजे हैं) साक्षात् श्रीकृष्णचंद्र वृन्दावन चन्द्र श्रीगोवर्द्धन-धर जो आगे श्रीभागवत में सुने हे, सो आज

देखे ! आजको दिन धन्य है, और आज मेरो धन्य भाग्य है ।

ऐसो मन में विचारि राजा बोहोत प्रसन्न भयो जो--यह भोग को समो है । आगें प्रभु बिराजे हैं। आगें बीन मृदंग बाजत है, कीर्तन होत है। सो राजा मानसिंह को कीर्तन में मन गडि गयो । तै सोई कोटि कंदर्प-लावण्य रूप तैसोई कीर्तन कुंभनदास करत हते। सो पद :—

॥ राग श्रीराग ॥

रूप देखि नैना पलक लागें नहीं ।
गोवर्द्धनधर अंग-अंग प्रति, निरखि नैन मन रहत तहीं ॥
कहा कहों कछु कहत न आवै चित चोरयो वे मागि दही ।
'कुंभनदास' प्रभुके मिलिवे की सुन्दर वात सखियन सों कही

॥ राग श्रीराग ॥

आवत मोहन मन जु हरयो हो ।
अपने गृह साज सों बैठी निरखि वदन अंचरा बिसरयो हो

रूप-निधान रसिक नंद-नंदन, निरखि नैन धीरज न धर्यो हो
'कुंभनदास' प्रभु गोवर्द्धनधर अंग-अंग प्रेम पियूष भर्यो हो*

ऐसे पद कुंभनदास गावत हते। इतने में भोग के दर्शन होइ चुके। तब राजा मान-सिंह दंडौत करिके अपने डेरा कों गयो * पाछें कुंभनदास संध्या आरती के दरसन करिके अपने घर गए * ।

---

* भावप्रकाश वाली प्रति में—

२. पूतरी पोरिया इनके भई माई।

॥ राग गोरी ॥

३. आवत गिरिधर मनजू हर्यो हो।

यह दो पद अधिक है।

*........ * इस स्थान पर भावप्रकाश वाली वार्ता प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

ता पाछें सेन आरती की समे कुंभनदासजी ने यह पद गायो सो पद:—

राग केदारो— "लाल के वदन पर आरती वारौं०"

सो या प्रकार सनेह के कीर्तन गाइ अपनी सेवा सों पहोंचि के कुंभनदासजी अपने घर जमुनावते में आए।

तब राजा मानसिंह (ने) अपने मनुष्य हते, तिनसों श्रीगोवर्द्धननाथजी के दरसन तथा शृंगार की वार्ता करन लागे । और कहे । जो- यह श्रीठाकुरजी के आगें कीर्तन कौन करत हतो ? ऐसे इनने विष्णुपद गाए जो- कछु कहिवे (में) आवे नहीं (ऐसे पद आज तांई मैने कबहू सुने नाहीं) तब काहू ने कह्यो जो-राजाधिराज! यह व्रज-वासी हतो, 'कुंभनदास' इनको नाम है बडे त्यागी हैं । (जो अपनी खेती में अन्न होइ सो ताही सों निर्वाह करत हैं) आप सुने ही हो इगे । देसाधिपति सों मिले हते । (परन्तु कुंभनदासजी कछु लिये नाहीं जो ये महापुरुष हैं)

तबराजा मानसिंह कहे जो-(आज तो रात्रि भई है यातें काल सवारे) हम हू इन सों मिलें तो आछो ।

ता पाछें राजा मानसिंह सवारे उठे । सो श्रीगिरिराज की परिक्रमा कों निकसे, सो परासोली आए । (सो परासोली में चंद्रसरोवर है) तहाँ कुंभनदासजी न्हाइके खेत ऊपर) बैठे हुते । इतने में श्रीनाथजी (आप कुंभनदास के पास) पधारे । (सो श्रीमुख देखत ही कुंभनदासजी श्रीनाथजी सों कहे जो–बाबा ! आगे आवो । तब श्रीनाथजी कुंभनदासजी की गोद में बैठिके) श्रीमुख सों कहे जो–कुंभनदास ! मैं तोसों एक बात कहूंगो ।

(सो या प्रकार कहत हुते) इतने में राजा मानसिंह आए । सो कुंभनदास वा सो प्रणाम किए, बैठे । और श्रीनाथजी तो तहां तें भाजिके दूरि (एक वृक्ष की ओट में) जाइ ठाढे भए । श्रीनाथजी कों एक कुंभनदास ने देखे, सो कुंभनदास की दृष्टि तो श्रीनाथजी के संग गई, सो जहां श्रीनाथजी

ठाढे हे तहां कुंभनदास देखिवो करें (राजा मानसिंह की ओर दृष्टि हू नाहीं किए)

(सो कुंभनदास की एक भतीजी हती। सो जमनावते सों वेझरि को चून कठौटी में करि लेके कुंभनदास कों रसोई करिवे के लिये लावत हती। सो या भतीजी सों एक व्रज-वासी ने कह्यो जो—तू वेगि जा। जो—कुंभन-दासजी की पास राजा गयो है, सो वह कछु देवे तो तू लीजियो। क्यों जो—कुंभनदासजी तो छुवेंगें नाहीं। तब भतीजी वेगि ही कुंभन-दास के पास आई। तब कुंभनदास की दृष्टि एक वृक्ष के ओर देखिके) भतीजी वोली जो—बाबा! राजा वैठे हैं (जो कछु इनको समाधान करो) तव कुंभनदास ने कह्यो जो—अरी! मैं कहा करूं! राजा वैठे हें तो। वे वात कहत हते सो भाजि गए। जो—जाने अब कहेंगे के न कहेंगे?

तब दूरि तें श्रीनाथजी बोले। जो–कुंभनदास! मैं बात कहूंगो। (मैं तिहारे ऊपर बहोत प्रसन्न हूं) (तू चिन्ता मति कर। तब कुंभनदास प्रसन्न भए। सो कुंभनदास और श्रीगोवर्द्धननाथजी की वार्ता राजा आदि काहू ने जानी नाहीं) और भतीजी सो कह्यो जो--(बेटी आसन और) आरसी लाउ तिलक करूं। तब भतीजी ने कह्यो जो बाबा! (आसन खाइके) आरसी (तो) पडिया पीगई।

(तब कुंभनदास ने कह्यो जो--और आसन आरसी करिके ले आऊ तो आछो।)

(यह बात सुनिके राजा मानसिंह ने अपने मन में कह्यो जो– "आसन खाइके आरसी पडिया पीगई!" सो कहा?) सो इतने ही में भतीजी एक पूरा घास को) तब और पानी करिके कठौती आगें धरी।

(सो पूरा कौ आसन बिछाई दियो सो ता पूरा पर बेठिके) कुंभनदास वा कठौती में तिलक करिवे लगे।

(तब राजा मानसिंह ने अपने मन में जान्यो जो—कुंभनदासजी के द्रव्य को बोहोत संकोच है, जो-- आसन आरती तिलक करवे की नाहीं है। सो कुंभनदासजी त्यागी सुनत हते सो देखे)

इतने में राजा मानसिंह ने अपनी आरसी सोने की (जडाऊ घर में हती, सो लेके कुंभनदास के आगें धरी। और कह्यो जो-बाबा साहिब ! या सों तिलक करिये। तब कुंभनदास बोले जो-- अरे भैया ! हों याकों कहा करूँ। हमारे तो छानि के घर हें। (जो-यह आरसी हमारे घर में होइ तो) कोऊ याके पीछे हमारो जीव लेइगो। हमारे यह नहीं चाहिये।

तब राजा मानसिंह ने मन में विचारी जो–ये आरसी लेके कहा करेंगे, जो–कहा याकों वेचन जांइगे ? यह तो इनके काम की नाहीं। तासों कछु एसो द्रव्य देऊं जो–जनमादि भरिके खायो करें) तब राजा मानसिंह ने एक थैली (हजार) मोहरन की धरी। तब कुंभनदास ने कह्यो जो भैया ! यह तो हमारे काम की नाहीं। हमारे तो खेती है, ताको धान उपजत है सो (हम) खात हैं। और हमारे कछु चहियत नाहीं।

तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो–भलो, आपको गाम (जमुनावता) है, ताको लिख्यो हों (तुमकों) करि देउं। तब कुंभनदास ने राजा मानसिंह सों कह्यो जो--भैया ! हों तो ब्राह्मण नाहीं जो- तेरो उदक लेउं। तेरे देनो होइ तो काहू ब्राह्मण कों दे। मेरे तो कछु चहियत नाहीं।

(तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो–तुम मोकों अपनो मोदी बतावो, सो ताके पास सों सीधो सामान लियो करो। तब कुंभन-दास ने कही जो–जैसे हम हैं, सो तैसे ही हमारो मोदी है। तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो–बताओ तो सही, जो मैं वाकों देऊंगो। तब कुंभनदासजी ने एक करील को वृक्ष दिखायो, और एक बेर को वृक्ष दिखाइके कह्यो जो–उष्ण-काल में तो मोदी करील है, सो फूल और टेंटी देत है। और सीत-काल को मोदी बेर को झाड़ है, सो बेर बहोत देत है। सो ऐसे काम चल्यो जात है।)

(तब राजा मानसिंह ने कही जो–धन्य है। जिनके वृक्ष मोदी हैं, जो– मैने आज तांई बडे २ त्यागी वैरागी देखे, परन्तु ये गृहस्थ सो ऐसे त्यागी हैं। सो ऐसे धरती पर नाहीं हैं।)

तब राजा मानसिंह ने मन में विचारी जो–ये आरसी लेके कहा करेंगे, जो--कहा याकों बेचन जांइगे ? यह तो इनके काम की नाहीं। तासों कछु एसा द्रव्य देऊं जो–जनमादि भरिके खायो करें) तब राजा मानसिंह ने एक थैली (हजार) मोहरन की धरी। तब कुंभनदास ने कह्यो जो भैया! यह तो हमारे काम की नाहीं। हमारे तो खेती है, ताको धान उपजत है सो (हम) खात हैं। और हमारे कछु चहियत नाहीं।

तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो–भलो, आपको गाम (जमुनावता) है, ताको लिख्यो हों (तुमकों) करि देउं। तब कुंभनदास ने राजा मानसिंह सों कह्यो जो--भैया! हों तो ब्राह्मण नाहीं जो- तेरो उदक लेउं। तेरे देनो होइ तो काहू ब्राह्मण कों दे। मेरे तो कछु चहियत नाहीं।

(तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो-तुम मोकों अपनो मोदी बतावो, सो ताके पास सों सीधो सामान लियो करो। तब कुंभनदास ने कही जो-जैसे हम हैं, सो तैसे ही हमारो मोदी है। तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो-बताओ तो सही, जो मैं वाकों देऊंगो। तब कुंभनदासजी ने एक करील को वृक्ष दिखायो, और एक बेर को वृक्ष दिखाइके कह्यो जो-उष्ण-काल में तो मोदी करील है, सो फूल और टेंटी देत है। और सीत-काल को मोदी बेर को झाड़ है, सो बेर बहोत देत है। सो एसे काम चल्यो जात है।)

(तब राजा मानसिंह ने कही जो-धन्य है। जिनके वृक्ष मोदी हैं, जो- मैंने आज तांई बडे २ त्यागी वैरागी देखे, परन्तु ये गृहस्थ सो एसे त्यागी हैं। सो एसे धरती पर नाहीं हैं।)

तब फेरि राजा मानसिंह ने (कुंभनदास कों प्रणाम करिके) कह्यो जो–(बाबा साहेब! मोसों) आप कछू (तो) आज्ञा करोगे। तब कुंभनदास ने कह्यो जो- हमारो कह्यो करोगे ? तब राजा मानसिंह ने कह्यो जो– आप आज्ञा करो सो (में अपनो परम भाग्य मानिके) करेंगे। तब कुंभनदास ने कही जो– (आज पाछें) फेरि तुम मेरे पास (कबहू) मति आइयो (और हम सों कछु कहियो मति।)

तब मानसिंह ने (दंडवत करिके) कह्यो जो–धन्य ये हैं। माया के भक्त तो सिगरी पृथ्वी में फिरे सो बोहोत देखे, परि ठाकुरजी के भक्त तो एक एही हैं। यह कहिके राजा मानसिंह कुंभनदास कों दंडोत करिके चल्यो।

(तब भतीजीने पास आइके कुंभनदास सों कही जो– घर में तो

कछू हतो नाहीं, सो राजा देत हतो सो क्यों न लियो? तब कुंभनदास कहे जो- बैठि रांड !❀ गोवर्द्धननाथजी सुनेंगे तो खीजेंगे, जो-कुंभनदास की भतीजी बडी लोभिन है। तब भतीजी ने कह्यो जो-मैंने तो हसिके कह्यो हतो, जो-मोकों तो कछु नाहीं चहियत है। तब कुंभनदास ने कह्यो जो--बेटी ! काहू सों लेवेकी वार्ता हांसी में हू कबहू न कहिये।)

तब फेरि श्रीनाथजी ने आइके कुंभनदास सों वह बात कहीं। और बोहोत प्रसन्न भए। (और (गोद में बेठिके) कहे जो- तू एक छिन में एसो क्यों होइ गयो, तेरे मन में कहा है? सो तू मोसों कहे। तब कुंनभदास ने यह पद गायो।) सो पद—

❀ यह शब्द कुंभनदासजी का सहज प्रतीत होता है क्योंकि "कौन रांड ढेढिनी को जन्यो०" इस कीर्तन में भी इस शब्द का प्रयोग हुआ है।

राग सारंग- १ 'परम भावते जियके मोहन, नैनन तें मति टरो०'।)

(सो यह कीर्तन कुंभनदास को सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी गरे सों लपटिके कहे जो- कुंभनदास ! मैं तोसों एक बात कहन कों आयो हूं । तब कुंभनदास ने कही, जो- कहिये । आप वा समय बात कहत हते सो ता समय तो राजा अभागिया आइ गयो, सो आपु भाजि गये । सो तब सों मेरो मन वा बात में लागि रह्यो है, सो वह बात आप कृपा करिके कहिये।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी आप कुंभन-दास सों कहे जो- कुंभनदास ! आज सखान में होड परी है, जो भोजन सब के घर को न्यारो न्यारो देखिये । तामें सुन्दर कौन के घर कौ है ? सो तुम हू कछु मनोरथ करोगे ?

सो मैं यह बात तोसों कहिबे आयो हूं। तब कुँभनदास पूछे जो-आप की रुचि काहे पे है?)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे--जो ज्वार की महेरो, दही, दूध, बेझरि की रोटी और टेंटी कौ साक संधानो। तब कुंभनदास कहे जो--यह तो घर में सिद्ध है। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो--बेगि मंगावो।)

(सो तब कुंभनदास भतीजी सों कहे जो—घर तें बेझरि को चून, टेंटी कौ साक, संधानो, दही, दूध बेगि ले आउ। तब भतीजी ने कही जो--बेझरि को चून टेंटी कौ साक, संधानो, दही इतनो तो मैं ले आई हूं, और दूध जमाइवेके तांई तातो होत है। तब कुंभनदास कहे जो—आज दूध जमावे मति। दूध की हांडी और ज्वार घर तें दरिके ले आउ सो तहां तांई में रसोई करत हों।)

(सो न्हाइके तो कुंभनदास बैठे ही हते।

तासों बेझरि की रोटी लोंन डारिके ठीकरा पे किये। इतने में भतीजी जमुनावता गाम में जाइके ज्वार दरिके दूध की हांडी ले आई। तब कुंभनदास हांडी में पानी डारिके ज्वार की सामग्री सिद्ध किये।)

(इतने में घर घरतें सखान की छाक आई, सों कुंभनदास की सामग्री श्रीगोवर्द्धन-नाथजी पास राखे। पाछें घर के सखान कों चखाइ आप आरोगे) ❀

भावप्रकाश ❀

कुंभनदासजी की सामग्री विशाखाजी ने दूध में मिश्री डारि श्रीस्वामिनीजी को आरोगाइ अति मधुर कर दीनी। सो काहे तें? जो- विशाखाजी को प्राकट्य कुंभनदासजी हैं।

(और जब श्रीठाकुरजी कों कुंभनदास की सामग्री बहोत स्वाद लगी, ता समय कुंभनदास ने ये कीर्तन गाये। सो पद—

राग सारंग–१ 'ब्रज में बडो मेवा एक टेंटी।'
२ 'घरतें आई है छाक।*'

(सो यह कुंभनदास अति आनंद पाइके गाये। और अपने मन में कहे जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी ने भली एक बात कही, जो– यामें या लीला को अनुभव भयो।)

(या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास की ऊपर कृपा करते। वा दिन कुंभनदास रस में मगन होइ गये। सो सांझ कों सरीर की सुधि नांही। तब परासोली तें दोरे जो–आज मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन नांही पायो। विरह मन में उठि आयो सो सेन भोग सरत

* घरतें आई छाक। खाटे मीठे और सलोने, विविध भांति के पाक ॥ १ ॥
मंडल रचना करि जमुनातट, सघन लता की छांहि।
गोपी ग्वाल सकल मिलि जेमत, मुख हि सराहत जांहि ॥ २ ॥
बाँटत बल मोहन दोउ भैया कर दोना अति सोहे,
चाखत आपुन सखन मुखन दे के गोपीजन मन मोहे ॥ ३ ॥
टेंटी, साक, संधानो, रोटी, गोरस सरस महेरी।
कुंभनदास गिरधर रस-लंपट नाचत दे दे फेरी ॥४॥

हुतो, ता समय कुंभनदास मंदिर में आये। मनमें यह जो—कब दरशन पाऊं। इतने में सेन के किवाड खुले। तब कुंभनदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करि नेत्र इकटक लगाइके यह कीर्तन गाये। सो पद—

॥ राग विहागरो ॥

१ 'लोचन मिलि गये जब चार्यो०'।
२ 'नंदनंदन की बलि २ जइये०'।

॥ राग केदारो ॥

३ 'छिनु छिनु वानिक ओर ही और'।

(सो या प्रकार रस के कीर्तन कुंभनदास ने बहोत गाए। सो वे कुंभनदास एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते।)

(इति वार्ता तृतीय)

वार्ता चतुर्थ

और एक समै कुंभनदास सों वृन्दावन के महंत हरिवंस प्रभृति मिलिवे कों (श्रीगिरिराज पे) आए, * सो यह जानिके आए, जो—ये बडे महापुरुष हैं, श्रीठाकुरजी इनसों बोलत हैं, वातें करत हैं। * और इनके काव्य सुने सो कीर्तन बोहोत आछे किए। ऐसे पद श्रीठाकुरजी साचात-कार विना न होइ।

...... भावप्रकाश वाली प्रति में यह अंश इस प्रकार पाठभेद से प्राप्त है।

* "और कुंभनदासजी श्रीस्वामिनीजी की बधाई गाए हैं। तासों इनसों मिलिके पूछें जो—श्रीस्वामिनीजी कौ वर्णन हम हू किये हैं। और देखें जो— कुंभनदासजी कैसो वर्णन करत हैं?

सो यह विचारिके हरिवंश, हरिदास प्रभृति महन्त स्वामी आइ कुंभनदास सों मिलिके पूछे जो—कुंभनदासजी! तुमने जुगल स्वरूप के कीर्तन किये हैं, सो हमने तिहारे कीर्तन बोहोत सुने, परि कोई श्रीस्वामिनीजी को कीर्तन नाहीं सुन्यो, तासों आप कृपा करिके कोई पद श्रीस्वामिनीजी कौ सुनावो'।

यह जानिके कुंभनदास सों मिले ॐ। सो मिलिके बोहोत प्रसन्न भए। और कहे जो- कुंभनदासजी ! तुमनें श्रीठाकुरजी के पद बोहोत किए हें। सो हमने आपके किए पद बोहोत सुने हें। और आपको कियो पद कोई श्रीस्वामिनीजी को सुनावो। तब कुंभनदास नें श्रीस्वामिनीजी कौ पद करिके गायो। सो पद—

॥ राग रामकली, चर्चरी ॥

कुंवरि राधिके तुम सकल सौभाग्य-सीमा वदन पर कोटि सत चंद वारों।

खंजन कुरंग सत कोटि नैनन (ऊ) पर,
वारने करत जिय में विचारों।
कदली सत कोटि जंघन (ऊ) पर,
सिंघ सत कोटि कटि (ऊ) पर न्योछावरि उतारों
मत्त गज कोटि सत चाल पर,

ॐसं० १६१५ के लगभग अगहन मास में (श्रीविट्ठलेश्वर चरितामृत)

कुंद सत कोटि इन कुचन पर वारि डारों।
कीर सत कोटि नासा (ऊ) पर,
दाडिम सत कोटि दसन (ऊ) पर कहि न पारों
पक्व किंदूर बंधूक सत कोटि,
अधरन (ऊ) पर वारि रुचि गरब टारों।
नाग सत कोटि बेंनी (ऊ) पर,
कपोत सत कोटि ग्रीवा दूरि सारों॥
कमल सत कोटि कर-जुगल पर,
वारने नाहिन कोउ उपमा जु धारों।
'दास कुंभन' स्वामिनी सु-नख
सिख अद्भुत सुगन कहा लों संभारो॥
लाल गिरवरधरन कहत मोहि
तो, हि लों मुख जो लो रूप छिनु छिनु निहारों।

यह पद कुंभनदास ने गायो। सो सुनि-के वे बोहोत रीझे। और कहे जो– हमने श्रीस्वामिनीजी के पद बोहोत किए हैं। परि जहां जहां उपमा दीनी है, तहां एक उपमा दीनो है। और तुमने तो कोटि-सत उपमा दीनी, और वारि फेरि डारी। तातें कुंभन-

दासजी ! तुम बड़े महापुरुष हो । आपको सराहना कहा तांई करें ।

पाछे वे महंत सब कुंभनदास तें विदा होइके घरकों गए (सो ये कुंभनदासजी भावना लीला-रस में मग्न रहते । सो एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे ।)

(इति वार्ता चतुर्थ)

(वार्ता पंचम)

और एक समै [S] श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल तें (श्रीनवनीतप्रिय सों विदा मांगिके) श्रीद्वारिका कों पधारे । सो श्रीगुसांईजी (परदेश में दैवीजीवन के उद्धारार्थ श्रीगोकुल तें) श्रीनाथजीद्वार आए, तब श्रीनाथजी को सेवा शृंगार किए । पाछें (अनोसर कराइके आपु) भोजन करिके अपनी बैठक में गादी

S सं० १६२१ के लगभग ।

तकियान पे बिराजे । तब सेवक दरसन कों आए । तब बात चलत में कुंभनदास की बात चली । तब काहू नें कही, जो–महाराज! कुंभनदास के द्रव्य को संकोच बोहोत है। सात बेटा बहू हें। (और आपु स्त्री पुरुष और एक भतीजी । सो ताहू में आए गए वैष्णवन को समाधान करत हें) और उपजत तो (परासोली में) एक खेती की है ताकौ धान आवत है, सो खात हें। (निर्वाह टेंटी फूलन सों करत हें।)

सो यह बात सुनिके श्रीगुसांईजीX श्री-मुख तें कहे जो–कुंभनदास! हम श्रीद्वारिका श्रीरनछोडजी के दरसन कों जात हें,X और

X .. X भावप्रकाश वाली प्रति में इस अंश का पाठ इस प्रकार है:—

(ने अपने मन में राखी। ता पाछें (जब) कुंभनदास श्रीगुसांईजी के दर्शन कूं आए, तब दंडवत करिके ठाडे होइ रहे।) तब श्रीगुसांईजी कहे जो– कुंभनदासजी! बैठो। तब कुंभनदास बैठे। पाछें श्रीगुसांईजी सिगरे वैष्णवन कों विदा करिके कुंभनदास सों कहे, जो–कुंभनदासजी! हम श्रीद्वारका के मिस परदेश कों जात हें।)

बिदेस हू होइगो । वैष्णवन ने बोहोत करि-के लिख्यो है । तातें जो– तुम संग चलो तो बिदेस में भगवद्विरह को काल बाधा न करै । और भगवद् विरह को काल व्यतीत होइ कछू जान्यो न परे । और में सुन्यो है. तिहारे द्रव्य को संकोच बोहोत है । सो वहू कार्य सिद्ध होइगो और तुमारी सेवा हू सिद्ध होइगी तातें सर्वथा तुमको चल्यो चहिये ।

तब कुंभनदास ने कही जो (महाराज ! आपु के साम्हें हम सों बोहोत बोल्यो नाहीं जात है जो आपु) आग्या (करो सोई हम कों करनो),

इतने में उत्थापन को समय भयो । सो श्रीगुसांईजी स्नान करिके श्रीनाथजी के मंदिर में पधारे । श्रीनाथजी की सेवा तें पंहुचिके श्रीगुसांईजी, नीचे बैठक हैं तहां पधारे । और श्रीगुसांईजी कुंभनदास कों आग्या दीनी जो–तुम घर तें पहुचिके कालि

वेगे आइयो। हम कालि राज भोग आर्त्ती करिके अपसरा कुंड के ऊपर जाइ रहेंगे।

तब कुंभनदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके जमुनावते घर आए सो सवारे वेगे पोहोंचिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दरसन करिके कीर्त्तन करिके और श्रीगुसांईजी आप श्रीनाथजी सों विदा होइके नीचे पधारे, पाछें आप भोजन किए। तब सब सेवकन ने महाप्रसाद लियो। पाछें ताही समै को मुहूर्त्त हतो, सो श्रीगुसांईजी आप सीख मांगिके पर्वत तें नीचे पधारे।

सो तहां तें आगे कों तत्काल कुंड ऊपर पधारे। अपसरा कुंड ऊपर डेरा अगाउ गए हते, सो ठाढे हते। सो श्रीगुसांईजी आप डेरान में पधारिके पौढे। इतने में सब सेवक सामान लेके आए और कुंभनदास हू

साथ आए। सो कुंभनदास उहां बैठिके विचार करत हैं। (जो— हे मन! अब कहा करिये?)

॥ राग सारंग ॥

कहिये सो कहिबे की होई।
प्राणनाथ-बिछुरन की बेदन जानत नांहीन कोई ॥

यह विचार करत (श्रीगोवर्द्धननाथजी को बिरह हृदय में बढि गयो) उत्थापन को समो होइ आयो! श्रीगुसांईजी आप डेरान में जागे, और कुंभनदास कों अपनो सेवा को समो भयो। और श्रीनाथजी के दरसन की सुधि आई। सों उहां पूछरी के कोंने[X] में कुंभनदास ठाढे ठाढे कीर्त्तन गावत हते। और आंखिन में तें जल को प्रवाह बहत हतो। सो (सगरे सरीर में पुलकावली होन लागी।) सो कुंभनदास ने गायो सो पद—

X पूछरी स्थान पर रामदासजी की गुफा के सामने 'धों' के वृक्ष के नीचे। यहाँ यदुनाथदासजी ने सं० १९८२ में एक चोंतरा बनवा दिया है।

॥ राग धनाश्री ॥

केते दिन व्है जु गए विनु देखें।
तरुन किसोर रसिक नंदनंदन कछुक उठति मुख-रेखें।
वह सौभा, वह कांति वदन की कोटिक चंद विसेखें॥
वह चितवनि, वह हास्य मनोहर, वह नटवर-वपु भेखें।
स्यामसुन्दर मिलि संग-खेलन की आवत जियें अमेखें॥
'कुंभनदास' लाल गिरिधर-विनु जीवन जनम अलेखें।

यह पद कुंभनदास ने (अत्यन्त विरह क्लेश सों) गायो। सो श्रीगुसांईजी डेरान में बैठे सुने। सो कुँभनदास कौ क्लेश श्रीगुसांईजी तें सह्यों न गयो। सो श्रीगुसांई-जी आपु बाहिर पधारे। कुंभनदास की यह दशा देखे, जो– नेत्रन सों जल बह्यो जात है। महा विरहकरके दुखी होइ रहेहैं।

और श्रीमुख तें कहे जो– कुंभनदास! तुम वेगि जाउ। (मंदिर में जाइके श्री-गोवर्द्धननाथजी के दर्शन करो जो–) तुमारे विदेस होइ चुक्यो। और तिहारी जो– दसा

इहां है तैसी (श्रीगोवर्द्धनाथनजी की) उहां है। सो कैसे जानिए ?

जो- जैसे+ अक्काजी गज्जन धावन को पान लेवे कों पठाए सो गज्जन धावन कों तो भगवदासक्ति (श्रीनवनीतप्रिय कों) देखे बिन छिन हू न रह्यो जाय। सो-जब वे गज्जन धावन पान लेवेकों बाहिर आए और जुर चढ्यो, सो (द्वार पास ही दुकान में) मूर्छा खाइके गिरे।

और इहां श्रीनवनीतप्रियजी कों श्री-अक्काजी ने भोग धर्यो। सो गज्जन धावन देहरी के आगे बैठते। तब श्रीनवनीतप्रिय जी गज्जन धावन को बोल न सुने, तब श्री-मुख तें कहे। जो-मेरो गज्जन कहां है ?+ तब श्रीअक्काजी ने कही जो- (पान न हते तासों) वह तो पान लेवेकों गयो है।

+ सं० १५७५ के लगभग।

तब श्रीनवनीतप्रियजी कहे जो- मेरो गज्जन आवेगो तब आरोगूंगो, + सो श्रीहस्त खेंचिके बैठि रहे । तब गज्जन धावन कों बुलायो । तब श्रीनवनीतप्रियजी आरोगे । (सो श्रीआचार्यजी के) यह मार्ग की मर्यादा है, जो- जितनो सेवक को स्वामी के ऊपर स्नेह होइ, तातें सतगुन श्रीठाकुरजी को स्नेह सेवक के ऊपर होइ । और भगवद्गीता में श्रीकृष्ण कहे हैं :—

"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्" ।

+ इस स्थल पर इस प्रकार विशेष पाठ है :—

"तब श्रीआचार्यजी सबन सों पूछे जो- गज्जन कहाँ गयो है ? तब श्रीअक्काजी कहे जो- पान न हते तासों गज्जन कों पान लेवे पठायो है। तब श्रीआचार्यजी कहे जो- तुम जानत नांही जो- गज्जन विना श्रीनवनीतप्रियजी एक छिन नांही रहत हैं ? तासों गज्जन कों पान लेवे क्यों पठायो ?

ता पाछें गज्जन कों बुलाइवे कों व्रजवासी पठायो सो गज्जन कों बुलाइके ले आयो । तब गज्जन ने श्रीनवनीत प्रियजी की पास आइके कह्यो जो- बाबा ! आरोगो । तब श्रीनवनीतप्रियजी आरोगे । सो गज्जन विना आपु विरह करिके बैठि रहे ।

तातें श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें (कुंभनदास सों) कहे, जो– इहां तुमारी अवस्था है, सो उहां उनकी है। सो एसो श्रीनाथजी कौ विरह कुंभनदास कों हतो। तातें श्रीगुसांईजी ने कुंभनदास कों सीख दीनी *।

(तब कुंभनदास को रोम-रोम सीतल होइ गयो। तब मन में प्रसन्न होइ श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि बेगि अप्सराकुंड तें दोरिके श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में आए) तब कुंभनदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दरसन कियो, सो भोग को समो हतो, (सो किवांड खुले) ता समें कुंभनदास ने एक पद करिके गायो। सो पद :—

········· इतना अंश कुछ शब्दान्तर से प्रथम संस्सकारण मे भावप्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था पर एसा अंश वार्ता का ही मूल अंश है,

॥ राग धनाश्री ॥

जो पै चौंप मिलन की होइ ।
तो क्यों रह्यो परै बिनु देखें लाख करो किन कोइ ॥
जो पै विरह परस्पर व्यापै तो कछु जिय न बनै ।
लोक-लाज कुलकी मर्यादा एकौ चित न गनै ॥
"कुंभनदास" प्रभु जात न लागी और कछू न सुहाय ।
गिरधरलाल तोहि बिनु देखें छिनु छिनु कलप बिहाय ॥

यह पद श्रीनाथजी के संनिधान कुंभनदास ने गायो । सो सुनिके श्रीनाथजी बोहोत प्रसन्न भए ।

कुंभनदास सो कहे जो– कुंभनदास ! मैं तेरे मन की बात जानत हूं । जो– तू मेरे बिना रहि नांही सकत है । तैसे मैं हू तो-बिना रहि नाहीं सकत हों । तासों अब तू सदा मेरे पास ही रहेगो । तब कुंभनदास ने बोहोत प्रसन्न होइके साष्टांग दण्डवत कीनी और हाथ जोरिके

श्रीगोवर्द्धनाथजी सों बिनती कीनी जो– महाराज ! मोकों यही चहियत हतो, और यही अभिलाषा हती, जो- तुम सो बिछोयो न होय ।)

(सो कुंभनदासजी एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते)

(इति वार्ता पंचम)

—**):–:(**—

(वार्ता षष्ठम)

बहुरि एक समै श्रीनाथजी के मंदिर में कुंभनदास श्रीगुसांईजी के पास बैठे हते (और सगरे बैष्णव हू बैठे हते) तब श्री-गुसांईजी श्रीमुख तें हँसिके कहे , जो– कुंभनदास ! तुम्हारे बेटा कितनेंक हें । तब कुंभनदास ने कह्यो, महाराज ! मेरे बेटा डेढ है, और हें तो बेटा सात । (ता में पांच तो लौकिकासक्त हैं, जो बेटा काहे के हें ?)

तब श्रीगुसांईजी कहे जो– कुंभनदास ! डेढ कों कहा कारन ? तब फेरि कुंभनदास कहे, जो– महाराज ! आखो बेटा तो चत्र-भुजदास और आधो बेटा कृष्णदास । जो-श्रीनाथजी की (गायन की) सेवा करत है।

※कुंभनदास ने कृष्णदास कों आधो क्यों कह्यो ? ताको हेतु यह है, जो– व्रज-भक्तन की रीति कौ श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने पुष्टिमार्ग प्रगट कियो है। ताको हेतु यह, जो– (श्रीआचार्यजी आप) व्रज-भक्तन कौ मार्ग प्रगट कियो है। (सो पुष्टिमार्ग व्रजजन कौ भावरूप मार्ग है) सो भगवदीय गाए हैं।

सेवा रीति प्रीति व्रज-जन की जन-हित प्रगट करी।

सो व्रज-भक्तन की कहा कहा रीति है ? जो– श्रीठाकुरजी के सांनिध्य में तो सेवा

करैं। (सो स्वरूपानंद को अनुभव करि संयोग रस में मगन रहैं) और श्रीठाकुरजी जब (गोचारनअर्थ) बनमें पधारें तब (ब्रज-भक्त विरह रस को अनुभव करि) गुन-गान करैं। सो ये दोइ वस्तु (संयोग रस और विप्रयोग रस को अनुभव जाकों) होइ सो आखो, और इनमें तें एक होइ तो आधो वैष्णव। सो चत्रभुजदास में सेवा गुन-गान दोऊ हैं, तातें आखो। और कृष्णदास में एक सेवा है, तातें आधो ❀।

* " " "❀ इतना अंश भावप्रकाश के रूप में इस प्रकार प्रारंभ होकर प्रकाशित हुआ था:—

"सो तहां यह सन्देह होय जो- गांइन की सेवा तो सर्वोपरि है, और गांइन की सेवा किये तें बोहोत वैष्णव श्री ठाकुरजी कों पाये हैं, और कुंभनदास जी कृष्णदास कों आधो वेटा क्यों कहे? (आगे वार्ता में प्रकाशित अंश) सो कृष्णदास तो गाइन की सेवा करत हैं, और श्रीगोवर्द्धननाथजी को दर्शन हू होत है, परन्तु ब्रज-भक्तन की लीला कौ अनुभव नाहीं है। तासों वो आधो है। और चत्रभुजदास संयोग और विप्रयोग दोउ रस के अनुभव युक्त सेवा करत हैं, सो लीला-सम्बधी कीर्तन हू गान करत हैं, तासों कुंभनदासजी चत्रभुजदास कों पूरो वेटा कहे"।

(यह कुंभनदास के वचन सुनिके) तब श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख तें कहे । जो-जैसो भगवदीय है तैसोई बेटा है, और बोहोत भए तो कौन काम के ?

और चत्रभुजदासजी की वार्ता तो आगे श्रीगुसांईजी के सेवकन की वार्ता में लिखे हैं।

अब कुंभनदास कौ बेटा कृष्णदास तिनकी वार्ता :—

सो कृष्णदास श्रीगुसांईजी के स्वरूप में बोहोत आसक्ति राखते, और श्रीगोवर्द्धन-नाथजी की गांइन के ग्वाल हते, श्रीगुसांईजी ने इनकों सेवा की आग्यां दीनी हती। सो ए कृष्णदास गाँइन की सेवा सदा सर्वदा करते। सवारे खिरक की सेवातें पोहोंचिके फिरि गांइ चराइवे कों (वन में) जाते (सो सगरे दिन गांइ चरावते। सो संध्या समय

गांइन कों घेरिके ले आवते) सो सगरे इनकों 'ग्वाल' कहते।

सो एक दिन गांइ चराइके कृष्णदास पूछरी की ओर गांइन के संग आवत हते। सो सगरी गांइ तो खरिक में गई, और एक गांइ बोहोत बडी हती। ताको ऐन बोहोत भारी हतो (सो दूध हू बोहोत देती और थन हू बडे हते) सो वह गांइ बोहोत हरुवे हरुवे चलती। (वा गांइ के पाछें कृष्ण-दास आवत हते) सो वा गांइके आवत अंध्यारो परिगयो, सो उहां पर्वत ऊपर तें (पूछरी के पास श्रीगिरिराज-कंदरा तें) एक नाहर निकस्यो, सो गांइ के ऊपर दोर्‌यो।

तब कृष्णदास ने कही जो-अरे अधर्मी यह गांइ तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की है। तु भूखो है तो मेरे ऊपर आउ (सो नाहर की यह रीति है जो-ललकारे सो ताही पे आवें।

तब नाहर निकट आयो। सो कृष्णदास ने वा गांइ को हांकी) सो इतने में गांइ तो भाजिके खरिक में गई, और नाहर ने तो कृष्णदास को अपराध कियो (मारयो) और ऊपर कहि आए हैं, जो- गांइ तो खरिक में आई।

× तब श्रीनाथजी आप गांइ दुहिवे कों पधारे। सो सब ग्वाल दुहत हे। सो वह बडी गांइ कों श्रीनाथजी आप ही दुहिवे बैठे। और कृष्णदास वाकों बछरा थांभे हैं।× सो एसो दर्शन कुंभनदास कों भयो।

×.........× इस का पाठभेद इस प्रकार है :—

(सो गाइन कों गोपीनाथ आदि सब ग्वाल दुहन लागे।

गोपीनाथ ग्वाल बडे कृपापात्र भगवदीय हते। सो देखे तो-श्रीगोवर्द्धननाथजी वा बडी गाय कों दुहत हैं। और कृष्णदास वा गाइ को बछुरा पकरे ठाढे हैं। सो कुंभनदास जो वहां ठाढे हते। सो गाइ बछुरा कों चाटत है)

(तब कुंभनदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके) पाछें जाइके जो- कछु (कृष्णदास के शरीर को क्रिया) कार्य करनो हतो सो कियो ।

(और श्रीगुसांईजी आप बैठक में जाइके विराजे, तब सगरे वैष्णव बैठक में आइके बैठे। सो इतने में गोपीनाथदास ग्वाल (ने) आइके कह्यो जो-महाराज ! कृष्ण-दास कों तो पूछरी पास नाहर ने मारयो, और मैं खिरक में गोदहन करत हतो, सो ता समय श्रीगोवर्द्धननाथजी आप वा वडी गांइ कों दुहत हते, और कृष्णदास वा गांइ को बछरा थांभे हते। सो गाइ बछरा कों चाटत हती । सो एसो दर्शन खिरक में मोकों भयो)

(तब श्रीगुसांईजी श्रीमुख सों कहे जो- यामें आश्चर्य कहा ? ये कृष्णदास एसे

भगवदीय हैं जो– आप नाहर के आडे परे और श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाइ कों बचाई। सो कृष्णदास के ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी आप प्रसन्न होइके अपनी लीला में कृष्णदास कों प्राप्त किये। सो तुम भगवदीय हो, तासों तुमकों दर्शन भयो। औरकों तो लीला के दर्शन दुर्लभ हैं)

(यह बात सुनिके सगरे वैष्णव व्रजवासी बोहोत प्रसन्न भए, जो–सेवा पदार्थ ऐसो है।)

पाछें सवारे कुंभनदास श्रीनाथजी के दर्शन कों आए। श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करिके (सेवकन सों) कह्यो, जो– प्रथम कुंभनदास कों दर्शन कराइ देउ (ता पाछें और सगरे लोग दर्शन करेंगे सो या प्रकार कुंभनदास के ऊपर श्रीगुसांईजी

आप अनुग्रह किए) सो-कुंभनदास ने दर्शन कियो । याको कारन यह है, जो–कुंभनदास सब वैष्णवन के ऊपर उपकार कियो, जो–सूतको कों भगवत्-मंदिर में को जाइवे देतो ? परि कुंभनदास के अनुग्रह तें सब कोऊ दर्शन करत है ❀ ।

भावप्रकाश ❀

सो काहे तें ? जो सूतकी कों भगवत्–मंदिर में कौन जाइवे देतो ? सो-कुंभनदास कों सूतक में दर्शन कराए । सो यह रीति वा दिन तें राखी, जो–सूतक जाकों होइ सो हू दर्शन पावे ।

सो या प्रकार-कुंभनदासजी की कृपा तें सूतकीन कों दर्शन होन लागे । सो यह रीति श्रीगुसांइजी आपु किए, जो - वैष्णव के हृदय में स्नेह है, सो आगे कोई जानेगो नांही । तासों आगेके वैष्णवन कों दर्शन की छुट्टी रहें तब वैष्णव हू सुख पावे, और श्रीगोवर्द्धननाथजी हू सुख पावें । तासों आगे दर्शन की छुट्टी राखे +

+ आज भी प्राय, ग्वाल के समय श्रीनाथद्वार आदि स्थानों में सूतकी लोगों को दर्शन करादेने की प्रथा चालू है ।

सो-कुंभनदास सूतक में नित्य दर्शन करिके परासोली जाइ बैठते। तहां बैठे बिरह के पद गावते। सो पदः—

॥ राग बिलावल ॥

तुम्हारे मिलन बिनु दुखित गोपाल !
अति आतुर कुल-बधू ब्रजसुन्दरि प्यारे बिरह-बिहाल ॥
सीतल चंद, तपत दहत किरननि।
कमलपत्र जलपत्र जनु गरल ब्याल।
चंदन कुसुम सुहात न बाढी तन ज्वाल ॥
कुंभनदास प्रभु नव घन स्याम तुम बिनु।
कनक लता सूखी मानों ग्रीषम डाल ॥
अधर अमृत सींच लेहु गिरिधरन लाल।

॥ राग धनाश्री ॥

अब दिन राति पहार से भए।
तब तें निघटति नांहिन जब तें हरि मधुपुरी गए ॥
यह जानियत विधाता जुग-सम कीने जाम नए।
जागत जात बिहातन क्यों हू ऐसे मीत ठए ॥
ब्रजबासी सब परम दीन अति ब्याकुल सोच लए।
ज्यों बिनु प्रान दुखित जलरुह गन दारुन हृदै हए ॥
'कुंभनदास' बिछुरि नंद-नंदन बहु संताप दए।
अब गिरधर बिनु रहत निरंतर लोचन नीर छए ॥

॥ राग केदारो ॥

औरन कों व समीप, बिछुरनो आयो हमारे हिसा।
सब कोऊ सोवें सुख आपुनें आली
मोकों चाहत जाइ चहों दिसा ॥
ना जानों या विधाता की गति मेरे आंक लिखे
ऐसे भागु सो कौन रिसा ।
'कुंभनदास' प्रभु गिरधरन कहति निसिदिन ही
रटि ज्यों चातक घन की तिसा ॥

एसे बिरह के पद गाइके सूतक के दिन निवर्त्त भए। पाछें सुद्ध होइके न्हाइके कुंभनदास भगवत् सेवा में आए। सो जैसे सेवा सदा करत हते, तेसेई करन लागे, सो एसी जिनकों दर्शन की आरति हती ।

सो वे कुंभनदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे तातें इनकी वार्ता कौ पार नांही। सो कहां ताईं लिखिए ।

(इति वार्ता षष्ठ)

(वार्ता प्रसंग)*

(और एक दिन श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी ये दोउ भाई मिलिके श्रीगुसांईजी सों कहे जो–कुंभनदासजी कबहू श्रीगोकुल नांही गए हैं। सो वे कोई प्रकार श्रीगोकुल तांई जांय तब श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन कुंभनदासजी करें।)

(तब श्रीगुसांईजी आप कहे जो–कुंभनदास तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की रहस्य-

---

* यह प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

इस में श्रीगोकुलनाथजी (वार्ता-ग्रन्थ कार) का नाम निर्देश होने से स्पष्ट सिद्ध होता है कि इस प्रकार (श्रीगोकुनाथजी के नाम वाले) प्रसंग मूल वार्ताओंके समय संकलित न होकर श्रीहरिरायजी के भावप्रकाश की रचना के समय संकलित हुए है. सं० १९९८ मे प्रकाशित प्रा. वा. रहस्य द्वि. भाग (अष्टछाप) प्र:संस्करन की भूमिका में मैने इसी कारण वार्ता के तीन संस्करण माने है।

(देखो उक्त ग्रन्थ की भूमिका)

॥ राग केदारो ॥

औरन कों व समीप, बिछुरनो आयो हमारे हिसा।
सब कोऊ सोवें सुख आपुनें आली
मोकों चाहत जाइ चहों दिसा ॥
ना जानों या विधाता की गति मेरे आंक लिखे
ऐसे भागु सो कौन रिसा ।
'कुंभनदास' प्रभु गिरधरन कहति निसिदिन ही
रटि ज्यों चातक घन की तिसा ॥

एसे बिरह के पद गाइके सूतक के दिन निवर्त्त भए। पाछें सुद्ध होइके न्हाइके कुंभनदास भगवत् सेवा में आए। सो जैसे सेवा सदा करत हते, तेसेई करन लागे, सो एसी जिनकों दर्शन की आरति हती।

सो वे कुंभनदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे तातें इनकी वार्ता कौ पार नांही। सो कहां ताईं लिखिए।

(इति वार्ता षष्ठ)

(वार्ता प्रसंग)*

(और एक दिन श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी ये दोउ भाई मिलिके श्रीगुसांईजी सों कहे जो–कुंभनदासजी कबहू श्रीगोकुल नाहीं गए हैं। सो वे कोई प्रकार श्रीगोकुल तांई जांय तब श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन कुंभनदासजी करें।)

(तब श्रीगुसांईजी आप कहे जो–कुंभनदास तो श्रीगोवर्द्धननाथजी की रहस्य-

---

* यह प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

इस मे श्रीगोकुलनाथजी (वार्ता-ग्रन्थ कार) का नाम निर्देश होने से स्पष्ट सिद्ध होता है कि इस प्रकार (श्रीगोकुलनाथजी के नाम वाले) प्रसंग मूल वार्ताओंके समय संकलित न होकर श्रीहरिरायजी के भावप्रकाश की रचना के समय संकलित हुए है. सं० १९९८ में प्रकाशित प्रा वा. रहस्य द्वि. भाग (अष्टछाप) प्र:संस्करन की भूमिका में मैने इसी कारण वार्ता के तीन संस्करण माने है।

(देखो उक्त ग्रन्थ की भूमिका)

लीला में मगन हैं, सो इनकों श्रीगोवर्द्धन-नाथजी किए हैं। तब श्रीगोकुलनाथजी कहे जो– इनकों ले जाइबे को उपाय तो करिए। पाछें न आवें तो भगवद्-इच्छा। तब श्रीगुसांईजी आप कहे जो– उपाय करो, परंतु कुंभनदास-श्रीयमुनाजी पार कबहू न उतरेंगे।)

(पाछे कछूक दिन में श्रीगुसांईजी आप श्रीगोकुल पधारे हते, और श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी श्रीनाथजीद्वार में हते। सो वैशाख सुदी ११ के दिन श्री-गोकुलनाथजी श्रीबालकृष्णजी सों कहे जो– श्रीगोकुल में श्रीगुसांईजी हैं और आपुन दोउ जने इहां हैं, तासों कुंभनदासजी कों श्रीगोकुल ले चलिये।)

(तब श्रीबालकृष्णजी ने कह्यो जो– कैसे ले चलोगे ? जो- कुंभनदासजी तो असवारी पर बैठत नाहीं हैं। सो तब

श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो जो–कुंभनदासजी असवारी पे तो बैठेंगे नाहीं, और दिन में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन छोडिके कहूं जाइगे नाहीं। तासों रात्रि उजियारी है, सो हम हु पावन सों चलेंगे, सो या प्रकार सों चले चलेंगे। सो देखें कहा कौतुक होत है? जो-कुंभनदासजी सरीखे भगवदीय को संग तो या मिष ते होइगो, सो यही बडो लाभ होइगो।)

(पाछे दोनों भाई श्रीगोवर्द्धननाथजी की सैन आरती तांई सेवा सों पहोंचिके श्रीनाथजी कों पोंढाइ अनोसर करवाइ बाहिर आए और कुंभनदास कों हाथ जोडिके भगवद्-वार्ता-लीला को भाव कहन लागे। सो कुंभनदास लीला-रस में मगन होइ गए, सो कछू सुधि न रही जो–हम कहां हैं?)

(तब श्रीगोकुलनाथजी भगवद्-वार्ता

करत कुंभनदास कौ हाथ पकरिके आन्योर की ओर पर्वत सों उतरिके श्रीगोकुल कों चले, सो रहस्य-वार्ता में मगन हैं। और श्रीबालकृष्णजी दोइ चारि वैष्णव-संग चुप-चाप होइके कुंभनदास की ओर श्रीगोकुल-नाथजी की वार्ता सुनत श्रीगोकुल कों चले)

(तब मारग में श्रीगोकुलनाथजी वार्ता करिके कुंभनदास सों पूछे। जो--श्रीस्वामिनी-जी को शृंगार कबहू श्रीगोवर्द्धनधर हू करत हैं? तब कुंभनदासजी प्रेम में मगन होइके कहे जो–हां, हां, करत हैं। जो- एक दिन आश्विन महीना में श्रीनाथजी और श्रीस्वा-मिनीजी ललितादिक सखी-संग रात्रि कों बन में फूल बीने। ता पाछें समाज-सहित रासमंडल के पास सिंगार को चोंतरा हैं सो ता ऊपर आप बिराजे। तब बिसाखाजी सिंगार करन लागीं। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी

कहे जो– "आजु सिंगार मैं करूंगो"। "सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी के पास ठाढे भए। सो मुखादिक के दर्शन विना रह्यो न जाइ दोउन सों। तब विसाखा-जी परम चतुर दोउन के हृदय को अभिप्राय जानि श्रीस्वामिनीजी के आगे एक दर्पन धर्यो, तब वा दर्पन में दोउन के श्रीमुख सन्मुख भए, सो अवलोकन लागे। सो श्री-ठाकुरजी बडे लंबे बार स्याम सचिकून श्रीहस्त में कांकसी सों सम्हारि, एक एक बार में झीने मोती परम चतुराई सों पिरोइ के श्रीस्वामिनीजी के मुखचंद-शोभा दर्पन में देखिके प्रसन्न होइ गए, सो हाथ सों केश छुटि गये। तब सगरे मोती बारन में सो निकसि शृंगार को चोंतरा हैं रतन खचित, तहां फेलि गए। तब बडो हास्य भयो, जो-इतनी वार-लों शृंगार किये सो एक छिन में

बड़ों होइ गयो। सो यह सखीनने कही। तब श्रीठाकुरजी ने विसाखाजी सों कह्यो जो– तुम बेनी पकरे रहो, मैं मोती पिरोऊं। तब श्रीविसाखाजी ने बेनी पकरी। सो तब फेरि बेनी मोतीन सो शृंगार करि मोतीन सों मांग संभारी। पाछें फूलन के आभूषन सखी-जन ने बनाइके श्रीठाकुरजी [illegible]ये । सों

आए। पाछें पार श्रीगोकुल तें नाव पर चढ़िके श्रीगुसांईजी आप या पार आए, * सवारो-हू भयो। सो कुंभनदास कों शरीर की सुधि नाहीं, लीला-रस में मगन हते।)

(तब कुंभनदास सावधान होइके देखे तो सवारो भयो है। सो-इतने में श्रीगुसांईजी कों देखिके श्रीगोकुलनाथजी सों हाथहू छूटि गयो। सो-कुंभनदास महा उतावल सों भाजे जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहां कीर्तन कौन करेगो ? जो-हाय ! हाय ! मेरी सेवा गई।)

(सो या प्रकार मनमें कहत दौरे, सो अति बेगि दौरे। तब श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी और सब वैष्णव कुंभनदास कों पकरिवे कों पीछे तें दौरे। सो कुंभनदास

* श्रीबालकृष्णजी ने पहिले से वैष्णव द्वारा समाचार भेजाथा, उसे सुनकर।

बड़ो होइ गयो। सो यह सखीनने कही। तब श्रीठाकुरजी ने विसाखाजी सों कह्यो जो– तुम बेनी पकरे रहो, मैं मोती पिरोऊं। तब श्रीविसाखाजी ने बेनी पकरी। सो तब फेरि बेनी मोतीन सो शृंगार करि मोतीन सों मांग संभारी। पाछें फूलन के आभूषन सखी-जन ने बनाइके श्रीठाकुरजी कों दिये। सों श्रीठाकुरजी पहिरावत जांइ और छिन छिन में मुखचंद की शोभा देखिके रोम--रोम आनंद पावें। सो या प्रकार सब शृंगार श्रीगोवर्द्धननाथजी करिके काजर, बेंदी, तिलक और चरण में महावर किये। पाछें श्रीस्वामिनीजी श्रीगोवर्द्धनधर कों शृंगार किए। ता पाछें रास-विलास आदि अनेक लीला करी"।)

(सो-या प्रकार वार्ता करत २ श्रीगोकुल साम्हे श्रीयमुनाजी के तीर-लों कुंभनदास

आए। पाछें पार श्रीगोकुल तें नाव पर चढ़िके श्रीगुसांईजी आप या पार आए, * सवारो हू भयो। सो कुंभनदास कों शरीर की सुधि नाहीं, लीला-रस में मगन हते।)

(तब कुंभनदास सावधान होइके देखे तो सवारो भयो है। सो-इतने में श्रीगुसांईजी कों देखिके श्रीगोकुलनाथजी सों हाथहू छूटि गयो। सो-कुंभनदास महा उतावल सों भाजे जो-श्रीगोवर्द्धननाथजी के यहां कीर्तन कौन करेगो? जो-हाय! हाय! मेरी सेवा गई।)

(सो या प्रकार मनमें कहत दौरे, सो अति बेगि दौरे। तब श्रीगोकुलनाथजी और श्रीबालकृष्णजी और सब वैष्णव कुंभनदास कों पकरिवे कों पीछे तें दौरे। सो कुंभनदास

* श्रीबालकृष्णजी ने पहिले से वैष्णव द्वारा समाचार भेजाथा; उसे सुनकर।

तो भाजे दौडेई गए, इन कोई कों पाए नांही। पाछें श्रीगुसांईजी की पास आए। तब श्रीगुसांईजी कहे जो—अब कहा कुंभनदास कों पाउगे ? जो--इनकों यहां काहेकों ले आए हो? जो—ये श्रीजमुना के पार कबहू न उतरेंगे। सो हम ने तुम सों पहले ही कह्यो हतो।)

(तब श्रीगोकुलनाथजी श्रीगुसांईजी सों कहे जो—पार न उतरे तो कहा भयो ? परंतु सगरी रात्रि भगवद्वार्ता के भाव में महा अलौकिक सिद्धि मिलेतें भई, सो वह बडो लाभ भयो है, जो भगवदीयन को सत्संग एक क्षण हू दुर्लभ है।)

(यह सुनिके श्रीगुसांईजी आपु कहे जो-यह तो तुम ठीक कहे, परंतु अब या समय तो कुंभनदास कों दौरनो परयो। और

जहां तांई कुंभनदास श्रीगिरिराज ऊपर न जाइगे, तहां तांई श्रीगोवर्द्धननाथजी जागेंगे नाहीं। जो- कुंभनदास जगाइवेके कीर्तन गावेंगे तब जागेंगे, सो एसे भक्त के अधीन श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं। तासों तुम कों भगवद्-वार्ता सुननी होइ तो परासोली में जमुनावता में जाइके कुंभनदास सों पूछियो सो तहां कुंभनदास तुम सों कहेंगे।)

(ता पाछें-श्रीगोकुलनाथजी, श्रीबाल-कृष्णजी सब वैष्णव सहित श्रीगोकुल पधारे. सो-श्रीगुसांईजी को घोड़ा जीन सहित पार बंध्यो हतो, सो तापर आप श्रीगुसांईजी वेगि ही असवार होइके घोड़ा दोराइके चले और कुंभनदास तो दोरे जात हते, सो तहां आइके श्रीगुसांईजी कुंभनदास सों कहे जो-तुमने कबहू यह मारग देख्यो नाहीं,

सो-तुम भूलि जाओगे। तासों घोड़ा के पीछे पीछे दौरे आवो।)

(तब कूंभनदासजी श्रीगुसांईजी के पीछे दौरे चले जांय। सो यहां रामदास भीतरिया आदि जो न्हाइके पर्वत ऊपर आवें सो (ये) छुप जांय। सो ऐसें करत चार घड़ी दिन चढ्यो। तब श्रीगुसांईजी आपु गिरिराज पधारिके घोड़ा पर तें उतारिके तत्काल स्नान करि पर्वत ऊपर मंदिर में पधारे। तब देखे तो सगरे भीतरिया रामदास सहित न्हाइके मंदिर में आए हैं।)

(तब श्रीगुसांईजी आपु पूछे जो–रामदास! आज इतनी अवार क्यों भई है? तब रामदासने वीनती कीनी जो– महाराज! आज न जानिये कहा भयो है? जो- चारि वेर न्हाए और चारयों वेर सगरे भीतरिया

छुवाने । सो अब पांचमी वार न्हाइके आए हैं, सो कारन जान्यो न पर्‌यो ।)

(तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो–यह कुंभनदासजी के लिये श्रीगोवर्द्धननाथजी कौतुक किए हैं ।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु शंख-नाद करवाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों जगाए । ता समय कुंभनदास ने जगाइवे के पद गाए । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी उठे । तब कुंभनदास ने अपने मन में बोहोत हरष मान्यो, जो–मेरी कीर्तन की सेवा मिली । ता पाछें राजभोग पर्यन्त श्रीगुसांईजी सेवा सों पहोंचे । सवारे नृसिंह चतुर्दशी हती । सो केसरी पिछोडा कुलह सिद्ध कियो । ता पाछें सेन पर्यंत सेवा सों पहोंचे ।)

(सो या प्रकार कुंभनदास कबहु श्रीगोकुल कों न गए । सो श्रीगोवर्द्धननाथजी

की लीला-रस में मगन रहते। सो वे कुंभन दासजी एसे परम कृपापात्र भगवदीय हते।)

वार्ता प्रसंग *

(और एक समय परासोली में कुंभन-दास खेत ऊपर बैठे हते,—और श्रीगोर्द्धननाथ-जी कुंभनदास के आगे खेत में खेलत हते। इतने में उत्थापन कौ समय भयो तब कुंभन-दास उठिके श्रीगिरिराज चलिवे कौ मन कियो तब श्रीनाथजी ने कुंभनदास सों कही जो-तू कहां जात है? सो तब इन (नें) कहीं जो--उत्थापन कौ समय भयो है, सो गिरिराज ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों जात हों। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो--मैं तो तिहारे पास खेलत हों, तासों तू उहां क्यों जात है?)

* सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

(तब कुंभनदास ने कही जो—महाराज! यहां तुम खेलत हो और दर्शन देत हो, सो तो अपनी ओर तें कृपा करिके और अब ही तुम भाजि जाउ तो मेरी तुमसों कछू चले नाहीं। और मंदिर में तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के पधराए हो, सो उहां सों कहूं जावो नाहीं, और उहां सब कों दर्शन देत हो। और मंदिर में दर्शन की आसक्ति जो मोकों है, सो तासों तुम घर बैठे हू मोकों कृपा करि दर्शन देत हो। या समय तुम कृपा करि दर्शन दै अनुभव जतावत हो सो मंदिर की सेवा दर्शन के प्रताप सों। तासों उहां गए बिना न चलै।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी हसिके कहे जो-कुंभनदास! तेरो भाव महा अलौकिक है, तासों मैं तोकों एक छिन नाहीं छोडत हों)

(ता पाछें श्रीनाथजी और कुंभननदास परासोली सों संग चले, सो गोविंदकुंड ऊपर आए तब शंखनाद भए। तब श्रीगो-वर्द्धननाथजी मंदिर में आए, और कुंभनदास आन्योर ताईं संग आए। सो तहां तें पर्वत ऊपर आप चढि मंदिर में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किए। सो कुंभनदास एसे भगवदीय हते।)

वार्ता प्रसंग *

(और एक दिन माली दोइ सौ आम बडे बडे महा सुंदर टोकरा में लेके परासोली चंद्रसरोवर है तहां आयो, पाछें टोकरा उतारिके कुंड के पास सगरे आम भूमि में धरिके कपड़ा तें पोंछि पोंछि मैल छुडावन लाग्यो। ता समय कुंभनदास राजभोग-

*सं० १६६७ वाली प्रति में यह वार्ता प्रसंग नहीं है।

आरती के दर्शन करिके श्रीगिरिराज तें चले, सो चंद्रसरोवर ऊपर जल पीवन कों आए। सो आम बोहोत सुन्दर श्रीगोवर्द्धननाथजी के लायक देखिके कुंभनदास वा माली सों पूछे जो–ये आम तूं कहां ले जाइगो ? वा माली ने कह्यो जो– मथुरा ले जाऊँगो, वहां इनके दस रुपैया लेऊँगो।)

(सो कुंभनदास के पास तो कछू पैसा हू न हते। सो कहा करें ? तब मन में श्रीगोवर्द्धननाथजी को स्मरण करिके कहे जो–महाराज ! यह सामग्री परम सुंदर है, और आपु लायक है, (क्यों ?) जो–उत्तम वस्तु के भोक्ता आपु ही हो। तासों ये आम आपु आरोगो।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सगरे आम आइके आरोगे। सो वा माली कों खबरि

नाहीं। सो यह माली टोकरा में आम भरिके मथुरा गयो, सो सांझ होइ गई।)

(सो एक रजपूत मांट गाम में तें मथुरा कछू कार्यार्थ आयो हतो, सो वाने आम देखिके कह्यो जो—कहा लेइगो? तब माली ने कही जो—दस रुपैया तें घाट न लेउंगो। तब वह रजपूत दस रुपैया देके आम सगरे लेके श्रीयमुनाजी के तट पर आयो। सो वा रजपूत के संग एक सनोडिया ब्राह्मण हतो, सो वाकों सौ आम दिए। सो दोऊ जनेन ने पचास २ आम घर के लिये धरिके पचास २ आम दोउन ने श्रीयमुनाजी के किनारे बैठिके चूसे। सो पाछें मथुरा में एक हाट ऊपर दोऊ जने सोए। सो दोऊन कों स्वप्न में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन भए। सो ये जागे।)

(तब वा रजपूत ने कही जो—ब्राह्मण-देव ? तुम ने कछू देख्यो ? तब वा ब्राह्मण ने कह्यो जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी ठाकुर कौ दर्शन भयो है। तब वा रजपूत ने वा ब्राह्मण सों पूछी जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु कहां बिराजत हैं ? तब वा ब्राह्मण ने कही जो—यहा तें सात कोस ऊपर श्रीगोवर्द्धन पर्वत है, तहां बिराजत हैं।)

(तब वा रजपूत ने ब्राह्मण सों कही जो—तू महा मूरख है, जो—एसे स्वरूप कों साक्षात दर्शन करि पाछें और ठौर क्यों भटकत है ? सो मैंने स्वरूप के दर्शन स्वप्न में पाए। सो मोसों रह्यो नाहीं जात है. जो—सवारे तू सगरे आम ले, और मैं तोकों रुपैया पांच देऊंगो जो—मोकों श्रीगोवर्द्धन-नाथजी के दर्शन कराइ दै। तब वा ब्राह्मण ने कही जो—आछो।)

(ता पाछें सवेरो भयो। तब वा रजपूत ने पचास आम वा ब्राह्मण कों दीने। तब वह ब्राह्मण मथुरा में अपने घर आइके अपने पास के हू आम सौ देके वा रजपूत के पास आइके दोउ जने चले। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की सैन आरती के दर्शन दोउ जनेन ने किए। सो श्रीनाथजी ने वा रजपूत कौ मन हरलीनो।)

(ता पाछें दर्शन होइ चुके। तब रजपूत ने अपने हथियार, कपडा, पांच रुपैया वा ब्राह्मण कों दिए, और दस रुपया और हते सो पास राखे। तब वह ब्राह्मण ने कही जो— मैं घर जाऊंगो। सो वह ब्राह्मण तो मथुरा अपने घर आयो।

(पाछें वह रजपूत एक धोवती पहिरे दंडोती सिला के पास ठाड़ो होइ रह्यो। सो इतने ही में श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर

कराइके श्रीगुसांईजी आपु पर्वत तें नीचे पधारे। तब रजपूत ने दंडवत करिके कही जो– महाराज ! मै बोहोत दिनन तें भटकत हतो, सो मेरो अंगीकार करि मोकों अपने चरण पास राखिये। तब श्रीगुसांईजी कहे जो–तुम पर कुंभनदास की कृपा भई है, तासों तिहारी यह दशा है, जो–तेरे बड़े भाग्य हैं।)

(सो तब श्रीगुसांईजी आपु अपनी बैठक में पधारि वा रजपूत कों नाम सुनायो, तब वा रजपूत ने दस रुपैया श्रीगुसांईजीकी भेट किये तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो- तू अपने पास रहन दे। क्यों ? जो–तेरे पास खरची नाहीं है. (तैने सब वा ब्राह्मण कों दीनो। तब वा रजपूतने दंडवत् करिके वीनती कीनी जो–महाराज ! अब मेरे रुपैयान सों कहा काम है ? मैं तो अब आपकी शरण

हूँ, जो टहल बतावोगे सो मैं करूँगो । पाछे वा रजपूत ने बिनती कीनी जो–महाराज ! पूर्व जन्म को मैं कौन हूँ, और कौन पुन्य ते मोकों आप को दर्शन भयो है ।)

(तब श्रीगुसांईजी आपु कृपा करि वा सों कहे जो– तुम पहले ब्रजमें गोप हते । सो तुम शस्त्र बांधिके श्रीनंदरायजी की गाइन के संग जाते, सो एक दिन तुमने सर्प मार्यो, सो अपराध तें तुमने या संसार में बोहोत जन्म पाए ।

(पाछें ये आम कुंभनदासने देखे सो मन करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों समर्पन किये । सो वा माली के सगरे आम कुंभनदासजी ने श्रीनाथजी कों अंगीकार करवाए । ता पाछें वा माली के पास तें दस रुपैया देके तुमने आम लिये, सो पचास तुमने राखे । तुमने वे महाप्रसादी आम लिए, और तुम

दैवी जीव हते, सो तिहारो मन फेरिके श्रीनाथजी में स्वप्न में दर्शन दियो । और वह ब्राह्मण दैवी जीव न हतो, सो वाकों स्वप्नमें श्रीनाथजी ने दर्शन दियो, परंतु तो हू वाकों ज्ञान न भयो । सो लीला में तेरो नाम 'नेना' हतो ।)

(अब तुम श्रीनाथजी की गाइन के संग शस्त्र बांधिके जायो करो, और श्रीनाथजी की रसोई में महाप्रसाद लेउ, जो–शस्त्र कपडा हम तुम कों देइंगे । और आज तुम व्रत करो, जो–कालि तुमकों समर्पन करावेंगे । तब वा रजपूत ने दंडवत कीनी ।)

ता पाछें दूसरे दिन श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी कौ शृंगार करि वा रजपूत कों न्हवाइ के श्रीनाथजी के साम्हे ब्रह्म सम्बन्ध करवाए । तब वा रजपूत की बुद्धि निर्मल होइ गई । ता पाछें वा रजपूत कों जूठनि

की पातरि धरी, पाछें शस्त्र देके श्रीगुसांईजी आपु वाको प्रसादी कपडा दिये, सो लेके घोडा ऊपर चढिके गाइन के संग गयो। सो वाकों मन श्रीगोवर्द्धनाथजी के स्वरूप में लग्यो, सो कछूक दिन में श्रीनाथजी गाइन में वा रजपूत कों दर्शन देन लागे। ता पाछें वह रजपूत वडो कृपापात्र भगवदीय भयो।)

* भावप्रकाश

सो या में यह जताए जो – कुंभनदासजी मानसी सेवा में भोग धरे। सो श्रीगोवर्धननाथजी आरोगे। सो महाप्रसादी आप लिये तें वा रजपूत के ऊपर भगवद् अनुग्रह भयो। तासों जो–भगवदीय अपने हाथ सों भोग धरत हैं, सो तो सर्वथा ही श्रीठाकुरजी प्रीति सों आरोगत हैं। सो महाप्रसाद अलौकिक होय तामें कहा कहनो ?

(ता पाछें वा रजपूत के दोइ बेटा हते सो वा रजपूत के पास आए। तब वा रजपूत ने अपने दोइ बेटान सों कह्यो जो–बेटा! आपुन तो सिपाही हैं, सो कहूँ लराई में वृथा

प्रान जाते, ता सों मो पर प्रभु ने कृपा करी है, तासों अब तुम यह जानियो जो–मेरो पिता मरि गयो। तासों अब तुम जाइके अपनो घर सम्हारो, हमारी बाट मति देखियो। हम तो नाहीं आवेंगे।)

(पाछें वा रजपूत के दोऊ बेटा अपने घर आए, और सब समाचार कहे जो–हमारो पिता वैरागी भयो है। तासों अब हमारो काम कहा है? पाछें सब घर के मोह छोडि के बैठि रहे।)

(या प्रकार महाप्रसाद तथा भगवदीयन कों दर्शन (जो) दैवी जीव होइ तिनकों होइ। सो यह सिद्धांत जताए।)

(सो वे कुंभनदास एसे भगवदीय हैं जो–सहज में आवन द्वारा रजपूत ऊपर कृपा किये। तासों भगवदीय जो–कृत्य करत हैं

सो अलौकिक जानिये । क्यों ? जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी भगवदीय के वश हैं ।)

(और कुंभनदासजी की स्त्री और पांचो बेटा नाम मात्र पाए, सो कुंभनदासजी के संग तें उद्धार भयो । और कुंभनदास की भतीजी, (जो) भाई की बेटी हती सो ब्याह होत ही विधवा भई, सो लौकिक संबंध यासों भयो ।) ❀

भावप्रकाश ❀

क्यो ? जो–मूल में दैवी जीव है । सो श्रीविशाखा जी की सखी है । सो लीला में याकौ नाम 'सरोवरि' है । याके मातापिता मरि गए यासों ये कुंभनदास के घर में रहती । लीला में विशाखाजी की सखी है । सो यहां (हू) कुंभनदास की आज्ञा में तत्पर । सो श्रीआचार्यजी की कृपा-पात्र और कुंभनदास (जैसे) भगवदीय कौ संग । तातें भतीजी कों हू श्रीगोवर्द्धननाथजी दर्शन देते, और सानुभाव जनावते ।

(वार्ता प्रसंग)*

(और एक समय श्रीगुसांईजी कौ जन्म-दिवस आयो। तब श्रीगोवर्द्धननाथजी अपने मन में विचारे जो—मेरो जन्म-दिवस श्रीगुसांई जी सब वैष्णवन सहित जगत में प्रगट किये। तासों मैं हू अब श्रीगुसांईजी कौ जन्म-दिवस प्रकट करूं।)

सो यह विचारिके जब पूस बदी ८ कूं रामदासजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करत हते, ता समय कुंभनदास शृंगार के कीर्तन करत हते,। और श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में हते, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी रामदासजी सों कहे जो—मेरे जन्म-दिवस कों श्रीगुसांईजी आपु बडौ उत्साह करत हैं, तासों मोकों श्रीगुसांईजी कौ जन्म-दिवस

*सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

माननो है । सो तुम सगरे मिलिके श्रीगुसांई-जी के जन्म-दिन कौ मंडान करो, जो-मोकों सामग्री आरोगावो । सो कालि जन्म दिन है ।)

(तब रामदासजी ने बिनती कीनी जो-महाराज ! कहा सामग्री करें ? तब श्रीगो-वर्द्धननाथजी कहे जो-जलेबी रस-रूप करो । तब रामदासजी, कुंभनदास ने कह्यो जो-बोहोत अछो ।)

(पाछें रामदासजी सेवा सों पहोंचिके सगरे सेवकन कों भेले करिके कह्यो जो-सवारे श्रीगुसांईजी को जन्म-दिवस है, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सामग्री करनी । तब सदू पांड़े ने कही जो-घी चून चाहिये इतनो मेरे घर सों लीजियो । पाछें कुंभनदास तत्काल घर आए । तब घर तो कछु हतो नाहीं, सो दोइ पाडा और दोइ पडिया एक

ब्रजवासी के पास बेचिके पांच रुपैया लाइके कुंभनदास ने रामदासजी कों दिये । और सब सेवकन ने एक रुपैया, कोईने दोय रुपैया एसे दिये, सों ताकी खांड मंगाये, और घी मेंदा सदू पांड़े लाए । सो सगरी रात्रि जलेबी किये ।)

(ता पाछें प्रातःकाल भयो । तब रामदासजी अभ्यंग कराइके केसरी पाग, केसरी वस्त्र, वागा कुलह श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल सों अपने श्रीहस्त सों सिद्ध करिके पठाए हते, सो धराए । पाछें भोग धरे ।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कुंभनदास सों कहे जो—तुम श्रीगुसांईजी की वधाई गावो । तब कुंभनदास वधाई गाए । सो पद—

राग देवगंधार—'आजु वधाई श्रीवल्लभद्वार०' ।

राग सारंग—'प्रकट भये श्रीवल्लभ आप०' ।

(सो या भांति सों कुंभनदास ने बोहोत बधाई गाई, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धन-नाथजी बोहोत प्रसन्न भए । और यहां श्री-गुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी कों अभ्यंग कराइ, केसरी बागा कुलह× धराइ, राजभोग धरिके श्रीनाथजीद्वार पधारे । तब रामदासजी कहे जो--राजभोग आए हैं, तब श्रीगुसांईजी आपु स्नान करिके ऊपर मंदिर में पधारे, तब समय भए भोग सराइवे जाइके देखे तो जलेबी के अनेक टोकरा धरे हैं ।)

(तब श्रीगुसांईजी आपु रामदासजी सों पूछे जो-आज कहा उत्सव है जो-यह

× कुलह का शृंगार श्रीगुसांईजीने प्रकट किया है । (देखो भावभावना).

१ श्रीगुसांई विशेष भगवदुपयोगी कार्य विना श्रीगिरिराज या गोकुल में लगातार तीन रात्रि उपरांत निवास नहीं करते थे । इसी लिये आप नित्य प्रति गोकुल से गोवर्द्धन और गोवर्द्धन से गोकुल सेवार्थ एक एक रात्रि व्यतीत कर पधारते थे ।

सामग्री इतनी आरोगाए हो ? तब रामदास-जी ने कही जो--आज आप को जन्म-दिन श्रीगोवर्द्धनधर माने हैं, और सब सेवकन सों सामग्री कराई है। तब श्रीगुसांईजी आपु भोग सराइ आरती किये। ता पाछें अनोसर कराइके आपु अपनी बैठक में पधारे और बिराजे। तहां रामदासजी सों बुलाइके श्रीगुसांईजी आपु पूछे जो-सामग्री बोहोत है, और सेवक (मंदिर के) तो थोरे हैं और निष्किंचन हैं, सो सामग्री कौन प्रकार सों भई है ?)

(तब रामदासजी कहे जो--महाराज ! घी, मेंदा तो सदू पांड़े दिये, और पांच रुपैया कुंभनदासजी दिये हैं। और ये वैष्णव कोई एक, कोई दोइ, जो जासों बनि आयो सो दियो, सो एसे रुपैया २१) भए, ताकी खांड आई। सो श्रीप्रभुजी ने अंगीकार कीनी।)

(इतने में कुंभनदास ने आइके श्रीगुसांईजी कों दंडवत कीनी। तब कुंभनदास सों श्रीगुसांईजी पूंछे जो–कुंभनदास! तुम पांच रुपैया कहां सों लाए? जो–तिहारे घर की बात तो हम सब जानत हैं। तब कुंभनदास कहे जो–महाराज! मेरो घर-कहां है? मेरो घर तो आप के चरणारविंद में है, जो–यह तो आप को है। दोइ पाडा और दोइ पडिया अधिक हती, सो बेचि दीनी है। अपनो शरीर, प्राण, घर, स्त्री, पुत्र बेचिके आपके अर्थ लगे, तब वैष्णव-धर्म सिद्ध होय जो–महाराज! हम संसारी गृहस्थ हैं, सो हम सों वैष्णव धर्म कहा बने? यह तो आपकी कृपा, दीन जानिके करत हो।)

(सो यह कुंभनदास के वचन सुनिके श्रीगुसांईजी को हृदो भरि आयो। तब आपु कहे जो–श्रीआचार्यजी आपु जाकों

कृपा करिके ऐसी दैन्यता देंइ सो पावै। सो तब श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा इनके वस रहें।)

(सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदास की बोहोत सराहना करें। सो वे कुंनदासजी एसे कृपा-पात्र हते।)

वार्ता प्रसंग *

(और एक समय कुंभनदास ने श्री-आचार्यजी सों पुष्टिमार्ग को सिद्धान्त पूछ्यो। तब श्रीआचार्यजी आपु कृपा करिके चौरासी अपराध, राजसी, तामसी, सात्विकी भक्तनके लच्छण और प्रातःकाल तें सैन पर्यन्त की सेवा को प्रकार कहे, बाललीला किशोर लीला को भाव कहे। पाछें कहे जो–जा पर श्रीगोर्द्धन-नाथजी की कृपा होइगी सो या काल में पूछेंगे और करेंगे। जो-तुम सरीखे भगवदीय

* सं० १६६७ वाली प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

पूछेंगे और करेंगे। आगे काल महा कठिन आवेगो, और न कोई पूछेगो और न कोई कहेगो।)

(सो या प्रकार सों श्रीआचार्यजी आपु कुंभनदास सों कहे।) *

* भावप्रकाश

सो काहेतें ? जो सिंघिनी कौ दूध सोनेके पात्र बिना रहै नाहीं। तैसे ही भगवद्-लीला कौ भाव और भगवद्-धर्म भगवदीय बिना और के हृदय में रहै नाहीं।

वार्ता प्रसंग *

(और एक दिन कुंभनदास ने श्रीगुसांई-जी सों बिनती कीनी जो—महाराज ! मेरे घर में स्त्री है और सात में तें पांच बेटा हैं, और सात बेटान की बहू हैं। परंतु भगवद्-भाव काहु को दृढ नाहीं है। और एक भतीजी है सो ताकौ भगवद्-भाव दृढ है, ताकौ कारन कहा ?)

* सं० १६९७ वाली प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

(तब श्रीगुसांईजी आपु सगरे वैष्णवन कों सुनाइके कुंभनदास सों कहे जो–कुंभनदास ! तुम मन लगाइके सुनियो, जो–सावधान होउ । मैं एक पुरान कौ इतिहास कहत हों । तब सगरे वैष्णाव सावधान भए ।)

(पाछें श्रीगुसांईजी कहे, जो–एक ब्राह्मण हतो ताके एक कन्या हती । सो जब वह कन्या ब्याह लाइक भई, तब ब्राह्मण ने एक और ब्राह्मण कों बुलाइके कह्यो जो–मेरी कन्या कौ वर ठीक करिके, आछो ठिकानो देखिके सगाई करि आवो । तब वह ब्राह्मण तो सगाई करिवे कों गयो । ता पाछें दूसरो ब्राह्मण आयो. सो वाहू सों एसे ही कह्यो । तब दूसरो ब्राह्मण हू सगाई करिवे कों गयो । पाछें तीसरो ब्राह्मण आयो, सो वाहू सों एसे ही कह्यो । सो तीसरो हू ब्राह्मण सगाई करिवे गयो । पाछें चौथो ब्राह्मण

आयो, सो वाहू सों एसे ही कह्यो। सो तब चारों ब्राह्मण चार दिशान में भगवद् इच्छातें गए। सो दोइ २ तीन २ कोस ऊपर एक गाम हतो, तहां न्यारे २ गामन में चारों ब्राह्मण ने सगाई करी, सो एक महीना पीछे सगाई ठेराई। पाछें वरन कों तिलक करि के चारों ब्राह्मण या ब्राह्मण की आगे आइके कह्यो जो--सगाई करि तिलक करि आए हैं। सो एक महीना पीछे प्रातःकाल की लगन है। या प्रकार चारों ब्राह्मणन ने कही।)

(तब बेटी के पिता ने कह्यो जो-यह तुमने कहा कियो? जो-बेटी तो मेरी एक है। सो तुम चारों जने चार वर करि आये सो कैसे बनेगी? तब उन चारों ब्राह्मणन ने कही जो—तैनें कह्यो तब हम ने सगाई करी है। जो--महीना पीछे बेटी को व्याह न करेगो तो हम तेरे ऊपर जीव देंइगे। जो—

हम तिलक करि सगाई करी, सो कबहू छूटे नाहीं । तब वा ब्राह्मण ने कह्यो, जो--भलो, महीना है सो ता वखत कौं दीखेगी, जो–कहा होनहार है ? तब चारों ब्राह्मण ने कही जो--जब एक दिन ब्याह कौ रहेगो, सो तब हम ब्याह करावन आवेंगे । सो यह कहिके चारों ब्राह्मण अपने घर कों गए ।)

(पाछें या बेटी के पिता कों महाचिंता भई । जो--अब मैं कहां निकसि जांऊ ? जो--प्रान छूटेतोऊ कन्या की खराबी है । तासों अब मैं कहा करूं ?)

(सो मारे चिंता के खान-पान सब छूटि गयो; सो ऐसें चारि दिन भूखे गए । ता पाछें पांचमे दिन नदी-ऊपर यह ब्राह्मण संध्यावंदन करत हतो, सो एक भगवदीय फिरत २ आइ निकस्यो, सो नदी में न्हायो ।

इतने ही में यह ब्राह्मण महादुःख सों पुकारिके रोयो । सो भगवद्-भक्त कौ हृदय कोमल, सो वा ब्राह्मण कौ दुःख सहि नाहीं सकै । तब उन भगवद्-भक्तन ने वा ब्राह्मण सों पूछी जो - ब्राह्मण ! तुम कों एसो कहा दुःख है ? जो-तैने पुकारिके रुदन कियो है ।)

(तब वा ब्राह्मणने अपनी सब बात कही । यह सुनिके वा भगवद् भक्त ने कही जो--मैं तो एक ठिकाने रहत नाहीं हों, परंतु तेरे लिये या नदी पे बैठ्यो हूं । जो--मोकों प्रकट मति करियो । और जा दिन कौ ब्याह होइ तासों एक दिन पहिलें मोकों आइके कहियो, जो--ठाकुरजी भली करेंगे । और अब तुम घर जाइके खान-पान करो । तब वा ब्राह्मण ने कह्यो जो— भलो ।)

(पाछें जब ब्याह को एक दिन रह्यो, सो प्रातःकाल को समय हतो । तब वा

ब्राह्मण वा भगवद्-भक्त के पास आयो, और बिनती कीनी जो—प्रातःकाल को ब्याह है, तातें अब कछू उपाय बतावो।)

(तब वा वैष्णव ने कही जो--संध्या कों आइयो। पाछे सांझकों ब्राह्मण वा भगवद्-भक्त की पास गयो। तब वा भक्त ने कही जो—तिहारे आगे जो पशु पक्षी आवें सो तिनको तुम पकरि लीजो। तब वह ब्राह्मण नदी के ऊपर बैठ्यो। सो बिलाड़ी आई सो पकरी, ता पाछें एक कुत्ती आई सो पकरी। पाछें एक गदही आई, सो पकरी। सो तब वा भक्त ने कही जो—इन तीन्योंन कों एक कोठा में मूंदि देऊ। सो कोठा में मूंदि दिए। तब वा भक्त ने कही जो–तेरी बेटी सोय जाय तब वाहू कों यामें मूंदि दीजियो। ता पाछें बेटी सोई, तब वा बेटी कों खाट-सहित

कोठा में मूंदिके ताला लगाइके कहे जो—ब्याह की तैयारी करो। सो तब प्रहर रात्रि गये चारों वर आए। पाछें सगाई करिवे वारे चारों ब्राह्मणन नें समाधान करिके उनकों बैठाए। इतने में ब्याह को समय भयो तब ब्राह्मण ने भगवद्-भक्त सों कही जो—अब ब्याह को समो भयो है। तब भक्त ने कह्यो जो—कोठरी खोलिके चारों वरन कों चारों कन्या देऊ, और ब्याह करि देउ।)

(पाछें वह ब्राह्मण तालो खोलिके देखै तो चारों कन्या एक रूप, एक वय, बराबरी पहचानि न परै। सो चारों कन्या चारों वरन कों ब्याहि, बिदा करि दीनो।)

(पाछें चारों ब्राह्मणन कों दक्षिणा दे बिदा किए। पाछें भगवद्-भक्त ने कही जो—

हम चलेंगे। तब ब्राह्मण ने पांइन परिके कह्यो जो—तुम ने मोकों जीव-दान दियो है, सो यह घर तिहारो है। तातें आपकों जो-चहिये सो लेउ। तब भक्त ने कही जो—हम कों कछू चहियत नाहीं है। तेरो दुख श्री-ठाकुरजी ने दूरि कियो है, सो यही बड़ी बात भई है।)

(तब वा ब्राह्मण ने पूछी जो—चारों कन्या एक सरखी भई है, सो अब मोकों खबरि कैसे परै जो-मेरी बेटी कौनसे वर कों ब्याही है? सो वा बेटी कौं बुलावनी होइ तो कैसे खबरि परेगी? तब वा भक्त ने कही जो—तेरे चारों जमाई हैं सो उनही सों बेटीन के लच्छन पूँछि लीजियो, तब तोकों खबरि परेगी। जो—मनुष्य के लच्छन होंइ सोई तेरी बेटी जानियो। सो यह कहिके भगवद्-भक्त तो चले गए।)

(तब ब्राह्मण ने कछुक दिन पीछे चारों जमाईन कों घर बुलाए, और चारों जमाईन कों रसोई करवाई । सो एक जने कों भोजन कों बैठायो तब भोजन करत में वासों पूंछी जो–मेरी बेटी अनुकूल है के नाहीं ? वामें कैसे लच्छण हैं ? तब उनने कही जो–सब गुन हैं परि कुत्ती की नांइ भूसत है । जो–जीभ ठिकाने नाहीं, और आचार क्रिया नाहीं है, तासों प्रिय नाहीं है ।)

(पाछें दूसरे जमाई कों बुलायो । वासों पूंछी, जो–कहो, मेरी बेटी के लच्छन कैसे है ? तब वाने कही जो–तिहारी बेटी में आछे लच्छण है परंतु चटोरी है, जो ठाकुर के लिये जो-वस्तु लावें सोइ वह चोरिके खाइ जाय । बिलाई की दशा है, जो–पांच घर कौ खाए बिना चैन नाहीं परै ।)

(ता पाछें तीसरे जमाई कों बुलाइके

पूछी जो--मेरी बेटी के लच्छण कैसे हैं ? तब वाने कही जो--तिहारी बेटी में सब लच्छन आछे हैं, परंतु घर में आवे जाइ, तब गदही की नांई भूसे, सदा मलीन रहै। और जाकों ताकों तथा मोहू कों गदही की नांइ दोउ पाउन सों लात मारे है।)

(पाछें चौथे जमाई कों बुलाइके पूछी जो--मेरी बेटी के लच्छण कहो। तब उनने कही जो--तिहारी बेटी की कहा बात है ? जो-मानो लच्मी है, कोऊ देवता है। जो--सब कों प्रिय वचन, मीठो बोलनो, उत्तम क्रिया, आचार-विचार, पति, गुरु, ठाकुर और वैष्णव में प्रीति।

सो तब ब्राह्मण ने जानी जो--यही मेरी बेटी है। ता पाछें वाही बेटी जमाई कों बुलावतो।)*

*ऐसी कितनीही प्राचीन गाथाओं के द्वारा श्रीआचार्य चरण प्रभुचरण और श्रीगोपीनाथजी अपने सेवकों को साहित्य संबंधी उपदेश देते थे। श्रीगोपीनाथजी की ८ वार्ताएँ विद्या-विभाग में विद्यमान हैं।

(सो तासों कुंभनदास ! जा मनुष्य में वैष्णव के लक्षण हैं सोई मनुष्य है×। और कहा भयो जो-मनुष्य देह भई ? जो–रावण, कुंभकरण खोटी क्रिया तें राक्षस कहाए। यासों जाकी जैसी क्रिया, सो वाकों तैसो ही रूप जाननो। जो–भतीजी बड़ी भगवदीय हैं, सोई मनुष्य है। तासों तिहारे संग तें कृतार्थ होयगी।)

(सो या प्रकार श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदास आदि सब वैष्णवन कों समुझाए। सो ये कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपा-पात्र भगवदीय हते।)

वार्ताप्रसंग *

(पाछें कुंभनदास की देह बोहोत अशक्त भई। सो तहां आन्योर की पास संकर्षण कुंड

× देखो एक ब्राह्मण की वार्ता–जिनकों चाचाजीने उपरणा दिया था। (२५२ वै. की वार्ता।)

* सं० १६९७ की प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

ऊपर कुंभनदास आइके बैठि रहे। तब चत्रभुजदास ने कही जो—गोद में करिके तुम कों जमुनावता गाम में ले चलें ? तब कुंभनदास कहे जो-- अब तो दोइ चार घड़ी में देह छूटेगी। तासों अब तो मैं इहांई रहूंगो।)

(तब चत्रभुजदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के राजभोग आरती के दर्शन किये। तब श्रीगुसांईजी आपु चत्रभुजदास सों पूछें जो-- कुंभनदास कैसे हैं ? और कहां है ? तब चत्रभुजदास ने कही जो-- संकर्षणकुंड ऊपर बैठे हैं। तब श्रीगुसांईजी आपु कुंभनदास के पास पधारे।)

(पाछें श्रीगुसांईजी आपु पधारिके कुंभनदास सों कहे जो--कुंभनदास ! या समय कौन लीला में मन है ? सो कहो। ता समय कुंभनदास सों उट्यो तो

गयो नाहीं, सो माथो नवाइ मन सों दंडवत करि यह कीर्तन गा ए। सो पद :—

राग सारंग–१ 'बिसरि गयो लाल करत गोदोहन'।
२ 'लाल! तेरी चितवन चित हीं चुरावत'।

(सो ये पद कुंभनदास ने गाए। तब श्रीगुसांईजी आपु पूछें जो– कुंभनदास! यह लीला तुम सुनाए परि अंतःकरण को मन जहाँ है, सो बतावो।) तब कुंभनदास ने श्रीगुसांईजी के आगे यह पद गायो सो पद—

राग विहागरो–१ 'तोहि मिलन कों बोहोत करत है'
२ 'रसिकनी रस में रहत गडी'

(यह पद गाइके कुंभनदास देह छोडि निकुंज लीलामें जाइके प्राप्त भए। पाछें श्रीगुसांईजी आपु गोपालपुर में पधारे। सो चत्रभुजदास आदि सब बेटा-

नने कुंभनदास कौ संस्कार कियो। सो कुंभनदास लीला में आन्योर के पास गाम है, तहां द्वार पर प्राप्त भए।

(पाछें श्रीगुसांईजी उत्थापन तें सैन पर्यंत की सेवा सों पोहोंचे। परंतु काहू वैष्णव सों बोले नाहीं, उदास रहे। तब रामदासजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो--महाराज! ऐसे क्यों हो? तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों कहे जो–एसे भगवदीय अंतर्धान भए। अब भूमि में भक्तन को तिरोधान भयो। सो या प्रकार श्रीगुसांईजी अपने श्रीमुख सों कुंभनदास की सराहना किये।

(सो वे कुंभनदासजी श्रीआचार्यजी के एसे कृपा-पात्र हते, जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथ-जी तथा श्रीगुसांईजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता को पार नाहीं। इनकी वार्ता अनिर्वचनीय है, सो कहां ताईं लिखिये।)

(४) श्रीकृष्णदासजी

—*****—

अब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक कृष्णदासजी कायथ, अधिकारी, (सो ये अष्टछाप में हैं,) तिनके पद गाइयत हैं तिनकी वार्ता

भावप्रकाश—

सो ये कृष्णदासजी लीला में ऋषभ सखा श्रीठाकुरजी के अंतरंग, तिनकौ ये प्राकट्य हैं। सो दिन की लीला में तो ऋषभ सखा हैं, और रात्रि की लीला में श्रीललिताजी अंतरंग सखी हैं। सो ललिता हू चार रूप, आपु तो मध्या और श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीस्वामिनीजी की लीला-निकुंज संबंधी अनुभव करें। और श्रीललिताजी कौ दूसरो स्वरूप-ऋषभ सखा होइके वन में संग जांइ, दिवस की लीला-रस कौ अनुभव करें। और तीसरो-स्वरूप दामोदरदास हरसानी होइके श्रीआर्यजी के संग सदा रहते, तिनसों श्रीआचार्यजी आपु 'दमला' कहते। सो तो दामोदरदासजी की

(आधिदैविक मूल स्वरूप)

वार्ता में भाव विस्तार करिके लिख्यो है। और ललिताजी कौ चौथो स्वरूप-कृष्णदास। सो श्रीगोवर्द्धधर के पास रहिके अधिकार किये। सो श्रीगिरिराज के आठ द्वार हैं, तामें 'विलछू' वरसाने सन्मुख-द्वार एक बारी है। सो ता मारग होइके श्रीगोवर्द्धननाथजी रास करन कों पधारते। सो ता द्वार के मुखिया हैं।

(कृष्णदास का भौतिक इतिहास)

सो ये कृष्णदास गुजरात में एक 'चिलोतरा' गांव है। तहां एक कुंनवी के घर जन्मे। सो वह कुनवी वा गांम कौ मुखी हतो, सो वा गांम में हाकिमी करतो। जा समय कृष्णदास या कुनवी पटेल के घर जन्मे, सो ता समय या कुनवी ने अनेक पंडित ब्राह्मण गांम गांम में तें बुलाइके भेले करि उनसों पूछ्यो, जो-मेरे यह बेटा भयो है, सो याके सगरे लच्छण कहो। और या बेटा की आरबल कहो, सो मैं वाकों जनम भरि मैं जीवों तहां ताईं खरची दऊं।

तब सगरे ब्राह्मणन ने या कुनवी सों कह्यो जो-हमकों चाहे तू कछू देइ, चाहे मति देइ, जो-यह तेरो बेटा तो श्रीभगवान कौ भक्त होइगो। जो-कृष्णदास याकौ नाम होइगो और यह तिहारे घरमें न रहेगो।

यह सुनिके वह पटेल कुनबी बोहोत उदास भयो, और दान पुन्य बोहोत कियो और कृष्णदास नाम धरयो।

पाछें कृष्णदास पांच वरस के भए तबही तें भगवद्-वार्ता कथा में जान लागे। सो मातापिता न जान देंइ तो रोवें, खानपान नाहीं करें। तब मातापिताने कही जो--याकों जान देऊ। जो यह अबही तें वेरागीन सों प्रीति करत है, सो यह वेरागी होइगो। जो-मोसों ब्राह्मणन ने आगे कह्यो हतो, तासों या वेटा में प्रीति करि मोह मति लगावो। सो यह सबकों दुःख देइगो। पाछें कृष्णदास जहां-तहां कथा सुनते।

एसे करत कृष्णदास बरस बारह-तेरह के भए। तब एक बनजारा एक दिन गाम के बाहिर आइके उतरयो, सो किरानो माल सब 'चिलोतरा' गाममें बेचिके रुपैया चौदह हजार किये। सो रात्रि कों चोरन ने कृष्णदास के पिता के भेद में, बनजारा के सब चौदह हजार रुपैया लूटे। सो चौदह हजार रुपैयान में तें तेरह हजार रुपैया कृष्णदास के पिता ने राखे। सो यह बात कृष्णदास ने जानी.

तब कृष्णदास ने अपने पिता सों कह्यो जो-तुमने बुरो काम कियो है। क्यों? जो--तुमने रुपैया पराये बनजारा

के लुटाइके लिये। सो तुम वाकों दे डारोगे तब तिहारो कल्याण होइगो। तब पिता ने कृष्णदास कों मार्‍यो, और कह्यो जो–तू काहू के आगे मति कहियो। जो–हम गाम के हाकिम हैं, सो हाकिम कौ यही काम है। तब कृष्णदास ने कह्यो जो–अब तुम खराब होउगे। सो यह कहिके चुप होइ रहे।

जब सवारो भयो, तब वह बनजारा चौंतरा ऊपर रोवत आयो। सो आइके कृष्णदास के पिता सों कह्यो जो–हमकों चोरनने लूट्यो है। तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो जो–तू गाम में क्यों न रह्यो? जो-अब हमसों कहा कहत है? सो एसे कहिके वा हाकिम ने अपने मनुष्यन सों कही जो–या बनजारा कों गाम तें बाहिर काढ़ि देउ, जो-सवारे ही रोवत आयो है। तब मनुष्यन ने काढ़ि दियो। सगरी पूँजी गई, सो यह महाविलाप करै। सो कृष्णदास दूरितें दोरिके वाके पास आए। तब कृष्णदास कों दया आइ गई। तब कृष्णदास मन में विचारे जो–पिता कौ बुरो होइ तो सुखेन होउ, परन्तु या बनजारा परदेशी कौ भलो करनो।

पाछें कृष्णदास वा बनजारा के पास आइके कहे जो–तू एकांत में चलिके बैठ, जो–मैं तोसों एक बात

कहुं। पाछें एकांत में बनजारा कों ले जाइके कृष्णदास ने कह्यो, जो–तेरो माल रुपैया सब गयो, मेरो पिता यहां कौ हाकिम है, सो-ताने चोरी कराई है। सो हजार रुपैया चोरन कों देके सगरो माल मेरे पिता ने राख्यो है, तासों या गाम में तेरी न चलेगी। तासों तू जाइके राजनगर (अहमदाबाद) राजा के यहां फरियाद करियो। सो मोकू तू साची में बुलाइ लीजियो। परन्तु मेरे पिता के प्रान हू न जाय, और चोरन के हू प्रान न जांइ, और तेरो भलो होइ जांइ सो-एसो तू करियो। सो या भांति राजा-पास मोकों बुलाइयो, मैं सब बताइ देऊंगो। तासों तेरो माल रुपैया सब या भांति सों मिलेंगे।

पाछें वा बनजारा ने राजनगर में आइके राजा के पास सब बात कही। और कह्यो जो–पिता ने तो चोरी कराई और बेटा ने बतायो। परन्तु कोई के प्राण न जांइ, और मेरी वस्तु मिलै, एसो उपाय करो।

तब राजा ने कह्यो -धन्य वह बेटा, जो–पिता की चोरी बताई, सो वाकूं तो मैं राखूंगो। सो यह कहिके पचास मनुष्य और सिपाई बुलाइके कह्यो जो तुम 'चलोतरा' में जाइके उहां के हाकिम कों बेटा-सहित पकरि लावो। सो या भांति सों जावो जो–कोई जानें नाहीं। सो वे पचास मनुष्य आए, सो लगे रहे।

एक दिन संध्या समय वह हाकिम घर के द्वार पर ठाढ़ो हतो और वाकौ वेटा हू ठाढ़ो हतो। सो राजा के मनुष्य वा हाकिम कों पकरि के राजनगर में लाए। तब राजा नें यासों पूछों जो--तू हाकिम होइ के परदेसी को लूटत है? जो--या बनजारे को माल रुपैया देउ। तब वा हाकिम ने कही जो--तुमसों, कोइने झूठे ही लगाई होइगी, मैं तो या बात में जानत ही नाहीं हूं। तब वा राजाने कह्यो जो--तेरो वेटा सौंह खाइके कहे सो सांचो। तब पिता ने कही जो-बेटा कहि देइ तो सांच है। तब राजा ने कृष्णदास सों पूंछी जो--तू सांच बोलियो।

तब कृष्णदास ने वा राजा सों कही जो-जीव है, तासों चूक्यो तो सही। जो हजार रुपैया चोरन कों दिये और तेरह हजार रुपैया मेरे पिताने राखे हैं। तासों मैंने वाही समय पिता कों समुझायो, परन्तु मान्यो नाहीं, सो ताकौ फल पायो। परन्तु यासों माल रुपैया ले लेहु, और यासों कछु कहो मति।

तब कृष्णदास के पिता सों राजाने कही जो--अजहू चेत, नातर तेरे प्राण जाइगें। तब कृष्णदास कौ पिता बोल्यो जो--काम तो बुरो भयो है। परन्तु या बनजारा कों मेरे संग करि देउ, सों याको सब

रुपैया घर तें दउंगो । तव राजा ने दोइसौ मनुष्य संग करिके वनजारा कों और कृष्णदास के पिता कों घर पठायो । और कृष्णदास सों वा राजा ने कह्यो जो--तुम मेरे पास रहो, जो--तुम सतवादी हो । तब कृष्णदास कहे जो--मोकों राखिके तुम कहा करोगे ? मैं सांच कहूंगो, सो सबकों बुरो लगूंगो । जो--आज कौ समय तो ऐसो है। तासों मैं तो बेरागी होउंगो जो--मैं पिता के काम कौ नाहीं रह्यो ।

सो या प्रकार वा राजा ने कृष्णदास क राखिबे कौ बोहोत जतन कियो । परि कृष्णदास रहे नाहीं, पाछें पिता के संग घर आए । तब पिता ने चोरन कों बुलाइ के सब पुत्र के समाचार कहे, जो--या पुत्र ने हमारी खराबी करी है, तासों हजार रुपैया लावो नातर तिहारे और हमारे प्राण जाइगें । तब उन चोरन ने हजार रुपैया लाइ दिये । सो तेरह हजार घर में सों लेके वा बनजारा कों चौदह हजार रुपैया दिये, और माल लूट कौ देके वा बनजारा कों विदा कियो

ता पाछें वा राजा ने दूसरो हाकिम 'चिलोतरा' गांम में पठायो । तब कृष्णदास के पिता ने कह्यो जो--पुत्र ! तेरो एसो बुरो कर्म भयो सो हाकिमी हू गई, और आयो करथो द्रव्य हू गयो । तब कृष्णदासने पितासों कही

जो--पिता ! तैने एसो बुरो कर्म कियो हतो जो--येहू लोक जातो और परलोक हू बिगरतो, जो--जीव तो बच्यो। सो हाकिमी छूटी सो तो आछो भयो, जो--हाकिमी होती तो और पाप कमावते।

तब पिता ने कह्यो जो--तू वा जन्म कौ फकीर है। वासों तेनें हमकों हू फकीर कियो है। अब तेरे मन में कहा है ? तब कृष्णदास ने कही जो--अब तुम मोकों घर में राखोगे तो फकीर होउगे, यातें मोकों बिदा ही करो। तब पिता ने कही जो--तू कछू खरची ले घर में तें कहूं दूरि चल्यो जा, न तोकों देखेंगे, न दुख होइगो।

तब कृष्णदास पिता कूं नमस्कार करिके उठि चले। पाछें मन में विचारे जो--ब्रज होइ सगरे तीरथ करनो। तब कछूक दिन में कृष्णदास श्रीमथुराजी में आइके विश्रांतघाट न्हाइके ब्रज में निकसे, तब फिरते-फिरते श्रीगोवर्द्धन आए। सो तहां सुनी जो--देवदमन कौ मंदिर बन्यो है जो--अब दोइ चारि दिन में विराजेंगे, सो ब्रजवासीन कों बडो आनंद होइगो। देवदमन जब तें बाहिर प्रकटे जो- श्रीगिरिराज श्रीगोवर्द्धन में तें, सबन कों सुख दियो है, और सबन के मनोरथ पूरन करत हैं।

तव यह सुनिके कृष्णदास अपने मन में बिचारे जो-मैं हूं देवदमन के दर्शन करूं। सो तब आइके कृष्णदास ने देवदमन के दर्शन किये, सो श्रीआचार्यजी आपु राज-भोग आरती किये। सो दर्शन करत ही कृष्णदास कौ मन श्रीगोवर्द्धनधर ने हरिलियो। सो कृष्णदास की ओर श्रीगोवर्द्धनधर देखि रहे।

पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीआचार्यजी महाप्रभुन सों कहे जो-यह कृष्णदास आयो है, सो बोहोत दिन कौ बिछुरयो है, सो मैं याकों देखत हों। तब कृष्णदास के पास आइके श्रीआचार्यजी कहे जो-कृष्णदास ! तू आयो ! तब कृष्णदास नें दंडवत करिके विनती कीनी जो--महाराज ! आपु की कृपा तें आयो हूं, तासों अब मोकों शरण राखो।

तब श्रीआचार्यजी कहे जो-जाउ, वेगि न्हाइ आवो, जो-तेरे साम्हें श्रीगोवर्द्धननाथजी देखि रहे हैं, तासों वेगि आइ जावो। तब कृष्णदास दौरिके रुद्रकुंड में न्हाइ आए, पाछें कृष्णदास श्रीआचार्यजी के पास मंदिर में आए। तब श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास कों श्रीगोवर्द्धननाथजी के

सन्निधान बैठाइके नाम-समर्पन कराए। सो कृष्णदास दैवी जीव है, सो तत्काल सगरी लीला कौ अनुभव भयो। सो ताही समय कृष्णदास ने यह कीर्तन गायो। सो पदः—

राग सारंग—। 'वल्लभ पतित-उधारन जानो०'।

सो यह पद कृष्णदास ने गायो, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बोहोत प्रसन्न भए। ता पाछें श्रीआचार्यजी आपु श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ अनोसर कराए।

ता पाछें मंदिर सिद्ध भयो, सो तब सुंदर अक्षय-तृतीया कौ दिन देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों नये मंदिर में पाट बैठाए। तब पूरनमल्ल के सब मनोरथ सिद्ध किये।

तब श्रीआचार्यजी आपु सदूपांडे कों बुलाइके कहे जो-मंदिर तो बड़ो भयो, जो--श्रीगोवर्द्धननाथजी बिराजे। परंतु अब इनकी सेवा कों मनुष्य ठीक कर्यो चाहिये, तातें तुम सेवा करो। तब सदूपांडे ने विनती कीनी जो--महाराज! हम तो व्रजवासी हैं, जो—आचार-विचार सेवा की रीति कछू समुझत नांही हैं, और घर के अनेक काम हैं। तासों आपु आज्ञा देउ तो राधाकुंड ऊपर बंगाली रहत हैं, सो अष्ट प्रहर भजन करत हैं। तासों उनकों राखो तो बुलाइ लाऊं। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे,

जो--बुलाइ लावो । सो सदूपांडे बंगाली बीस-पचीस बुलाइ लाये । तब रुद्रकुंड ऊपर झोपरी बनवाइ दीनी, और श्रीगोबर्द्धननाथजी की सेवा दीनी । और कृष्णदास कों भेटिया किये, जो--तुम परदेश तें भेट लाइके बंगालीन कों दीजो, सो या भांति सों सेवा करोगे ।

या प्रकार सब बंगालीन कों रीति-भांति बताइके सेवा सोंपी । और कृष्णदास परदेस तें भेट ले आवते सो बंगालीन कों देते । सो रामदास चोहान रजपूत जब नयो मंदिर बन्यो, तब देह छोड़िके लीला में जाइके प्राप्त भए । तब सगरी सेवा बंगाली करते ।

सो कृष्णदास एक बेर श्रीद्वारिका गए, सो श्रीरणछोडजी के दर्शन करिके तहां तें चले (सो एक बैष्णव कृष्णदास के संग हतो) सो आवत मार्ग में मीराबाई को गाम आयो, सो मीराबाई के घर गए । तहां हरिबंस व्यास आदि देकें स्वामी और बिशेष बैष्णव हते । सो काहू कों आए दस दिन भए हते, काहू कों आए पंद्रह दिन भए हते, परि

तिनकी बिदा न भई हती (और भेट के लिये बैठे हते)

तब कृष्णदास ने तो आवत ही कह्यो जो- हों तो चलूंगो। तब मीराबाई ने कह्यो जो- बैठो (कछुक दिन कृपा करिके रहो। तब कृष्णदास ने कही जो- हमारें तो जहां हमारे वैष्णव-श्रीआचार्यजी के सेवक- होंइगे, सो तहाँ रहेंगे। और अन्यमार्गीय के पास हम नाहीं रहत हैं।) तब कितनीक मोहर❀ मीराबाई श्रीनाथजी की भेट कों देन लागी, सो कृष्णदास ने न लीनी, और कह्यो जो-- तू श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवक नाहीं, तातें तेरी भेट हम हाथ सों न छुवेंगे।

ऐसें कहिके कृष्णदास वैसे ही उठि चले। सो जब आगें आए तब साथ के वैष्णवन ने

❀पाठ भेद-११ मोहर।

जो--बुलाइ लावो । सो सदूपांडे बंगाली बीस-पचीस बुलाइ लाये । तब रुद्रकुंड ऊपर झोपरी बनवाइ दीनी, और श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा दीनी । और कृष्णदास कों भेटिया किये, जो--तुम परदेश तें भेट लाइके बंगालीन कों दीजो, सो या भांति सों सेवा करोगे ।

या प्रकार सब बंगालीन कों रीति-भांति बताइके सेवा सोंपी । और कृष्णदास परदेस तें भेट ले आवते सो बंगालीन कों देते । सो रामदास चोहान रजपूत जब नयो मंदिर बन्यो, तब देह छोड़िके लीला में जाइके प्राप्त भए । तब सगरी सेवा बंगाली करते ।

सो कृष्णदास एक बेर श्रीद्वारिका गए, सो श्रीरणछोडजी के दर्शन करिके तहां तें चले (सो एक बैष्णव कृष्णदास के संग हतो) सो आवत मार्ग में मीराबाई कौ गाम आयौ, सो मीराबाई के घर गए । तहां हरिबंस व्यास आदि देकें स्वामी और विशेष बैष्णव हते । सो काहू कों आए दस दिन भए हते, काहू कों आए पंद्रह दिन भए हते, परि

तिनकी बिदा न भई हती (और भेट के लिये बैठे हते)

तब कृष्णदास ने तो आवत ही कह्यो जो- हों तो चलूंगो । तब मीराबाई ने कह्यो जो-बैठो (कछुक दिन कृपा करिके रहो। तब कृष्णदास ने कही जो- हमारें तो जहां हमारे वैष्णव-श्रीआचार्यजी के सेवक- होंइगे, सो तहाँ रहेंगे । और अन्यमार्गीय के पास हम नाहीं रहत हैं।) तब कितनीक मोहर* मीराबाई श्रीनाथजी की भेट कों देन लागी, सो कृष्णदास ने न लीनी, और कह्यो जो- तू श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की सेवक नाहीं, तातें तेरी भेट हम हाथ सों न छुवेंगे।

ऐसें कहिके कृष्णदास वैसे ही उठि चले । सो जब आगें आए तब साथ के वैष्णवन ने

*पाठ भेद-११ मोहर।

कृष्णदास सों कह्यो, जो--कृष्णदासजी ! तुम ने श्रीनाथजी की भेट क्यों न लीनी ? तब कृष्णदास ने (वा बैष्णव सों) कही । जो-भेट की कहा है ? (जो बहुतेरी भेट बैष्णवन सों लेंइगे, गोवर्धननाथजी के यहां कोई बात कौ टोटो नाहीं है ।) परि मीराबाई के इहां जितने स्वामी बैठे हते, तिन सबन की नांक नीची करिवे के लिये भेट की मोहर न लीनी, इतने इकठौरे कहां मिलते ? (तासों सब की नाक नीची तो करी । जानेंगे जो-हम भेट के लिये इतने दिन सों बैठे हैं । येउ जानेंगे जो-एक सूद्र श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कौ सेवक, ताने भेट न छुई सो जिनके सेवक एसे टेकी हैं तो तिन (के गुरु) की तो कहा बात होइगी ?(सो ये सब या भांति सों जानेंगे। और आपुन अन्य मार्गीय की भेट काहे कों लेंइ ?)

भावप्रकाश

तातें शिक्षापत्र में कह्यो है—'तदीयानां महद् दुःखं विजातीयेन संगमः' तदीय जो–भगवदीय हैं, तिन कों और दुख कछु नाहीं है, सो जैसो अन्यमार्गीय विजातीय के संग कौ दुख होय। तासों श्रीठाकुरजी तो निबाहें। जो–विजातीय सों बोलनो नाहीं तब ही सुख है। और जो वार्ता करै तो रस कौ तिरोधान रसाभास निश्चय होय। तासों कृष्णदासजी मीरा बाई के घर गए, इतनो कहनों परयो।

तामों मुख्य सिद्धान्त यह जतायो जो–स्वमार्गीय विना काहू तें मिलनो नाहीं। और कदाचित् मिलनो परै तो अपने धर्म कों गोप्य राखे। सो श्रीगुसांईजी आपु चतुःश्लोकी मे कहे हैं—

'विजातीयजनात् कृष्णे निजधर्मस्य गोपनं।

देशे विधाय सततं स्थेयमित्येव मे मतिः' ॥१॥

सो एसे देश में जाय जहां कोई वैष्णव नाहीं होय, तहां अपने धर्म कों प्रकट न करै, तब अपनो धर्म रहै। सो काहेतें?—जो लौकिक हू में पनारो है। सो तासों, न्हायो होइ सो बचिके चलै। तासों उत्तम जन कों सब

प्रकार सों वचनो परै । जैसे उत्तम सामग्री है ताकों अनेक जतन सों वचावै, तव श्रीठाकुरजी के भोग जोग रहै । तैसे ही वैष्णव-धर्म है । तासों या धर्म का रत्ता राखै तो रहै । यह सिद्धान्त प्रकट कियो ।

(सो वे कृष्णदास एसे टेकी परम कृपा-पात्र भगवदीय हते ।)

इति वार्ता प्रथम



वार्ता-द्वितीय



प्रथम श्रीनाथजी की सेवा बंगाली करते सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने (श्रीगोवर्द्धन नाथजी कों (और मोरपच्छ को मुकट काछिनी बागा सब बनवाइ दिये हते) मुकुट काछनी और मीना के सब आभरन संभराइ दीने । सो नित्य संभराइके धरते॰ जो-भेट

आवती सो सब खरच होती, कछु संग्रह न राखते । और बंगाली सेवा करते ।

पाछें कृष्णदास कों श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने आग्या दीनी, जो- तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा टहल करो । तब कृष्णदास अधिकारी भए, अधिकार करन लागे* ।

---

* ...... *इस प्रसंग का पाठ-भेद भाव-प्रकाश वाली प्रति में, इस प्रकार हैः—

जो भेट श्रीगोवर्द्धननाथजी कें आवती सो बंगाली जोरिके सब अपने गुरुन के यहाँ पठावन लागे। सो जब श्रीआचार्यजी ने श्रीगोवर्द्धननाथ जी के मंदिर में कृष्णदास कों अधिकारी किए, तब कृष्णदास मथुरा आगरा तें सामग्री लाइ देते। सो एसे करत बोहोत दिन बीते।

तब एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने अवधूतदास कों जताई जो-तुम कृष्णदास अधिकारी सों कहो जो-इन बंगालीन कों निकासो । जो-मोकों अपनो वैभव बढावनो है, और ये बंगाली मोकों भोग धरत है, सो इनकी चुटिया में एक देवी को सरूप, है, सो मेरे पास बैठावत हैं। तासों इन बंगालीन कों वेगि काढो।

तब अवधूतदासने यह बात अपने मन में राखी।

पाछैं एक दिन कृष्णदास मथुरा कों चले, सो अडींग लों पहोंचे। तब पैडे में अवधूतदास मिले।

भावप्रकाश—

अवधूतदासजी का परिचय

और एक अवधूतदासजी श्रीआचार्यजी के सेवक हते। सो व्रज में फिर्यो करते सो वे बड़े कृपा-पात्र भगवदीय हते, सो अडींग के वासी हते।

सो अवधूतदास कुमारिका के जूथ में हैं। सो रासपंचाध्यायी में जब अक्रूरजी प्रकट भए तब ये भक्त सगरे स्वरूप कौ दर्शन करिके नेत्र मूंदिके योगी की नांई मगन हो गए। सो ये भक्त कौ प्राकट्य अवधूतदास कौ है। सो लीला में इन कौ नाम 'केतिनी' है।

सो अडींग मे एक सनोढ़िया ब्राह्मण के घर जन्मे। जब व्रज में अकाल पर्यो, तब मा-बाप बनिया कों बेटा देके आपु तो पूरब कों गए। पाछैं अवधूतदास बरस पंद्रह के भए, तब वह बनिया कौ घर छोड़िके मथुरा में आइके श्रीआचार्यजी के दर्शन करि विनती कीनी। जो-

महाराज! मोकों शरण लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आप कहे जो—हमारे संग श्रीगोवर्द्धन कों चलो, जो—श्रीनाथजी के सान्निध्य शरण लेंइगे।

तब अवधूतदास श्रीआचार्यजी के संग श्रीगिरिराज आए। पाछें श्रीआचार्यजी आपु अवधूतदास तें कहे जो-तुम गोविंदकुंड में न्हाइ लेहु। तब अवधूतदास गोविन्द-कुण्ड में न्हाइ आए। पाछें श्रीआचार्यजी आप गोविंदकुंड में स्नान करिके मंदिर में पधारे।

ता समय श्रीगोवर्द्धनधर कों राजभोग आयो हतो। तब समय भए भोग सराइ अवधूतदास कों बुलाइ के श्री गोवर्द्धनधर के सान्निध्य बैठाइ नामनिवेदन करवायो। तब अवधूतदास ने श्रीआचार्यजी सो विनति कीनी जो-महाराज! मेरे मन में तो यह है जो-मैं श्रीगोवर्द्धननाथजी कों हृदय में धरिके व्रज में फिरों। तब श्रीआचार्यजी आप हाथ में जल लेके अवधूतदासजी के ऊपर छिरके। तब अवधूतदास की अलौकिक देह होइ गई, सो भूख-प्यास कछु देहा-ध्यास बाधा नाहीं करें, सो मानसी सेवा में मगन हो गए-पाछें श्रीआचार्यजी ने राजभोग आरती कीनी। सो श्री-गोवर्द्धनधर कौ स्वरूप अपने हृदय में नख तें शिख पर्यंत

धरिके व्रज में सदा फिरते । सो स्वरूपानंद में सदा मगन रहते

तब अवधूतदास ने पूछ्यो जो- कृष्णदास ! कहां चले ? तब कृष्णदास ने कह्यो जो- मथुरा जात हों कछु काम है ? तब अवधूतदास ने कृष्णदास सों कह्यो जो- श्रीनाथजी की सेवा कौन करत हैं ? तब कृष्णदास ने कह्यो जो-- सेवा बंगाली करत हैं । तब अवधूतदास ने कृष्णदास सों कह्यो जो-- श्रीनाथजी कों अपनो वैभव बढावनो है । तुम बंगालीन कों दूर क्यों नाहीं करत ? ।

अवधूतदास सों श्रीनाथजी ने कह्यो हतो जो- मोकों बंगाली दुख देत हैं । सो जब जब बंगाली श्रीनाथजी कों भोग धरते, तब उनकी चुटिया में एक छोटो

स्वरूप देवी को हतो, सो श्रीनाथजी के आगें बैठावते। जब भोग सरावते, तब वा देवी को चुटिया में धरते, एसे करते।

सो बात श्रीनाथजी ने अवधूतदास सों जताई। तातें कृष्णदास सों अवधूतदास ने कह्यो। तब कृष्णदास ने कह्यो ये बंगाली श्रीआचार्यजी ने राखे हैं। जो–श्रीगुसांईजी की आग्या बिना कैसे का ढेजांइ ? तब अवधूत दास ने कृष्णदास सों कह्यो जो– तुम अडैल जाइ श्रीगुसांईजी सों ज्यों–त्यों आग्या ले बंगालीन कों काढो।

तब कृष्णदास (मथुरा जात हते सो) अडींग सो फिरे सो श्रीगोवर्द्धन आए। बंगालीन सों कह्यो जो- हों तो अडैल श्रीगुसांई जी के पास जात हों, कछु काम है। तुम श्रीनाथजी की सेवा में सावधान रहियो।

और सब सेवक पौरिया हते, सो सबन सों कृष्णदास ने कह्यो जो—सावधान रहियो, हों अडैल श्रीगुसांईजी के पास जात हों।

पाछें श्रीनाथजी सों बिदा होइके कृष्णदास चले, सो दिन पन्द्रह में अडैल जाइ पहोंचे, श्रीगुसांईजी सों दंडवत कियो। तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो-- कृष्णदास ! तुम (श्रीनाथजी की सेवा छोडिके) कैसे आए? तब कृष्णदासने कह्यो जो- महाराज! श्रीनाथ-जी कों अपनो बैभव बढावनो हैं। और बंगालीन ने माथो बोहोत उठायो है, जो-- भेट आवत है सो सब ले जात हैं। सो सब (वृन्दावन में) अपने गुरुके इहां (पठाइ) देत हैं। (सो अबही तें काहू कों मानत नाहीं हैं, सो आगें बोहोत दिन तांई बंगाली रहेंगे तो झगड़ो बढैगो। तासों बंगालीन

कों आपु काढिवे की आज्ञा दीजिये सो मैं जाइ के काढ़ूंगो।

तब श्रीगुसांईजी ने (कृष्णदास सों) कह्यो जो--श्रीआचार्यजी महाप्रभु आसुर-व्यामोह-लीला दिखाई, तब पाछें कितनेक दिन में श्रीगोपीनाथजी आप प्रथम परदेश पूर्व कौ कियो, सो एक लक्ष की भेट आई। पाछें (प्रथम) अडेल आए। तब श्रीगोपीनाथ-जी ने कह्यो जो- पहलों परदेस है। यामें जो आयो, सो सब श्रीनाथजी कौ है, सो श्रीनाथजी के विनियोग कियो चहिये-पाछें श्रीगोपीनाथजी दिन दस वारह रहिके (लक्ष रुपैया लेके) श्रीनाथजीद्वार पधारे, सो आइ पोहोंचे।

पाछें श्रीगोपीनाथजी ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किए, जो--लाए हते सो भेट करे, और आभूषन सब जडाइ के संभराए

थार, कटोरा, चमचा, झारी, तृष्टी प्रभृति सब सोने के रूपे के किए। पाछें (सेवा-शृंगार करि श्रीगोपीनाथजी) अडेल आए। पाछें बंगाली बरस-भीतर सब ले गए, अपने गुरु कों सब दीने। (सो सब समाचार हमारे पास आए, परि हम कहा करें?)

यह बात श्रीगुसांईजी ने कृष्णदास सों कही, और कह्यो जो—बंगाली माथो बोहोत उठायो है। परि श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के राखे हैं, सो कैसें निकसेंगे?।

तब कृष्णदास ने कह्यो जो- महाराज! श्रीनाथजी की इच्छा है, जो-'बंगालीन कों निकासो'। तातें या बात में आप कछु बोलो मति, मोकों आग्या करो, मैं अपनो करि लेउंगो। जैसे बंगाली निकसेंगे तैसे निकासूंगो।

तब श्रीगुसांईजी कहे जो-अवस्य

(बंगालीन कों निकास्यो चहिये । जो- बोहोत दिन रहेंगे तो झगरो करेंगे) तब कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो- महाराज ! इदो पत्र लिखि दीजिये, टोडरमल्ल और बीरबल के नाम को । तिनमें लिखिये जो- कृष्णदास कों श्रीजीद्वार भेजे हैं, तुम कों कृष्णदास कहै सो करि दीजियो ।

तब श्रीगुसांईजी ने दोऊ पत्रन में- कृष्णदास ने कह्यो त्यों ही–लिखि दीने । (जो- कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन में है, सो तुमसों कहै सो करि दीजो । जो- हमकों बंगाली काढ़ने हैं, और सेवक राखने हैं । और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हैं । तासो ये करें सो हम कों प्रमाण है)

सो पत्र लेके कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार कों चले, सो (कछूक दिन में) आगरे आए,

तहां राजा टोडरमल्ल बीरबल सों मिले, पत्र श्रीगुसांईजी कौ लिख्यो दिखायो। तब वे पत्र बांचिके कृष्णदास सों कह्यो जो- तुम कहो सो करें।

तब कृष्णदास ने कह्यो जो-अब तो हम श्रीनाथजीद्वार जात हैं, बंगालीन कों काढिवे कों (जो- कदाचित् बंगालीन के- गुरु श्रीवृन्दावन में हैं सो-देशाधिपति के आगें पुकारें तब उनकी ठीक राखियो तब उन दोऊ जनन ने कही जो- तुम जाउ। तुमकों श्रीगुसांइजी की आज्ञा होय सो करो, जो- हम ठीक राखेगें।)

पाछें कृष्णदास टोडरमल्ल सों विदा होइ के श्रीनाथजीद्वार कों चले, सो (आगरे तें) मथुरा आए।

मथुरा तें चले सो मार्ग में अवधूतदास मिले। तब अवधूतदास ने कृष्णदास सों

कह्यो, जो- कृष्णदास ! ढील कहा करि राखी है ? बंगालीन कों काढो, श्रीनाथजी की इच्छा एसी है, अपनो वैभव बढावनो है। तब कृष्णदास ने कह्यो, जो- श्रीगुसांईजी की आज्ञा ले आयो हूँ। अब जाइके बंगालीन कों काढ़त हों।

सो इतनो अवधूतदास सों कहिके कृष्णदास चले सो श्रीगोवर्द्धन आए। सो वे बंगाली सब रुद्रकुंड पे रहते, सो उनकी झोंपरी हुती सो कृष्णदास ने जराइ दीनी। जब सोर भयो, तब ऊपरतें सेवा छोडिके सब (बंगाली) नीचे उतरि आए (सो अग्नि बुझावन लागे।) तब कृष्णदास ने पर्वत ऊपर अपने मनुष्य (व्रजवासी दोइसो) पठाइ दिए। (और कह्यो जो- कोई बंगाली पर्वत ऊपर चढै ताकों तुम चढन मति दीजो। और

ब्राह्मण सेवक भीतरियान सों कहे, जो–तुम श्रीनाथजी की सेवा में सावधान रहियो।)

(तब यह कहिके कृष्णदास पर्वत तें नीचे हाथ में लकुटी लेके ठाडे भए।) तब वे बंगाली नीचे आइ देखें तो कृष्णदास ने झोंपरीन में आंच लगाइ दीनी है। (पाछें बंगाली अग्नि बुझाइके सगरे आए सो पर्वत ऊपर मंदिर में चढन लागे। तब कृष्णदास ने उन बंगालीन सों कह्यो जो– अब तिहारो काम सेवा में नाहीं है, जो– हमने और चाकर राखे हैं सो सेवा करन को गए हैं।)

तब वे सब बंगाली मिलिके कृष्णदास सों मारिवे कों ठाढे भए (और कह्यो जो–हमारे ठाकुर हैं जो- हमको श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने राखे हैं। सो तब लराई भई) तब कृष्णदास ने लाठी द्वै-द्वै, चारि-चारि सबनमें लगाई। तब वे बंगाली सब भाजे, सो मथुरा

आए। रूपसनातन-पास आइके सब बात कही, जो– कृष्णदास जाति कौ सूद्र, सो सगरेन की झोंपरी जराइ दीनी, और सबन कों मारि-के सेवा में तें बाहिर काढि दिये हैं। सो या प्रकार बात करत हते तब कृष्णदास हू (रथ पर चढिके पचास ब्रजवासी हथियार-बंध संग लेके) इतने में आइ ठाढो भयो। तब रूपसनातन ने कृष्णदास सों बोहोत खीझिके कह्यो, जो- अरे सूद्र ! तू कौन ? जो- इन ब्राह्मणन कों मारै।

तब कृष्णदास ने कह्यो जो–हौं तो सूद्र हों, परि (मै ब्राह्मणन कों सेवक तो नांहीं करत हों) तुम हू तो अग्निहोत्री (ब्राह्मण) नाहीं, तुम हू तो कायथ हो। तब रूपसना-तन ने कृष्णदास सों कह्यो जो- यह बात देसा-धिपति सुनेगो, तो कहा जुवाब देइगो ? तब

कृष्णदास ने कह्यो जो–हौं तो नीके जुवाब देउंगो, और तुमकों जुवाब न आवेगो, जो--कायथ होइके ब्राह्मणन के पास दंडवत करावत हो ? तब रूपसनातन तो (कृष्णदास के वचन सुनिके) चुप करि रहे। और बंगालीन सों कहे जो--तुम जानो (और) ये जानें जो– हम तो कछु जानत नाहीं)

(सो या प्रकार रूपसनातन सगरे बंगालीन के गुरु हते, सो तिनने यह बात कही) तब (सगरे) बंगाली मथुरा के हाकिम पास गए। (यह बात कही जो–कृष्णदास ने हमकों श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में तें काढि दिये हैं। तासों तुम कोई प्रकार सों हमकों रखाइ देउ। यह बात करत हते।) तब कृष्णदास हू तहां जाइ ठाढे भए। तब हाकिम ने (कृष्णदास

कौ तेज देखत ही उठिके पास बैठाइके) कृष्णदास सों कह्यो जो–(तुम बडे, और श्री-गोवर्द्धननाथजी के अधिकारी हो, तासों तुम इन बंगालीन कौ गुन्हा माफ करो) भलो, भयो सो तो भयो, अब इनकों (फेरी) राखौ (जो- सेवा करें) तब कृष्णदास ने कह्यो जो–भलो, अबतो (हम) इनकों न राखेंगे। ये हमारे चाकर हते (ये चाकर होइके लरिवे कों तैयार भए, इनकी झोंपरी जरि गई तो हम इनकी झोंपरी और बनवाइ देते।) हमने इनकों सेवा सोंपी हती जो–ए (श्रीगोवर्द्धन-नाथजी की) सेवा छोडिके नीचे क्यों आए ? तब अब इनकों न राखेंगे। तापर तुम कहत हो तो हम श्रीगुसांईजी सों कहें, पत्र लिखें ? वे कहेंगे तैसे करेंगे।

तब हाकिम ने कह्यो जो–आछो, वे कहें तैसें करो। तुम श्रीगुसांईजी कों लिखो।

पाछें कृष्णदास तो श्रीनाथजीद्वार आए। बंगाली सब अपने गुरु-पास श्रीकुंड* गए। सो ता पाछें फेरि एक दिन सगरे बंगाली भेले होइ देशाधिपति के पास आगरे में आइके कृष्णदास की चुगली करी तब देशाधिपति अकबर पातसाह ने कही जो–कृष्णदास कौन है? जो–इन ब्राह्मणन कों पूजा में तें काढे। सो उनकों बुलावो।)

(तब राजा टोडरमल्ल ने और वीरबलने अकबर पातसाह सों कह्यो जो– श्रीगोवर्द्धन-नाथजी ठाकुर श्रीविट्ठलनाथजी श्रीगुसांईजी के हैं। सो पहले ये बंगाली सेवा में राखे हते, सो इनकों खरची देते, जो– अब इन कों काढ़ि दिये है।)

* पाठ भेद—चन्द्रावल।

(तब देशाधिपति ने कही जो- बंगाली झूठी चुगली करत हैं। जो—चाकर को कहा है ! तासों कृष्णदास कों बुलाइके कहो जो— उन कौ मन होइ तो राखें)

(तब देशाधिपति के मनुष्य कृष्णदास को लेवेकों श्रीगिरिराज आए। सो कृष्णदास ने पहले ही सुनी हती, सो रथ ऊपर चढ़िके दस-बीस आदमी लेकें देशाधिपति के मनुष्यन के संग आगरे में आए। तब कृष्णदास राजा टोडरमल्ल और बीरबल सों मिले। तब राजा टोडरमल्ल और बीरबल ने कह्यो जो -बंगालीन ने चुगली करी हती, सो हम ने कहि दीनी है। और फेरि हू आज कहि देंइगे, जो- आजु के दिन तुम इहां रहो।)

(तब कृष्णदास उहां रहे। तब राजा टोडरमल्ल और बीरबल दरबार के समय

देशाधिपति के पास आइ अकबर सों कहे जो- कृष्णदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के अधिकारी आए हैं, और उन को मन बंगालीन कों राखिवे को नाहीं है। जो-- और चाकर राखे हैं, और ये तो काढ़े हैं। तब देशाधिपति ने कही, जो-- आछो, उन को मन होइ, ताकों चाकर राखें। यामें झूठो झगरो कहा है ? तासों बंगालीन कों काढ़ि देउ।)

(तब राजा टोडरमल्ल और बीरवल ने आइके बंगालीन सों कही जो– देशाधिपति को हुकुम तुम कों काढ़ि देवेको भयो है, तासों तुम चुप होइके चले जाउ । जो– झगरो करोगे तो दुख पावोगे। तासों हम ने तुम कों समुझाइ दियो है।)

(तब सगरे बंगाली निरास होइके चले आए, सो श्रीवृन्दावन में रहे। और कृष्णदास राजा टोडरमल्ल और बीरबल सों विदा होइके चले आए सो श्रीगिरिराज ऊपर आए +।)

ता पाछें दोइ कासिद बुलवाइके कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी कों (बिनती) पत्र लिख्यो। तामें बंगाली काढे, सो-समाचार विस्तार सों लिखे, और लिखी जो- आप पधारिये तो भलो है। सो पत्र अडेल श्रीगुसांईजी पास पोहोंच्यो। पाछें श्रीगुसांई-जी अडेल तें श्रीनाथजीद्वार कों चले, सो श्रीजीद्वार आइ पोहोंचे।

+यह प्रसंग सं० १६३० के लगभग का है। वार्ता की प्राचीन कथात्मक शैली के कारण इस में समय का सम्मिश्रण होगया है। (विशेष देखिये-श्रीविट्ठलेश चरितामृत) वि० विभाग कां०

(सो कृष्णदास कों बुलाइ श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख अधिकारी कौ दुसालो उढायो, और श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख तें कहे जो—कृष्णदास ! तुम ने बडी सेवा करी है जो—यह काम तुम ही तें बनै जो-बंगालीन कों काढे । तासों अब सगरो अधिकार श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ तुम ही करो, हम हू चूकें तो कहियो, जो- कोई बात कौ संकोच मति राखियो । जो- सगरे सेवक टहलुवान के ऊपर तिहारो हुकम, और की कहा है ? जो- एसी सेवा तुम ही करी, जो-तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कहोगे सोई करेंगे । तुम श्रीआचार्यजी के कृपा-पात्र हो, सो तिहारी आज्ञा में (जो) चलेंगे तिन सबन कौ भलो होइगो । तासों अब तुम श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भली भांति सों करियो, सो सावधान रहियो ।)

(पाछें कृष्णदास श्रीगुसांईजी और श्रीगोवर्द्धननाथजी कों साष्टांग दंडवत करिके अधिकार की सगरी सेवा करन लागे। ता दिन तें श्रीनाथजी के अधिकार की गादी बिछवे लगी। श्रीगुसांईजी की आज्ञा तें कृष्णदास गादी ऊपर बैठते। ×)

(ता पाछे बंगालीन ने सुनी जो-श्रीगुसांई जी श्रीगोवर्द्धन पधारे हैं, और सिंगार करत हैं।) तब ये बंगाली सब आए। श्रीगुसांईजी सों कह्यो, जो--हम कों श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने सेवा ऊपर राखे हुते, सो कृष्णदास ने हम कों काढे। (तासों आपु फेरि हम कों सेवा में राखो।)

तब श्रीगुसांईजी ने उन सों कह्यो, जो-तुम सेवा छोडिके नीचे क्यों उतरे? दोष तुमारो। अबतो हम श्रीनाथजी की सेवा में

न राखेगें। तब बंगाली बोहोत बीनती करन लागे, जो- महाराज! हम अब खांइगे कहा? (जो- श्रीनाथजी की सेवा पीछे हमारो खान-पान को सब सुख हतो। तासों हम को कछू और सेवा टहल बतावो, तथा कोई और श्रीठाकुरजी बतावो, जासों हमारो निर्वाह चल्यो जाइ।)

तब श्रीगुसाईंजी ने श्रीनाथजी के बदले (श्रीगोपीनाथजी के सेव्य) श्रीमदनमोहनजी की सेवा दीनी, और कह्यो जो- इनकी सेवा करो। जो- कछू आवे सो खाउ। तब बंगाली (वृन्दावन में आइके) श्रीमदनमोहनजी की * सेवा करन लागे। तबतें बंगालीन ने श्रीगोवर्द्धन को रहिवो छोडि दियो।

* मथुरा के नारायण भाट के ठाकुरजी जो- श्रीवृन्दावन के राधाबाग से उनको प्राप्त हुए थे- सम्प्रति करोली राज्य में विराजमान है।

भावप्रकाश *

सो काहे तें ? जो--बलदेवजी मर्यादा-स्वरूप। सो तिनके सेव्य ठाकुर हू मर्यादा-रूप। सो बंगालीन कों, मर्यादा की पूजा है, ता सों दिए। और श्रीगुसांईजी ने झगरो हू मिटाइ दियो।

ता पाछें श्रीनाथजी की सेवा में गुजराती ब्राह्मण (भितरिया)। राखे श्रीनाथजी कौ वैभव बढावनो हतो। (सो मुखियाभीतरिया रामदास कौ किए।)

भावप्रकाश

सो रामदास ब्राह्मण सांचोरा, गुजरात में रहते।

बड़े रामदासजी का परिचय

ये लीला में श्रीचंद्रावलीजी की सखी हैं। सो लीला में इनकौ नाम 'मनोरमा' है। सो सात्त्विक भाव, श्रीचंद्रावलीजी की आज्ञाकारी। जैसे श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी की लीला में ललिता मध्याजी परम चतुर। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के कृपापात्र ललितारूप कृष्णदास सब ठौर हुक्म करें, तैसे मनोरमा रूप सों रामदास मुखिया भीतरिया श्रीगुसांई-जी के आगे सब टहल करें।

सो रामदास गुजरात में एक सांचोरा ब्राह्मण के यहां जन्मे। सो वरस बीस के भए, तब माता-पिता ने देह छोड़ी। ता पाछें रामदासजी श्रीरणछोडजी के दर्शन कों गये, सो श्रीआचार्यजी के दर्शन भए। ता समय श्री-आचार्यजी कथा कहत हते। सो कथा श्रीआचार्यजी के श्रीमुख तें सुनिके रामदास कों ज्ञान भयो जो–श्रीआचार्य-जी आपु साचात ईश्वर हैं, इनकी शरण रहिये तो कृतार्थता होय। सो यह मन में निश्चय कियो।

ता पाछें श्रीआचार्यजी आपु कथा कहि चुके। तब रामदास ने दंडवत करिके बिनती कीनी जो--महाराज! मोकों शरण लीजे। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-जाओ न्हाइ आवो। तब रामदास न्हाइ आए। तब श्री-आचार्यजी ने रामदास कों नामनिवेदन करवायो।

ता पाछें रामदास सों कहे जो–अब तुम भगवत् सेवा करो। तब रामदास ने कही जो--मेरे पिता के ठाकुर मेरे पास हैं, सो आपु आज्ञा देऊ तेसें मैं सेवा करूँ। तब श्रीआचार्यजी आपु रामदास के श्रीठाकुरजी को पंचामृतस्नान कराइ दिये। ता पाछें रामदास कछूक दिन श्रीआचार्यजी की पास रहे, सो सेवा की रीति-भांति सीखे।

ता पाछें रामदास ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी जो -महाराज ! शास्त्र तो मैं कछु पढ्यो नाहीं हों, परंतु आप के ग्रन्थ पढ़िवे की इच्छा, अभिलाषा है। तब श्रीआचार्यजी महाप्रभुन ने रामदास कों अपने ग्रन्थ पढ़ाए, तब रामदासजी के हृदय में व्रज की लीला स्फुरी। सो रामदास ने यह कीर्तन श्रीआचार्यजी के आगे गायो।

सो पद—

राग गोरी—'चलि सखी चलि ! अहो व्रज पैंठ
लगी है, जहां विकत हरि-रस प्रेम'०

या प्रकार के रस-रूप पद रामदास ने बोहोत गाए, सो सुनिके श्रीआचार्यजी आपु बोहोत प्रसन्न भये। तब रामदास श्रीआचार्यजी सों विदा होइके दंडवत करि गुजरात में अपने घर आइके बोहोत दिन तांई सेवा कीनी।

ता पाछें एक दिन एक वैष्णव रामदास के घर आयो, तब रामदास ने प्रीति सों वैष्णव कों अपने घर में राख्यो। पाछें रामदास ने कही जो–वैष्णव कौ संग दुर्लभ है, सो तुमने बड़ी कृपा करी जो--तुम मेरे घर पधारे। सो तब वैष्णव ने कही जो--संग करिवे लाइक तो पद्मनाभदासजी हैं, जो–एक क्षण हू संग होइ तो भगवत्-कृपा होइ।

सो सुनत ही रामदास के मन मे यह आई जो--पद्मनाभदास कौ संग करूं । ता पाछें चारि दिन रहिके वह वैष्णव तो गयो। तव रामदास श्रीठाकुरजी कों पधराइ-के पद्मनाभदास के घर कनोज में आए। सो पद्मनाभदास प्रीति सों रामदास कों महीना एक राखे, सो भगवद्-वार्ता में मगन होइ गये।

तव रामदास ने कही जो--जैसी तिहारी बड़ाई सुनी हती, तैसेही तिहारे संग तें सुख पायो। सो अब मैं श्री-गोवर्द्धननाथजी के दर्शन करि आऊं, तासों मेरे ठाकुर कों तुम राखो। तव पद्मनाभदास ने रामदास के ठाकुर श्रीमथुरेशजी की सैयाजी के पास बैठारे। और इहां श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होइके रामदास कों मुखिया किए, सो जन्म-भरि श्रीनाथजी की सेवा रामदास ने मन लगाइ-के कीनी। सो या प्रकार रामदास रहे।

ता पाछें (जब) पद्मनाभदास की देह छूटी तब श्री-गोवर्धननाथजी के पास श्रीठाकुरजी कों बैठारे। सो सदा श्रीनाथजी की पास रहे।

सो--सब भितरियान कौ नेग, सब सेवकन कौ नेग श्रीनाथजी कहे ता भांति श्रीगुसांईजी ने बांध्यो। तब तें श्रीनाथजी

की सेवा प्रनालिका तें होन लागी, और कृष्णदास अधिकार करन लागे।) ❀

(इति वार्ता द्वितीय)

---

* इस अंश का पाठ-भेद भावप्रकाश वाली प्रति मे इस प्रकार है :—

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने श्रीगोर्द्धननाथजी की सेवा कौ विस्तार बढ़ायो। सो राजसेवा करन लागे। जो–भोग सामग्री कौ नेग कियो, सेवक बोहोत राखे। सो दरजी, सुनार, खाती, सगरेन कौ नेग करि दियो। और भंडारी (अधिकारी) राखे, सो भंडारी कों गादी तकिया।

या प्रकार श्रीगोवर्द्धननाथजी की ईश्वरता बढ़ाए। और सगरे सेवकन की ऊपर कृष्णदास अधिकारी कों मुखिया किये, सो जो–काम होइ सो पूछनो।

सो गुसांईजी तो सेवा शृंगार करि जांय, और काहू सों कछू कहें नाहीं। कोई बात कोई सेवक श्रीगुसांईजी सों पूछें तब श्रीगुसांईजी आपु कहें जो–कृष्णदास अधिकारी के पास जावो, जो–हम जाने नाहीं। सो या प्रकार मर्यादा राखी।

सो या भांति सों कृष्णदास की वैभव भारी और हुकुम भारी। सो जहां चलें तहां रथ, घोड़ा, बैल, ऊंट, गाड़ी सो पचास मनुष्य संग। सो कृष्णदास अधिकारी सब देसन में प्रसिद्ध भए।

सो कृष्णदास नित्य नये पद करिके श्रीगोवर्द्धन कों सुनावते। सो एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते।

॥ वार्ता तृतीय ॥

बहुरि एक दिन श्रीनाथजी ने कृष्णदास को आग्या दीनी, जो– स्यामकुंभार कों लेके, ताल पखावज लेके तू परासोली (सैन आरती पीछे) आजु रात्रि कों आइयो (तहां रास-लीला करेंगे) सो स्यामकुंभार मृदंग आछी बजावतो।

सो जब श्रीनाथजी की सैन आरती उपरान्त अनोसर भयो (ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी स्यामकुंभार सों कहे– "तहां मृदंग लेके जैयो" सो या प्रकार स्यामकुंभार कों श्रीनाथजी आपु आज्ञा किये।)

तब कृष्णदास स्यामकुंभार के घर गए ❀ और कह्यो जो–श्रीनाथजी ने आग्या दीनी है

भावप्रकाश—

सो या प्रकार स्यामकुंभार कों श्रीनाथजी आपु

आज्ञा किये सो यातें, जो लीला में श्यामकुंभार विशाखाजी की सखी है, तहां लीला में इनकौ नाम 'रसतरंगिनी' है। सो इनकी मृदंग की सेवा है।

एक समय रसतरंगिनी सेन किये हते, सो विसाखाजी कौ मन गान करिवे कों भयो। तब रसतरंगिनी कों जगाइके कहे जो--तू मृदंग वजाउ, सो तब मृदंग बजायो। तब विसाखाजी गान करन लागीं। सो अलसातें रसतरंगिनी चूकि जाय। तब विशाखाजी क्रोध करिके कहे जो-आज कैसें वजावत है? तब रसतरंगिनी ने कह्यो जो--मोकों नींद आवत है। और तिहारो मन तो गान करिवे कों है, और मोकों नींद आवत है सो कैसे बने? तब विशाखाजी मृदंग आपु ही लिये और क्रोध करिके विशाखाजी ने रसतरंगिनी सों कह्यो जो-तू मेरी सखी नाहीं है। सो जाइके तू भूमि में जनम लेउ, अहंकार करिके वोली सो ताकौ यही दंड है।

तब ये महावन में एक कुम्हार के घर जनमे। सो स्यामकुंभार नाम पर्यो। सो सगरे समाज में चतुर हते। श्रीगुसांईजी आपु इनकों बुलाइके श्रीनवनीतप्रियजी के पास राखे। तब इन स्यामकुंभार कों नामनिवेदन करवायो।

अवघट अवघट सुघरतान गान रंग राख्यो ॥
पाई सुख सुरति-सिद्धि भरत काम त्रिविध रिद्धि ।
अभिनव वदन-सत सुहाग हुलास रंग राख्यो ॥
बनिता-सत-जूथप पीय निरखि थक्यो सघन चंद ।
बलिहारी 'कृष्णदास' सुघर रंग राख्यो * ॥

यह पद कृष्णदास ने गायो । स्यामकुंभार ने मृदंग बजायो । श्रीनाथजी और श्रीस्वामिनीजी नृत्य किए ।

सो श्रीनाथजी कृष्णदास के ऊपर एसी कृपा करते । इति वार्ता तृतीय

---

*इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इतना अधिक पाठ है:—

(सो वह पद सुनिके श्रीगोवर्धनधर प्रसन्न होइके अपने श्रीकंठ की प्रसादी कुंद कुसुमन की माला दीनी । सो कृष्णदास अपनो परम भाग्य माने सो रोम-रोम में आनन्द भरि गयो । सो तब रस में मगन होइके यह पद गायो । सोपद

राग मालव— १ अलाग लागिन उरप तिरप गति०
२ त ता थेई रास मंडल में '०।
३ चंद गोविंद गोपी तारा-गन ०
४ सिखवत पिय कों मुरली बजावन ०।

सो या प्रकार बोहोत कीर्तन कृष्णदासजी ने गाए । तब स्यामकुंभार मृदंग बोहोत सुंदर बजायो । सो श्रीगोवर्द्धनधर श्रीस्वामिनीजी सगरे व्रजभक्तन सहित परम अद्‌भुत नृत्य किये । सो श्रीआचार्यजी महाप्रभुन की कानि तें कृष्णदास पर श्रीगोवर्धनधर एसी कृपा करते ।

ता पाछें श्रीगोवर्द्धनधर श्रीस्वामिनीजी सहित सगरे व्रजभक्त अन्तर्धान भए । तब कृष्णदास और स्यामकुंभार मृदंग लेके गोपालपुर आए । सो कृष्णदास ने समै २ के कीर्तन बोहोत किए ।

वार्ता चतुर्थ

और कृष्णदास ने कीर्तन बोहोत किए। सो एक समै सूरदास ने कृष्णदास सों कह्यो जो- तुम पद करत हो, तामें मेरी छाया आवत है। तब कृष्णदास ने सूरदास सों कह्यो जो- अबके एसो पद करूं तामें तुमारी छाया न आवै तब कृष्णदास एकांत बैठिके एकाग्र चित्त करिके नयो पद करन लागे।

❀सो तामें तीन तुक तो किए, और चौथी तुक बने नहीं। तब कृष्णदास ने मन में कह्यो जो--आगे तुक नहीं चलत तोलो प्रसाद लेके फेरि विचारेंगे। सो पत्र में लिखत हते, सो पत्र तथा द्वात लेके उहांई धरिके प्रसाद लेन बैठे। तब श्रीनाथजी ने चौथी तुक लिख दीनी। कृष्णदास ने तीन तुक करी हती, सो श्रीनाथजी कीर्तन पूरो करि गए। श्रीनाथजी तो पधारे।

पाछें कृष्णदास प्रसाद लेके पोहोंचिके पद पूरो करिवे कों आवत हते, सो पद तो श्रीनाथजी पूरो करिके श्रीहस्त सों लिख गए, सो देखिके कृष्णदास बोहोत प्रसन्न भए, और मन में कहे जो-सूरदासजी आवें तो पद सुनाऊं।

पाछें उत्थापन को समौ भयो, तब सूरदास दर्शन कों आए तब कृष्णदास ने कह्यो जो-सूरदासजी ! हम ने नयो पद कियो है। तामें तिहारी छाया नहीं परी। तब सूरदास ने कह्यो, जो- पद तुम कहो, मैं सुनूं तब जानूं। तब कृष्णदास ने पद गायो। सो पद :—

॥ राग श्रीराग ॥

आवत वने कान्ह गोप-बालक-संग,
नेचुकी-खुर-रेनु छुरित अलकावली ॥
मोहन मनमथ-चाप वक्र लोचल वान,
सीस सोभित मत्त मयूर-चंद्रावली ॥

उदित उडुराज सुंदर सिरोमनि ,
वदन निरखि फूली नवल जुवति कुमुदावली ॥
अरुण सकुचित अधर विंब फल ,
हसत कछुक प्रगट होत कुँद दसनावली ॥
श्रवण कुंडल, भाल तिलक, नाक, वेसरि ,
कंठ कौस्तुभमनि सुभग त्रिवलावली ॥
रत्न हाटक खचित उरसि पदिकनि पांति
वीच राजत शुभ्र झलक मुकतावली ॥

(अथ श्रीनाथजी कृत)

वलय कंकन बाजूबंद आजानु भुज मुद्रिका ,
कर-दल विराजित नखावली ॥
कुणित कर मुरलिका मोहित अखिल विश्व ,
गोपिकाजन-मनसि ग्रथित प्रेमावली ॥
कटि छुद्र घंटिका नटित हीरा मनि ,
नाभि अंवुज वलित भ्रंग रोमावली ॥
धाइ कबहुक चलत भक्त हित जानि ,
पिय गंडमंडित रुचिर श्रम-जल-कणावली ॥
पीत कौशेय परिधान सुंदर अंग ,
चलत नूपुर गीत सब्दावली ॥
हृदय 'कृष्णदास' गिरधरन लाल की ,
चरन-नख-चंद्रिका हरत तिमिरावली ॥

यह पद कृष्णदास ने सूरदास के आगें कह्यो, सो सूरदास तीन तुक तांई तो बोले नाहीं । जब तीन तुक आगे कहन लागे, तब सूरदास ने कृष्णदास सों कह्यो जो- कृष्णदास ! मेरे तुम सों वाद है प्रभुन सों वाद नाहीं । मैं प्रभुन की बानी पहिचानत हों । तब कृष्णदास चुप करि रहे * ।

---

* * इस स्थान पर भाव-प्रकाश वाली प्रति मे इस प्रकार पाठ-भेद और विशेष वर्णन हैं :-

पाछें कृष्णदास एकांत में बैठिके विचार किये एकाग्र मन करिके, जो-सूरदास जो वस्तु न गाए होंय सो गावनो, यह विचार किये । सो जा लीला को विचार कियो ताही लीला के पद सूरदास (ने) गाए हैं । सो दान, मान, और गाइन को वर्णन सब लीला के पद सूरदास ने गाए हते । सो कृष्णदास विचार करत हारे, मन में महाचिंता भई, सो कृष्णदास कों प्रहर एक गयो, सो हारिके उठि बैठे । जो- कागद लेखनी द्वात कलम धरिके महाप्रसाद लेन गए । तब श्रीगोवर्द्धनधर आइके पद पूरो करि गये । सो पदः-

॥ राग गोरी ॥

'आवत बने कान्ह गोप बालक संग ।
नेचुकी-खुर-रेनु छुरित अलकावली' ॥

यह पद लिखिके आपु पधारे। सो 'नेचुकी' गाइन कौ वर्णन सूरदास ने नाहीं कियो हतो। जो 'नेचुकी' (वा) गाइ सों कहिये जो-पहले व्यांत होइ, ताकौ स्नेह बछुरा ऊपर बोहोत होय। सो एसी नेचुकी गाइ काहू सखा ग्वाल सों घिरत नाहीं है, सो वारंवार अपने बछुरा के तांई घर कों ही भाजत है। जो एसी नेचुकी के जूथ में श्रीठाकुरजी आपु पधारे हैं। तब नेचुकी गाइ की खुर-रेनु मुख पर अलकन पर लगी है।

सो यह श्रीठाकुरजी आपु एक तुक करि कागद के ऊपर लिखिके पधारे। ता पाछें कृष्णदास महाप्रसाद आनंद सों लेके आए, सो कीर्तन पूरो कियो। सो पद–

राग गोरी–१ 'आवत बने०'।

सो या प्रकार कीर्तन पूरो करिके कृष्णदास प्रसन्न होइके सूरदास के पास आए हसत २। तब सूरदास ने पूछी जो–आज बोहोत प्रसन्न हसत आवत हो, सो कहा नौतन पद किये? तब कृष्णदास ने कह्यो जो–आजु एसो पद कियो है, तामें तिहारे पदन की छाया नाहीं है। जो–वस्तु तुम ने गाई नहीं है।

तब सूरदास कहे जो– तुम मोकों बांचिके सुनावो तो सुनूं। तब कृष्णदास (ने) पहले ही तुक कही जो–ताही कों सुनिके कृष्णदास सों सूरदास बोले जो–कृष्णदास! मेरे तिहारे वाद है, कछू तिहारे बाप सों विवाद नाहीं है। सो यामें तिहारो कहा है? जो-मैंने नेचुकी नाहीं गाई सो प्रभु कहि दिये। और तो श्रीअंग के वरनन के मेरे हजारन पद हैं, सोई तुमने गाइके पूरन किये हैं। यह सूरदास के वचन सुनिके कृष्णदास चुप होइ रहे। *

* भावप्रकाश—

सो तहां यह संदेह होइ जो—कृष्णदासजी तो ललिताजी कौ स्वरूप हैं, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की पच्छ किये, सो पद बनाये। तो हू सूरदासजी सों न जीते। ताकौ कारण कहा है ?

तहां कहत हैं जो—कृष्णदासजी ललिता-रूप हैं। सो तैसेही सूरदासजी चंपकलता-रूप हैं। परन्तु आपुनो अधिकार-भेद है। सो लीला हू में श्रीललिताजी की सेवा श्रेष्ठ है, तैसे ही यहां सेवा की भांति ते' कृष्णदास श्रेष्ठ। सो सगरे सेवकन की सेवा में चौकसी, सगरी वस्तु संभारनी, सेवा कौ मंडान विस्तार करनो। यामें कृष्णदास परम चतुर। जैसे सुनार सों दरजी की सेवा न होइ और दरजी सों सुनार के आंभूषण कौ काम न होय। सो सब अपनी २ सेवा में चतुर हैं। और श्रीस्वामिनीजी की सखी दोऊ प्रिय हैं, तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी की प्रीति तो दोउन के ऊपर हैं। परन्तु कृष्णदास के मन में रंचक अहंकार आयो, जो—मैं हू कीर्तन बोहोत किये हैं।

सो वे कृष्णदास एसे भगवदीय हे, जो-जिन के लिये श्रीनाथजी ने पद पूरो कियो।

और सूरदास हू एसे कृपा-पात्र हैं, जो–प्रभु की बानी पहिचानते ।

※ इति वार्ता चतुर्थ ※

वार्ता-पंचम

—:)o(:—

और एक समै श्रीनाथजी के भंडार में सामग्री चहियत हती, सो कृष्णदास अधिकारी गाड़ा लेके (आप रथ पर सवार होइके श्रीगोवर्द्धन सों) सामग्री लेबे कों आगरे आए । सो आगरे के बजार में एक वेस्या※ नृत्य करत हतो । सब लोग नृत्य कौ तमासो देखत हते, सो कृष्णदास हू तमासे में ठाढे भए । तब भीड़ सरकि गई । तब वह बेस्या कृष्णदास के आगे नृत्य करन लागी, और ख्याल टप्पा गावन लागी । सो वह वेस्या

* भावप्रकाश—

सो तहां यह संदेह होइ जो—कृष्णदासजी तो ललिताजी कौ स्वरूप हैं, और श्रीगोवर्द्धननाथजी कृष्णदास की पच्छ किये, सो पद बनाये। तो हू सूरदासजी सों न जीते। ताकौ कारण कहा है?

तहां कहत हैं जो—कृष्णदासजी ललिता-रूप हैं। सो तैसेही सूरदासजी चंपकलता-रूप हैं। परन्तु आपुनो अधिकार-भेद है। सो लीला हू में श्रीललिताजी की सेवा श्रेष्ठ है, तैसे ही यहां सेवा की भांति ते' कृष्णदास श्रेष्ठ। सो सगरे सेवकन की सेवा में चौकसी, सगरी वस्तु संभारनी, सेवा कौ मंडान विस्तार करनो। यामें कृष्णदास परम चतुर। जैसे सुनार सों दरजी की सेवा न होइ और दरजी सों सुनार के आंभूषण कौ काम न होय। सो सब अपनी २ सेवा में चतुर हैं। और श्रीस्वामिनीजी की सखी दोऊ प्रिय हैं, तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी की प्रीति तो दोउन के ऊपर हैं। परन्तु कृष्णदास के मन में रंचक अहंकार आयो, जो—मैं हू कीर्तन बोहोत किये हैं।

सो वे कृष्णदास एसे भगवदीय हे, जो-जिन के लिये श्रीनाथजी ने पद पूरो कियो।

और सूरदास हू एसे कृपा-पात्र हैं, जो–प्रभु की बानी पहिचानते ।

* इति वार्ता चतुर्थ *

वार्ता-पंचम

—:)o(:—

और एक समै श्रीनाथजी के भंडार में सामग्री चहियत हती, सो कृष्णदास अधिकारी गाड़ा लेके (आप रथ पर सवार होइके श्रीगोवर्द्धन सों) सामग्री लेवे कों आगरे आए । सो आगरे के बजार में एक वेस्या❀ नृत्य करत हतो । सब लोग नृत्य कौ तमासो देखत हते, सो कृष्णदास हू तमासे में ठाढे भए । तब भीड़ सरकि गई । तब वह बेस्या कृष्णदास के आगे नृत्य करन लागी, और ख्याल टप्पा गावन लागी । सो वह वेस्या

बोहोत सुन्दर गावै, नृत्य करै सो हू बोहोत आछो आछो करै। सो कृष्णदास वा वेस्या पर रीझे और मन में कहे जो– यह तो श्रीनाथजी के लाइक है ❀

भावप्रकाश—

तहां यह संदेह होइ जो-कृष्णदास श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के कृपा-पात्र सेवक वेस्या के गान पर मोहित क्यों भए ? जो वे तो श्रीठाकुरजी के ऊपर मोहित हैं, सो इनकों अप्सरा, देवांगना तुच्छ दीसत हैं। और श्रीआचार्यजी आपु जल-भेद ग्रन्थ में कहे हैं, जो—

'वेस्यादि-सहिता मत्ता गायका गर्त्तसंज्ञिताः।
जलार्थमेव गर्तास्तु नीचा गानोपजीविनः ॥'

वेश्यादि सहित गायक, भाट, डोम, नीच कौ गान सूकर के गड़ेला के जलवत् है। सो वामें न्हाय, पीवे सो जैसें नीच कौ गान-रस पीवे। या प्रकार के दोष श्रीआचार्य-जी कहे हैं।

सो कृष्णदास परम ज्ञानवान मर्यादा के रक्षक। सो ये वेस्या के गान पर रीझे ? सो इनकी देखादेखी करे

सो बहिर्मुख होय। ये तो सब कों शिक्षा देवे कों, उद्धार करन कों प्रकटे हैं, तासों ये कृष्णदास वेश्या के ऊपर क्यों रीझे?

यह संदेह होय? तहां कहत हैं जो- यहां कारन और है। जो- यह वेश्या की छोरी लीला-संबंधी दैवी जीव ललिताजी की सखी है, सो लीला में इनकों नाम 'बहुभाषिनी' है।

सो एक दिन ललिताजी श्रीठाकुरजी के लिये सामग्री करत हती, तब ललिताजी ने बहुभाषिनी सों कही जो- तू मिश्री पीसिके ले आउ। सो बहुभाषिनी

---

* .... * भावप्रकाश वाली वार्ता प्रति में इस स्थान पर इस प्रकार पाठ भेद है :-

एक वेश्या अपनी छोरी कों नृत्य सिखावति हती। सो वह छोरी परम सुन्दर बरस बारह की हती, कंठ हू परम सुन्दर हतो। सो गान नृत्य में चतुर बोहोत हती। सो वह वेस्या ताल टप्पा गावत हती। सो वह छोरी को गान कृष्णदास के कान पे पर्यो हतो, सो कृष्णदास के मन में बैठि गयो, सो प्रसन्न होइ गये।

तब कृष्णदास ने तहाँ अपनो रथ ठाडो कियो, सो भीर सरकाइके वा छोरी कौ रूप देखे। सो तहाँ गान सुनिके मोहित होइ गये सो ठाडे होइ के गान नृत्य सुनिके मन में विचारे जो-यह सामग्री तो अति उत्तम है, और दैवी जीव है। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के लाइक है तासों श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु याकों अंगीकार करें तो आछो है।

मिश्री कौ ड़बरा भरिके ले चली। सो दूसरी सखी सों बात करते करते छांटा उड्यो, सो मिश्री में पर्यो। सो बहुभाषिनी कों खबरि नाहीं।

पाछें मिश्री कौ डबरा लेके ललिताजी के पास आई, तब ललिताजी परम चतुर हतीं सो जानि गई। पाछें बहुभाषिनी सों कही जो यह सामग्री छुइ गई, जो–तेरे मुख तें छांटा पर्यो है। सो भगवद्-इच्छा होनहार। तब बहुभाषिनी ने कही जो– तुम झूठ कहत हो, छांटा तो नाहीं पर्यो, और श्रीठाकुरजी सखा-मंडली में सब की जूठनि हू लेत हैं।

सो तब ललिताजी ने कह्यो जो- प्रभुन की लीला तू कहा जाने? प्रभु प्रसन्न होइ चाहे सो करें, सोई छाजे, जो– अपने मन तें कछु हीन क्रिया करे सोई भ्रष्ट। तासों तू हीन ठिकाने जायगी। तब बहुभाषिनी ने कही जो– तुम हू शूद्र के घर जन्म लेके मेरो उद्धार करो। जो- तुमकों छोड़िके मैं कहां जाउं?

सो या प्रकार परस्पर श्राप भयो। तब कृष्णदास शूद्र के घर जन्मे, और बहुभाषिनी कौ जन्म वेश्या के घर मात्र भयो, सो लौकिक पुरुष कौ मुख नाहीं देख्यो। सो कृष्णदास कौ श्रीगोवर्द्धनधर प्रेरिके आगरे में वा वेश्या के अंगीकार के लिये पठाए। तासों कृष्णदास के हृदय में वेश्या कौ गान प्रिय लग्यो।

पाछें कृष्णदास ने वा बेस्या कों दस मुद्रा तो उहांई दिए, और कह्यो जो– (हमारे डेरान पर) रात्रि कों समाज सहित आइयो। पाछें कृष्णदास तो एक हवेली में उतरे। जो– सामग्री चहियत हती, सो सब लेके गाडा लदाइके सिद्ध करि राख्यो।

(ता) पाछें रात्रि पहर एक गई। तब वह बेस्या समाज सहित आई। पाछें नृत्य भयो गान भयो, कृष्णदास बोहोत रीझे। मुद्रा एक सत दीने। और वा बेस्या तें कह्यो जो– तेरो रूप हू आछो और गान हू आछो, नृत्य हू आछो। ❀ परि हमारो सेठ है, सो तेरे ख्याल टप्पान पे न रीझेगो। तातें मैं कहूं सो गाइयो। पाछें कृष्णदास ने पूरवी राग में एक पद करिके वा बेस्या कों सिखायो। पाछें दूसरे दिन वा बेस्या कों साथ लेके

आगरे तें चले, सो दूसरे दिन श्रीजीद्वार आइ पोहोंचे। सामग्री सब भंडार में धराइ दई। पाछें उत्थापन के समें जब दर्शन होन लागे तब कीर्तनिया वा गेल काहू कों जान न दीने। तब बेस्या कों समाज-सहित मणि-कोठा में ले गए *।

...... इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति का पाठ इस प्रकार हैः—

"तासों-सवारे हम श्रीगोवर्द्धन जाइगें, और हमारो सेठ तो उहाँ है जो- तेरो मन होइ तो तू चलियो। तब वा वेस्या ने कही जो- हमकों तो यही चहिये। पाछें वह बेस्या अपने मन में बोहोत प्रसन्न भई, जो- ये इतने रुपैया दिये, तो सेठ न जाने कहा देइगो ?

सो तब बेस्या ने घर आइके अपनी गाड़ी सिद्ध कराई। सो गाइवे को साज सब आछे बनाइ गाड़ी ऊपर धरि राख्यो। तब सवारें भए कृष्णदास के पास आई। पाछें कृष्णदास वा वेस्या कों लिवाइके ले चले, सो मथुरा आइ रहे। तब दूसरे दिन मथुरा तें चले सो मध्यान्ह समय गोपालपुर में आए। पाछें वा वेस्या कों न्हवाइके नवीन वस्त्र पहेरवे कों दियो, सो वाने पहर्‌यो। तब कृष्णदास अपने मन में विचारे जो- यह ख्याल टप्पा गाइगी सो-श्रीगोवर्द्धनधर सुनेंगे। तासों में याकों एक पद सिखाऊं। तब कृष्णदासने वा बेस्या कों एक पद सिखायो। और कह्यो जो- ये पद तू पूरवी राग में गाइयो। सो पद :— ॥ राग पूरवी ॥

'मो-मन गिरधर-छवि पर अटक्यो०'।

यह पद कृष्णदास ने वा वेस्या कों सिखायो।

ता पाछें उत्थापन के दर्शन होइ चुके, तब भोग के दर्शन के समय वा वेस्या कों समाज-सहित कृष्णदास पर्वत के ऊपर ले गये

भावप्रकाश—

सो भोग के समय यातें ले गए, जो–उत्थापन के समय निकुंज में जगिके (श्रीठाकुरजी) उठत है। तातें उत्थापन भोग वेगि आयो चहिये। और भोग के दर्शन-व्रज के मार्ग में पधारत हैं, सो अनेक भक्तन कों अंगीकार करत हैं, तासों याहू कों अंगीकार करनो है। तासों भोग के समय कृष्णदास वेस्या कों पर्वत ऊपर ले गये।

मंदिर में श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कों मूठा करत हते। (पाछें भोग के किवाड खुले) और मणिकोठा में वह बेस्या नृत्य करन लागी, और (कृष्णदास ने) पद (करिके सिखायो हतो सो) गायो। सो पद :—

॥ राग पूरवी ॥

मो मन गिरिधर-छवि पर अटक्यो।
ललित त्रिभंगी पर चलियो तहां ही जाइ ठटक्यो॥
सजल स्याम घनवरन नील व्हे फिरि चित अनत न भटक्यो
"कृष्णदास" कियो प्रान न्योंछावरि यह तन जग सिर पटक्यो।

यह पद वा बेस्या ने श्रीनाथजी के आगें गायो। सो गावत गावत जब पिछली

तुक आई, जो-"कृष्णदास कियो प्राण न्यों-छावरि यह तन जग सिर पटक्यो"। इतनो कहत मात्र वा वेस्या के प्राण निकसि गए, और दिव्य सरीर धरिके श्रीनाथजी की लीला में प्राप्त भई।

भावप्रकाश—

तहां यह संदेह होइ, जो- श्रीआचार्यजी के संबंध-बिना लीला की प्राप्ति कैसे भई? तहां कहत हैं जो-कृष्णदास के हृदय में श्रीआचार्यजी विराजत हैं। सो कृष्णदास ने पद वेस्या की छोरी कों सिखायो, सो-देखिबे मात्र है। या पद द्वारा श्रीआचार्यजी कौ संबंध कराए। तासों यह पहिली तुक में कहे जो- 'मो मन गिरिधर-छवि पर अटक्यो' सो सगरो धर्म, मन लगाइवे की रीत करी है। जीव अपनी सत्ता मानि स्त्री, पुत्र, देह में मन लगायो (है) तासों समर्पन करावत हैं।

तहां कोऊ कहे, जो- जीव सब दे चुक्यो है, जो-अपनी सत्ता छोडिकें प्रभुन की सत्ता सब है। तासों मोकों तो एक श्रीकृष्ण ही गति हैं। तासों या पद में कहे जो- मो मन श्रीगोवर्द्धनधर की छवि पर अटक्यो। सो

सब छोडिके, या प्रकार कृष्णदास-द्वारा श्रीआचार्यजी आपु संबंध कराए, यह जाननो।

तोहू संदेह होय, जो–गुरु विना लीला में कैसे प्राप्त भई? सो अलीखान कों प्रभु दर्शन दिए। ता पाछें अलीखान कों और अलीखान की बेटी कों सेवक होइवे की कही, सो सेवक कराए।

यहां नाहीं कराए, यह संदेह होइ सो काहेतें? जो-ब्रह्मसंबंध में श्रीगोवर्द्धनधर की हू यही आज्ञा है जो-जाकों तुम ब्रह्मसंबंध करवावोगे, ताकूं मैं अंगीकार करूंगो। तासों इन कों श्रीआचार्यजी महाप्रभु, श्रीगुसांई-जी द्वारा ब्रह्मसंबंध न भयो, और लीला की प्राप्ति कैसे भई? उद्धार होइ, परंतु लीला की प्राप्ति अत्यंत दुर्लभ? सो-ब्रह्मसंबंध कौ दान करिवे के लिए श्रीआचार्यजी के कुल कौ विस्तार भयो।

सो काहे तें? जो- सेवकन कों श्रीआचार्यजी आपु नाम सुनाइवे की आज्ञा दीनी, परि ब्रह्मसंबंध की नाहीं। तासों ब्रह्मसंबंध कौ दान वल्लभकुल ही तें होइ। सो-और तो फलित नाहीं है। यह संदेह होइ तहां कहत हैं, जो–वेस्या की छोरी देह तजिके लीला में गई, तहां लीला में ललिता,

श्रीगुसांईजी सदा बिराजत हैं। सो कृष्णदास लीला में ललितारूप होइ जगत तें काढ़िके लीला में पठाए, सो लीला में श्रीललिताजी ने श्रीस्वामिनीजी द्वारा ब्रह्मसंबंध कराइ अपनी सेवा में राखे। सो काहेतें ? जो- ललिताजी की सखी है।

या प्रकार ब्रह्मसंबंध भयो। सो-जैसे मथुरा में नागर की बेटी कों लीला में ब्रह्मसंबंध श्रीगुसांईजी कराए। यह भाव जाननो।

तब वा वेश्या के समाजी रोवन लागे, और कहन लागे जो- हमारी तो यातें जीविका हतो वो गई अब हम कहा खांइगे ?

❀ तब कृष्णदास ने कह्यो जो- तुम क्यों रोवत हो ? चलो नीचे, हों खाइवे कों देउंगो। तब उन समाजीन कों नीचे लाइके सहस्र मुद्रा देके बिदा किए ❀।

❀··· ·❀ भावप्रकाश वाली वार्ता का पाठभेद :—

तब कृष्णदास ने उनकों नीचे ले जाइके कह्यो—जो- अब तो भई सो भई, जो याकी इतनो आंरचल हती, सो या वात कौ कोऊ कहा करे ? अब तुम कहो सो तु कों देऊं ? तब उन ने कही जो- हजार रुपया देउ जो- कछूक दिन खांइ, पाछें जो- होनहार होइगी सो होइगी। तब कृष्णदास ने हजार रुपैया देके उन सबन को बिदा किये।

कृष्णदास ने मन तें वह बेस्या श्रीनाथ-जी कों समर्पी, तातें श्रीनाथजी ने वा बेस्या कौ अंगीकार कियो। और श्रीआचार्यजी महा-प्रभुन की कानि तें सेवक की समर्पी वस्तु मानिलेत है।

(सो वे कृष्णदास एसे भगवदीय हते, जो- बेस्या कों अंगीकार करायो।)

(इति वार्ता पञ्चम)

—:o:—

वार्ता प्रसंग *

(और एक समय सगरे बैष्णव मिलिके कुंभनदासजी के पास आए। सो उनकों प्रीति सों बैठारिके पूंछे जो- आजु बड़ी कृपा करी, जो-कछु आज्ञा करिये। तब वैष्णवन ने कही जो-तुम सों कछु मार्ग की रीति सुनिवे कों आए हैं। तब कुंभनदास ने कह्यो जो-मार्ग

* यह प्रसंग सं० १६६७ की वार्ता प्रति में नहीं है।

की रीति में तो कृष्णदास अधिकारी निपुण हैं, सो उन सों पूछो । तब उन वैष्णवन ने कही जो- हमारी सामर्थ्य नाहीं है, जो- कृष्णदास सों पूछि सकें। तब कुंभनदास ने कह्यो जो- तुम मेरे संग चलो, जो—तिहारी ओरतें हम पूछेंगे । तब सगरे वैष्णव कुंभनदास के संग गए ।)

भावप्रकाश—

सो कुंभनदासजी यातें नाहीं कहे, जो—कुंभनदासजी कौ मन रहस्य-लीला में मगन है। सो कहा जानिये ? जो-प्रेम में कहा वस्तु निकसि पड़े ? और कीर्तन में गूढ रीति सों लीला वर्णन करत हैं। तासों जाकौ जैसो अधिकार है, ताकों तैसो कीर्तन में भासत है । और वैष्णवन सों कहनो परै सो खोलिके समुझावनो परै। तासों कुंभनदासजी कृष्णदास के पास सारे वैष्णवन कों संग लेके आए।

(सो तब सब वैष्णवन कों देखिके कृष्णदास बोहोत प्रसन्न भए, और सबन

कों आदर करिके बैठारे। ता समय कृष्णदास ने यह कीर्तन गायो। सो पद :—

राग सारंग—'गिरधर जब अपुनो करि जानें०।)

(यह पद कृष्णदास ने कह्यो। पाछें कृष्णदास ने पूंछी जो–आज मो पर सगरे भगवदीय कृपा करे सो-मेरे पास पधारे, तासों अब जो–प्रसन्न होइके आज्ञा करो सो मैं करूं। तब कुंभनदास ने कह्यो जो-सगरे वैष्णवन को मन पुष्टिमार्ग की रीति सुनिवे को है। सो कहा कहिये? कहा सुमिरन करिये? सो एसे पुष्टिमार्ग को अनुभव होइ सो कृपा करिके सुनावो।)

(तब कृष्णदास ने कह्यो जो- कुंभनदास-जी! तुम सगरे प्रकार करिके योग्य हो, जो-श्रीआचार्यजी के कृपा-पात्र भगवदीय हो, सो उचित है। तुम बड़े हो, जो-- तिहारे आगें मैं कहा कहूं? तुम सों कछु छानी नाहीं है।

तब कुंभनदास कृष्णदास सों कहे जो-- तुम कहो, हमारी आज्ञा है। जो--सगरे सेवकन में तुम मुख्य हो। सेवकन कौ कार्य तिहारे हाथ है, जो--यह पुष्टिमार्ग के अधिकारी तुम हो, तातें तुम कहो।)

(तब कृष्णदास ने पहिले अष्टाक्षर कौ भाव कीर्तन में कह्यो, सो पद :—

राग सारग—'कृष्ण श्रीकृष्ण शरणं मन उच्चरै०'।)

(सो यह अष्टाक्षर कौ भाव कहिके अब पंचाक्षर कौ भाव कीर्तन में गाए। सो पद :—

राग सारंग--'कृष्ण ये कृष्ण मन मांहि गति जानिये०'।)

(सो ये दोइ कीर्तन कृष्णदास ने गाइ सुनाये। तब सगरे वैष्णव प्रसन्न होइके कहे जो—कृष्णदास! तुम धन्य हो। जो—दोइ कीर्तन में संदेह दूरि कियो। और मार्ग कौ सब सिद्धांत बतायो)

(ता पाछें कृष्णदास सों विदा होइके सगरे वैष्णव अपने घर कों गए। सो वे कृष्णदास श्रीआचार्यजी के ऐसे कृपा-पात्र भगवदीय हते।)

वार्ता षष्ठ

और कृष्णदास को गंगाबाई क्षत्राणी सों बोहोत स्नेह हतो। सो श्रीगुसांईजी कों न सुहाव तो।

भावप्रकाश

सो काहेतें ? जो– लीला में गंगाबाई श्रुतिरूपा के जूथ में तामसी भक्त हैं। सो मथुरा के एक क्षत्री के घर जन्मी। पाछें बरस ११ की भई। तब गंगाबाई कौ मथुरा में एक क्षत्री के घर ब्याह भयो। पाछें गंगाबाई क्षत्राणी के जो बेटा होइ सो मरि जाए। सो नौ बेटा भए, ता पाछें एक बेटी भई। सो बेटी कौ विवाह गंगाबाई क्षत्राणी ने कियो। गंगाबाई की बेटी के गहनो बोहोत हतो। सो वह बेटी मरी, सो बेटी कौ गहनो लाख रुपैया कौ दाबि राख्यो, सो कछू मथुरा के हाकिम कों देके गहनो सब राख्यो।

ता पाछें बरस ५५ की भई तब झगडा के लिये श्रीनाथजीद्वार आइके रही। सो कृष्णदास सों मिलिके श्रीआचार्यजी सों सेवक होइवे की कही। तब कृष्णदास ने श्रीआचार्यजी सों विनती कीनी, जो--महाराज! गंगा-छत्राणी कों शरण लीजिये। तब श्रीआचार्यजी आपु कहे जो-जीव तो दैवी है, परन्तु अभी मन श्रीठाकुरजी में नाहीं है।

तब कृष्णदास ने विनती कीनी जो-महाराज! आपकी कृपा तें श्रीगोवर्द्धननाथजी करेंगे। पाछें श्रीआचार्यजी आपु कृष्णदास के आग्रह सों गंगाबाई कों नामनिवेदन करवायो।

सो कृष्णदास पहिले श्रीगोवर्द्धननाथजी के भेटिया होइके परदेस कों जाते, तब गंगाबाई क्षत्राणी मथुरा कों आवती। पाछें कृष्णदास श्रीनाथजीद्वार आवते तब गंगा-क्षत्राणी हू मथुरा सों सगरी वस्तु ले श्रीजीद्वार आवती। सो कृष्णदास गंगाबाई को मन भगवद्-धर्म में लगाइवेके तांई दोऊ समें को महाप्रसाद श्रीनाथजी को वाके घर पठावते। क्यों? जो-गंगाबाई की खान-पान में प्रीति बोहोत हती। सो कृष्णदास बोहोत सुन्दर सामग्री श्रीनाथजी कों आरोगावते, और गंगाबाई कों भगवद्-धर्म समुझावते। पाछें कृष्णदास गंगाबाई कों श्रीनाथजी के सगरे दर्शन हू करावते। सो कृष्णदास के संग तें गंगाक्षत्राणी को मन अलौकिक भयो।

सो एक समै श्रीगुसांईजी (आपु) श्री-नाथजी कों राजभोग समर्पत हते, सो सामग्री पर गंगाबाई की दृष्टि परी * तातें श्रीनाथजी भोग न आरोगे, परि भोग तो समर्प्यों। पाछें समय भए (श्रीगुसांईजी आपु) भोग सरायो। राजभोग आर्त्तीकरि अनोसर करिके श्रीगुसांईजी तो (पर्वत तें) नीचे पधारे। तब सब सेवक भीतरयान ने प्रसाद जानिके सबन ने प्रसाद लियो (और) श्रीगुसांईजी तो भोजन करिके ❀ पोढ़े।

ता पाछें श्रीनाथजी ने एक (रामदास) भीतरिया कों लात मारिके जगायो (तब रामदासजी जागे सो देखे तो श्रीगोवर्द्धननाथजी

* श्रीगुसांईजी के समय श्रीनाथजी की सामग्री की सेवा मंदिर के नीचे जो १२ कोठा थे, उनमें होती थीं और सिद्ध होने के बाद ऊपर लाकर निज मंदिर में भोग आतीथी। सो ऊपर लाते समय दृष्टि पडी।

❀भावप्रकाश वाली प्रति में-'महाप्रसाद लेके' ऐसा पाठभेद है

हैं। सो रामदास दंडवत करिके हाथ जोडिके ठाडे भए।) और (तब श्रीगोर्द्धननाथजी आपु) वासों कह्यो जो– हों तो भूखो हूं।

तब वा (रामदास) भीतरिया ने श्री-नाथजी सों कह्यो। जो–महाराज! भोग तो श्रीगुसांईजी ने समर्प्यो हतो, और आप भूखे क्यो रहे? तब श्रीनाथजी ने वा भीतरिया सों कह्यो जो–राजभोग में तो (सामग्री ऊपर) गंगा-क्षत्राणी की दृष्टि परी, तातें भोग आरोग्यो नाहीं।

तब वह (रामदास) भीतरिया उठिके श्रीगुसांईजी पास आयो। श्रीगुसांजी भोजन करिके पोंढे हुने। तब भीतरिया ने श्रीगुसांई-जी की सेज्या पास जाइ चरण दावे। तब श्रीगुसांईजी चोंकि परे, देखे तो श्रीनाथजी को भीतरिया है। तब श्रीगुसांईजी ने वा भीतरिया सों पूंछ्यो जो- तू इतनी बार इहां

क्यों आयो है ? तब भीतरिया ने कह्यो जो–महाराज ! आज श्रीनाथजी तो भूखे हैं। सो मो सों श्रीनाथजी ने आग्या करी है। तब मैंने श्रीनाथजी सों कह्यो जो–महाराज ! भोग तो श्रीगुसांईजी ने समर्प्यो हतो, तुम भूखे क्यों रहे ? तब श्रीनाथजी कहे जो–राजभोग में तो गंगाच्त्राणी की दृष्टि परी, तातें राजभोग आरोग्यो नाहीं।

तब श्रीगुसांईजी यह सुनिके तत्काल स्नान करिके ऊपर (श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में) पधारे, और भीतरिया हू स्नान करिके श्रीगुसांईजी के साथ ही पहुंच्यो। तब श्रीगुसांईजी ने (सीतकाल देखिके) वा भीतरिया सों कह्यो जो-- भात और बड़ी करो, जो--तत्काल सिद्ध होइ आवै। तब (भीतरिया ने) भात और बड़ी करी, सो तत्काल सिद्ध भई। तब (श्रीगुसांईजी आपु)

श्रीनाथजी कों भोग समर्प्यो । तब और भीतरिया, रसोईया स्नान करिके सब ऊपर आए । तब श्रीगुसांईजी ने आग्या करी जो-राजभोग की सामग्री सिद्ध भई, और सेन-भोग की सामग्री सिद्ध करो । सो सामग्री सिद्ध भई । तब राजभोग और सैनभोग सब इकठौरो समर्प्यो ।

पाछें समय भयो । तब भोग सरायो, सैन आरती करी । श्रीनाथजी कों पोंढाए । भोग सर्‌यो हतो सो सब प्रसाद नीचे उतार्‌यो । भातबड़ी पहलो भोग समर्प्यो हतो सो एक डबरा उहांई रह्यो । तब राम-दास भीतरिया ने कह्यो जो– पहलो भोग समर्प्यो हतो सो उहांई रहि गयो । तब श्री-गुसांईजी डबरा में तें ठलाइके नीचे उतरे । पाछें सब सेवक भीतरियान कों वा बड़ीभात कौ प्रसाद रंचक-रंचक सबन कों बांटि दीनो

पाछें श्रीगुसांईजी आप हू प्रसाद वामें तें लियो । सो बड़ीभात कौ प्रसाद बोहोत अद्भुत भयो जो--श्रीगुसांईजी बोहोत सराहे ।

(पाछें रामदास आदि सब सेवकन ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो - महाराज ! यह सामग्री तो सीतकाल में कितनीक वार करी है, परन्तु आजु बोहोत स्वाद भयो । तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो - श्रीगोवर्द्धननाथ-जी आपु भूखे हते सो प्रीति सों आरोगे, तासों स्वाद अद्भुत भयो ।)

तब कृष्णदास ओट ठाढे हते । तब कृष्णदास ने कह्यो जो-- महाराज ! आप ही करनवारे, और आप ही आरोगनवारे, तो क्यों उत्तम न होई ? तब श्रीगुसांईजी हँसिके कह्यो जो-- ए तुमारे किये भोग भोगत हैं ।

भावप्रकाश—

तहां यह संदेह होइ जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगे नाहीं। सो गुसांईजी आपु भोग सराए, आचमन मुख-वस्त्र करायो पाछें श्रीगोवर्द्धनधर कों वीरी आरोगाए। सो भूखे श्रीगुसांईजी ने न जाने ? और वीरी आरोगत श्रीगोवर्द्धनधर श्रीगुसांईजी सों न कहे, जो– मैं राजभोग नाहीं आरोग्यो। ताकौ कारण कहा ? जो– रामदास भीतरिया सों क्यो कहे ?

सो यह संदेह होइ तहां कहत हैं, जो-श्रीगोवर्द्धन-नाथजी वा दिना श्रीगोकुल में श्रीनवनीतप्रियजी के यहां श्रीगिरधरजी ने वड़ीभात करायो हतो, श्रीशोभावेटीजी किये। सो तब श्रीगिरधरजी और श्रीशोभावेटीजी के मन में आई, जो–श्रीगोवर्द्धनधर आपु पधारें और नौतन सामग्री आरोगें। तासों उहां वह दूसरो स्वरूप (भक्तोद्धारक) श्रीगिरिराज तें पधारिके श्रीगोवर्द्धनधर वड़ीभात आरोगे। और श्रीगिरिधरजी, श्रीशोभावेटीजी कौ तो मनोरथ, सो भक्तन कों अनुभव करत हैं। सो स्वरूप तो आरोगि पाछें श्रीगिरि राज पर्वत के ऊपर पधारे। सो उहां (गिरिराज पें) सगरे सेवक महाप्रसाद ले चुके, और श्रीगुसांईजी आपु पौढ़े। ता समय मंदिर में श्रीस्वामिनीजी ने पूंछी जो– कहो कहां, होइ आए हो ? तब श्रीगोवर्द्धनाथजी कहे, जो-

बड़ीभात श्रीगोकुल में श्रीगिरिधरजी श्रीशोभावेटीजी को मनोरथ (हतो) सो आरोगिके आयो हूं। यह सुनिके श्रीस्वामिनीजी ने हू बड़ीभात आरोगिवे कौ मनोरथ कियो, जो–बड़ीभात आरोगें तो आछो। सो यहां (तो) राजभोग होइ चुके।

तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीनाथजी सों कह्यो, जो–जाइके रामदास सों कहो जो--सामग्री पे गंगाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी है। सो काहेतें ? जो- लीलासृष्टि के वचन हू सिद्ध करने हैं। जो–श्रीगुसांईजी कों छै महिना कौ विप्रयोग है।

यातें जो- लीला में एक समय श्रीठाकुरजी ललिताजी सों कहे जो– मैं तेरी निकुंज में पधारूंगो। यह वात श्रीचंद्रावलीजी ने सुनी। सो श्रीचंद्रावलीजी ने श्रीठाकुरजी कों विविध चतुराई करि सेवा द्वारा ललिताजी के यहां छै मास तक पधारवे सों बरजे। सो ललिताजी विरह करि महा कृस होइ गई। पाछें यह वात श्रीस्वामिनीजी ने जानी, सो श्रीस्वामिनीजी ललिताजी कों संग लेके श्रीठाकुरजी की पास वाही समय आई। और श्रीठाकुरजी सों कह्यो जो- तुम (ने) छै महिना लों मेरी सखी कों विरह दियो, अब तुम छै महिना लों ललितासखी के वस में रहोगे। और जाने मेरी सखी कों

दुख दियो हैं, सो छै महिना लों दुःख पावो, और वाकों तिहारो दर्शन हू न होय । सो यह बात सुनिके श्रीठाकुरजी आपु चुप होइ रहे ।

यह बात एक सखीने श्रीचंद्रावलीजी सों कही । सों सुनिके श्रीचंद्रावलीजी कहे जो– श्रीस्वामिनीजी श्रीठाकुरजी तो बड़े हैं, तासों इनसों तो कछू कही जाइ नाहीं । परंतु ललिता सखी होइ एसो खोटो कियो, जो– श्रीस्वामिनीजी की सखी, सों मेरी सखी बराबरी है । सो इन (नें) मोकों श्राप दिवायो जो– छै महीना लों मोकों प्रभुन कौ दर्शन हू नाहीं ? सो ललिता ने स्वामिनी–द्रोह कियो ।

सो काहेतें ? जो-- श्रीठाकुरजी तें श्रीस्वामिनीजी प्रकटीं हैं। और स्वामिनीजी के मुखचंद्र तें श्रीचंद्रावलीजी प्रकटीं । श्रीचंद्रावलीजी तें सगरी स्वामिनी सखी प्रकटीं हैं । तासों श्रीठाकुरजी के दच्छिण भाग श्रीचंद्रावलीजी विराजत हैं । याते जो– सगरी सखीन के स्वामिनी-रूप, श्रीचंद्रावलीजी (सो सर्व में) श्रेष्ठ हैं । तासों श्रीचंद्रावलीजी नें कही जो--ललिता ने स्वामिनी-द्रोह कियो है, तासों ललिता की अकाल मृत्यु होऊ, और प्रेत-योनि कूं पावो । सो श्रीठाकुरजी हू श्रीस्वामिनीजी हू रच्छा न करि सकें ।

और काहूतें प्रेत-योनि निवृत्त न होइ । जो- मोकों श्राप दिवायो ताको यह फल भोगो ।

यह बात काहू सखी ने ललिताजी सों कही। सो सुनत ही ललिताजी महा कंपायमान होइके तत्काल दोरिके श्रीस्वामिनीजी के चरणन में आइके गिरि परी। पाछें अपनी सब बात ललिताजी ने कही।

तब श्रीस्वामिनीजी ने श्रीठाकुरजी कों बुलाइके कह्यो जो- ललिता अपने हाथ सों गई, तासों अब कछू उपाय करो। पाछें श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी कों संग लें ललितादि-समाज सहित श्रीचंद्रावलीजी के यहां पधारे। सो श्रीचंद्रावलीजी तत्काल उठिके श्रीठाकुरजी कों स्वामिनीजी कों नमस्कार करिके ऊंचे आसन पधराए। पाछें परम प्रीति सों दोउ स्वरूपन की पूजा करिके सुन्दर सामग्री आरोगाए। ता पाछे बीरी आरोगाइ श्रीचंद्रावलीजी हाथ जोरिके ठाड़ी भईं। सो तब दोऊ स्वरूपन ने प्रसन्न होइके श्रीचंद्रावलीजी कों हाथ पकरिके पास बैठारी।

ता पाछें श्रीस्वामिनीजी कहे जो—सुनो श्रीचंद्रावलीजी! तिहारी प्रीति तो महा अलौकिक है, और हमारे तिहारे में कछू भेद नाहीं है। और यह ललिता अपनी सखी है, सो यह तिहारी है। तासों अब याकों श्राप भयो है, सो ताको छुटकारो करो।

तब श्रीचंद्रावलीजी कहे जो—ललिता अपनी है। तासों यह कछू भयो है, सो यह जगत पर लीला करन अर्थ भयो है। सो यह ललिता प्रेत होयगी, ताकौ मैं ही उद्धार करूंगी। जो—यह मेरो निश्चय वचन है।

तब ललिताजी श्रीचंद्रावलीजी के चरणन में गिरिके कह्यो, जो— मैं तिहारो अपराध कियो सो पायो है। तब श्रीस्वामिनीजी ने कही जो—यह सगरो परिकर कलियुग में श्रीगिरिराज ऊपर लीला करनी है, तहां—सब प्रगट होइगो। सो श्रीस्वामिनीजी के यह बचन सुनिके श्रीठाकुरजी, श्रीचंद्रावलीजी ललिताजी आदि सब प्रसन्न भए।

सो लीला-सृष्टि में अलौकिक स्नेह है, और अलौकिक श्राप है, और अलौकिक ही ईर्षा है, जो मायाकृत तहां नाहीं है। सो उहां ही करिके है। सो भूमि पर यश प्रकट करन के अर्थ ईर्षा श्राप कौ मिष-मात्र। भूमि के जीव लीला-गान करि प्रभुन कों पावें, सो यही अलौकिक करनो। सो लौकिक ईर्षा श्राप जानै ताकौ बुरो होय, और अपराधी होय। सो लीला सृष्टि में सब अलौकिक क्रिया है। यह जाननो।

होइ। सो लीला सृष्टि में सब अलौकिक क्रिया है, यह जाननो।

या प्रकार श्रीठाकुरजी श्रीस्वामिनीजी की इच्छा तें श्रीगोवर्द्धन-गिरिराज में प्रकट भए, और श्रीस्वामिनीजी-रूप श्रीआचार्यजी महाप्रभु श्रीगोवर्द्धनधर कोंप्रकट किये, सो लीला में श्रीस्वामिनीजी तें चंद्रावलीजी को प्राकट्य। ताही भांति सों यहां श्रीआचार्यजी सों श्रीगुसांईजी को प्राकट्य, और ललिता सो कृष्णदास अधिकारी भए। और श्रीगोवर्द्धनधर के अनेक स्वरूप हैं, परन्तु दोइ रूप सदा रहत हैं। सो एक तो श्रीआचार्यजी महाप्रभुनने उहां पधराए सो तहां बिराजमान है, और एक स्वरूप (भक्तोद्धारक) सो सगरे भक्तन कों सुख देत है। जो कुंभनदास, गोविन्दस्वामी के संग खेलते। सो जहां जहां भगवदीय हैं, तिनकों अनुभव करावत हैं।

तातें जा समय श्रीगुसांईजी आपु भोग समर्पत हते और गंगाबाई क्षत्राणी की दृष्टि परी, ता समय श्रीगुसांई-जी राजभोग धरे हे सो आरोगे। (क्यों?) जो-श्रीगो-वर्द्धनधर आरोगें नाहीं, तो असमर्पित खाइके सगरे सेवक भ्रष्ट होइ जांय? तातें श्रीआचार्यजी के मंदिर में पधराये, सो स्वरूप ने आरोग्यो।

यातें श्रीस्वामिनीजी ने श्रीगोवर्द्धनधर सों कह्यो जो- श्रीगुसांईजी कों छै महीना कौ वियोग है, तासों गंगाबाई कौ नाम लीजियो । सो कृष्णदास की और गंगाबाई की प्रीति है, सो गंगाबाई सों श्रीगुसांईजी कहेंगे और कृष्णदास कों बोली मारेंगे, तब कृष्णदास कों बुरी लगेगी।

सो काहेते ? जो यह कार्य करनो, जो- कृष्णदास के मनमें बुरी लागे, तब श्रीगुसांईजी कों वियोग होय। तासों तुम जाइके कहो जो-मैं भूख्यो हूं। सो तब श्री-नाथजीने रामदास सों जाइ कही । परि रामदास यह भेद जाने नाहीं। सो रामदास ने श्रीगुसांईजी सों जाइ कह्यो, तब श्रीगुसांईजी मनमें जाने जो-सामग्री ऊपर गंगाबाई की दृष्टि परी । अब हम सों और कृष्णदास सों लीला में बात भई हती सो पूरन करिवे की श्रीनाथजी की इच्छा है सो निश्चय होइगो, यह जानि परत है। तासों अब जो-सेवा बनै, सो प्रीति सों करनो । क्यो ? जो- सेवा अब दुर्लभ है।

यह बिचारिके तत्काल न्हाइ बड़ीमात यहां नाहीं भयो हतो और श्रीगोकुल तें आरोगिके आए, तासों गिरिराज के ठाकुर कों हू धरनो, सो बेगि सिद्ध करि

धरे। ता पाछें सैनभोग की संग राजभोग धरे। ता पाछें सेन आरती करि अनोसर कराइके मन में विचारे, जो-अब श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दर्शन महाप्रसाद सब ही दुर्लभ भयो। सो बड़ीभात कौ डबरा उठाइ मृतिका के पात्र ही में ठलाइके पर्वत तें उतरि रंचक-रंचक सबनकों दिये, सो आपु ही लिये, सो बोहोत सराहे।

तब कृष्णदास ने भगवद्-इच्छा तें बोली (व्यंग) मारी जो-आपु ही करनहारे, और आपु ही आरोगनहारे। सो क्यों न स्वाद होय ?

सो यामें यह जताए जो--हम सों न पूंछे, जो--तुम ही जाइ सामग्री किये, और तुम ही जाइके आरोगे। एसो सौभाग्य तिहारो ही है, सो बड़ाई करत हो। सो सब प्रकार सों तिहारी ही बनी है। यह बोली कृष्णदास मारे।

तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो--यह तिहारो ही कियो भोग भोगत हैं। सो यह कहिके दोऊ बात जताए जो-- गंगाबाई क्षत्राणी सों प्रीति करि वाकों बैठारि राखे, सो वाकी राजभोग की सामग्री पे दृष्टि परी, सो यह तिहारो कार्य है। नाहीं तो गंगाबाई ऊहा तांइ कैसे जाय ? और तुमने लीला में श्रीस्वामिनीजी सों श्राप दिवायो, सो तिहारो कार्य है। सो तिहारे ही किये भोग भोगत हैं।

भावप्रकाश—

सो श्रीगोकुल हू श्रीनवनीतप्रियजी के यहां यातें नहीं पधारे जो– श्रीस्वामिनीजी के वचन हैं । जो–हम हूं कों और श्रीठाकुरजी कों हू विप्रयोग होइगो । तासों श्री-गोकुल जाइंगे तो कहा जानिए कैसी होय ? तासों अब छै महीना लों मिलाप श्रीठाकुरजी सों दुर्लभ है, तासों परासोली में वैठि रहे।

सो परासोली में ध्वजा के सामें बैठिके विज्ञप्ति करें। और श्रीगुसांईजी दिन तीन तो श्रीगोर्द्धन रहते, और दिन तीन श्रीगोकुल रहते ।

न्हाइके मंदिर में पधारे हैं। टीफेत तो वे है, तासों जब वे आप कों बुलावेंगे तब आप पर्वत ऊपर आइयो । तासों अब आप पर्वत ऊपर मति चढो, जो– श्रीगोवर्द्धनधर के दर्शन न होंइगे ।

तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि लीला की वात सुमिरन करिके परासोली कूं पधारे, तहां रहे। सो तहां विप्रयोग को अनुभव करन लागे ।

❀ तब तें श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी के मंदिर में की खिरकी परासोली की में आइ श्रीगुसांई-जी कों दर्शन देते। सो कृष्णदास ने जानी जो–श्रीनाथजी श्रीगुसांईजी कों दर्शन देत हैं। यह जानिके कृष्णदास ने वह परासोली कीं ओर की खिरकी चिनाइ दीनी ❀।

... इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

और श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में परासोली की ओर एक वारी हतो, सो जा पर श्रीगोवर्द्धननाथजीं आइ के श्री-गुसांईजी कों दर्शन देते। सो श्रीगुसांईजी आपु सगरे दिन परासोली तें वारी कों देखते। कृष्णदास मंदिर में ते नीचे जांइ तव श्रीगोवर्द्धननाथजी वारी पर आइ वैठते।

सो कृष्णदास एक दिन आन्योर में आए, तव वारी पर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों वैठे देखे। तव कृष्णदास प्रातःकाल मंदिर में आइके वारी चिनवाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो- मैं तो श्रीगुसांईजी के दर्शन की मने किये हुं, सो तुम वारी पर क्यों वैठे? और अव उनकी ओर मति जैयो।

सो कृष्णदास परासोलीं कीं ओर श्रीनाथजी कों खेलिवे हू न जान देते।

भावप्रकाश—

सो श्रीगोकुल हू श्रीनवनीतप्रियजी के यहां यातें नहीं पधारे जो– श्रीस्वामिनीजी के वचन हैं। जो–हम हूं कों और श्रीठाकुरजी कों हू विप्रयोग होइगो। तासों श्री-गोकुल जाइंगे तो कहा जानिए कैसी होय ? तासों अब छै महीना लों मिलाप श्रीठाकुरजी सों दुर्लभ है, तासों परासोली में वैठि रहे।

सो परासोली में ध्वजा के सामें बैठिके विज्ञप्ति करें। और श्रीगुसांईजी दिन तीन तो श्रीगोर्द्धन रहते, और दिन तीन श्रीगोकुल रहते।

न्हाइके मंदिर में पधारे हैं। टीकेत तो वे हैं, तासों जब वे आप कों बुलावेंगे तब आप पर्वत ऊपर आइयो। तासों अब आप पर्वत ऊपर मति चढो, जो– श्रीगोवर्द्धनधर के दर्शन न होंइगे।

तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की ध्वजा कों दंडवत करि लीला की बात सुमिरन करिके परासोली कूं पधारे, तहां रहे। सो तहां विप्रयोग की अनुभव करन लागे।

❀ तब तें श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी के मंदिर में की खिरकी परासोली की में आइ श्रीगुसांई-जी कों दर्शन देते। सो कृष्णदास ने जानी जो–श्रीनाथजी श्रीगुसांईजी कों दर्शन देत हैं। यह जानिके कृष्णदास ने वह परासोली की ओर की खिरकी चिनाइ दीनी ❀।

... इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

और श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में परासोली की ओर एक वारी हती, सो जा पर श्रीगोवर्द्धननाथजी आइ के श्री-गुसांईजी कों दर्शन देते। सो श्रीगुसांईजी आपु सगरे दिन परासोली तें वारी कों देखते। कृष्णदास मंदिर में ते नीचे जांइ तब श्रीगोवर्द्धननाथजी वारी पर आइ वैठते।

सो कृष्णदास एक दिन आन्योर में आए, तब वारी पर श्रीगोवर्द्धननाथजी कों वैठे देखे। तब कृष्णदास प्रातःकाल मंदिर में आइके वारी चिनवाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो- मैं तो श्रीगुसांईजी के दर्शन की मने किये हुं, सो तुम वारी पर क्यों वैठे? और अब उनकी ओर मति जैयो।

सो कृष्णदास परासोली की ओर श्रीनाथजी कों खेलिवे हू न जान देते।

तब श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल तें परासोली कों आवते, तब श्रीनाथजी के भीतरिया रामदास आदि देकें सब सेवक श्रीनाथजी की राजभोग आर्ती अनोसर करिके श्रीगुसांई-जी के दर्शन कों परासोली आवते। तब श्री गुसांईजी कौ दर्शन करि चरणोदक लेते, पाछें प्रसाद लेते। सो कृष्णदास कों सुहातो नाहीं। और सेवक श्रीगुसांईजी के दर्शन किए बिना प्रसाद कैसें लेते? परि सेवकन सों कृष्णदास की कछू चलै नाहीं।

और श्रीगुसांईजी एक पत्र विज्ञप्ति कौ रामदास कों देते, और कहते जो–यह श्रीनाथजी कों दीजो। सो पत्र रामदास उत्थापन के समै श्रीनाथजी कों देते। श्री-नाथजी विज्ञप्ति कौ प्रतिउत्तर लिखिके राजभोग आर्ती उपरांत रामदास कों देते। सो रामदास वह पत्र लेके श्रीगुसांईजी कों देते,

देते। तब श्रीगुसांईजी वा पत्र को वांचिके पानी में घोलिके पीजाते। या भांति सों छै महिना बीते। परि श्रीगुसांईजी, श्रीनाथजी के अधिकारी तथा श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक जानिके कृष्णदास सों कछु न कहते, परि श्रीनाथजी के विरह कौ स्नेह मन में बोहोत करते * याही तें छै महिना भए। *

---

* इस प्रसंग का उल्लेख भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार है:—

सो श्रीगोवर्द्धनधर कों श्रीगुसांईजी बैठि बैठिके विज्ञप्ति करते। सो रामदास मुखिया भीतरिया जब श्रीगुसांईजी के पास राजभोग आरती सों पोहोंचिके जाते सो आप कों श्रीनाथजी को चरणोदक देते, तब श्रीगुसांईजी आपु फूल की माला करि राखते सो माला के भीतर विज्ञप्ति को श्लोक लिखि देते। सो रामदास ले जाते। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी कों माला पहिरावते. तब माला में तें विज्ञप्ति को कागद निकासिके श्रीनाथजी वाँचते। पाछें वाको प्रतिउत्तर श्रीनाथजी बीड़ा के पान को ऊपर अपनी पीक सों सींक तें लिखि देते, सो रामदास कों देते।

सो रामदास दूसरे दिन राजभोग सों पोहोंचिके जाते, तब श्रीनाथजी को लिख्यो पत्र श्रीगुसांईजी कों देते। सो श्रीगुसांईजी आपु वांचिके पाछें जल में घोरिके पान करते।

यातें श्रीनाथजी के किये श्लोक जगत में प्रकट न भए. श्रीगुसाँईजी आपु विज्ञप्ति किये सो श्रीनाथजी आपु वाँचिके रामदासजी कों देते, तासों विज्ञप्ति प्रकटी है।

एक दिन श्रीगुसाँईजी कों बोहोत विरह भयो, सो यह लिखे। श्लोक—'त्वद्दर्शन विहीनस्य० (इत्यादि)'..........

सो यह श्लोक लिखिके पठाये, जो- तिहारे भक्त हैं सो तिहारे बिना जीवत हैं, सो वृथा ही जीवत हैं, सो दुर्भगावत्। सो यह श्रीगोवर्द्धननाथजी वाँचिके यह लिखे जो- मेघ कौ लच्छण यह है, जो- समय होइ वर्षा कौ, तब आइके वर्षे, सो सबरो जगत जानत है। सो एसें अब ही कृष्णदास कौ समय होइ चुकेगो तब मिलाप होइगो। सो यह तुम हू जानत हो, और हम हू जानत हैं। तासों धीरज धरि समय होन देउ, जो-इतनो विरह क्यों करत हो?

सो यह पत्र रामदासजी लेके आए। तब श्रीगुसाँईजी आपु वाँचिके यह लिखे जो—

'अंबुदस्य स्वभावोयं समये वारि मुञ्चति,
तथापि चातकः खिन्नं रटत्येव न संशयः'।

सो मेघ कौ यह स्वभाव है जो- समय होइगो, तब ही बरसेगो (मिलाप होयगो) परतु चातक ने मेघ सों प्रीति करी है। सो एसे भक्त हैं सो तो तिनकों (मेघरूप श्रीकृष्ण कों) रटत हैं, चैन नाहीं है। सो (आपु) चाहो तब समय होय। तुम बिन धीरज हम कों नाहीं है। सो भक्तन कौ यही धर्म है, जो- चातक की नांई सदा तिहारी चाह करियो करै।

सो यह लिखि पठाए।

तब एक दिन राजा बीरबल श्रीगोकुल में आइ निकसे । तब वा दिन श्रीगुसांईजी परासोली में हते, श्रीगिरिधरजी श्रीगोकुल में हते । तब राजा बीरबल ने श्रीगुसांईजी की खबरि मंगाई । तब पोरिया ने कही, जो- श्रीगुसांईजी तो परासोली में हैं, और श्री- गिरिधरजी घर हैं । तब बीरबल श्रीगिरिधरजी के दर्शन कों आए, दंडवत करिके पूंछे जो- श्रीगुसांईजी कहां है ? हम कों दर्शन किए

या प्रकार रामदासजी नित्य आवते, सो श्रीगुसांईजी के पास सब सेवक आवते, सो कृष्णदास जानते । परंतु सेवकन सों कछू चलती नाहीं । रामदास कों बरजे हू सही, जो-तुम श्रीगुसांईजी के पास पत्र ले जात हो, और पत्र ले आवत हो, सो यह बात ठीक नाहीं है ।

तब रामदास कहे, जो- हम तो नित्य श्रीगुसांईजी के दर्शन को जांइगे, चाहे हम कों सेवा में राखो चाहे मति राखो । तब कृष्णदास चुप होइ रहे । सो काहेतें ? जो-एसो सेवक फेरि कहा मिलै ? तासों कृष्णदास कछू बोले नाहीं ।

सो पौष सुदी ६ तें आषाढ़ सुदी ५ तांई श्रीगुसांईजी ने विप्रयोग कियो । पाछें अषाढ़ सुदी ५ आई ।

बोहोत दिन भए, हमने उनके दर्शन पाए नाहीं। तब श्रीगिरिधरजी ने राजा बीरबल सों कह्यो जो–कृष्णदास अधिकारी काकाजी कों श्रीनाथजी के दर्शन नाहीं करन देत। जो– काकाजी कों (छै महिना तें) खेद बोहोत है, सो काकाजी परासोली में ध्वजा को दर्शन करत हैं।

तब राजा बीरबल ने श्रीगिरिधरजी सों कह्यो जो–अब हों (जाइके) कृष्णदास कों निकासत हों। यों कहिके राजा बीरबल श्रीगिरिधरजी सों बिदा होइके मथुरा आए।

(सो मथुरा की फौजदारी बीरबल की हती) और श्रीगुसांईजी तो परासोली तें श्रीगोकुल आए। पाछें बीरबल ने (मथुरा तें) पांचसौ मनुष्य श्रीगोवर्द्धन भेजे, और मनुष्यन तें राजा बीरबल ने कह्यो, जो–(श्रीगोवर्धन में जाइके) कृष्णदास कों पकरि लावो। तब वे

मनुष्य (गए सो साँझ के समय श्रीगोवर्द्धन में आए, पाछें) कृष्णदास कों पकरि (के मथुरा) लाए। तब राजा बीरबल ने कृष्णदास कों बंदीखाने में दियो। और श्रीगिरिधरजी सों (आइ रात्रि ही को मनुष्य द्वारा श्रीगोकुल) कहाइ पठाई, जो-कृष्णदास बंदीखाने में दियो है (तुम श्रीगुसांईजी कों लेके श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में जावो)

(ये समाचार मनुष्य ने श्रीगिरिधरजी सों कहे, सो रात्रि ही कों श्रीगिरिधरजी घोड़ा ऊपर असवार होइके परासोली कों पधारे। सो प्रातःकाल हीं आसाढ सुद ६ आई। सो गिरिधरजी ने जाइके श्रीगुसांईजी कों नमस्कार करिके कही जो– आपु श्रीगोवर्द्धनधर के मंदिर में पधारो, और सेवा-शृंगार करो। तब श्रीगुसांईजी आपु गिरिधरजी सों

कहे जो–कृष्णदास की आज्ञा होइ तो चलें।)

तब श्रीगिरिधरजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो–कृष्णदास कों तो राजा बीरबल ने बंदीखाने में दियो है। तब (यह सुनिके) श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो–हाय! हाय !! श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के (कृपापात्र) सेवक (भगवदीय कृष्णदास) कों इतनो (दुखः इतनो) कष्ट।

तब श्रीगुसांईजी ने श्रीगिरिधरजी सों कह्यो जो–बीरबल सों तुम ने कह्यो होइगो। तब श्रीगिरिधरजी ने कह्यो जो–हम तो इहां बीरबल आयो हतो तब कह्यो हतो, सो सहज में कह्यो हतो जो-कृष्णदास अधिकारी काकाजी कों श्रीनाथजी के दर्शन नाहीं करन देत। और काकाजी कों बोहोत खेद है। (और तो कछु नाहीं कह्यो) तब श्रीगुसांईजी

(आपु) कहे जो– भोजन तब करूं जब कृष्णदास आवें।

तब श्रीगिरिधरजी तत्काल घोड़ा मंगाइ असवार होइके मथुरा आए। तब बीरबल सों कह्यो जो– श्रीगुसांईजी भोजन नाहीं करत, तातें कृष्णदास कों छोडि देउ।

तब बीरबल ने कृष्णदास कों (बंदीखाने में सें बुलाइके कह्यो जो–देखि, श्रीगुसांईजी की कृपा, जो–तेरे बिना भोजन नाहीं करत हैं, और तैंने उनसों एसी करी ? तासों अब तोकूं छोड़त हो, और आजु पाछें जो–तू श्रीगुसांईजी को बिगारेगो, तब मैं तोकों फेरि कबहू नाहीं छोडूंगो। (सो या प्रकार बीरबल ने कृष्दास कों) श्रीगिरिधरजी के हवाले करि दियो।

तब श्रीगिरिधरजी कृष्णदास कों संग

लेके श्रीगोकुल S आए। तब श्रीगुसांईजी ने सुनी, जो–कृष्णदास कों संग लेके श्रीगिरिधरजी आवत हैं। तब श्रीगुसांईजी कृष्णदास कों लेवे कों आगें पधारे। तब श्रीगुसांईजी ठकुरानी घाट पोहोंचे, और वा ओर तें कृष्णदास आए। सो कृष्णदास ने श्रीगुसांई जी कों साष्टांग दंडवत कीनी और एक पद नयो करिके गायो।

S पाठभेद —

परासोली में पधारे। तब श्रीगुसांईजी आपु कृष्णदास कों देखिके श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ अधिकारी जानिके उठि ठाढे भए। तब कृष्णदास ने दीन होइके श्रीगुसांईजी को दंडवत् करि चरणस्पर्श करिके यह पद गायो। सो पद—

॥ राग सारंग ॥

ताही कों सिर नाइये जो श्रीवल्लभ-सुत-पद रज रति होय।

× × × × × × × ×

'कृष्णदास' सुर ते असुर भए असुर तें सुर भए चरननि छोय।

सो पदः—

॥ राग केदारो ॥

श्रीविट्ठलजू के चरननि की बलि ।
हम-से पतित उधारन कारन परम कृपाल आपु आए चलि ॥
उज्वल अरुन दया रंग रंजित नव नख-चंद विरह तम निर्दलि
सेवत सुखकर सोभन पावन, भक्त मुदित लालित कर अंजलि
अतिसय मृदुल सुगंध सुसीतल परसत त्रिविध ताप डारत मलि
कहि 'कृष्णदास' बार इक सिर धरि तेरौ कहा करैगो रिपु कलि *

यह पद श्रीगुसांईजी के आगें गायो । पाछें श्रीगुसांईजी कृष्णदास कों अपने घर ले आए । तब कृष्णदास सों श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो– महाप्रसाद लेउ । तब कृष्णदास ने कह्यो, जो– आप भोजन करिये, पाछें प्रसाद लेउंगो । तब श्रीगुसांईजी भोजन कों बैठे । ता समै कृष्णदास ने एक पद और करिके गायो । सो पदः—

* भावप्रकाश वाली प्रति में यह पद नहीं है । अग्रिम पद है ।

॥ राग कान्हरो ॥

ताही कों सिर नाइये श्रीवल्लभसुत-पद-रज-रति होइ ।
कीजे कहा अति ऊंचे पद तिन सों कहा सगाई मोइ ॥
जाके मन में उग्र भरम है श्रीविट्ठल श्रीगिरधर दोइ।
ताकौ संग विषम विष हूतें भूलें चतुर करो जिनि कोइ ॥
सारासार विचारि मतौ करि श्रुति मच गोधन लियो निचोइ
तहां नवनीत प्रगट पुरुषोत्तम, सहजई गोरस लियो विलोइ
उग्र प्रताप देखि अपने चख अस्मसार ज्यों भिदे न तोइ ।
'कृष्णदास' सुरतें असुर भए, असुर तें सुर भए चरननि छोइ

यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए।

पाछें भोजन करिके श्रीगुसांईजी उठे, तब कृष्णदास भीतर गए । तब श्रीगिरिधरजी ने श्रीगुसांईजी की जूठन की पातरि कृष्णदास के आगें धरी तब कृष्णदास ने प्रसाद लियो । पाछें बीड़ा दोइ कृष्णदास कों दिये। रात्रि कों कृष्णदास उहांई सोइ रहे। पाछें पिछली रात्रि घडी दोइ रही, तब श्रीगुसांईजी उठे, देह-कृत्य

करिके स्नान कियो। श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन किए। पाछें श्रीनाथजीद्वार पधारिवे की तयारी करी, घोड़ा दोइ मंगाए। एक घोड़ा ऊपर तो श्रीगुसांईजी आपु असवार भए, और एक घोड़ा ऊपर कृष्णदास कों असवार कियो, और श्रीगोकुल तें चले सो श्रीनाथजीद्वार आइ पोहोंचे। सो श्रीनाथजी को राजभोग आयो हतो और श्रीगुसांईजी तत्काल स्नान करिके ऊपर पधारे।

और श्रीगुसांईजी परासोली तें विज्ञप्ति लिखते, सो रामदास भीतरिया-हाथ श्रीनाथजी कों पठावते। ताको प्रति उत्तर श्रीनाथजी लिखें, सो पत्र रामदास भीतरिया के हाथ श्रीगुसांईजी कों पोहोंचावते, श्रीगुसांईजी पत्र कों घोरिके पीजाते। सो छैले दिन को प्रति-उत्तर को श्रीनाथजी के हस्ताक्षर को पत्र श्रीगुसांईजी राखे हते, सो पत्र ले आए

हते । सो पत्र लिए ही श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत ऊपर पधारे ।

पाछें श्रीनाथजी कौ राजभोग आयो हतो, सो समय भयो, तब भोग सरायो । तब श्रीगुसांईजी कों देखिके श्रीनाथजी बोहोत प्रसन्न भए, और पूंछी जो-नीके हो? तब श्रीगुसांईजी कहे, जो—तुम कों देखे सोई दिन नीके ।

पाछें दोउ जनें मुसिकाइके चुप करि रहे । पाछें वह पत्र हतो सो गवाखे में भांपी में धर्यो । पाछें राजभोग के दर्शन भए, तब कृष्णदास ने दर्शन किए । पाछें श्रीगुसांईजी राजभोग आरती अनोसर करिके नीचे पधारे । पाछें श्रीगुसांईजी रसोई करि भोग समर्पि भोजन करिके पोंढे । सो उत्थापन को समो भयो, तब श्रीगुसांईजी स्नान करिके ऊपर पधारे । सो श्रीनाथजी कौ उत्थापन करवायो॥।

श्रीनाथजी की उत्थापन सों सैन पर्यंत सेवा सें पोहोंचिके कृष्णदास कों बुलायो । तब

श्रीनाथजी के संनिधान (दुसाला उढायो और) कह्यो जो—कृष्णदास ! जाओ अधिकार करो, और श्रीनाथजी की सेवा नीकी भांति सों करियो । तब कृष्णदास ने श्रीनाथजी के संनिधान एक पद करिके गायो । सो पद:—

॥ राग केदारो ॥

परम कृपालु श्रीवल्लभ-नंदन करत कृपा निज हाथ दै माथै ।
जे जन सरन आइ अनुसरहीं गहि सौंपत श्रीगोवर्द्धननाथै ॥
परम उदार चतुर-चिंतामनि राखत भव-धारा तें साथै ।
भज 'कृष्णदास' काज सब सरहीं जो जाने श्रीविट्ठलनाथै ॥

---

*...... * इतना प्रसंग भावप्रकाश वाली प्रति में नहीं है। इसके स्थान पर इस प्रकार पाठ भेद है:—

यह पद सुनिके श्रीगुसांईजी आपु बोहोत प्रसन्न भये । तब कृष्णदास ने विनती कीनी जो—महाराज ! मेरो अपराध क्षमा करिये, और अब आप श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में पधारिये ।

तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो—तिहारी आज्ञा भई है, सो अब चलेंगे । तब कृष्णदास कों संग लेके श्रीगुसांईजी आप श्रीगोवर्द्धननाथजी के मंदिर में पधारे । और श्रीगोवर्द्धन-धर को दंडोत करि, पाछें श्रृंगार कौ समय हतो और आषाढ़ सुद ६ कौ दिन हतो सो कसूमल कुलह पिछोड़ा धराये । तब राजभोग सों पोहोंचे ।

यह पद गायो, और विनती करी जो- महाराज ! मेरो अपराध क्षमा करिये । तब श्रीगुसांईजी कहे, जो- तुम्हारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे । पाछें कृष्णदास कों बिदा किए ।

पाछें श्रीनाथजी कों अनोसर करिके श्रीगुसांईजी नीचे पधारे । (सबन को समा- धान कियो । तब सगरे वैष्णव सेवक प्रसन्न भए) श्रीगुसांईजी परम दयालु कृष्णदास को कृत्य कछु मन में न लाए, श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक जानि अनुग्रह किए ।

पाछें श्रीगुसांईजी दिन द्वै और रहे । (जैसे नित्य सेवा श्रृंगार आप श्रीगोवर्द्धन- धर को करते तैसें ही करन लागे) पाछें श्री- गोकुल पधारे । तब फिरिके कृष्णदास श्रीगुसांईजी की आग्या तें अधिकार करन लागे ।

(सो वे कृष्णदास ऐसे कृपापात्र भगवदीय हते)

(इति वार्ता सप्तम)

—:o:—

वार्ता प्रसंग *

(और एक समय श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल में हते, सो कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन तें श्रीगोकुल आए। तब श्रीगुसांईजी उठिके श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकारी जानि कृष्णदास कों बोहोत प्रसन्नता पूर्वक समाधान कियो, और अपने पास बैठाए। पाछें श्रीगोवर्द्धनधर के कुशल समाचार पूँछे, और कृष्णदास कों अपने श्रीहस्त सों श्रीनवनीतप्रियजी कौ महाप्रसाद धरे। ता पाछें सैनभोग कौ महाप्रसाद लिवाइके रात्रि कों सुंदर सेज पर सैन करायो)

* सं० १६६७ वाली वार्ता प्रति में यह प्रसंग नहीं है।

(सो जब प्रातःकाल भयो तब कृष्णदास चलन लागे। ता समय कृष्णदास ने श्री-गुसांईजी सों बीनती कीनी जो—महाराज! मेरो मन वृन्दावन देखिवे कों बोहोत है। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो— आछो! जावो, परंतु दुःख पावोगे।)

(तब कृष्णदास श्रीयमुनाजी पार गए, जो— श्रीगुसांईजी ने मने किये, तोऊ मन न मान्यो, श्रीवृन्दावन कों चले। सो मध्यान्ह समय वृन्दावन आए। तब वृन्दावन के संत महंत कृष्णदास सों मिलन आए। सो कृष्ण-दास कों वा समय ज्वर चढ्यो, सो प्यास लगी, तब कंठ सूखन लाग्यो। सो कृष्णदास ने कही जो— प्यास बोहोत लगी है, सो कंठ सूख्यो जात है।)

(तब संत महंतन ने कही जो—वेगि जल लावो। सो कृष्णदास अकेले ही रथ पर बैठिके

गाए हते। कृष्णदास ने कही जो–श्रीगोकुल को वल्लभी वैष्णव होइ सो वासों कहो, जो- वह जल लावै। तो मैं पिऊं। तब सगरे संत महंतन ने कृष्णदास सों तर्क करिके कह्यो जो–यहां तो कोई वैष्णव नाहीं है, जो– श्रीगोकुल को भंगी यहां व्याह्यो है, सो वह यहां आयो है, सो वाकों तुम कहो तो बुलावें।)

(तब कृष्णदास ने कही जो–वह श्री- गोकुल को भंगी सब तें श्रेष्ठ हैं। सो वासों कहियो जो– कुम्हार के घर तें कोरो बासन लेके श्रीयमुनाजी में न्हाइके जल भरि लावें। सो तब उन ने जाइ के वा भंगी सों कह्यो जो- कृष्णदास कों ज्वर चढ्यो है, वह प्यासे हैं, सो कहत हैं सो-तू उनकों जल ले जाउ।

तब वह भंगी उहां सों दोर्यो। सो श्रीगुसांईजी आपु श्रीनवनीतप्रियजी की राजभोग आरती करि श्रीनाथजीद्वार पधारिवे

कूं घाट ऊपर आए हते। सो इतनें ही में वा भंगी ने कपड़ा की आड करिके मुख तें कह्यो, जो—महाराज! कृष्णदास श्रीवृंदावन में हैं। तहाँ उनकों ज्वर चढ्यो है, सो प्यासे हैं। जल मोसों मांग्यो है, सो मैं वृंदावन तें यहाँ दौर्यो आयो हूँ।)

(तब श्रीगुसाँईजी खवास सों झारी जल की लेके, घोड़ा ऊपर असवार होइके वेगि ही आपु वृन्दावन पधारे। सो तब कृष्णदास कों रथ ऊपर तें उठाइके जल प्याए। पाछें कृष्णदास सावधान भए, सो ज्वर हू उतरि गयो। तब कृष्णदास श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके यह पद गाये। सो पद—)

॥ राग कान्हरो ॥

(श्रीविट्ठलजू के चरणन की बलि
हम से पतित उद्धारन कारन परम कृपालु आपु आए चलि।)

(सो यह पद गाइके कृष्णदास ने श्री-गुसांईजी सों बिनती कीनी जो—महाराज ! मैंने आपको कह्यो न मान्यो, तासों इतनो दुख पायो। ता-पाछें श्रीगुसांईजी के संग कृष्णदास श्रीगोवर्द्धन आए, तब सैन आरती को समौ भयो, तब श्रीगुसांईजी न्हाइके सैन आरती किये। तब कृष्णदास ने यह पद गायो। सो पद—)

राग कान्हरो— ('आजु कौ दिन धनि २ री माई।
नैनन भरि देखे नंद-नंदन०'।)

(पाछें श्रीगुसांईजी अनोसर कराइके पर्वत तें नीचे पधारे। सो या प्रकार कृष्ण-दास ने बोहोत दिन लों श्रीगोवर्द्धननाथजी को अधिकार कियो।)



इति वार्ता सप्तम

श्रीगुसांईजी की आग्या तें कृष्णदास अधिकार करन लागे, सो बोहोत दिन लों अधिकार भली भांति सों कियो। पाछें एक वैष्णव ने कृष्णदास सों कह्यो जो–मोकों एक कुवा बनवावनो है। सो मैं द्रव्य तुम कों दे जात हों, सो तुम बनवाइयो, और मोकों अपने देस कों जानो है। तब कृष्णदास कहे जो–आछो। पाछें वह वैष्णव कृष्णदास कों तीन सौ रुपैया देके अपने देस कों गयो।

तब कृष्णदास ने उन रुपैयान में तें एक सौ रुपैया कुल्हड़ा में धरिके बाग में आम के वृच्छ के नीचे गाड़ि राखे। और कृष्णदास अपने मन में यह कहें। जो–जब ए दोइ सौ रुपैया लगि चुकेंगे तब इनकों काढेंगे। सो आछो मूहूर्त देखिके रुद्रकुंड ऊपर (पूंछरी के पास) कुवा खुदायो। सो कितेक दिन में

कुवा मोहडे ताईं बनि आयो, और दोइ सौ रुपैया लगे। सो मठोठा बनवानो रह्यो। (सो कृष्णदास मनमें विचारे जो–सौ रुपैया में मोंहडो आछो बनेगो)।

सो कृष्णदास उत्थापन भए पाछें दर्शन करिके कुवा देखिवे कों गए। (सो वा कुवा कों देखन लागे) सो (कृष्णदास के) हाथ में आसा हतो, सो आसा टेकिके वा कुवा ऊपर चढे, सो आसा सरक्यो। तब कृष्णदास (आसा सहित) कुवा में गिरे। सो मनुष्य (पास ठाढे हते तिनने सोर कियो जो–कृष्णदास कुवा में गिरे। पाछें कितनेक मनुष्य) सब दौरे। (सो रस्सा टोकरा लाए और दोइ मनुष्य कुवा के भीतर उतरे) सो बोहोत ढूंढे, परि वा कुवा में कृष्णदास कौ सरीर न पायो। तब सब मनुष्य तहां तें फिरि आए।

सो ता समै श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कों सैन भोग धरिके मंजूष सें बिराजे हते। सो रामदास भीतरिया पास बैठे हुते। ता समै काहू ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो-(महाराज!) कृष्णदास ने नयो कुवा बनवायो हतो सो कृष्णदास देखन गए। सो आसा टेकिके कुवा के मोहडे ऊपर चढ़े हते, सो आसा सरक्यो सो-कुवा में जाइ पडे। सो मनुष्य दोइ कुवा में उतरे सो ढूंढन लागे। सो बोहोत ढूंढे, परि कृष्णदास कौ सरीर पायो नाहीं। कहा जाने कहा भयो?

तब रामदास ने कह्यो जो- "अधो गच्छन्ति तामसाः *।"

भावप्रकाश—

सो याकै कारण श्रीगुसांईजी आपु तो जानते हते, जो प्रेत-योनि को श्राप हैं। तासों आपु प्रकट न किए। सो कृष्णदास या देह सुद्धां प्रेत भए। सो पूंछरी के पास एक पीपर कौ वृक्ष है, ताके ऊपर जाइके बैठे।

* पाठ भेदः—'तामसानामधो गतिः'।

तब श्रीगुसांईजी कहे जो– रामदास ! एसो न कहिए (जो–कृष्णदास तो श्री-आचार्यजी महाप्रभुन के कृपा-पात्र वैष्णव हते। जो- यह लीला है) अब जो– कृष्ण-दास कुवा में गिरे (तो कहा भयो ? कहा। जानिये कहा है ?) और कृष्णदास को सरीर न मिल्यो ताको कारन कहा ? ताको कारन यह, जो–कृष्णदास में कोई अलौकिक सरीर हतो, सो-तो श्रीनाथजी की लीला में प्राप्त भयो। और कृष्णदास को लौकिक सरीर हतो सो-श्रीगुसांईजी कहे जो– हमारी अवज्ञा करी। सो या सरीर सों लौकिक भोग भुगतनो है। सो कुवा में गिरत मात्र कृष्णदास को लौकिक सरीर सिद्ध होइके पूंछरी की ओर एक पीपर को रूख है; ता ऊपर प्रेत होइके रह्यो, भोग भुगतने कों। तातें कुवा में ते कृष्णदास को सरीर न मिल्यो।

सो कृष्णदास प्रेत होइके पूंछरी की ओर बैठे रहते। श्रीगुसांईजी की अवज्ञा तें कृष्णदास के सरीर की यह गति भई।

(इति वार्ता अष्टम)

—.—o—:—

वार्ता नवम *

(*और श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख सों कहे जो–कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर कौ अधिकार भलो ही किए, और अब ऐसे सेवक कहां मिलें ? और अधिकारी बिना काम चलेगो नाहीं। सो बिचार करनो। सो या भांति कहे।)

(तब रामदासजी ने बिनती कीनी जो-महाराज ! जाकों तुम आज्ञा करोगे, सोई करेगो। जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा भाग्य सों मिलत है। तब श्रीगुसांईजी आपु कहे जो–हम कौन-से जीव कों कहें। जो–

* सं० १६९७ वाली प्रति में इतना प्रसंग नहीं है ?

कौन-से जीव कौ बिगार करें। सुधारनो तो बोहोत कठिन है, और बिगारिबो तो तत्काल है।)

भावप्रकाश—

सो याही सों श्रीआचार्यजी श्रीसुबोधनीजी में कहे हैं, जो– श्रीभागवत नारायन ने ब्रह्मा सों कह्यो है, परि ब्रह्मा सृष्टि-करन कौ अधिकारी है, तासों श्रीभागवत फलित न भयो। पाछें ब्रह्मा नारदजी सों कही, सो नारद कों सगरे देसन में फिरवे कौ अधिकार है, तासों फलित न भयो। तब नारद ने वेद्व्यासजी सों कह्यो। सो वेद्व्यासजी शास्त्र-करन के अधिकारी हैं, तासों व्यासजी कों हू फलित न भयो। पाछें व्यासजी ने श्रीशुकदेवजी सों कह्यो। सो शुकदेवजी सर्व-त्याग कियो है, सो यही त्याग में लगे। पाछें परीक्षित कों सर्व-त्याग भयो। तब अधिकारी श्रीभागवत के भए। (जब) श्रीशुकदेवजी रात-दिन तांई कथा कहे, तब सातमें दिन भगवत्-प्राप्ति भई।

सो तैसें ही यह श्रीभागवत-रूप पुष्टिमार्ग है। सो याकौ अधिकारी निरपेक्ष होइ, ताही के माथे यह मार्ग होय। और जाकों अधिकार पाए अहंकार बढ़े, सो ताकों कछु फल सिद्ध न होइ।

(तासों श्रीगोवर्द्धनधर को अधिकार हम कौन कों देंय ? कौन को बिगार करें ? तब रामदास सुनिके चुप होइ रहे। इतने में सैनभोग को समय भयो, सो सैनभोग श्रीगुसांईजी सराए।)

(सो सैन आरती करे पाछें श्रीगुसांईजी आपु गोवर्द्धनधर सों पूछे जो-महाराज! कृष्णदास की तो देह छूटी और अधिकारी बिना चलेगी नाहीं, सो हम कौन कों अधिकार देके बिगार करें ? तासों आपु कहो ताकों अधिकारी करें।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे जो-हम हू कौन जीव को बिगार करें ? जो-कोई अधिकार लेइगो ताको बिगार होइगो। तासों तुम एक काम करो, जो-अधिकार को दुसाला लेके सब के आगे कहो—जाकों अधिकार करनो होइ सो दुसाला ओढो। तब जो-

आइके कहै ताकों देऊ। सो जाकों गिरनो होइगो सो आपु ही आवेगो।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु प्रसन्न होइके श्रीगोवर्द्धननाथजी कों सैन कराए। पाछें दूसरे दिन राजभोग आरती के समय सगरे व्रजवासी वैष्णव भेले करिके श्रीगुसांईजी आपु दुसाला हाथ में लियो। पाछें सबन कों सुनाइके कह्यो जो–जाकों श्रीनाथजी के घर कौ अधिकार करनो होइ सो या दुसाला कों ओढो।

यह सुनिके कितनेक ने कही जो–हम करेंगे। सो पहिले एक क्षत्री बोल्यो हतो, सो ताकों दुसाला उढ़ायो। ताछें श्रीगोवर्द्धननाथजी की आरती करि अनोसर कराइ श्रीगुसांईजी आपु श्रीगोकुल पधारे।) *

·········· इतना प्रसंग सं० १६९७ वाली वार्ता-प्रति में नहीं है।

अब एक दिन श्रीनाथजी की भैंस खोइ गई, सो भैंस ढूंढन कों गोपीनाथदास ग्वाल तथा और चार-पाच ग्वाल पूंछरी की ओर गए। सो उहां बरहे में भैंस पाई, सो लेके आवत हते। (वे सब परम कृपा-पात्र भगवदीय हते)

सो गोपीनाथदास ग्वाल देखे तो पूंछरी की ओर श्रीनाथजी सखान सहित एक पीपर के नीचे खेलत हैं। और एक पीपर के रूख पे तें* कृष्णदास न गोपीनाथदास ग्वाल सों (जै-श्रीकृष्ण कियो और) कह्यो जो- अरे भैया! मेरी बिनती श्रीगुसांईजी सों करियो, और कहियो, जो—कृष्णदास ने कह्यो है, जो— मैं आप को अपराधी हों, तातें मेरी यह अवस्था है। (और श्रीगोवर्द्धनधर दर्शन देत हैं सो आप की कृपा तें देत हैं।) मैं श्री-

* पाठ भेद:— और पीपर के नीचे कृष्णदास अधिकारी प्रेत होइके बैठे हे।

नाथजी के पास हों, तोहू मेरी गति होत नाहीं । तातें आप कृपा करिके अपराध क्षमा करो, तो मेरी गति होइ ।

भावप्रकाश–

सो जब श्रीगोवर्द्धननाथजी के आगें अधिकार कौ दुसाला श्रीगुसांईजी ने कृष्णदास कों (दुबारा) उढ़ायो, तब कृष्णदास ने यह पद गायो- परम कृपालु श्रीवल्लभ-नंदन०'

सो यह पद गाइके कृष्णदास ने श्रीगुसांईजी सों कही जो–महाराज ! मैं छै महिना लों आपकों विप्रयोग करायो सो आपु मेरो अपराध क्षमा करिये । तब श्री-गुसांईजी आपु कहे जो–तिहारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे ।

सो यह श्रीगुसांईजी आपु कहे, तासों श्रीगोवर्द्धन-धर दर्शन देत हैं, और बोलत है, बात करत हैं । परन्तु श्रीगुसांईजी आपु अपराध क्षमा नाहीं किये हैं, तासों प्रेत-योनि छूटत नाहीं है ।

और कृष्णदास श्रीगोवर्द्धनधर सों हू कहते जो–महाराज ! मोकों दर्शन देत हो, सो प्रेत-योनि क्यों नाहीं छुडावत हो ? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कहे, जो–यह हमारे हाथ है नाहीं, उद्धार तो तेरो श्रीगुसांईजी के हाथ है ।

सो काहेतें ? जो–लीला में श्रीचंद्रावलीजी कौ श्राप है, जो–प्रेत योनि होउ। सो कौन छुडावे ? तासों जद्यपि श्रीस्वामिनीजो की सखी ललित-रूप (कृष्णदास) हैं, परन्तु आगे कौ वचन विचारि न छुडावत हैं। तासों कृष्णदास ने गोपीनाथदास ग्वाल सों कह्यो जो– तू मेरी बिनती श्रीगुसांईजी सों करियो, जो– श्रीगुसांईजी की कृपा बिना मेरी गति नाहींहै ।

और (बिलछू की ओर) वा बागमें एक आम को रूख है, ताके नीचे एक कूलडा में एक सौ रुपैया गड़े हैं, सो काढिके वा कुवा में मठोठा रहि गयो है सो बनवावो, तो मेरी गति होइ ।

(यह श्रीगुसांईजी सों कहियो । और श्रीनाथजी की भेंस तुम ढूंढिबे कों आए हो सो उह घना में चरत है। पाछें गोपीनाथ-दास ग्वाल घना में तें भेंस लेके गोपालपुर आए । सो भेंस बांधि गोदोहन गाय-भें सकों किये।)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी आपु श्रीनाथजी की सैन आरती करिके अनोसर कराइ पर्वत तें उतरे और अपनी बैठक में आइके बिराजे।)

तब गोपीनाथदास ने आइके श्रीगुसांईजी सों (दंडवत करि) कह्यो, * जो-महाराज! यह आपके अधिकारी ने बिनती करी है।

तब श्रीगुसांईजी ने वा आंम के रूख नीचे तें रुपैया कढ़वाइके रुद्रकुंड ऊपर के कुवा कौ मठोठा बनवायो। तब कृष्णदास की गति भई। *

---

* इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में यह पाठ है.—

जो महाराज! आज श्रीनाथजी की भेंस खोइ गई हती सो ढूंढन कों पूंछरी की ओर गए हते। तहाँ कृष्णदास अधिकारी प्रेत भए देखे हैं। सो कृष्णदास पीपर के वृत्त के ऊपर बैठे हैं। कृष्णदास ने मोकों भगवत्-स्मरण कियो हतो, और आप सों यह बिनती करी है, जो-मैं प्रेत हूं। मैंने आप को अपराध कियो है, तासों मोको प्रेत-योनि प्राप्त भई है। आपके हाथ मेरो उद्धार है। और बाग में आम के वृत्त के नीचे

[१] कृष्णदास कों प्रेत-योनि में श्रीनाथजी दर्शन देते। ताकौ कारन यह, जो—जब श्रीनाथजी के संनिधान श्रीगुसांईजी ने कृष्णदास सों कह्यो जो- कृष्णदास अधिकार करो।

तब कृष्णदास ने यह पद गायो :—
"परम कृपालु श्रीवल्लभ-नंदन करत कृपा निज हाथ दै माथें"। यह पद गाइके कृष्णदास ने वीनती करी। जो—महाराज! मेरो अपराध छमा करिये। तब श्रीगुसांईजी

कूलडा में रुपैया सौ गडे हैं। सो निकासिके कुवा कौ मोहडो वनवाइवे कों कह्यो है। और भैंस हू कृष्णदास ने बताइ दीनी है, सो हम ले आए हैं।

तब श्रीगुसाँईजी आपु अपने मन में विचारे जो—कृष्णदास कों वडो दुःख है। सो अब याकों प्रेत-योनि में सों छुडावनो, यह कहिके तत्काल उठिके बाग में पधारे। तब रुपैया १००) निकासिके नयो अधिकारी कियो हतो, सो वाकों देके कह्यो जो—ये रुपैयान सों कृष्णदास--वारे कुवा कौ मोहड़ो बनवाइयो। ता पाछें श्रीगुसाँईजी आपु वाही रात्रि कों असवार होइके मथुराजी पधारे।

कहे, जो–तुम्हारो अपराध श्रीनाथजी क्षमा करेंगे। सो श्रीगुसांईजी के वचन तें श्रीनाथजी ने अपराध क्षमा कियो। जो– प्रेत-योनि में दर्शन देते, बोलते, परि स्पर्श न करते। जो–स्पर्श होइ तो उद्धार होइ। सो उद्धार तो श्रीगुसांईजी के हाथ है। कृष्णदास श्रीनाथजी सों कहते जो- महाराज ! मोकों दर्शन देत हो, बोलत हो, और मेरो उद्धार क्यों नाहीं होत ? तब श्रीनाथजी ने कह्यो जो– मैं तोसों बोलत हों दर्शन देत हों, सो श्रीगुसांईजी के वचन के लिए, नहीं तो प्रेत-योनि में दर्शन न देतो, न बोलतो। और उद्धार तो तेरो श्रीगुसांईजी के हाथ है। तातें श्रीगुसांईजी कृपा करेंगे, तब उद्धार होइगो।S

S S इतना अंश भावप्रकाश वाली प्रति में शब्दान्तर से भावप्रकाश के रूप में आया है– जो– पाछे प्रकाशित हुआ है।

सो श्रीगुसांईजी परम कृपालु, कृष्णदास के ऊपर दया आई, जो—अब तो बोहोत दिन भए हैं। तातें अब उद्धार होइ तो भलो हैं।

तब (प्रातः काल) श्रीगुसांईजी आपु ध्रुवघाट ऊपर आइके (अपने श्रीहस्त सों) कृष्दास कौ कर्म करवाइके उद्धार कियो, तब कृष्णदास कौ दिव्य सरीर भयो। तब कृष्णदास कौ उद्धार भयो, और लीला में प्राप्त भए। ❀

(सो बिलछू सामे गिरिराज में बारी, ता द्वार के मुखिया कृष्णदास हैं, सो तहां जाइके बिराजे।)

(सो या प्रकार कृष्णदास की लीला-प्राप्ति श्रीगुसांईजी आपु किए।)

❀ भावप्रकाश—

तहां यह संदेह होइ जो—श्रीगुसांईजी की कृपा तें उद्धार न भयो ? सो आपु मथुराजी पधारे, और ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध किये, सो कृपा तें (कहा) श्राद्ध अधिक है ?

तहां कहत हैं जो-गोपीनाथदास ग्वाल कृष्णदास कों प्रेत भए देखिके आए। सगरे सेवक व्रजवासीन के आगे गोपीनाथदास ग्वाल ने श्रीगुसांईजी तें कह्यो, जो-कृष्णदास प्रेत भए हैं। सो आपु सों विनती करी है, जो- आप मोकों प्रेतयोनि सों छुड़ावो।

जो-श्रीगुसांईजी चाहें तो रंचक मन में विचारे तें छुटकारो होय। परन्तु पाछें जो-सेवक व्रजवासी कोई प्रेत होय सो श्रीगुसांईजी सों कहे, जो-आपु छुडावो। सो तब न छुडावें तो दोष-बुद्धि होय, तब जीव कौ विगार होय। तासों श्रीगुसांईजी आपु श्रीमथुराजी में पधारिके ध्रुवघाट ऊपर श्राद्ध कियो, सो या मिस तें छुड़ाए। सो सबन ने जानी जो-ध्रुवघाट कौ श्राद्ध एसोही है, सो यह महिमा बढ़ाए। सो अपुनो माहात्म्य काल--कठिनता जानि छिपाये, सो याकौ कारण यह है।

और दूसरो कारण यह है जो-कृष्णदास एसे भगवदीय हते जो--इनके कोटानकोटि पुरुषान कौ उद्धार होय, सो काहे तें? जो--श्रीभागवत में नृसिंहजी तें प्रह्लाद ने कह्यो है जो-महाराज! मेरे पिता कौ उद्धार होउ, तब श्रीनृसिंहजी कहे जो--जा कुल में भगवद्-भक्त होय सो वाके इकीस पुरषा तरें। तासों तुम संदेह क्यो करत हो?

सो प्रह्लादजी तो मर्यादाभक्त भए, और कृष्णदास पुष्टिमार्गीय भगवदीय भए, सो इनके तो कोटानकोटि पुरषान कौ उद्धार है। परंतु श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के संबंध बिना लीला में प्रवेश न होय। तासों कृष्णदास के मिष करि सृष्टि में मुक्त किये।

सो काहे तें ? जो—कृष्णदास, श्रीगुसांईजी, सगरो श्रीगोवर्द्धनधर कौ परिकर अलौकिक है। सो इहां ईर्षा नाहीं है। सो भूमि पर हू भगवद्-लील जानि कहनो सुननो।

(सो या प्रकार कृष्णदास की वार्ता महा अलौकिक है)

और श्रीगुसांईजी कहे जो—कृष्णदास ने तीन वस्तु आछी कीनी। एक तो श्रीनाथजी को अधिकार एसो कियो जो— फिरि कोऊ दूसरो न करेगो। और (रासादि) कीर्तन किए, सो अति अद्भुत किए। और तीसरे श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के सेवक होइके सेवा हू करी, तैसी और कोई न करेगो।

या प्रकार श्रीगुसांईजी (आपु श्रीमुख सों) कृष्णदास की सराहना करते।

सो वे कृष्णदास अधिकारी श्रीआचार्य-जी महाप्रभुन के ऐसे कृपापात्र भगवदीय हैं। जिनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिये। +

+ सं० १६९७ वाली वार्ता प्रति (सरस्वती भंडार कांकरोली बंध सं० ९८/२) में इस वार्ता की समाप्ति पर इस प्रकार 'इति श्री' है।

॥ वार्ता ९ वैष्णव ८४ ॥

+ इति श्रीआचार्यजी महाप्रभुन के चौरासी सेवक, तिनकी वार्त्ता संपूर्णम्।

—प्रथम खण्ड समाप्त—



अष्टछाप

—:)*(:—

द्वितीय खण्ड



श्रीगुसांजी के सेवक:—

(५) चत्रभुजदास

(६) नन्ददास

(७) छीतस्वामी

(८) गोविन्द स्वामी



अष्टछाप

—:)*(—

द्वितीय खण्ड

श्रीगुसांईजी के सेवक :—

(५) चत्रभुजदास

(६) नन्ददास

(७) छीतस्वामी

(८) गोविन्दस्वामी



(५) चत्रभुजदासजी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक अष्टछाप के भगवदीय तिनकी वार्ता :—

अब श्रीगुसांईजी के सेवक चत्रभुजदास; कुंभनदास के बेटा, (जिन के पद अष्टछाप में गाइयत हैं) तिनकी वार्ता—❀

भावप्रकाश ❀

ये चत्रभुजदास लीला में श्रीठाकुरजी के 'विशाल' सखा कौ प्रकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'विशाल' सखा हैं और रात्रि की लीला में 'विमला सखी हैं।

आधिदैविक मूल स्वरूप

वार्ता प्रथम-१

सो (वे चत्रभुजदास जमनावता में कुंभनदासजी के यहाँ जन्मे) उन कुंभनदास कें पाँच बेटा भए। सो तिनकौ मन लौकिक

में बोहोत आसक्त भयो। सो उनकों (मन लौकिक में बहुत आसक्त) देखिके कुंभनदास कों (मन में) बोहोत दुःख भयो। (और मन में बिचारे) जो–मेरे काम कौ तो कोऊ (पुत्र) न भयो। (जातें हों अपने मन कौ भेद कहों) पाछें कुंभनदास ने पाचों बेटान कों न्यारे घर करि दिए। उनसों कुंभनदास कबहू बोलते नाहीं। और कुंभनदास की स्त्री हू श्रीआचार्यजी की सेवक हती, और इनके एक बेटी हती। सोऊ परम भगवदीय हती। सो ब्याह होत ही वाकौ भरतार काल-वस भयो। तातें वह बेटी सदा कुंभनदास के घर रहती। सो तीन्यो जने जमुनावता में रहते।

ता पाछें कुंभनदास कें एक बेटा और भयो। ताकौ नाम (कुंभनदास ने) कृष्णदास धर्‍यो। सो कृष्णदास जब बडो भयो, तब ताकों श्रीनाथजी की गांइन की सेवा दीनी,

और कीर्तन कोई आवतो नाहीं। सो कृष्ण-दास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाइ बचाई, (और आपु नाहर के सन्मुख होइके अपनो शरीर दियो) सो कृष्णदास की वार्ता में प्रसिद्ध है।

सो कुंभनदास के मन में आई जो—एसो कोई पुत्र न भयो, जासों मैं अपने हृदै कौ भाव सब कहों, और जासों (सब) भगवद्-वार्ता करों। (तासों कुंभनदास उदास रहते।)

(ता पाछें एक दिन श्रीगोवर्द्धननाथजी ने परासोली में कुंभनदास सों पूंछी जो—कुंभना! तू उदास क्यों है? तब कुंभनदास ने कही, महाराज! सत्संग नाहीं हैं। फेरि श्रीगोवर्द्धननाथजी ने मुसिक्याइके कह्यो जो-अरे कुंभना! सत्संग कौ फल जो-"मैं" सो तो तेरे पाछें पाछें डोलत हों, तोहू तोकों सत्संग की चाहना है?)

(तब कुंभनदास ने कही जो- महाराज! भगवदीयन के संग बिना जीव आपके स्वरूपानंद कों कैसें जाने ? आप के स्वरूप में रह्यो जो- आनंद, सो तो भगवदीय हू जानत हैं, और जानत नाहीं । तातें भगवदीयन के संग बिना आपके स्वरूप में मन उरझत नाहीं है ।)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने हँसिके आज्ञा करी जो- कुंभना ! तू धन्य है, जा, मैंने तोकों सत्संग के लिये भगवदीय पुत्र दियो तो हू कुंभनदास यह बिचारिके उदास रहते जो-कब पुत्र होइगो, फेरि कब तो वो बडो होइगो ? और न जाने वो कौन-से भाव में मगन रहेगो ?)

सो एसे करत पुत्र होइवे कौ समय भयो, सो एक दिन कुंभनदास कों श्रीनाथजी

ने कह्यो, जो–कुंभनदास ! तू मेरे संग चलि। तब कुंभनदास श्रीनाथजी के संग चले, सो श्रीनाथजी एक ब्रजवासी के घर पधारे । सो वह ब्रजवासिनी दही (माखन) की मथनियां (दोऊ ऊंचे) छींके के ऊपर धरिके आप कार्य कों गई हती । सो ताही समय श्रीनाथजी आप वाके घर में धंसे । सो उलूखल ऊपर चढिके मथनियां उतारी, और कुंभनदास तहां ठाढे रहे । सो एक हाथ में तो दही की मथनियां, एक हाथ में माखन की । सो ता समै श्रीनाथजी कौ पीतांबर खुलि परयो. सो भूमि में गिरन लाग्यो ।

तब श्रीनाथजी आप तत्काल दोइ भुजा और (नीचे प्रगट करिके पीतांबर बांध्यो, और दोइ भुजान में माखन (दही की मथनियां) लिए रहे । तासमै कुंभनदास कों चतुर्भुज स्वरूप कौ दर्शन भयो ।

ता पाछें (श्रीगोवर्द्धननाथजी तो) सखान सहित माखन दही (सब) आरोगे, बाकी बच्यो सो वनचरन, कों खवाइ दियो। ता समै वह गोपिका (अपने घर में दौरी) आई, सो (उहां) देखे तो माखन, दही श्रीनाथजी आरोगत हैं। तब वह गोपिका श्रीनाथजी कों पकरिवे कों दौरी। तब सखा तो सब भाजि गए, श्रीनाथजी और कुंभन-दास दोऊ ठाढ़े रहे। सो जब वह गोपिका निकट आई, तब श्रीनाथजी कौ श्रीमुख तो दही सों भर‍्यो हतो, सो वाकौ कुल्ला श्री-नाथजी ने वा गोपिका के मुख ऊपर कर‍्यो। तब (वाको) सगरो मुख और नेत्र दूध सों भर‍्यो, तब वह आंखि मीचिके ठाढी होइ रही। तब श्रीनाथजी और कुंभनदास कूदिके (वहां तें) भाजे। सो श्रीनाथजी तो अपने मंदिर में पधारे, और कुंभनदास (जमनावता गाम में) अपने घर कों चले।

सो ता समै मार्ग में (जाते कुंभनदास ने)
एक पद कियो । सो पद :—

॥ राग सारंग ॥

आनि पाए हौं हरि नीके ।
चोरि चोरि दधि माखन खायो गिरिधर दिन प्रति एही छीके
रोक्यो भवन द्वार ब्रज-सुंदरि नूपर सोर अचानक ही के ।
अब कैसे चलियत घर अपने, भाजन फोरि दूध दधि पीके ॥
'कुंभनदास' प्रभु भले फरे फंद जान न दैहौं भांवते जी के ।
भरि गंडूष छींट दै नैननि * गिरिधर धाइ चले दै की के ॥

सो यह कीर्तन करत (चले) चत्रभुज...
स्वरूप कौ जो-दर्शन भयो हतो ताके भाव...
रस में भरे अपने आप घर आए । ता...
समै कुंभनदास की स्त्री प्रसूत भई, सो वे...
भयो । तब यह सुनिके कुंभनदास ने क...
जो—या लरिका को नाम चत्रभुजदास...
मोकों रसात्मक चत्रभुज-स्वरूप को...
भयो है, तातें याकौ नाम चत्रभुजदा...

* भरि गई एक छींट नैननि म, स० १६६७ की प्रति...

ता पाछे उत्थापन के समै कुंभनदास श्रीगुसांईजी पास आइके दंडवत कीनी। तब श्रीगुसांईजी मुसिक्याइके कह्यो, जो—चत्रभुजदास आछे हैं? तब कुंभनदास ने बिनती करी, जो—महाराज! जा ऊपर आप एसी कृपा करो हो, सो तो सदाई आछो है, ताकों सब ठौर ही कल्याण है। तब श्रीगुसांईजी ने कुंभनदास सों कह्यो जो—या पुत्र सों तुम कों सब सुख होइगो। तुमारे मन में जो—मनोरथ है, सोई सिद्ध होइगो।

ता पाछें जब पिंडरू होइ चुक्यो, तब कुंभनदास शुद्ध होइके वा पुत्र कों आछो स्नान करवायो। पाछें कुंभनदास, चत्रभुजदास कों अपनी गोद में लेके आए। तब आइके श्रीगुसांईजी कों दंडवत कियो। तब श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास के माथें चरणारविंद

धरे ❀ तब कुंभनदास ने बिनती करी, जो–महाराज ! कृपा करिके या बालक कों नाम सुनाइए । तब श्रीगुसांईजी मुसिकाइके कह्यो, जो–राजभोग पाछें नाम निवेदन (दोइ संग) करवाऊंगो । यह सुनिके चत्रभुजदास तहां किलकिके हँसे । तब कुंभनदास (हू) मन में बोहोत प्रसन्न भए ।

तब ता पाछें राजभोग कौ समौ भयो, सो माला बोली । तब श्रीगुसांईजी सब भीतरियान कों आग्या दीनी, जो–तुम सब बाहिर जाओ । तब भीतरिया सब पोरी पे आइ बैठे । ता समै मंदिर में श्रीनाथजी श्रीगुसांईजी और कुंभनदास और चत्रभुजदास रहे । ता समै श्रीनाथजी ने लीला-सहित दर्शन दीने । सो यह दर्शन करिके श्रीगुसांई-

❀ पाठभेद— पाछें चत्रभुजदास कौ मस्तक श्रीगुसांईजी के चरण कमल सों परस कराइके कुंभनदास ने" ।

जी आपु तथा कुंभनदास तथा चत्रभुजदास बोहोत प्रसन्न भए ।

तब श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास कों नाम सुनायो (पाछें तुलसी लेके कुंभनदास तें कहे जो-चत्रभुजदास कों (आगे) लावो) पाछें (श्रीगोवर्द्धननाथजी के सन्मुख चत्रभुज-दास कों) निवेदन करवायो । पाछें तुलसी ले-के श्रीनाथजी के चरणारविंद में समर्पी । ता ही समें सगरी लीला कौ अनुभव (चत्रभुज-दास कों) भयो । सो लीला चत्रभुजदास के हृदयारूढ भई । और श्रीगुसांईजी कौ स्वरूप हृदयारूढ भयो तब ताही समें (चत्रभुज-दास ने) पद कियो सो पद :—

॥ राग सारंग ॥

सेवक की सुख-रासि सदा श्रीवल्लभ-राजकुमार)
दरसन करत प्रसन्न होइ मन पुरुषोत्तम-अवतार ॥
सुदृष्टि ही चितै सिद्धांत बतायो सेवा जग विस्तार ।
यह तजि अन्य ज्ञानकों धावैं भूलै कुमति विचार ॥

'चत्रभुजदास' उद्धरे पतित सब श्रीविट्ठल-कृपा उदार।
जाके हाथ गहि भुज दृढ करि गिरिधर नंद-दुलार ॥

यह कीर्तन चत्रभुजदास ने गायो। सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। और कुंभनदास हू बोहोत प्रसन्न भए (अपने मन में आनन्द पाए) और कह्यो जो—मोकों जैसो मनोरथ हतो, तैसेई वैष्णव कौ संबंध भयो।

ता पाछें मंदिर के किवांड खुले। तब सबन कों दर्शन भयो। ता पाछें श्रीगुसांईजी (आरती उतारिके) श्रीनाथजी को अनोसर करिके माला लेके, बीडा लेके पर्वत तें नीचे उतरिके अपनी बैठक में पधारे। ताही समें (सब) वैष्णव आए। ता समें कुंभनदास (हू) चत्रभुजदास कों लेके आए। तब सबन के आगें चत्रभुजदास मुग्ध बालक की नांई व्है रहे। ता पाछें श्रीगुसांईजी सब वैष्णवन कों विदा किए।

ता पाछें आपु भोजन कों पधारे ता पाछें (श्रीगुसांईजी) आपु भोजन करिके (कृपा-करिके अपने श्रीहस्त सों) जूठन की पातरि कुंभनदास के आगें धरी। सो कुंभनदास तथा चत्रभुजदास ने महाप्रसाद लियो।

पाछें श्रीगुसांईजी गादी-तकियान के ऊपर विराजे, सो बीडा आरोगे। पाछें कुंभन-दास चत्रभुजदास कों लेके आइ बैठे। तब श्रीगुसांईजी ने कृपा करिके दोऊ जनेन कों न्यारो न्यारो उगार दियो, सो कुंभनदास ने चत्रभुजदास ने लीनो। पाछें श्रीगुसांईजी पोढे। तब कुंभनदास (चत्रभुजदास कों गोद में लेके (बिदा होइके) जमनावते गाम में अपने घर कों आए। सो जब एकांत में चत्रभुज-दास कुंभनदास सोवें, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी की वार्ता करें। (लीला) और श्रीआचार्य-

जी महाप्रभु तथा श्रीगुसांईजी की वार्ता करते। तब दोऊ जनेन कों मन में आनंद होतो। ता समैं जो कोई तोसरो आवतो तब बालक की नांई चत्रभुजदास मुग्ध व्है रहैते।

और जा दिन चत्रभुजदास ने नाम समर्पण कियो, ता दिन तें श्रीनाथजी के दर्शन किए बिना (चत्रभुजदास) दूध पान न करते। एसे करत बरस पांच के भए। (सो चत्रभुजदास नेम सों दर्शन करते सो वे चत्रभुजदास एसे भगवदीय हते)

और श्रीनाथजी ने एक दिन चत्रभुजदास कों आग्या दीनी। जो-(चत्रभुजदास) तू मेरे संग गांइ चरावन कों चलियो तब चत्रभुजदास राजभोग सरे पाछें (आरती के दर्शन करिके) गोविंदकुंड पे आइके बैठे। तब मंदिर में कुंभनदास सबन कों पूंछे, जो-

चत्रभुजदास (आज) कहाँ गयो ? तब सबन ने कह्यो जो—दर्शन में तो देख्यो हतो, और पाछें तो (हमने) देख्यो नाहीं। तब कुंभनदास अपने मन में विचार करन लागे। (जो चत्रभुजदास कहाँ गयो ?)

पाछें श्रीनाथजी कौ अनोसर करिके श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में बिराजे। तब कुंभनदास ने आइके दंडौत करी। तब श्रीगुसांईजी पूछे जो—कुंभनदास ! आज उदास क्यों भये हो ? तब कुंभनदास ने कह्यो जो-महाराज ! चत्रभुजदास (आज) दर्शन में तो हतो और अब नाहीं देखियत हैं। (सो कहां गयो ?) तब श्रीगुसांईजी ने (कुंभनदास सों) कह्यो जो— तू आज पाछें चत्रभुजदास की चिंता मति करियो। श्रीनाथजी ने वाकों आग्या दीनी है, जो—तुम मेरे संग गांइ चरावन कों चलो। तातें चत्रभुज-

दास श्रीनाथजी के दर्शन करिके तत्काल गोविंदकुंड के ऊपर जाइ बैठ्यो है। सो अब श्रीनाथजी चत्रभुजदास कों सग लेके (श्री-बलदेवजी-सहित) गांइ चरावन कों पधारे हैं, सो अब (कोई एक घडी में) स्याम ढाक ऊपर पधारेंगे। जो—तुम कों जानो होइ तो सूधे स्याम ढाक कों जाओ। तहां तुमकों श्रीनाथजी और चत्रभुजदास समाज-सहित मिलेंगे।

तब यह सुनिके कुंभनदास तहां तें चले। (सो सूधे) स्याम ढाक पे आए। तब देखे तो श्रीनाथजी (बलदेवजी—सहित) और चत्रभुजदास समाज-सहित बैठे हैं। (तब कुंभनदास ने जाइके दंडवत कीनी) तब श्रीनाथजी ने हँसिके कह्यो जो— कुंभनदास! आगे आउ! तब कुंभनदास ने (दंडवत कीनी और) श्रीनाथजी सों विनती करी,

चत्रभुजदास (आज) कहाँ गयो ? तब सबन ने कह्यो जो—दर्शन में तो देख्यो हतो, और पाछें तो (हमने) देख्यो नाहीं । तब कुंभनदास अपने मन में विचार करन लागे । (जो चत्रभुजदास कहाँ गयो ?)

पाछें श्रीनाथजी कौ अनोसर करिके श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में बिराजे । तब कुंभनदास ने आइके दंडौत करी । तब श्रीगुसांईजी पूछे जो—कुंभनदास ! आज उदास क्यों भये हो ? तब कुंभनदास ने कह्यो जो-महाराज ! चत्रभुजदास (आज) दर्शन में तो हतो और अब नाहीं देखियत हैं । (सो कहां गयो ?) तब श्रीगुसांईजी ने (कुंभनदास सों) कह्यो जो— तू आज पाछें चत्रभुजदास की चिंता मति करियो । श्रीनाथ-जी ने वाकों आग्या दीनी है, जो—तुम मेरे संग गांइ चरावन कों चलो । तातें चत्रभुज-

तब बाने जाइके अपने बाप कों पुकार्यो, जो-कुंभनदास के बेटा ने घर में पैठिके दूध दही माखन सब खायो है।

तब यह सुनिके दस पाँच ब्रजवासी जुरि आए, सो श्रीनाथजी तो सखान सहित भाजि गए, वे तो चोरी की रीति-भांति सब जानत हते। सो पुरुषोत्तम सहस्र नाम में कहे हैं:-- "चौर्य-विद्याविशारदः"। और चत्र-भुजदास तो प्रथम ही आए हते (सो ये कछू जानत नाहीं) तातें उहां ठाढे रहे। सो चत्रभुजदास कों ब्रजवासीन ने पकरिके भली भाति सों मार्यो। तब ब्रजवासीन ने चत्रभुज-दास सों कह्यो जो– आज पाछें तू हमारे घर में चोरी करन कों पैठेगो तो हम तेरे (बाप) कुंभना कों बुलावेंगे। एसें कहिके (ब्रजवासी-न ने) चत्रभुजदास कों छोडे।

तब चत्रभुजदास श्रीनाथजी पास आए।

जो– महाराज ! चत्रभुजदास ऊपर आपने बड़ी कृपा करी है, तातें याकौ परम भाग्य है। यह सुनिके श्रीनाथजी मुसिकाइ रहे । सो या भांति सों श्रीगुसांईजी चत्रभुजदास के ऊपर कृपा करते ।

इति वार्ता प्रथम

—)०(—

वार्ता द्वितीय

और एक समय श्रीनाथजी व्रजवासीन के घर (दूध दही माखन की) चोरी करन कों गए। तब चत्रभुजदास कों यह आग्या करी, जो–(कुंभना के!) आज तुम हमारे संग व्रजवासीन के घर माखन चोरी कों चलि। सो तहां तें चलिके एक व्रजवासी के घर जाइ बैठे, और दूध दही माखन आरोगे। तब वा व्रजवासी की बेटी ने चत्रभुजदास कों देख्यो, श्रीनाथजी तो वाकों दीसे नाहीं।

घर बैठे हते, सो अर्द्धरात्रि के समै श्रीनाथजी
के (मंदिर में) दीवा बरत देखे। तब कुंभन-
दास ने चत्रभुजदास कों सुनाइके कह्यो। जो-
"वे देखो बरत झरोखन दीपक, हरि पौंढे ऊंची चित्रसारी"
इतनो कहिके चुप करि रहे । सो इह
सुनिके चत्रभुजदास ने कह्यो जो-
"सुंदर वदन निहारन कारन राखे बोहोत जतन करि प्यारी"
यह सुनिके कुंभनदास ने चत्रभुजदास
सों पूंछी। जो-या लीला कौ अनुभव तोकों
भयो ? तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो- श्री-
गुसांईजी की कृपा तें श्रीमहाप्रभुजी की कानि
तें (यह लीला को अनुभव) श्रीनाथजी कृपा
करिके जनाए हैं। तब कुंभनदास यह
सुनिके बोहोत प्रसन्न भए।

तब श्रीनाथजी सखान सहित बोहोत ही हँसे। (तब चत्रभुजदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो महाराज ! दूध दही, माखन तो सखान सहित आप आरोगे, और मार मोकों खवाई ?)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो–तैंने हू दूध दही माखन क्यों न खायो ? और जहाँ मैं भाज्यो और सब सखा भाजे तहां तू हू क्यों न भाज्यो ? तू क्यों मार खाइ रह्यो ? तब चत्रभुजदास सुनिके चुप होइ रहे।)

सो वे चत्रभुजदास श्रीनाथजी के और श्रीगुसाँईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

इति वार्ता द्वितीय

वार्ता तृतीय

और (एक समै) कुंभनदास और चत्रभुजदास (जमनावता गाम में) अपने

घर बैठे हते, सो अर्द्धरात्रि के समै श्रीनाथजी के (मंदिर में) दीवा बरत देखे। तब कुंभनदास ने चत्रभुजदास कों सुनाइके कह्यो। जो–

"वे देखो बरत झरोखन दीपक, हरि पौंढे ऊंची चित्रसारी"

इतनो कहिके चुप करि रहे। सो इह सुनिके चत्रभुजदास ने कह्यो जो–

"सुंदर वदन निहारन कारन राखे बोहोत जतन करि प्यारी"

यह सुनिके कुंभनदास ने चत्रभुजदास सों पूंछी। जो–या लीला को अनुभव तोकों भयो? तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो– श्रीगुसांईजी की कृपा तें श्रीमहाप्रभुजी की कानि तें (यह लीला को अनुभव) श्रीनाथजी कृपा करिके जनाए हैं। तब कुंभनदास यह सुनिके बोहोत प्रसन्न भए।

तब श्रीनाथजी सखान सहित बोहोत ही हँसे। (तब चत्रभुजदास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी सों कह्यो जो महाराज! दूध दही, माखन तो सखान सहित आप आरोगे, और मार मोकों खवाई?)

(तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो—तैंने हू दूध दही माखन क्यों न खायो? और जहाँ मैं भाज्यो और सब सखा भाजे तहां तू हू क्यों न भाज्यो? तू क्यों मार खाइ रह्यो? तब चत्रभुजदास सुनिके चुप होइ रहे।)

सो वे चत्रभुजदास श्रीनाथजी के और श्रीगुसाँईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

इति वार्ता द्वितीय

वार्ता तृतीय

और (एक समै) कुंभनदास और चत्रभुजदास (जमनावता गाम में) अपने

घर बैठे हते, सो अर्द्धरात्रि के समै श्रीनाथजी के (मंदिर में) दीवा बरत देखे। तब कुंभन-दास ने चत्रभुजदास कों सुनाइके कह्यो। जो–

"वे देखो बरत झरोखन दीपक, हरि पौंढे ऊंची चित्रसारी"

इतनो कहिके चुप करि रहे। सो इह सुनिके चत्रभुजदास ने कह्यो जो–

"सुंदर वदन निहारन कारन राखे बोहोत जतन करि प्यारी'

यह सुनिके कुंभनदास ने चत्रभुजदास सों पूंछी। जो–या लीला को अनुभव तोकों भयो? तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो– श्री-गुसांईजी की कृपा तें श्रीमहाप्रभुजी की कानि तें (यह लीला को अनुभव) श्रीनाथजी कृपा करिके जनाए हैं। तब कुंभनदास यह सुनिके बोहोत प्रसन्न भए।

*तब ता समै यह पद गायो । सो पद:—

॥ राग कान्हरो ॥

वे देखो बरत झरोखन दीपक, हरि पौढे ऊंची चित्रसारी।
सुंदर वदन निहारन कारन राखे बोहोत जतन करि प्यारी ॥
कंठ लगाइ, भुज दै सिरहाने अधरामृत पीवत पिय प्यारी।
तन मन मिल्यो प्रानप्यारे सों नौतन छवि बाढ़ी अति भारी
'कुंभनदास' दंपति सुख-सीमा भली बनी इकसारी।
नव नागरी मनोहर राधे, नवल लाल गोवर्द्धनधारी ॥ *

सो या भांति सों कीर्तन कुंभनदास ने (सम्पूर्ण करिके) सगरो भावसहित चत्रभुजदास कों सुनायो, और (चत्रभुजदास सों) कुंभनदास ने कह्यो जो—(श्रीगोवर्धननाथजी आप तोसों छिपाये नाहीं तो मैं हू तोसों न छिपाऊंगो जो) अब मेरे मन कौ मनोरथ श्रीनाथजी ने पूर्ण कर्‌यो ।

ता दिन तें कुंभनदास रहस्य-वार्ता चत्रभुजदास सों कहते, कछू गोप्य न राखते।

*..... * भावप्रकाश वाली प्रति में यह पद नहीं है।

सो वे कुंभनदास चत्रभुजदास श्रीनाथजी के एसे कृपापात्र अंतरंग सखा हे।

इति वार्ता तृतीय

वार्ता चतुर्थ

और एक समै श्रीआचार्यजी महाप्रभुन कौ जन्म-दिवस आयो, तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी द्वार में हते। तब सामग्री नाना प्रकार की जन्माष्टमी की रीति करते। तब श्रीनाथजी कौ शृंगार श्रीगुसांईजी ने कियो। तब चत्रभुजदास ने श्रीनाथजी के दर्शन किए। तब एक नयो पद करिके गायो, सो पद—

॥ राग विलावल ॥

"सुभग सिंगार निरखि मोहन कौ।
दरपन कर लै पिय हिं दिखावैं॥
आपुन, नेकु निहारिये वलि जाऊं।
आज की छवि कछु कहत न आवैं॥
भूषन वसन रहे फवि ठांइ ठांइ।
अंग-अंग सोमा कछु कहत न आवै॥
रोम-रोम प्रफुलित तन सुंदर।

फूलन रुचि-रुचि पाग बंधावै ॥
अंचर वारि करति न्योछावरि ।
तन मन अति अभिलाष बढावै ॥
'चत्रभुज प्रभु' गिरिधर कौ रूप रस ।
पीवत नैन पुट तृपति न पावै ॥

यह पद चत्रभुजदास ने श्रीनाथजी के संनिधान श्रीगुसांईजी कों सुनायो। सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए ।

पाछें श्रीगुसांईजी राजभोग धरिके गोविंद-कुंड पे संध्यावंदन करिवे कों पधारे, तब चत्र-भुजदास और एक वैष्णव संग हतो । तब (श्रीगुसांईजी सों) वा वैष्णव ने पूंछी जो—महाराज ! आपु तो नित्य याही भाँति २ सों शृंगार करि (दर्शन करावत हो) दर्पन श्री-नाथजी कों दिखावत हो। सो आज चत्रभुज-दास ने कीर्तन में कह्यो (जो महाराज !) ताकौ कारन कहा है ?
जो– "आज की छवि कछु कहत न आवै ।"

तब श्रीगुसांईजी ने (श्रीमुखतें) वा वैष्णव सों कह्यो जो–तुम चत्रभुजदास (ही) सों पूंछो। तब वा वैष्णव ने चत्रभुजदास सों कही जो– तुम ने (आज) यह छंद कियो ताकौ कारन कहा है? तब चत्रभुजदास ने वा वैष्णव सों कही जो–सुनि। तब चत्रभुजदास ने (तहां गोविंदकुण्ड ऊपर) दूसरो पद कियो, सो पद—

॥ राग विलावल ॥

आजु और कालि और छिन प्रति और और
देखिये रसिक गिरिराज-धरन ॥
दिन प्रति नव छवि वरनै सो कौन कवि,
नित ही सिं ार वागे वरन वरन ॥
सोभा सिंधु अंग-अंग जीने कोटि-अनंग,
छवि की उठत तरंग विश्व कौ मनहरन ॥
'चत्रभुज प्रभु' गिरिधारी कौ स्वरूप सुधा-
पान कीजै जीजै रहिये सदाई सरन ॥

यह पद चत्रभुजदास ने गायो। तब श्रीगुसांईजी आपु चत्रभुजदास की ओर

देखिके मुसिकाए। तब तो वा बैष्णव कों दूसरें संदेह पर्‌यो, जो—चत्रभुजदास ने दोइ पद बोले ताकौ भेद तो न जान्यो ?

ता पाछें श्रीगुसांईजी (संध्या वन्दन करि) सेवा तें पोहोंचि श्रीनाथजी कौ राजभोग सरायो। ता पाछें (राजभोग) आरती करिके अनौसर करिके श्रीगुसांईजी (श्रीगोवर्द्धन) पर्वत तें नीचे उतरे, सो अपनी बैठक में बिराजे। ता पाछें बैष्णवन कों बिदा करिके आपु भोजन कों पधारे। सो भोजन करिके आचमन लेके श्रीगुसांईजी आप) गादी तकियान पे बिराजे बीडा आरोगत हते।

(तब सब बैष्णव तो अपने २ डेरा गये) तब वा बैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी, जो—महाराज ! आज चत्रभुजदास ने दोइ पद (सिंगार के समै) गाए, तामें (भेद)

हौं समुझ्यो नाहीं, और आप कृपा करिके मेरो संदेह दूरि करो ।

तब श्रीगुसांईजी वा वैष्णव सों कहे, जो—आज श्रीआचार्यजी महाप्रभुन को जन्मोत्सव है, तातें (आज) श्रीस्वामिनीजी अपने मनोरथ की सामग्री शृंगार वागा (सब) अपने हाथ सों धराए। तातें श्रीनाथजी (आप) बोहोत प्रसन्न भए हैं। तातें चत्रभुजदास ने कह्यो ("आज और कालि और") जो- "आज की छवि कछू कहत न आवै" ।

और (गोविंदकुण्ड पे) दूसरो कीर्त्तन कियो, ताको भाव यह जो— (नित्य) जितने व्रजभक्त हैं सो अपने—अपने मनोरथ की सामग्री धरावत हैं, सो अपने २ वस्त्र आभूषण; तातें आज और कालि और, त्तण में अनेक भक्तन को सन्मान करत हैं । सो जैसो व्रजभक्तन को भाव है, जो— उनके

मन में मनोरथ हैं, सो आप (श्रीगोवर्द्धननाथजी) वाही भाँति सों व को मनोरथ सिद्ध करत हैं। तातें क्षण-क्षण में श्रीनाथजी की और सोभा होत है।

या भांति वा बैष्णव सों श्रीगुसांईजी ने समुझाइके कह्यो। तब वा बैष्णव को संदेह दूरि भयो। तब वह बैष्णव प्रसन्न होइके जान्यो, जो—चत्रभुजदास तो बड़े भगवदीय हैं। वाकों श्रीनाथजी लीलासहित दर्शन देत हैं।

सो वे चत्रभुजदास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

इति वार्ता चतुर्थ

वार्ता पंचम

एक समै आन्योर में रासधारी आए, (हते) तब श्रीगुसांईजी तो श्रीगोकुल में हते, और श्रीगिरिधरजी, श्रीगोविंदजी, श्रीबाल-

कृष्णजी, श्रीगोकुलनाथजी, श्रीयदुनाथजी ❀ हते, श्रीघनस्यामजी कौ प्रागट्य न भयो हतो। सो रासधारीन ने तो श्रीगोकुलनाथजी के पास आइके बोहोत विनती करी जो–आप पधारो तो हम रास करें। तब श्रीगोकुलनाथजी ने रासधारीन सों कह्यो जो– मैं श्रीगिरिधरजी सों पूछिके कहूंगो।

ता पाछें श्रीनाथजी की सैन आरती होइ चुकी, (और अनोसर भए) ता पाछें श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगिरिधरजी सों पूंछी जो–दादा! तुम कहो तो मैं रास करवाऊं? और (हू) बालकन कौ मन है, और आप रास में पधारो तो आछो है। तब श्रीगिरिधरजी ने कही, जो–इहां श्रीगुसांइजी होते

पाठभेदः—

❀श्रीरघुनाथजी ए पांचों बालक श्रीजीद्वार हते। और श्रीयदुनाथजी श्रीगोकुल में हैं।

तो पूंछिके रास करावते, तातें मति कहूं (मेरे ऊपर) श्रीगुसांईजी (आपु) खीजें ? और तुम्हारो मनोरथ होइ तो परासोली चंद्र-सरोवर ऊपर रास कराओ। और मेरो तो आवनो नहीं बनेगो।

तब श्रीगोकुलनाथजी आदि देके सब बालक रासधारीन कों संग लेके परासोली चन्द्रसरोवर पे) आए। तब श्रीगोकुल-नाथजी चत्रभुजदास कों (हू अपने) संग ले गए हते। और श्रीगिरिधरजी तो गोपाल-पुर में श्रीगुसांईजी की बैठक

सो जब पहर रात्रि गई ऊपर रास कौ आरंभ* भयो दिन हतो, चैत्र सुदी १५। रात्रि गई, तब श्रीगोकुलनाथ

* पाठ भेदः— मडान

दास सों कह्यो, जो–तुम कछू गाओ। तब चत्रभुजदास ने श्रीगोकुलनाथजी सों कह्यो जो–कछु श्रीनाथजी कों रास करत देखों तो मैं गाऊं? रास के करनवारे तो श्रीगिरिधरजी-निकट हैं।

तब श्रीगोकुलनाथजी ने (चत्रभुजदास सों) कही जो–अब कहा करिये? रात्रि तो अब पहर एक बाकी रही है, और अब बुलावन जैये तो आवत–जात में भोर है जाइ? और फेरि उन के मन में आवे तो आवें, (नहीं तो न भी आवें) तातें अब कहा करिये? तब चत्रभुजदास ने कही, जो– तुम चिंता मति करो, कोईक घड़ी में श्रीगोवर्द्धननाथजी और श्रीगिरिधरजी इहां पधारत हैं।

ता (ही) समै तहां श्रीगोवर्द्धननाथजी श्रीगिरिधरजी के पास बैठक में पधारे, और (उन सों) कह्यो जो–चलो (परासोली)

तो पूछिके रास करावते, तातें मति कहूं (मेरे ऊपर) श्रीगुसांईजी (आपु) खीजें ? और तुम्हारो मनोरथ होइ तो परासोली चंद्र-सरोवर ऊपर रास कराओ। और मेरो तो आवनो नहीं बनेगो।

तब श्रीगोकुलनाथजी आदि देके सब बालक रासधारीन कों संग लेके परासोली (चन्द्रसरोवर पे) आए। तब श्रीगोकुल-नाथजी चत्रभुजदास कों (हू अपने) संग ले गए हते। और श्रीगिरिधरजी तो गोपाल-पुर में श्रीगुसांईजी की बैठक में र

सो जब पहर रात्रि गई तब ऊपर रास को आरंभ* भयो। पू दिन हतो, चैत्र सुदी १५। सो रात्रि गई, तब श्रीगोकुलनाथजी

(यह कीर्तन चत्रभुजदास ने गायो। तब सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी आज्ञा करे जो–चत्रभुजदास! यह विरियां कौन है? तब चत्रभुजदास ने यह दूसरो पद गायो। सो पद):—

(राग भैरव)

("प्यारी ग्रीवा पे भुज मेलि निरतत पिय सुजान० ।)

(यह कीर्तन चत्रभुजदास ने गायो, सो सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी बोहोत प्रसन्न भए, और चत्रभुजदास के सामने मुसिकाए। तब चत्रभुजदास ने जान्यो जो–धन्य मेरो भाग्य है)

ऐसे बोहोत ही पद (चत्रभुजदास ने रास के) किए। पाछें रात्रि घड़ी द्वै रही, तब श्रीनाथजी तो मंदिर में पधारे, श्रीगिरिधरजी और चत्रभुजदास गोपालपुर आए।

चंद्रसरोवर पे, तहां रास-रमण कराएं । तब श्रीगिरिधरजी श्रीनाथजी कों अपने संग लेके चंद्रसरोवर पे आए । तब रासधारीन कों श्रीगिरिधरजी कौ दर्शन भयो । (श्रीगोवर्धन-नाथजी के दर्शन न भए) और सब वालक श्रीगोवर्द्धननाथजी कों और श्रीगिरिधरजी कों देखिके बोहोत प्रसन्न भए ।

तब श्रीनाथजी ने अपने ब्रजभक्तन के संग रास क्रीडा करी । सो रात्रि हू बढि गई, और चंद्रमा और ही भाँति सोभा देन लाग्यो ।

ता समै चत्रभुजदास ने यह पद गायो । सो पद :—

॥ राग केदारो ताल चर्चरी ॥

अद्भुत नट भेष धरें यमुना तट स्याम सुंदर,
गुननिधान गिरिवरधर रास-रंग नाचे ॥
युवती-जूथ संग मिलि गावत केदारो,
राग मधुरे वेणु सम सुर साचे
उरप तिरप लाग डाटत त त त त थेई,
उघटित सदा वली भेद कोऊ न वाचे ।

॥ वार्ता षष्ठ ॥

और एक दिन श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास सों कही, जो— तुम अपछरा कुंड पे जाइ रामदास कों उहां तें बुलाइ लाओ, और कछु फूल मिलें तो लेत आइयो। तब चत्रभुजदास ने जाइके रामदास सों कही, जो— तुम कों श्रीगुसांईजी बुलवत हैं, तातें तुम वेगि-जाउ।

(सो सुनिके रामदासजी श्रीगुसांईजी के पास चले।) ता पाछें चत्रभुजदास फूल लेके अकेले (ही) चले, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की कंदरा के पास आए। तब (तहां) देखे तो श्रीस्वामिनीजी सहित श्रीनाथजी पधारत हैं, कंदरा में तें उनीदे वाहिर पधारत हैं। (सो चत्रभुजदास कों ता समय एसो दर्शन भयो) तब तहां चत्रभुजदास ने पद गायो। सो पद:—

ता पाछें (रासधारीन कों श्रीगोकुलनाथजी ने कछु द्रव्य देके बिदा किए। पाछें सब बालकन सहित श्रीजीद्वार ❀ आए। पाछे श्रीगोकुलनाथजी तो श्रीगोकुल पधारे।

तब श्रीगुसांईजी श्रीगोकुल तें श्रीनाथजीद्वार पधारे, तब श्रीगिरिधरजी सों रास के समाचार पूछे। तब श्रीगिरधरजी सब समाचार कहे। तब श्रीगुसांईजी ने कही, जो—आपुन कों श्रीनाथजी सों हठ न करनो, जो— श्रीठाकुरजी कों श्रम होत है, और श्रीनाथजी अपनी इच्छासों तो नित्य रास-रमण करत हैं।

सो या भांति सों श्रीगिरिधरजी सों श्रीगुसांईजी ने कही। (तब सुनिके श्रीगिरिधरजी चुप करि रहे)

सो वे चत्रभुजदास श्रीनाथजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

॥ इति वार्ता पंचम ॥

पाठ भेदः— गोपालपुर आए। ता पाछें कछुक दिन रहिके श्रीगोकुलनाथजी श्रीजीद्वार—

॥ वार्ता षष्ठ ॥

और एक दिन श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास सों कही, जो– तुम अपछरा कुंड पे जाइ रामदास कों उहां तें बुलाइ लाओ, और कछु फूल मिलें तो लेत आइयो। तब चत्रभुजदास ने जाइके रामदास सों कही, जो– तुम कों श्रीगुसांईजी बुलवत हैं, तातें तुम वेगि-जाउ।

(सो सुनिके रामदासजी श्रीगुसांईजी के पास चले।) ता पाछें चत्रभुजदास फूल लेके अकेले (ही) चले, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी की कंदरा के पास आए। तव (तहां) देखे तो श्रीस्वामिनीजी सहित श्रीनाथजी पधारत हैं, कंदरा में तें उनीदे वाहिर पधारत हैं। (सो चत्रभुजदास कों ता समय एसो दर्शन भयो) तव तहां चत्रभुजदास ने पद गायो। सो पद:—

॥ राग विभास ॥

श्रीगोवर्द्धन गिरि सघन कंदरा ।
रैन-निवास कियो पिय प्यारी ॥
उठि चले भोर सुरत-रंग भीने ।
नंदनंदन वृषभानदुलारी ॥
अति बिगलित कच, माल मरगजी ।
अटपटे भूषन रँगमगी सारी ॥
उतहिं अधसिर पाग लटकि रही ।
दुहु दिसि तें छवि बाढ़ी अतिभारी ॥
घूमत आवत रतिरन जीते ।
करनी के संग गज गिरिवरधारी ॥
'चत्रभुजदास' निरखि दंपति-सुख ।
तन मन धन कीनो बलिहारी ॥

(यह कीर्तन श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु सुनिके आज्ञा किये जो--चत्रभुजदास ! कछु और गावो । तब चत्रभुजदास ने यह दूसरो कीर्तन ताही समै गायो । सो पद :—

राग बिलावल:—'रजनी राज कियो निकुंज-नगर की रानी.)'

यह पद चत्रभुजदास ने गायो । ता पाछें चत्रभुजदास (आनंद में) फूल लेके

आए, सो फूलघर में धरिके पाछें श्रीगुसांई-जी कों दंडवत् करिके सब समाचार कहे। तब श्रीगुसांईजी चत्रभुजदास के ऊपर बोहोत प्रसन्न भए ता दिन तें श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें आग्या करी, जो--चत्रभुजदास कों शृंगार होत समैं दर्शन होइ ❀।

सो जब श्रीनाथजी कौ शृंगार होतो, तब चत्रभुजदास ठाढे ठाढे कीर्तन करते। सो श्रीगुसांईजी, श्रीनाथजी चत्रभुजदास पे एसी कृपा करते।

(वे चत्रभुजदास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते)

॥ इति वार्ता षष्ठ ॥

---

* भावप्रकाश वाली वार्ता प्रति का पाठ भेदः—
जो-चत्रभुजदास ! जब श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ शृंगार होइ ता समैं नित्य दर्शन कों आयो कर। पाछे जब ·· ·····।

वार्ता सप्तम

(फेर ता पाछें चत्रभुजदास व्याह न करते)

और एक दिन श्रीनाथजी ने चत्रभुजदास कों आग्या दीनी जो-(चत्रभुजदास?) तुम व्याह करो। (तब चत्रभुजदास ने कही जो—महाराज! मैं यह सुख छांडिके आपदा में क्यों पडूं? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने फेरि आज्ञा करी जो—वेगि व्याह करि) तब (श्रीगोवर्द्धननाथजी की आज्ञा मानिके) चत्रभुजदास ने व्याह कियो।

सो कितेक दिन पाछें चत्रभुजदास की बहू मरि गई। (तब चत्रभुजदास कों अटकाव [सूतक] भयो, तब वे अत्यंत बिरह करिके आतुर भए। तब चत्रभुजदास

के अंतःकरण की श्रीगोवर्द्धननाथजी ने जानी सो वन में चत्रभुजदास बैठे २ विरह करते श्रीगोवर्द्धननाथजी सों प्रार्थना करते । सो कीर्तन करि-करिके दिन वितीत किये । ता समै चत्रभुजदास ने कीर्तन गायो । सो पद्—)

(राग भैरव :- 'भोर भांवतो श्रीगिरिधर देखों० ।')

(राग बिलावल :-'श्यामसुंदर प्राणप्यारे छिन जिन होउ नियारे० ।)

(राग धनाश्री :-'गोपाल कौ मुखारविंद जिय में विचारों० ।')

(एसें २ प्रार्थना के चत्रभुजदास ने वोहोत कीर्तन करिके सूतक के दिन वितीत किये । ता पाछें शुद्ध होइके श्रीनाथजी के शृंगार के दर्शन चत्रभुजदास ने किये । तब साष्टांग दंडवत करिके हाथ जोरिके श्रीगोवर्द्धननाथजी के सामे चत्रभुजदास ठाढे भए तब श्रीनाथजी उनकी सामने देखिके

मुसिक्याए । ता पाछें ग्वाल के, राजभोग के दर्शन करिके चत्रभुजदास मन में विचारे जो-घर चलिये)

तब श्रीनाथजी ने (चत्रभुजदास सों) फेरि कह्यो, जो– तू दूसरो ब्याह करि। तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो–अब दूसरी वार हम कों कन्या को देइगो ? ❀। तब श्रीनाथजी ने (फेरि) कह्यो जो– धरेजो करि ले । तब यह सुनिके चत्रभुजदास कछु बोले नाहीं ।

पाछें नित्य दिन पांच-सात लों श्रीनाथजी चत्रभुजदास सों कही, जो–'धरेजो करि ले'। परंतु चत्रभुजदास के मन में यह बात न आई । तब श्रीनाथजी ने सदूपांडे कों जनायो, जो– (तुम ढूंढिके) चत्रभुजदास को धरेजा, करवाइ देउ ।

* पाठ भेद ....कह्यो जो–महाराज ! जाति में तो लरकिनी कोई नाहीं है ।

तब सदूपांडे ने चत्रभुजदास सों कही, जो- यों आग्या भई है, तातें अवस्य प्रभुन की आग्या करनी । तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो– आप मेरे पाछें परे हैं, सो अब मैं कहा करूं ?

ता पाछें एक मुकद्म की वेटी रांड हती, सो वासों (सदूपांडे ने कहिके
२ चत्रभुजदास कों) धरेजा कियो ।

ता पाछें श्रीनाथजी चत्रभुजदास की नितप्रति हाँसी करन लागे । जो–(यह) देखो ! कुंभनदास सारिखे भगवदी को वेटा होइके स्त्री मरि गई तासों (दोइ चारि महिना हू) न रह्यो गयो (सो तुरत) धरेजा कियो । सो या भांति सों चत्रभुजदास की हाँसी (श्रीगोवर्द्धननाथजी) नित प्रति सखान सों करते, तव चत्रभुजदास कों सुनिके लज्या आवती ।

ऐसे करत एक दिन श्रीनाथजी ने चत्रभुजदास सों कही, जो– देखे चत्रभुजदास काम के बस परि धरेजा कियो, परंतु याके मन में संतोष न भयो। तब यह वचन चत्रभुजदास पे सह्यो न गयो। तब चत्रभुजदास ने श्रीनाथजी सों कह्यो जो– मोकों तो तुम नित्य ही ऐसें कहत हो, परंतु आप हू तो व्रजवासीन+ के घर-घर डोलत हो?

तब यह सुनिके श्रीनाथजी लज्या पाए, सो चत्रभुजदास सों तो कछू कह्यो नाहीं। तब श्रीगुसांईजी सों श्रीनाथजी ने कह्यो जो- चत्रभुजदास ने ऐसो कह्यो (तातें तुम वाकों वरज दीजो, अब ऐसे कबहू न। कहै)

तब चत्रभुजदास (मंदिर में) दर्शन कों आयो। तब श्रीगुसांईजी ने बुलाइके कह्यो जो–तुम श्रीनाथजी सों ऐसें क्यों

+ पाठ भेद'—घर घर व्रजवधून के संग लागे रहत हो, संग डोलत हो।

कह्यो ? तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो–मेरी नितप्रति हाँसी करते, तब एकबार मैं हू एसें कह्यो। तब चत्रभुजदास सों श्रीगुसांई-जी आग्या किए, जो–आज पाछें तू कछू मति कहियो।

तब ता दिन तें श्रीनाथजी सों चत्रभुज-दास कछु न कहते, और श्रीनाथजी तो हाँसी करते। (एसी कृपा श्रीगोवर्द्धननाथजी चत्रभुजदास के ऊपर करते) चत्रभुजदास सों श्रीनाथजी एसे सानुभाव हते, गोप्य वार्ता करते

(तातें वे चत्रभुजदास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते)

इति वार्ता सप्तम

वार्ता अष्टम

और एक समै श्रीगुसांईजी परदेस पधारे हते। सो फागुन सुदी ७ *श्रीगोवर्द्ध-

---

* सं० १६२३ (कांकरोली का इतिहास)

ननाथजी आप मथुरा में श्रीगुसांईजी के घर पधारे (हते)। तब श्रीगिरिधरजी आदि समस्त बालक बहूबेटीन ने सगरे घर कौ गहनो वस्तु-भाव सर्वस्व श्रीजी की भेंट कियो। तब एक बेटीजी ने एक (सोनेकी) मुदरी छिपाइ राखी हती।

तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने श्रीगिरिधर-जी सों कही, जो—मेरी भेंट फलानी वेटी के पास है, सो (तुम) लाओ। तब श्रीगिरि-धरजी आइके बेटीजी सों कह्यो जो—(अपनो घर श्रीगोवर्द्धननाथजी के भेंट कियो है तामें ते) तुम ने कछु राख्यो होइ सो देउ, तब उन ने मुदरी (राखी हती सो) दई। ता पाछें सब बालक बहूबेटी बोहोत प्रसन्न भइ, जो—हमारी सत्ता की वस्तु जो—श्रीनाथ-जी ने प्रसन्न होइके (मांगिके) अंगीकार करी। (सो अपनो बडो भाग्य है)

(जा समै श्रीगोवर्द्धननाथजी मथुरा पधारे) तब चत्रभुजदास तो (जमनावता गाम में) अपने घर में हते सो जाने नाहीं, जो– श्रीनाथजी मथुरा पधारे हैं। सो चत्रभुजदास उत्थापन के समै श्रीगिरिराज ऊपर मंदिर में श्रीनाथजी कों न देखे। तब X ता पाछें सुनी, जो–श्रीनाथजी तो श्रीगुसांईजी के घर मथुरा पधारे हैं।

(यह सुनिके चत्रभुजदास के मन में बोहोत विरह भयो) तब चत्रभुजदास ने (श्रीगिरिराज के ऊपर बैठिके) विरह के कीर्त्तन गाए। सो पद:—

॥ राग गौरी ॥

बात हिलग की कासों कहिए।
सुनि री सखी ! व्यवस्था तन की ॥
समुझि समुझि मन चुप करि रहिये।

X पाठभेद:—तब (सबन सों पूछे जा श्रीगोवर्द्धननाथजी आज कहाँ पधारे हैं ? तब पोरिया ने और सब सेवकन ने कह्यो जो–श्रीनाथजी तो)

मरमी बिना मरम को जानै ॥
यही जानि सब ही जिय सहिये।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरन मिलें जब ॥
तब ही सब सुख पइये ।

ऐसे बिरह के पद (चत्रभुजदास ने) बोहोत किए ।

ता पाछें नृसिंह-चतुर्दसी कौ दिन ❀ आयो । पहर एक दिन बाकी हतो तेरसि के दिन संध्या आरती समै (तब) चत्रभुजदास गिरिराज (पर्वत के) ऊपर आए। सो (श्रीगोवर्द्धननाथजी बिना) मंदिर कों देखिके चत्रभुजदास कौ हृदौ भरि आयो। तब यह पद गायो । सो पद :—

॥ राग गौरी ॥

श्रीगोवर्द्धन-वासी सांवरे ।
लाल तुम बिन रह्यो न जाइ (हो)॥
श्रीव्रजराज लडैते लाडिले ।

सो या भांति सों अत्यंत बिरह करि

चत्रभुजदास ने संपूर्ण पद करिके गायो। ता पाछें गांइन के झुंडन के दर्शन (चत्रभुजदास कों) भये। ता पाछें सखान सहित श्रीनाथजी (श्रीबलदेवजी) के दर्शन भए।

तब चत्रभुजदास ने (निकट) जाइके दंडौत करी, और (श्रीनाथजी सों) विनती करी जो—महाराज! कृपा करिके (मोकों) गोवर्द्धन पर्वत ऊपर दर्शन (कब) देउगे? तब श्रीगोवर्द्धननाथजी ने कह्यो जो—कालि अवस्य गोवर्द्धन पर्वत ऊपर पधारेंगे।

एसें चत्रभुजदास कों धीरज देके श्रीनाथजी (आप तो) अंतर्ध्यान भए।

तब चत्रभुजदास ने (सगरी रात्रि) विरह के पद गाए। ता पाछें पहर एक रात्रि गई; तब श्रीनाथजी ने श्रीगिरिधरजी कों जताई, जो— कालि प्रातःकाल मोकों श्रीगोवर्द्धन पर्वत ऊपर पधराइयो। (जो) कालि

शृंगार कर‍्यो। ❀ (और राजभोग की तैयारी होन लागी) ता पाछें राजभोग आरती करी X ता पाछें उत्थापन समय श्रीगुसांईजी गुजराति सों पधारे। सो अपनी बैठक में आइके विराजे। तब श्रीगिरिधरजी आदि सब बालक आइ मिले। ताही समैं श्रीनाथजी के राज-भोग की माला बोली ❀।

तब श्रीगुसांईजी ने श्रीगिरिधरजी सों कह्यो जो—इतनी बार क्यों करी है? अब तो उत्थापन कौ समो भयो है। तब श्रीगिरिधर-ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो— आज श्रीगो-वर्द्धननाथजी मध्यान्ह के समय मथुरा तें पधारे हैं, तातें आज इतनी ढील भई है।

X 'ता पाछे राजभोग आरती करी' यह वाक्य सं० १६९७ वाली वार्ता की प्रति में संगत नहीं बैठता।

❀........❀ नित्य के अनुसार समय पर राजभोग न होकर आज उत्थापन के समय राजभोग हो रहे थे अतः श्रीगुसांईजी के विलम्ब का प्रश्न संगत होता है।

तब श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो–हम तो श्रीगिरिधरजी [S] सों कह्यो हतो, जो– दोइ दिन श्रीनाथजी कों अपने घर और राखो, श्रीगुसांईजी अपने घर श्रीनाथजी के दर्शन करें तो भलो। सो श्री-गिरिधरजी ने न मानी, तब श्रीनाथजी श्रीगो-वर्द्धन ऊपर आज ही पधराए हैं।

तब श्रीगुसांईजी श्रीगिरिधरजी के ऊपर बोहोत प्रसन्न भए। तब श्रीगुसांईजी ने श्रीमुख तें कह्यो जो– श्रीगोवर्द्धननाथजी [X] ने मेरे मन को अभिप्राय जान्यो है। जो–मैं श्री-गोवर्द्धननाथजी कों गोवर्द्धन पर्वत ऊपर न देखतो तो मोपे रह्यो न जातो।

ता पाछें श्रीगुसांईजी स्नान करिके गिरि-राज ऊपर पधारे। सो नृसिंहजी को उत्सव कियो।

S पाठ भेदः— दाउा सों। X तुमने

ता दिन तें प्रतिवर्ष श्रीनृसिंह-जयंती के दिन संध्या आरती के समै फेरि श्रीनाथजी कों राजभोग आवै, फेरि माला बोलै । यह रीति भई ।

सो चत्रभुजदास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करिके बोहोत प्रसन्न भए । ता पाछें अनोसर भयो, तब श्रीगुसांईजी बैठक में पधारे । तब चत्रभुजदास ने श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके सब समाचार कहे । जो–या भाति सों श्रीनाथजी (मथुरा) पधारे । (ता पाछें आज यहाँ श्रीगोवर्द्धन पर्वत पे पधारे हैं) तब श्रीगुसाँईजी ने श्रीमुख तें कह्यो जो–श्रीनाथजी तो बड़े दयालु हैं, अपनेन की आर्त्ति सहि सकत नाहीं ।

ता पाछें श्रीगुसांईजी कछूक दिन [१] रहे । सो वे चत्रभुजदास (श्रीनाथजी तथा श्रीगुसाँईजी के) एसे कृपापात्र भगवदीय हे)

इति वार्ता अष्टम

[१] पोढि ।

वार्ता नवम

और एक समै श्रीगोकुलनाथजी ने श्रीगुसांईजी सों पूंछी जो—आप आग्या करो तो (एक वार) चत्रभुजदास कों हौं श्रीगोकुल ले जाऊं। तब श्रीगुसांईजी यह आग्या किए जो—तुम चत्रभुजदास कों पूंछो, जो—वे जांइ तो ले जइयो।

ता पाछें श्रीगोकुलनाथजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो, जो—पेंठा गाम तांई कछु काम हैं, तातें चलो तो जैये? तब चत्रभुजदास श्रीगोकुलनाथजी के संग चले। तब चत्रभुजदास तो माम में मचलन लागे।

तब श्रीगोकुलनाथजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो— हम कों तो श्रीगोकुल चलनो हैं, तातें संग खवास कोऊ नाहीं तातें तुम हमारे संग श्रीगोकुल (ताईं) चलो। पाछें

श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करिके तुमकों (फेरि हम) इहां ले आवेंगे। तब चत्रभुजदास ने कह्यो जो—आग्या। तब श्रीगोकुलनाथजी घोड़ा ऊपर चढ़िके पधारे, चत्रभुजदास हू संग चले।

पाछें श्रीगुसांईजी श्रीगिरिधरजी कों श्रीजी की सेवा में राखिके (आप हू) घोड़ा ऊपर असवार होइके श्रीगोकुल कों पधारे, सो उत्थापन के समय तहां जाइ पोहोंचे। तब श्रीगुसांईजी स्नान करिके श्रीनवनीतप्रियजी के मंदिर में पधारे *। पाछें संध्या आरती को समो भयो तब श्रीगोकुलनाथजी और चत्रभुजदास ने सुन्यो, जो—श्रीगुसांईजी (इहां) पधारे हैं। तब श्रीगोकुलनाथजी और चत्रभुजदास बोहोत प्रसन्न भए (सो तत्काल श्रीनवनीतप्रियजी कें मंदिर

* ......प्रियजी को जगाए। पाठ-भेद।

में आए, तब श्रीगुसांईजी कों दंडवत करि के चत्रभुजदास बाहिर ठाढे (हे) तब श्रीगुसांईजी चत्रभुजदास कों बुलाइके श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करवाये ।

ता समै (दर्शन करिके) चत्रभुजदास ने नयो पद करिके गायो, सो पद :-

॥ राग बिलावल ॥

* अंगुरी छांडि रेंगत अरग थरग ।
  नूपुर बाजत त्यों-त्यों धरनी धरत पग ॥
बहुत कम सुधा माहि भुजा पसारि,
  हंसत डगमग इक हुलत भरत पग ।
जननी मुदित मन चितै सिसु नन तनक, चलाई
  सुंदर स्याम सुचग ॥
मृदु बानी तुतरात मांगि नवनीत खात ।

---

* भावप्रकाश वाली प्रति में—(१) महामहोत्सव श्रीगोकुलधाम (२) अंगुरी छांडि रेंगत० यह दो पद दिये हैं ।

वाहक जस भाव जैसे जनावत वाल खग ॥
'चत्रभुजदास' प्रभु गिरधर के, बाल-विनोद ।
आनंद सुख ठाढे गडमग ॥

या भांति सों लीला सहित चत्रभुजदास ने (और हू) कीर्तन गाए । X

(सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भये । तब श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास तें कह्यो जो-चत्रभुजदास ! तो कों चाहिए सो मांगि । तब चत्रभुजदास ने श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरिके विनती कीनो जो-महाराज ! आपु तो अंतर की जानत हो, तातें आप मोकों कृपा करिके श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कराओ ।)

(तब श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो-काल्हि श्रीनवनीतप्रियजी कौ श्रृंगार करिके पालना झुलाइके हम हू चलेंगे, तब तुम हू संग चलियो । तब तो चत्रभुजदास मन में बोहोत प्रसन्न भए)

X इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में यह पाठ है जो आगे आयगा ।

पाछैं रात्रि कों श्रीगोकुल में चत्रभुजदास (सोइ) रहे। पाछैं प्रातःकाल भयो। तब चत्रभुजदास ने आइके श्रीगुसांईजी कों दंडवत करी, और विनती करी, जो–महाराज! आप तो अंतर की गति सब जानत हो। तातें आग्या देउ तो में श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों जाऊं। तब श्रीगुसांईजी ने आग्या करी जो–श्रीनवनीतप्रियजी कौ शृंगार करिके पलना झुलाइके हम हू चलेंगे, तब तुम मेरे संग चलियो। तब चत्रभुजदास अपने मन में बोहोत प्रसन्न भए।

पाछैं मंगला के समै पद गायो। सो पद :–

॥ राग बिलावल ॥

हौं वारी नवनीतप्रिया।
नित उठि देन उराहनो आवै चोरी लावै घोष त्रिया॥
तुम बलिराम संग मिलि खेलो इन आंगन दोऊ भइया।
निरखि निरखि उर नैन सिराऊं प्रान जीवनधन सांवलिया॥
जो भावै सो लेउ मेरे प्यारे! मधुमेवा दधि-दूध ऽरु घैइया।

'चत्रभुज' प्रभु गिरिधर काके घर तुमहू तें कछु अधिक तिया ॥
(२) राग देवगंधार :–दिन दिन देन उराहनो आवति)

यह पद चत्रभुजदास ने गायो । और श्रीगुसांईजी मंगलभोग सराइके शृंगार करिके ता पाछें श्रीनवनीतप्रियजी कों पलना में पधराए । तब चत्रभुजदास ने यह (पलना कौ) पद गायो। सो पद:—

॥ राग रामकली ।
(१) अपने बाल गोपालै रानी पालने झुलावै ।
वारंवार निहारि कमल मुख प्रमुदित मंगल गावै ॥
लटकन भाल भृकुटि मसि बिंदुका कठुला कंठ बनावै ।
सद माखन मधुसानि अधिक रुचि अंगुरिन करिके चटावै ॥
कबहुंक सुरंग खिलोना लैलै नाना भांति खिलावै ।
देखि-देखि मुसिकाइ सांवरो द्वै दतियां दरसावै ॥
सादर कुमुद चकोर चंद ज्यों रूप सुधारस प्यावै ।
'चत्रभुज' प्रभु गिरिधरन चंद कों हंसि-हंसि कंठ लगावै ॥
(२) झूलो पालने गोविन्द ०)

यह पद श्रीनवनीतप्रियजी के संनिधान चत्रभुजदास ने गायो। सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए।

पाछें श्रीगुसांईजी घोड़ा ऊपर असवार होइके (चत्रभुजदास कों संग लेके) श्रीनाथ-जीद्वार आए। सो (उहाँ) श्रीगोवर्द्धननाथ-जी के राजभोग को समौ हतो । सो श्री-गुसांईजी (आप) तत्काल स्नान करिके (श्रीगोवर्द्धननाथजी कों) राजभोग समर्प्यो पाछें (समौ भयो) भोग सरायो ।

(जब दर्शन के किवांड खुले तब चत्रभुज-दास सों कुंभनदास ने कही जो- कछु कीर्तन गाउ । तब चत्रभुजदास ने यह कीर्तन गायो । सो पदः-)

(राग सारंग :—जब तें और कछु न सुहाई•)

(यह सुनिके श्रीगोवर्द्धननाथजी चत्रभुज-दास के साम्हे देखिके मुसिक्याए । तब चत्रभुजदास ने दंडवत् करिके कह्यो जो- आज मेरो धन्य भाग्य है, जो- श्रीगोवर्द्धन-नाथजी के दर्शन भए। पाछें इतने में टेरा आयो ।)

तब चत्रभुजदास (दंडवत करिके) कुंभनदास के पास आए। तब कुंभनदास ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो–(चत्रभुजदास!) तुम कहाँ गए हते ? तब चत्रभुजदास ने (कुंभनदास सों) कह्यो, जो–मोकों श्री-गोकुलनाथजी श्रीगोकुल ले गए हते, सो अब में श्रीगुसांईजी के संग आवत हों। तब कुंभनदास ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो– तू प्रमाण में जाइ पर्यो। यह वचन कुंभन-दास को सुनिके श्रीगुसांईजी, (आपु) मंदिर में हँसे।

ता पाछे श्रीनाथजी को अनौसर करिके श्रीगुसांईजी अपनी बैठक में पधारे। तब चत्रभुजदास ने बिनती करी। जो–महाराज! (कुंभनदासजी ने मोतें कह्यो जो– तू कहाँ गयो हतो ? तब मैं कह्यो जो–श्रीगोकुलनाथ-जी के संग श्रीगोकुल गयो हतो। तब उन

मोतें कह्यो जो—तू प्रमाण में जाइ पर्‌यो सो)
कुंभनदासजी ने श्रीगोकुल को प्रमाण क्यो कह्यो ? तब श्रीगुसांईजी ने चत्रभुजदास सों कह्यो जो—कुंभनदास कौ मन श्रीनाथजी सों पगि रह्यो है, एक च्‍हण न्यारौ होत नाहीं। तातें ए किसोर-लीला कौ अनुभव करत हैं, तातें इनकों किसोर-लीला कौ निरोध भयो है। तातें ए और लीलाकों प्रमाण जानत हैं। और, लीला तो दोऊ एक हैं।

ता दिन तें चत्रभुजदास गोवर्द्धन की तरहटी छाँडिके एक छ्‍रण हू कहूं न जाते। (ता पाछे श्रीगुसांईजी आप तो भोजन करिके विसराम किये। तब चत्रभुजदास दंडवत करिके अपने घर आए। श्रीगोवर्द्धन-नाथजी हू चत्रभुजदास पे परम कृपा करते)

सो वे चत्रभुजदास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

इति वार्ता नवम

वार्ता दशम

और कितेक दिन पाछें * श्रीगुसांईजी (आप) श्रीगिरिराजकी कंदरा में होइके लीला में पधारे। तब श्रीगिरिधरजी कों (अपनो) उपरना दियो।

(और यह कहे, जो–श्रीगोवर्द्धननाथजी की आज्ञा में रहियो, जामें श्रीगोवर्द्धननाथजी प्रसन्न रहें सोई कीजो। और सब बालकन को समाधान राखियो। श्रीनाथजी के सेवक, जो वैष्णव हैं इन सबन को समाधान राखियो। और जो- मेरे अंग को उपरना है, ताकौ सब लौकिक संस्कार करियो। काहे तें जो–संस्कार न करोगे, तो फिरि कोई कर्म-संस्कार न करेगो। तातें तुम अवश्य करियो, और काहू बात की चिंता मति करियो। सब वस्तु के कर्ता श्रीगोवर्द्धननाथजी हैं।)

* स० १६४२ फा० कृ० ७ (कांकरोली का इतिहास)

(ऐसे श्रीगिरिधरजी कौ समाधान करिके श्रीगुसांईजी आपु तो गिरिराज की कंदरा में होइके लीला में पधारे । ता पाछें श्रीगिरिधरजी आदि दै सब बालकन-सहित, सब सेवकन–सहित महा–विरह करिके महाव्याकुल भए । सो ता समय को विरह कछू कहिवे में न आवै ।)

(पाछें फेर धीरज धरिके श्रीगुसांईजी ने जो–उपरना की–जैसे आज्ञा कीनी हती, तैसेई श्रीगिरिधरजी ने वा उपरना को अग्नि-संस्कार कियो । पाछें वेदोक्त विधि सों सब कर्म दसगात्र–विधान कियो, और हू लौकिक विधि सब करि शुद्ध भए । ता पाछें श्रीगोवर्द्धननाथजी की सेवा में सावधान भए ।)

(सो जा समय श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धन पर्वत की कंदरा में होइके लीला में पधारे ।)

ता पाछे चत्रभुजदास ने आन्योर में ए समाचार सुने तब दौरिके आए *। तब सातों बालकन कों बिरह-संयुक्त देखिके चत्रभुजदास ने विरह कौ पद गायो । सो पद :—

॥ राग केदारो ॥

फिरि ब्रजबसहु श्रीविट्ठलेस ।
करि कृपा मोहि दरस दीजे उह लीला उह बेस ॥
संग गांइ ग्वाल गोकुल गांउ करहु प्रवेस ।
नंदराइ ज्यों विलसी संपति बहु उदार नरेस ॥
भक्तिमारग प्रगट करिके जनन देहु उपदेस ।
रच्यो रास बिलास उह सुचि गिरि गोवर्द्धन देस ॥
वदन इंदु तें बिमुख नैन चकोर तपत विशेस ।
सुधापान कराइ मेटहु विरह कौ लवलेस ॥
श्रीवल्लभनंदन दुखनिकंदन सुनियो सुचित संदेस ।
'चत्रभुज' प्रभु घोषजन के हरहु सकल कलेस ॥

ता समै चत्रभुजदास जमुनावता गाम में अपने घर में हुते । सो सुनिके चत्रभुजदास दौरे ही आए ।

* इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में यह पाठ है :

और या भांति सों बिरह करिके गिरि परे तब श्रीगुसांईजी ने (चत्रभुजदास की बोहोत आर्ति जानिके महाआनंद स्वरूप सों) हृदय में दर्शन दीनो। और कह्यो जो– तुम दुख काहे कों करत हो ? मैं तो श्रीनाथजी के पास हों। तातें श्रीनाथजी के दर्शन में मानि लीजिये। तब चत्रभुजदास ने श्रीगुसांई-जी सों विनती करी, जो– महाराज ! अब मोकों इहाँ-मति राखो और आप तो अंतर-जामी हो, आप विना इहां कोन कों देखें।

तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी के पास पधारे। तब यह पद करिके चत्रभुजदास ने देह छोडी ❀ सो पद :—

एन चत्रभुजदास कों समाधान करिके श्रीगुसांईजी तो आप अन्तर्धान भए। पाछें चत्रभुजदास ताही स्वरूपा-नन्द में मगन होइके वहां यह कीर्तन गायो। सो पद :–

❀ "" इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है —

॥ राग सारंग ॥

श्रीविट्ठलेश प्रभु भए न होइ हैं ।

पाछे सुनेन आगे देखे यह छवि फेरि न बनि है ॥
मानुष देह धरि भक्त हेतु कलिकाल जन्मको लै है ।
को फिरि नंदराय को वैभव ब्रजवासि न विलसै है ॥
को कृतज्ञ करुणा सेवक तन कृपा सुदृष्टि चितै हैं ।
गाइ ग्वाल संगलेके को फिर गोकुल गांउ बसै हैं ॥
धर्म खंभ होइ ज्ञान कर्म को जगत भक्ति प्रगटै हैं ।
कोउ कर कमल सीस धरिके अधमनि वैकुंठ दै हैं ॥
रास बिलास महोच्छव रचिके राज भोग सुख दैहै ।
को सादर गिरिराज धरन की सेवा सार दृढै हैं ॥
भूषन बसन लाल गिरिधरके को सिंगार सिखै हैं ।
कोऊ आरती वारि श्रीमुख पे आनंद प्रेम चढै हैं ॥
मधुरामंडल खग को मृग को महिमा कहि वरनै हैं ।
को वृंदावन चंद गोविंद को प्रगट स्वरूप बतै हैं ॥
को बहुरि प्रतापजु एसो प्रगट भुहुमि में छै हैं ।
काके गुण कीरत महिमा जग सकल लोक चलि जै हैं ॥
श्रीवल्लभ-सुत दरसन कारन अब सबही पछितै हैं ।
'चत्रभुजदास' आस या तनकी उह सुमिरत जनम सिरै हैं ॥

या भांति सों चत्रभुजदास ने विरह के पद बोहोत किए । ता पाछें तत्काल (श्रीगुसांईजी के चरणारविंद में मन राखिके) देह छोड़ी ॥ तब श्रीगुसांईजी के निकट लीला में आए ।

(सो चत्रभुजदास की यह लीला देखिके और जो—वैष्णव हते तिनके और सेवकन के मन में बोहोत दुःख भयो ।)

तब चत्रभुजदास कौ एक वेटा हतो, ताकौ राघौदास नाम हतो । (सो आयो और वैष्णव सब आए) तिन (सवन) ने (मिलके चत्रभुजदास को अग्नि) संस्कार कियो । (और क्रिया कर्म दसगात्र करि शुद्ध होए)

सो राघौदास (जो—हे चत्रभुजदासजी के वेटा सो तिन हू) ने श्रीगुसाँईजी के पास नाम निवेदन कियो हतो । (सो राघौदास एक समै गाँठोली की कदमखंडी में श्रीगोवर्द्धननाथजी की गाँइन कों चरावते) तब राघौदास

ने होरी के दिनन में (गांइन के मध्य) श्री-गोवर्द्धननाथजी के दर्शन किए हते (होरी खेलत गोपीन के जूथ के मध्य में दर्शन भए। सो एसे दर्शन करिके राघौदास ने) तब गौरी राग में एक धमारि गाई हती। जो—

"अरी ! चलि जाइ जहां हरि खेलत गोपिन संगा"०।

यह धमारि (राघौदास ने सम्पूर्ण करिके) गाई। तब श्रीनाथजी भक्तन सहित दर्शन दिए। सो दर्शन करिके तत्काल मूर्छा खाइके गिर परे। सो राघौदास की देह छूटि गई।

ता पाछें गाँठोली में बैष्णव हते, (तिन सुनी, जो सबन मिलिके राघोदास को अग्निते) संस्कार करिके श्रीनाथजीद्वार आए। तब बैठक में श्रीगिरिधरजी बैठे हते, सो उन बैष्णवन ने श्रीगिरिधरजी सों कही, जो—महाराज ! राघौदास ने धमारि गावत देह छोडी। तब श्रीगिरिधरजी हँसे, (और कहे जो—राघौदास भगवदीय भए सो उनकों

श्रीगोवर्द्धननाथजी ने होरी के खेल के दर्शन दिए गोपीन सहित।)

❀ तब वैष्णवन ने विनती कीनी जो— महाराज ! इनकी देह क्यों छूटि गई ? तब श्रीगिरिधरजी ने (हँसिके) उन वैष्णवन सों कही, जो—या देह सों श्रीनाथजी की लीला कौ अनुभव करि न सक्यो। इतनी चत्रभुज-दास में अधकी है, सो काहे तें? जो—चत्रभुज-दास तो याही देह सों सब लीला कौ अनुभव करतः इनकों श्रीनाथजी ने व्रज-भक्तन सहित दर्शन दीनो है, और वर्णन करते। और राघौदास कों तो व्रज-भक्तन सहित दर्शन करत देह छूटि गई, सो लीला में जाइके प्राप्त भयो ❀।

* भावप्रकाश— ता समै राघौदास ने यह धमारि गाइके अपनी देह छोडि दीनी, सो ताकौ कारन यह है— जो—श्रीगोवर्द्धननाथजी के लीला सुख कौ अनुभव राघौदासको

…… इतना अंश भाव प्रकाश वाली प्रति में नहीं है।

या देह सों ताकौ प्रकार सह्यो न गयो। तातें यह देह छोड़िके राघौदास हू जाइके लीला में प्राप्त भए।

और श्रीगिरिधरजी हँसे, ताकौ कारन यह जो–जिन के बाप दादान ने या देह सों लीला-सुख कौ हृदय में अनुभव करि दूसरेन कों हू ताके पद गाइके अनुभव करायो, ताकौ बेटा यह राघौदास। तासों इतनो सुख हू हृदय में धारण कियो न गयो।

पाछें रामदास की बेटी ने डेढ़ तुक। बनाइ वह धमार-पूरी कीनी। सो वे राघौदास। और उनकी बेटी श्रीगोवर्धननाथजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते।

सो या प्रकार सों श्रीगिरिधरजी ने वा वैष्णव सों कही।

सो वे चत्रभुजदास श्रीगुसांईजी के सेवक एसे कृपापात्र भगवदीय हे। जिनके ऊपर श्रीगुसांईजी तथा श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते। तातें इनकी वार्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिए।

(इति वार्ता दशम)

(६) नंददासजी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक नंददास सनोढिया ब्राह्मण (रामपुर में रहते) तिनके पद (अष्टछाप में) गाइयत हैं, सो वे पूर्व में रहते, तिनकी वार्ता❀

❀ भावप्रकाश—

ये नंददासजी लीला में श्रीठाकुरजी के 'भोज' सखा अतरंग, आधिदैविक तिनको आकट्य है। सो दिवस की लीला मूल स्वरूप में तो ये 'भोज' सखा हैं; और रात्रि की लीला में श्रीचंद्रावलीजी की सखी 'चंद्ररेखा' इनको नाम है। और सो वे पूरब में 'रामपुर' गाम में जन्मे।

(वार्ता प्रथम)

सो वे नंददास और तुलसीदास दोइ भाई हते। तामें बड़े तो तुलसीदास, छोटे नंददास। सो वे नंददास पढ़े बोहोत हते, और तुलसीदास तो रामानंदी के सेवक

हते । सो नंददास कों हू रामानंदी के सेवक किए हते। सो नंददास कों तो लौकिक विषै बोहोत आसक्ति हुती, सो जो-कहूं भवैया नाचते सो तहां जाइ देखते, *और जो—कोऊ गावते तहां जाइके सुनते। अपनो काम-काज छांडिके राग-रंग सुनते *

तब बड़े भाई तुलसीदास (नंददास कों) बोहोत समझावते, और कहते जो—तू जहां तहां भटकत फिरत है, सो आछो नाहीं। परि नंददास माने नाहीं।

सो एक दिन पूर्व कौ संग श्रीद्वारिका कों श्रीरणछोडजी के दर्शन कों चलत हतो। तव नंददास ने (मन में विचारी जो—बने तो मैं हू एसे संग में श्रीरणछोडजी के दर्शन करि आऊं) तब नंददास ने तुलसीदास सों कही जो—तुम बड़े हो, सो प्रसन्न होइके

*..... * इतना अंश भावप्रकाश वाली प्रति में नहीं है।

पठावो तो या संग में श्रीरणछोड़जी के दर्शन करि आऊं। तब तुलसीदास ने नंददास सों कही जो—तू अकेलो मति जाइ। मोकों तो तुम-विना कछु सुहात नाहीं, और मार्ग में अनेक तरेके दुःसंग मिलत हैं, सो तेरो जीव लौकिक में बोहोत आसक्त है। तातें तू जाइगो तो भृष्ट होइ जाइगो। और श्री-द्वारिका+पहोंचेगो नाहीं, मोकों एसी जानि परत है, जो—तू बीच में ही रहेगो। तातें मैं तोसों आछी रीति सों कहत हों जो—तू इहां बैठ्यो रहि। और श्रीरणछोडजी श्रीरघुनाथजी कौ स्मरण कर्‍यो करि।

तब नंददास ने तुलसीदास सों बोहोत दीनता करिके कह्यो जो—मुख्य तो आपुन कों श्रीरघुनाथजी कौ ही भजन है, परंतु एक वेर तो श्रीरणछोडजी के दर्शन कों याही संग में जाउंगो। और जो—तुम कोटि उपाय

+श्री रणछोड़जी नाईं पाठभेद।

करोगे तो मैं सर्वथा न रहूंगो। +सो तुम बडे हो, आपको धर्म यही है, जो—बालक कों अकेले कैसे जान दीजिये। सो इतनी बात नंददास ने तुलसीदास सों कही। तब तुलसीदास ने अपने मन में निश्चय जान्यो, जो—अब लाख उपाइ करो तो हूं यह रहेगो नाहीं।+

तब तुलसीदास ने अपने मन में विचार कियो जो—या संग में मुख्य मनुष्य होइ ताकी ठीक करिये। तब तुलसीदास ने संग में जाइके ठीक पारी, तब दूसरे दिन नंददास कों संग लेके आए। सो वा मुखिया सों तुलसीदास ने कह्यो, जो—यह मेरो छोटो भाई तिहारे संग में जात है, तातें तुम मार्ग में याकों बोहोत जतन सों राखियो। और

+ +इतना अंश भावप्रकाश वाली प्रति में नहीं है।

अपने साथ लेके आइयो । सो जैसे काहू ठौर यह रहि न जाइ। तब सगरे संगवारेन ने कह्यो, जो-भलो, और तुम काहू बात की चिंता मति करियो, जो-इतने जने साथ में हैं, त्यों ए हू है।

ता पाछें वा संग में नंददास चले । सो कछुक दिन में वह संग श्रीमथुराजी आयो । तब श्रीमथुराजी कों सब संगवारेन ने देखिके अपने मन में यह विचार कियो जो-श्रीमथुराजी में दिन दस रहिये तो आछो है। ❀ और नंददास ने तो मधुपुरी की सोभा देखिके अपने ❀ मन में यह विचार कियो, जो-श्रीमथुराजी में दिन दस बारह रहिए

❀……❀ भावप्रकाश वाली प्रतिका–पाठभेदः—

और नंददास तो मधुपुरी की सोभा देखत-देखत विश्रान्त ऊपर आए। सो तहां अनेक स्त्रीपुरुष स्नान करत देखे, और सुंदर स्वरूप के देखे। सो नंददास तो मन में देखिके बोहोत ह मोहित भए और—

तो आछो है, और या जगत में एसी हू पुरी है। सो एसे धाम में तो एक वरस लों रहिये तो आछो। ता पाछें भगवद्-इछा तें फेरि मन में आई, जो—पहिले श्रीद्वारकाजी में श्री-रणछोडजी को दर्शन करनो है। ता पाछें आइके श्रीमथुराजी में रहनो, और विश्रांति घाट के ऊपर दोइ सुख हैं। जो—मुख्य सुख-तो अलौकिक सुख ताको पार नाहीं, और दूसरे लौकिक सुख-यात्रा हू होत है।

ता पाछें सब संगवारेन कों नंददास ने पूंछी जो—कब चलोगे ? तब सब संग वारेन ने कह्यो जो—हम तो दिन दस इहां रहेंगे। तब नंददास चुप करि रहे। सो अपने मनमे विचार कियो जो—मैं इनके संग कब तांई रहूंगो ?। अब मैं अकेलो जाइके पाछें श्रीमथुराजी में आइके रहूंगो या संग में रहूंगो तो बोहोत दिन लगेंगे।

ऐसे विचारिके (नंददास) रात्रि कों सोइ रहे, और प्रातःकाल उठिके नंददास अकेलेई चले, संग में काहू सों न कह्यो। ता पाछें दूसरे दिन नंददास कों संगवारेन ने न देख्यो, सो वे ढूढत फिरे। तब उहां तो संग में भलो मनुष्य हतो, जाकों तुलसीदास ने भलामन दीनी हतो. सो ताकों तो बोहोत ही चिंता भई। तब एक मनुष्य नंददास के लिए ढूंढवे कों पठायो. परि नंददास तो कहूँ पाए नहीं, नंददास तो चुपचुपाते छाने एकत्ते ही निकसि गए, काहू कों जनायो नाहीं।

सो नंददास द्वारिका श्रीरणछोड़जी के दर्शन कों चले, सो चलत-चलत नंददास एक गाम (सिंहनद) में जाइ निकसे, मारग भूलि गए। सो वा गाम के भीतर चले जात हते। सो उहां एक क्षत्री कौ घर हतो, सो

वह क्षत्री श्रीगुसांईजी कौ सेवक (रहतो) हतो। सो वा क्षत्री के घरके आगें आइ निकसे, और ताई समै वा क्षत्री की स्त्री न्हाइके ऊपर चढी, सो तहां केश सुखावत हती, सो वह स्त्री अत्यंत सुंदर रूपवँत हती। सो वा समय मारग में नंददास की द्रष्टि वा क्षत्राणी के ऊपर जाइ परी सो वाकों देखिके नंददास तो उहांई ठाढे होइ रहे, और वह क्षत्राणी तो उतरिके अपने काम काज में लगी। और नंददास तो वा क्षत्राणी कों देखिके मोहित व्है रहे, और अपने मन में कहन लागे जो– या संसार में एसे हू मनुष्य हैं।

एसे कहिके नंददास ने अपने मन में निरधार कियो, जो–अब तो या स्त्री कौ मुख देखूं तब जलपान करूं। सो एसे निश्चय

अपने मन में करिके वा दिना तो उतरिवे की जगे चले गए । ता पाछें सगरी रात्रि यही विचार करत रहे, जो—कब प्रातःकाल होइ और कब वा क्षत्राणी कौ मुख देखूं । यों करत—करत सगरी रात्रि व्यतीत भई, और प्रातःकाल भयो। सो देह-कृत्य करिके, दंत-धावन करिके, सेवा सुमिरन करिके वा क्षत्राणीऽ के द्वार ऊपर जाइ बैठे, सो तीन पहर व्यतीत होइ गए ।

तब वा क्षत्राणी की एक लोंडी हती, सो घर के काम-काज में डोलत फिरत हती । सो वाही लोंडी ने नंददास कों देख्यो, तब वा लोंडी नें अपने घर में जाइके अपनी सेठानी× सों कह्यो, जो-एक ब्राह्मण सवार कौ अपने द्वार पे बैठ्यो है । और वा ब्राह्मण ने

पाठ भेद — ऽ स्त्री ×बहू ।

पानी हू पियो नाहीं हैं। तब वा क्षत्राणी ने लोंडी सों कह्यो जो–तू जाइके वा ब्राह्मण सों पूंछि देखि, जो–तू सवार को द्वार पे क्यों बैठ्यो है ?

तब वा लोंडी ने आइके वा ब्राह्मण सों पूंछी जो–तू आज सवारे सों हमारे द्वार पे क्यों बैठ्यो है ? तब नन्ददास ने वा लोंडी सों कह्यो जो- तुम्हारी ४ सेठानी को एक बेर मुख देखूंगो तब अन्न-जल करूंगो। (तब जाऊंगो) और मैंने तो कालि को जल-पान कियो नाहीं है। तब वा लोंडी ने नंददास के वचन सुनिके वा क्षत्राणी सों कही, जो– वह तुम्हारो मुख देखिके जल पान करेगो। तब वा क्षत्राणी ने कही जो– मैं तो वाकों मुख न दिखांउगी, वह आपु ही तें उठि जाइगो।

पाठभेदः— ४ तेरी बहू को। इसी प्रकार आगे भी क्षत्राणी के स्थान पर बहू पाठभेद है।

सो एसे करत सांझ होइ गई । तब वा लोडीं ने फिरिके वा क्षत्राणी सों कही, जो–तुम मेरी एक बात सुनो :—"जो–एक समें आपुन सगरे घर के मनुष्य श्रीगोकुल में श्रीगुसांईजी के दर्शन कों गए हते, तब तुम हू संग हती । तब श्रीगोकुल तें श्रीगुसांई जी श्रीनाथजीद्वार पधारे हते, तब (मैं) तुम (तुम्हारो ससुर) हम सब संग हते । सो मारग में एक मलेछानी पानी की प्यासी बोहोत हती, सो मारी प्यास की मारग में विकल होइके परी हती । सो जेष्ठ मास के दिन हते ।

सो वह मेवा-फरोसिनी हती । सो वा मारग में होइके श्रीगुसांईजी पधारे । सो वा मलेछानी के नजदीक आए । तब खवास ने मलेछानी सों कह्यो जो–तू मारग छोडिके उठि जा । सो वह मलेछानी कैसे उठे ?

पानी हू पियो नाहीं हैं। तब वा क्षत्राणी ने लोंडी सों कह्यो जो–तू जाइके वा ब्राह्मण सों पूंछि देखि, जो–तू सवार कौ द्वार पे क्यों बैठ्यों है ?

तब वा लोंडी ने आइके वा ब्राह्मण सों पूंछी जो–तू आज सवारे सों हमारे द्वार पे क्यों बैठ्यो है ? तब नन्ददास ने वा लोंडी सों कह्यो जो- तुम्हारी S सेठानी कौ एक बेर मुख देखूंगो तब अन्न-जल करूंगो। (तब जाऊंगो) और मैंने तो कालि कौ जल-पान कियो नाहीं है। तब वा लोंडी ने नंददास के वचन सुनिके वा क्षत्राणी सों कही, जो– वह तुम्हारो मुख देखिके जल पान करेगो। तब वा क्षत्राणी ने कही जो– मैं तो वाकों मुख न दिखांउगी, वह आपु ही तें उठि जाइगो।

पाठभेदः— S तेरी बहू कौ। इसी प्रकार आगे भी क्षत्राणी के स्थान पर बहू पाठभेद है।

सो ऐसे करत सांझ होइ गई । तब वा लोडीं ने फिरिके वा क्षत्राणी सों कही, जो–तुम मेरी एक बात सुनो :—"जो–एक समें आपुन सगरे घर के मनुष्य श्रीगोकुल में श्रीगुसांईजी के दर्शन कों गए हते, तब तुम हू संग हती । तब श्रीगोकुल तें श्रीगुसांई जो श्रीनाथजीद्वार पधारे हते, तब (मैं) तुम (तुम्हारो ससुर) हम सब संग हते । सो मारग में एक मलेछानी पानी की प्यासी बोहोत हती, सो मारी प्यास की मारग में विकल होइके परी हती । सो जेष्ठ मास के दिन हते ।

सो वह मेवा-फरोसिनी हती । सो वा मारग में होइके श्रीगुसांईजी पधारे । सो वा मलेछानी के नजदीक आए । तव खवास ने मलेछानी सों कह्यो जो–तू मारग छोडिके उठि जा । सो वह मलेछानी कैसे उठे ?

वाकौ तो कंठ पानी बिना जुदो सूकि गयो। सो प्राण वाके आंखिन में आइ रहे हते, और मुख तें बोलि हू नाहीं सकै सो आंखिन तें टकटक देखत हती । तब श्रीगुसांईजी ने पूंछी जो–यह कौन हैं ? तब खवास ने कह्यो जो–महाराज ! मलेछानी है, सो मारग में परी हैं। सो यातें बोहोतेरो कहत हैं, परि वह तो उठत नाहीं है।

तब श्रीगुसांईजी आपु तो करुणा-सिंधु हैं, परमदयालु हैं, भक्तव-च्छल हैं, सो करुणा करिके वा मलेछानी की ओर देख्यो, तब वा मलेछानी ने श्रीगुसांईजी सों हाथ सों बताइके कही, जो–मैं प्यासी बोहोत हों।

तब श्रीगुसांईजी आपु अपने मनुष्यन सों आग्या करे, जो– वेगि लाइके याकों पानी पिवाओ। तब खबास ने विनती करी,

जो-महाराज ! इहां तो काहू के संग में पानी नाहीं है, और इहां कुवा तालाव हू नजदीक नाहीं है।

तब श्रीगुसांईजी ने खवास तें कह्यो, जो-हमारी झारी में कछु जल होइ तो देखि। तब खवास ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी, जो- महाराज ! झारी छुइ जाइगी । तब श्रीगुसांईजी खवास सों आग्या दीनी, जो-अरे मूरख ! झारी तो और होइगी, परि याके प्राण निकसि जाइगें तो फेरि कहां तें आवेंगे ? तातें ढील मति करो। याकों वेगि पानी पिवाओ (यह) तुम तें कहत हती, परि समुझत नाहीं हो ? सो तुम तो बडे निर्दई हो। तातें जीव-मात्र के ऊपर दया राखनी। जो-कैसोई देह-धारी होइ, परि जीव सर्वत्र एक करि जानिये, और चेंटी तें कुंजर पर्यंत सब में भगवान एक ही हैं।

सो एसें श्रीगुसांईजी ने आग्या दीनी। ता पाछें खवास ने श्रीगुसांईजी की आग्या तें वा झारी में तें श्रीनवनीतप्रियजी कौ प्रसादी जल बोहोत सीतल हतो, सो वा मलेछानी कों पिवायो । सो वह मलेछानी ने जल पियो, सो पीवत-खेम वा मलेछानी कों सगरे रोम-रोम में सीतलता भई ।

तब वा मलेछानी ने उठिके (श्रीगुसांई-जी कों) साष्टांग दंडवत् करी । (और कह्यो) जो–महाराज ! मैंने कन्हैयालाल सुने हते, परि आखिन तें मैं आजु देखे । तातें तुम सांचे गुसांई हो जो–मोकों जिवायो, तातें अब मेरे बालक-बच्चा सब जिए । तातें आप आग्या करो तो मैं श्रीगोकुल आइ रहूं । तब श्रीगुसांईजी आग्या किए जो– तेरो मन प्रसन्न होइ तहां तू रहि ।

ता पाछें वह मलेछानी (गोकुल आइ रही सो वह) आछो-आछो मेवा लेके श्री-

गुसांईजी की ड्योढी के आगें आइके बैठती। *तब श्रीगुसांईजी सों वीनती करवाई, जो–यह मेवा आप अंगीकार करवाइए। तब श्रीगुसांईजी कहवाई पठाई, जो–तू याको मोल कहि, तो हम श्रीगुसांईजी के पास लेजांइ। और मोल विना तो उहां काम नहीं आवैं *तव (वह थोरे दाम कहै सो) उहां तें मेवा के दाम लेके वह मलेछानी अपने घर कों जाती। सो याही भांति सों अपनो जन्म वितीत कीनो। सो वा मलेछानी के ऊपर श्रीगुसांईजी वहुत प्रसन्न रहते।

ता पाछें वा मलेछानी की देह छूटी। तव देह छूटत ही वाको जन्म महावन में (ब्राह्मण के घर) भयो। तव वे श्रीगुसांईजी की सेवक भई। तव वह कृतार्थ भई।

---

*भाव प्रकाश वाली प्रति मे *............* इस अंश में इस प्रकार पाठ है:– 'सो वह मलेछानी श्री गुसांइजी के मनुष्यन तें कहे जो- ए मेवा तुम राखो। तव वे मनुष्य कहें जो- तू मोल कहै तो लेंय, नाहीं तो यह हमारे काम न आवै,।

सो या भांति सों दृष्टांत देके लोंडीने वा क्षत्राणी कों समझायो।

सो समझाइ कह्यो जो–प्रथम तत्व यह कह्यो है, जो-जीव मात्र ऊपर दया राखनी तातें वह ब्राह्मण अपने द्वार आगे सवेरे कौ बैठ्यो है, सो भूखो प्यासो बैठो है। सो यह बात आछो नाहीं है, यह वैष्णव को धर्म नाहीं। तातें तुम अपनी पोरींपे चलो, मैं हू तुम्हारे संग चलत हूं।

तब यह बात वह लोंड़ी के कहेते वह क्षत्राणी पोरी के द्वार आइके ठाढी भई। तब नंददास तो वा क्षत्राणी को मुख देखिके उठि चले। तब फेरि दूसरे दिन प्रातःकाल वा क्षत्राणी के द्वार पे जाइके नंददास ठाढे भए, सो वा क्षत्राणी कों घर में तें निकसति देखी, तब फेरि नंददास अपने डेरा आए। सो एसी रीति सों नित्य नंददास वा क्षत्राणी को मुख देखिके पाछें डेरा कों जांइ।

ऐसे करत केतेक दिन पाछें वा क्षत्राणी के घरवारेन ⁸ ने जानी, तब उनने कही जो—यह नित्य आवत है, सो आछो नाहीं। तब सवेरे नंददास वाके द्वार पे आइके ठाढ़े भए। तब वा क्षत्री ने नंददास सों कह्यो जो— तुम तो भले मनुष्य हो, और हम ग्रहस्थ हैं। तातें तुम हमारे घर के द्वार आगें नित्य आवत हो, सो या में हमकों सगे-सोदरे पार-परोसीन में हांसी होत है। तातें तुम बुद्धिवान हो, और तुम्हारी तरह हू आछी है। तातें हम तुम सों यह विनती करत हैं, जो-आज पाछें तुम हमारे द्वार पे मति आइयो।

तब वा क्षत्री सों नंददास ने कह्यो जो-मैं तो दिन में एक बार होइ जात हों। और मैं तुम सों कछू मांगत नाहीं। तब वा क्षत्री ने कह्यो जो—तुम मांगो सो तो भली बात

पाठभेदः—8 वाके नी ने।

है, परि नित्य कौ आवनो महा बुरो है। तब वा क्षत्री सों नंददास ने कह्यो जो-तुम मोसों कछू कहोगे तो मैं तुम्हारे ऊपर प्राण-त्याग करूंगो। तब वह क्षत्री अपने मन में बोहोत डरपै जो-मति कहू अपघात करै। तब फेरि वे कछू बोले नाहीं (और नंददास तो वैसेई नित्य आवें सो वाकौ मुख देखिके परे जांय)

ता पाछें (कितेक दिन में) यह बात सगरे गाम में प्रसिद्ध भई। जो वा क्षत्री की बहू कों देखिवे कों एक ब्राह्मण नित्य-प्रति आवत है। सो यह बात जने जने के मोहोडे होन लागी। तब वा क्षत्री ने अपने घरकेनऽ सों कह्यो जो-यह गाम अब आपुन को सर्वथा छोडनो पड्यो। सो आपन कों इहां रहनो उचित

पाठभेद —ऽ पुत्र सों।

नाहीं है। तातें लौकिक में अपने घर की बात बोहोत होन लागी है, तातें जो घर में वस्तु-भाव है सो बेचिके द्रव्य करो, और घर हू कों बेचिके हुराडी करवाइ लीजिये।

सो सब काम करिके ता पाछें एक गाडा भाडे कियो, और दस-पांच मनुष्य मारग के लिये चाकर राखे (प्रातःकाल तें नंददास वा बहू को म्होडो देखिके गये हते) और विचार कियो जो-इहां तें निकसि चलिए। कोइ दूसरो जाने नाहीं जो-ए कहां को गए, और सूधे श्री-गोकुल कों चलिये। जैसे यह ब्राह्मण जाने नाहीं। ता पाछें वा क्षत्री ने गाडी मंगाइ वस्तु-भाव सब भरिके आप, बेटा, बहू (और चौथी, लोंडी कों संग लेके चले (सो ये चारों जने वा गाडी में बैठि के गोकुल कों चले)

सो तब दूसरे दिन नंददास वा क्षत्राणी कौ देखिबे कों आए। तब तहां द्वार पे देखे तो

वाके घर के तो ताला लगे हैं। तब नंददास ने वाके परोसीन सों पूंछी जो- या घर कौ ताला क्यों लग्यो है, आजु याके घर के धनी कहां गए हैं? तब परोसीन ने कह्यो, जो-अरे भले मनुष्य! वे तेरे दुःख के मारे सों हमारे परोसी भाजि गए, सो उन ने यह गाम छोड्यो। तब नंददास ने पूंछी जो- कहां गए? तब उन ने कह्यो जो। (काल प्रात ही) श्री-गोकुल गए हैं। तब नंददास हू (यह बचन सुनत ही अपने डेरा में आए जो- अपनी वस्तु भाव लेके) तत्काल श्रीगोकुल कों चले। सो चलत-चलत सांझ भई, सो उतरिबे कौ गाम आयो, तब गाम में गए। तब देखे तो वह क्षत्री, वाकी बहू, सब चाकर सहित बैठे हैं, और गाडो की आोट देके बैठे हैं। नंददास हू उनतें थोरी सी (दूर) जाइ उतरे।

तब वा क्षत्री ने नंददास कों देख्यो। तब अपने मन में बोहोत पश्चात्ताप

करन लागे, जो--जा कलेस के लिए गाम छोड्यो, और घर छोड्यो, सो कलेस तो साथ कौ साथ ही आयो।

तब वह क्षत्री मन में बोहोत सोच करन लाग्यो और मन में क्रोध आयो। तब सब मिलिके नंददास सों लरन लागे, जो--भले मनुष्य ! तू हमारे संग लग्यो क्यों आवत है? तेरे दुःख के मारे हम घरबार सब छोडिके परदेस कों चले हैं। हमारे संग तू मति आवै तब नंददास (उठिके दूर जाइ बैठे और) कह्यो जो–तुम मोसों क्यों लरत हो ? मैं तुम सों कछू मांगत नाहीं, और यह भूमि हू तुम्हारी नाहीं। तब वह क्षत्री तो चुप करि रह्यो।

ता पाछें (रात्रि कों तो तहां सोइ रहे, प्रातःकाल होत ही) वह क्षत्री गाडी जुताइके (तहां तें) चल्यो, सो वा क्षत्री

के साथ नंददास हू दूरि-दूरि चले जांइ। सो यों करत कछूक दिन में श्रीगोकुल के निकट आइ पोहोचे।

तब वा क्षत्री ने अपने मन में विचार कियो, जो- हम वा ब्राह्मण के दुःख के लिये तो गाम छोड़िके आए, और यह ब्राह्मण हू पाछो आयो। अब कहा उपाइ कीजे? यह गोकुल के लोग देखेंगे तो बोहोत हँसेंगे या गोकुल के लोगन कों तो हांसी बोहोत प्रिय है, और आपुन तो श्रीगोकुल-वास करिवे कों आए हैं। (तातें एसो जतन होइ जो– यह हमारे संग श्रीजमुनाजी उतरिके गोकुल न चले तो आछो है) यातें अधिक श्रीगोकुल में हाँसी होइगी और श्रीगुसांई जी हू जानेंगे, सो यह बात

आछी नाहीं सो यह विचार करिके नाववारे मलाहन सों और घाटवारे सों कह्यो, जो-तुम या ब्राह्मण कों नाव में मति चढावो, हम तुम कों दस पांच रुपैया देइगें। एसो विचार अपने मन में करि राख्यो।

तब दूसरे दिन वह क्षत्री सब साथ सहित श्री यमुनाजी के तट पें आइ पोहोंचे। तब वा घाटवारे कों और नाववारे कों बुलायो, और सब वस्तु-भाव नाव में चढाइ दीनी, और चाकर लोंडी सब बैठे। तब नंददास हू नाव में चढे, तब वा क्षत्री ने वा नाववारे मलाह कों बुलाइके कही जो-मैं- तुमकों दस पांच रुपैया देउगो। तुम या ब्राह्मण कों नाव में ते उतारि देउ, या कों पार उतारो मति, तब वा मलाह ने नंददास कों (हाथ पकरि के) नाव में तें उतारि

दियो । और वह क्षत्री तो सब साथ-सहित नाव में बैठिके पार उतरे, और नंददास तो श्रीयमुनाजी की पार पे अकेले बैठे, सो तहां श्रीयमुनाजी कों और श्रीगोकुल कों साष्टांग दंडवत करिके एक पद करिके श्रीयमुनाजी के तट पे गायो । सो पदः—

॥ राग सारंग ॥

नेह कारन जमुने ! प्रथम आई,
भक्त के चित्त की वृत्ति सब जान ति हो ।
जब ते अति आतुर जो धाई ॥ १ ॥
जैसी नाहि मन हती अब ही इच्छा ।
ताहि तैसी साध जो पुजाई ॥
'नंददास' प्रभु नाथ जाहि रीझत ।
जोइ जमुनाजी के गुन जु गाई ॥ २ ॥

राग रामकली ॥ ताल चर्चरी ॥

जमुने जमुने जमुने जो गावै ।
शेष सहस्र-मुख गावत जाहि निसदिना ।
पार नाहीं पावत, ताहि पावै ॥ १ ॥
सकल सुखदैनहार, तातें करो हौं उचार,
कहत हौं बार-बार भूलि जिनि जावो ॥
नंददास की आस जमुने पूरन करो ।
तातें कहां घरी-घरी चित्त लावो ॥ २ ॥

राग रामकली ॥ ताल चर्चरी ॥

भक्त पर करि कृपा जमुने ! ऐसी ॥
छांडि निजधाम भूतल गवन कियो ।
प्रगट लीला दिखाई जु तैसी ॥ १ ॥
परम परमारथ करत हो सबनि पे ।
रूप अद्भुत देत आप जैसी ॥
'नंददास जो दृढ चरन गहे हैं ।
एक रसना कहा कहो विशेषी ॥ २ ॥

सो या भांति सों नंददास ने श्रीयमुनाजी के किनारे बैठिके श्रीयमुनाजी की स्तुति कीनी ।

और वह क्षत्री तो श्रीगोकुल में जाइ पोहोंच्यो । ता पाछें वस्तु-भाव एक ठौर धरि के अपनी लोंडी कों बैठारिके आपु तीन्यों जने श्रीगुसांईजी के दर्शन कों गए । सो वा समय श्रीनवनीतप्रियजी के राजभोग कौ समौ हतो । तहां जाइके श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन किए । सो श्रीगुसांईजी श्रीनवनीतप्रियजी कौ अनोसर कराइके

अपनी बैठक में गादी तकियान पे बिराजे हते। तब वह क्षत्री तीन्यों जने आइके श्रीगुसाईजी कौ दर्शन कियो और (भेट धरि) साष्टांग दंडवत करी।

तब श्रीगुसांईजी आपु पूंछे जो-(वैष्णव!) तुम कब आए? तब उन ने कह्यो जो-महाराज! अब ही आए हैं, सो आइके आप की कृपा तें श्रीनवनीतप्रियजी के राज-भोग के दर्शन किए हैं। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो– तुम आज महाप्रसाद इहाँई लीजियो, सो अब बैठि जाओ। पाछें श्रीगुसाँईजी आपु भोजन कों पधारे।

ता पाछें आपु भोजन करिके बाहिर पधारे, तब उन वैष्णवन कों (अपनी जूठन की) पातरि धरी, तामें पातरि चारि धरी। तब वा क्षत्री वैष्णव ने श्रीगुसाँईजी सों विनती करी जो- महाराज! हम तो तीनि

जने हैं, यह चौथी पातरि काहेकों धरी है ? और बैष्णव तो कोई दीखत नाहीं । तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो—वह ब्राह्मण तुमारे संग आयो है । सो जाकों तुम पार छोडि आए हो, सो उहां श्रीयमुनाजी के तीर बैठ्यो हैं । सो वह अब कौन के घर जाइगो ?

तब ये वचन (श्रीगुसांईजी के) सुनिके तीन्यो जने बोहोत लज्जा कूं पावत भए, और आपुस में कहन लागे, जो— देखो ? यह हम जानत हते, जो— हमारी हाँसी श्रीगोकुल में न होइ तो आछो है। सो इहां तो सब पहिले ही प्रसिद्धि होइ रही है । तब (एसो कहिके) वे तीन्यों जने आपुस में बोहोत सोच करन लागे, जो—अब तो श्रीगुसांईजी ने हू जानी, सो वाकी पातरि धरी है, सो वह अब इहां आवेगो, तब तीन्यों जने अपने मन में

अपनी बैठक में गादी तकियान पे बिराजे हते। तब वह क्षत्री तीन्यों जने आइके श्रीगुसाईंजी को दर्शन कियो और (भेंट धरि) साष्टांग दंडवत करी।

तब श्रीगुसांईजी आपु पूंछे जो-(वैष्णव!) तुम कब आए ? तब उन ने कह्यो जो-महाराज ! अब ही आए हैं, सो आइके आप की कृपा तें श्रीनवनीतप्रियजी के राज भोग के दर्शन किए हैं। तब श्रीगुसांईजी कहे, जो- तुम आज महाप्रसाद इहाँई लीजियो, सो अब बैठि जाओ। पाछें श्रीगुसाँईजी आपु भोजन कों पधारे।

ता पाछें आपु भोजन करिके बाहिर पधारे, तब उन वैष्णवन कों (अपनी जूठन की) पातरि धरी, तामें पातरि चारि धरी। तब वा क्षत्री वैष्णव ने श्रीगुसाँईजी सों विनती करी जो- महाराज ! हम तो तीनि

जने हैं, यह चौथी पातरि काहेकों धरी है ? और वैष्णव तो कोई दीखत नाहीं। तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो–वह ब्राह्मण तुमारे संग आयो है। सो जाकों तुम पार छोडि आए हो, सो उहां श्रीयमुनाजी के तीर बैठ्यो हैं। सो वह अब कौन के घर जाइगो ?

तब ये वचन (श्रीगुसांईजी के) सुनिके तीन्यो जने बोहोत लज्जा कूं पावत भए, और आपुस में कहन लागे, जो– देखो ? यह हम जानत हते, जो– हमारी हाँसी श्रीगोकुल में न होइ तो आछो है। सो इहां तो सब पहिले ही प्रसिद्धि होइ रही है। तब (एसो कहिके) वे तीन्यों जने आपुस में बोहोत सोच करन लागे, जो–अब तो श्रीगुसांईजी ने हू जानी, सो वाकी पातरि धरी है, सो वह अब इहां आवेगो, तब तीन्यों जने अपने मन में

पश्चात्ताप करन लागे, जो– अब हम कहाँ जांइगे ?

तब श्रीगुसांईजी आपु कृपा करिके वा क्षत्री सों कह्यो जो–तुम इतनो सोच काहे कों करत हो ? वह ब्राह्मण तो बोहोत ही सुज्ञान है, और दैवी जीव है, तातें तिहारे संग करिके याही भाति सों आयो है। सो बडो भगवदीय होइगो। सो अब तुम कों दुख न देइगो। एसे कहिके आपने वा बैष्णव कों बोहोत समाधान कर्‍यो। तब तीन्यों जनेन ने साष्टांग दंडवत करी, और अपने मन में अत्यंत प्रसन्न भए।

तब श्रीगुसांईजी ने एक ब्रजवासी बुलवायो। तब वाकों आपु आग्या किये, जो- तू श्रीयमुनाजी के पैली पार जाइके उहाँ

एक ब्राह्मण बैठ्यो है, सो वाकौ नाम नंददास है, ताकों तुम नाव में बैठारिके ले आवो।

तब वह ब्रजवासी तत्काल पार गयो। ❀ तब वा ब्रजवासी ने पूछी जो- नंददास कौन कौ नाम है? तब वाने ब्रजवासी सों कह्यो जो- नंददास तो मेरो नाम है। तब वा ब्रजवासी ने कही, जो-श्रीगुसांईजी ने मोकों तेरे बुलाइवे केलिए पठायो है। सो यह नाव लेके आयो हूँ, सो तुम वेगि चलो।

तब (तो) नंददास अपने मन में प्रसन्न होइके (श्रीयमुनाजी कों दंडवत करिके श्री-गोकुल कों दंडवत करिके) नाव में बैठिके श्रीगोकुल आए। तब ब्रजवासी ने भीतर जाइके विनती कीनी जो- महाराज! नंददास कों बुलाइ लायो हूँ। तब आपु आग्या किए जो- भीतर आवन देउ।

❀ भावप्रकाश वाली प्रति में यहाँ पर श्रीयमुनाजी की स्तुति करने का उल्लेख है।

तब नंददास ने श्रीगुसांईजी कौ दर्शन कियो, सो साक्षात कोटि-कंदर्पलावण्य श्रीपूर्णपुरुषोत्तम कौ दर्शन भयो। सो दर्शन करत मात्र नंददास की बुद्धि निर्मल व्हे गई। तब नंददास ने साष्टांग दंडवत करी, और दोऊ हाथ जोरिके बिनती करन लागे, जो-महाराज! जब तें मेरो जन्म भयो है तब तें बुरो-बुरो कृत्य कर्यो है। सो आपु तो परम दयालु हो, सो मेरे ऊपर अनुग्रह करिके मोकों सरन लीजिए।

सो नंददास के दैन्यता के वचन सुनि श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए, और आपु श्रीमुख तें आग्या करी, जो—जाउ श्रीयमुनाजी में स्नान करि आउ। तब नंददास तत्काल स्नान करिके आइके श्रीगुसांईजी के सनमुख हाथ जोरिके अपरस ही में ठाढे भए। तब श्रीगुसांईजी वाकों नामनिवेदन कर-

वायो । ता समै श्रीगुसाँईजी कौ स्वरूप नंददास के हृदयारूढ भयो, सो श्रीगुसांईजी के संनिधान एक पद करिके गायो ।

सो पद :—

॥ राग सारग ॥ ताल चर्चरी ॥

जयति रुक्मिनीनाथ, पद्मावती-प्राण-पति * विप्रकुलछत्र आनंदकारी ।
दीप वल्लभ वंस, जगत-कलमस हरन, कोटि उडुराज सम तापहारी ॥१॥
जयति भक्त पतित पावन करन, काम पूरन चारी ॥
मुक्ति-कांक्षीय जन भक्ति-दायक प्रभु, सकल सामर्थ्य गुन-गननि भारी ॥२॥
जयति सकल तीरथ फलें नाम सुमिरत मात्र, वास व्रज नित गोकुल-बिहारी ॥
'नंददास' निज नाथ, पिता गिरिधर आदि, प्रगट अवतार गिरिराज धारी ॥ ३ ॥

*मूल पद की रचना सं. १६२४ के बाद की है क्योंकि श्रीगुसांई जी का द्वितीय विवाह श्रीपद्मावती बहूजी के साथ इसी संवत में हुआ था (कांकरोली का इतिहास)

सो यह नयो पद करिके ता समै नंददास ने गायो । सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए । ता पाछें नंददास कों आग्या करी, जो–तेरे लिए महाप्रसाद की पातरि धरी है, सो तू जाइके महाप्रसाद ले। तब नंददास जाइके महाप्रसाद कों दंडौत करिके महाप्रसाद लेवेकों बैठे, सो लेत ही स्वरूपानंद कौ अनुभव होन लाग्यो, सो देहानुसंधान भूलि गए। सो नंददास महाप्रसाद लेके तहां बैठे रहे, सो हाथ धोइवे की (हू) सुधि रही नाहीं ।

तब उत्थापन के समै भीतरिया ने आइके श्रीगुसांईजी सों विनती करी जो–महाराज ! नंददास तो तब कौ महाप्रसाद लेन बैठ्यो है, सो अब ही उठ्यो नाहीं । तब श्रीगुसांई ने भीतरिया सों कही, जो–तुम नंददास सों कछू मति कहो। ता पाछें

सगरी ✻ रात्रि में नंददास कों देह की सुधि रही नहीं ।

ता पाछें दूसरे दिन प्रातःकाल श्रीगुसांई-जी आपु नंददास के पास पधारे । तब आपने नंददास के कान में कही, जो- (उठो नंददास !) दर्शन कौ समौ भयौ है । तब नंददास तत्काल उठिके श्रीगुसाँई-जी कों दंडवत करिके ताही समै पद करिके गायो । सो पदः—✻

* राग विभास *

प्रात समै श्रीवल्लभ सुतकौ उठत ही रसना लीजिये नाम ॥
आनंदकारी प्रभु मंगलकारी, असुभ-हरन, जन पूरन काम
इह लोक परलोक के बंधु को कहि सकै तिहारे गुन-ग्राम ॥
'नंददासप्रभु' रसिक सिरोमनि राज करो गोकुल सुखधाम ।

पाठ भेदः—* चार प्रहर रात्रि गई तोऊ ।

✻ भावप्रकाश वाली प्रति में इस के पूर्व "प्रात समै श्रीवल्लभ सुत को पुन्य पवित्र विमल जस गाऊ" यह पद है ।

यह पद नंददास ने (तहां) गायो। सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। तब नंददास ने (श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरि) साष्टांग दंडवत करिके कह्यो जो—महाराज ! मो सारिके पतितन कों आपु कृपा करिके कृतार्थ करत हो, और आप कृपा करिके मोकों श्रीनवनीतप्रियजी को दर्शन करवायो, तातें मेरो परम भाग्य है।

सो कछूक दिन श्रीगोकुल रहिके श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करे।

सो वे नंददास (श्रीगुसांईजी के) ऐसे (कृपापात्र) भगवदीय हे।

(इति वार्ता प्रथम)

(वार्ता द्वितीय)

और एक दिन रात्रि कों श्रीगुसांईजी (अपनी बैठक में) तकीयान पे बिराजे हते।

सो यह कीर्त्तन नंददास ने गायो, सो सुनिके श्रीगुसाँईजी बोहोत प्रसन्न भए।

पाछें श्रीगुसाँईजी तो मंदिर में पधारे। तब नंददास देह-कृत्य करिके स्नान करिके, संध्यावंदन करिके जगमोहन में आइ बैठे। (ता पाछें श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन को समय भयो) तब श्रीगुसाँईजी ने नंददास कों पलना में श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करवाए। सो दर्शन करत मात्र नंददास के मन में बोहोत आनंद भयो। ता समै एक पद गायो। सो पद:—

* राग बिलावल *

गोपाल लाल कों मोद भरी जसुमति हुलरावति।
मुख चूंवति देखति सुन्दर तन आनंद भरि-भरि गावति ॥१॥
कबहूं पलना मेलि झुलावति, कबहूंक अस्तनपान करावति ॥
'नंददासप्रभु' गिरवरधर कों निरखि-निरखि सुख पावति॥२॥

यह पद नंददास ने (तहां) गायो। सो सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। तब नंददास ने (श्रीगुसांईजी सों हाथ जोरि) साष्टांग दंडवत करिके कह्यो जो—महाराज ! मो सारिके पतितन कों आपु कृपा करिके कृतार्थ करत हो, और आप कृपा करिके मोकों श्रीनवनीतप्रियजी को दर्शन करवायो, तातें मेरो परम भाग्य है।

सो कछूक दिन श्रीगोकुल रहिके श्री-नवनीतप्रियजी के दर्शन करे।

सो वे नंददास (श्रीगुसांईजी के) एसे (कृपापात्र) भगवदीय हे।

(इति वार्ता प्रथम)

(वार्ता द्वितीय)

और एक दिन रात्रि कों श्रीगुसांईजी (अपनी बैठक में) तकीयान पे बिराजे हते।

और सगरे वैष्णव पास बैठे हते । तब श्री-गुसांईजी आप आग्या किए, जो–कालि श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों (श्रीनाथजी द्वार) अवस्य चलेंगे । तब नंददास ने वाही समय विनती करी, जो–महाराज ! आपु कृपा करिके श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करवाये, तैसेई श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करवाइए । तब आपु आग्या किए, जो–हम तो तेरेई लिए चलत हैं, तातें तू प्रातःकाल हमारे संग चलियो ।

ता पाछें प्रातःकाल (भए श्रीनवनीतप्रिय-जी के मंगला के दर्शन करिके श्रृंगार राजभोग करिके) नंददास कों संग लेके श्रीगुसांईजी गोपालपुर पधारे । (सो उत्थापन के समय श्रीगिरिराज आइ पहोंचे।) तब उहां श्रीगुसांई-जी आप पूछे जो–दर्शन को कहा समो है?

तब सेवकन ने कह्यो जो—महाराज ! उत्थापन कौ समौ है। तब आपु तत्काल स्नान करिके गिरिराज ऊपर पधारे। सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करिके उत्थापन भोग सराइके किवांड खुलाइके सबन कों दर्शन करवायो। तब नंददास कों भीतर बुलाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दर्शन करवायो। तब नंददास श्रीनाथजी के दर्शन करिके बोहोत प्रसन्न भए। ता समैं एक पद गायो। सो पद :—

॥ राग टोड़ी ॥

सोहत सुरंग दुरंग ललना के लोयन लौने।
कपोल बिलोकन में झलक कल कंचन कुंडल कानन कौने
रंग-रंगीले के अंग सबै रंग भरे एसे भए न हौने॥
'नंदादास' सखी मेरे कहा चली काम कों उठि आई च क टौने

सो यह पद नंददास ने गायो। तब श्रीगुसांईजी आपु मंदिर में सुनिके मुसि-

काए। पाछें टेरा खेंचि लियो, तब नंददास तो बाहिर आइके बैठे। (बैठे और हू कीर्तन किये) सो इतने संध्या-आरती के किवांड खुले, तब नंददास ने श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किए। तब नंददास के चित्त में बडो आनंद भयो। सो ता समै नंददास ने यह पद गायो। सो पद:—

॥ राग गौरी ॥

नंद-महरिके मिस ही मिस
घर आवै गोकुल की नारि॥
सुंदर वदन बिनु देखे कल न परत जिय
भूल्यो काम धाम आछो वदन निहारि॥१॥
दीपक लै चली वारि बाट में बडो करि डारि
छबि सों फिरि आई बयारि कों देत गारि॥
'नंददास' नंदनंदन सों लग्यो नेह
पल की ओट मानों बीते जुग चारि॥२॥ *

*भावप्रकाश वाली प्रति में इस पद के पूर्व में तीन पद और हैः-
(१) वन ते सखनि संग गाइन के पाछें,
(२) वनतें आवत गावत गौरी०।
(३) देखि सखी हरि को वदन सरोज०।

सो या भाति सों नंददास ने पद बोहोत गाए, ता पाछें नंददास एक महीना लों श्रीनाथजीद्वार में रहे सो तहाँ श्रीनाथजी, के दर्शन में छके रहते *। और फेरि एक महीना श्रीगोकुल में रहते, सो श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करते। और श्रीगुसांईजी श्रीगिरिधरजी आदि सब वैष्णवन के दर्शन करते। तातें वैष्णव की संगति विना एसी प्राप्ति न होइ। तातें संग करनो तो भगवदीन को करनो।

सो वे नंददास श्रीनाथजी, श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हे।

(इति वार्ता द्वितीय)

* पाठ भेद—ता पाछे नंददास छः मास पर्यन्त सूरदास जी के संग परासोली में रहे। पाछे श्रीगोकुल में रहे।

(वार्ता तृतीय)

और एक समय श्रीमथुराजी S तें संघ चल्यो, सो श्री जगन्नाथराइजी के दर्शन कों। ता संघ में दस पांच संग में वैष्णव हू गए हते। सो कछु दिन में वह संघ कासी जाइ पोहोंच्यो।

तब तहां नंददास के बडे भाई तुलसी दास तहां हुते। तब उनने सुनी जो- आज इहाँ श्रीमथुराजी कौ संघ आयो है। तब तुलसीदास ने वा संघ में आइ के पूंछी जो- उहां श्रीमथुराजी में तथा श्रीगोकुल में नंददास नाम एक ब्राह्मण गयो हतो, सो तहां तुम ने देख्यो सुन्यो होइ तो कहो?

तब दस-पाँच वैष्णव संग में हते, सो तिन में ते एक वैष्णव ने तुलसीदास सों

S, पाठभेदः—श्रीमथुराजी को एक संघ पूरब कों चल्यो गया-श्राद्ध करिबे कों।

कही, जो–तुलसीदासजी ! एक सनोढिया ब्राह्मण है सो याकौ नाम नंददास है । सो पढ्यो बोहोत है, सो वह श्रीगुसाँईजी कौ सेवक भयो है । पहिले तो अत्यंत विषई हतो, और श्रीगुसांईजी की कृपा तें अब तो बड़ो ही कृपापात्र भगवदीय भयो है, सो नित्य नए कीर्त्तन बनाइ श्रीगुसांईजी कों सुनावत है ।

तब तुलसीदास ने इतनी बात सुनिके अपने मन में विचार कियो जो–नंददास तो वही है । सो श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है, सो तो अब मेरो कह्यो न मानेगो । परंतु एक बात करिके तुलसीदास कों तो बडो आनंद भयो, जो– भलो भयो, जो–श्रीगुसांईजी ने लौकिक संसार तें पार उतार्यो । सो या बात करिके परम आनंद भयो ।

वैष्णवन के भेलो हतो, सो सब पत्र वा मनुष्य ने श्रीगुसाँईजी के खवास कों सोंपे। तब खवास ने सगरे पत्र श्रीगुसांईजी के आगे आनि धरे। तब वे पत्र श्रीगुसाँईजी ने देखि-देखिके जा जाके नाम को हुतो, सो ता ताकों दियो, और नंददास कौ पत्र हतो सो नंददास कों दियो।

तब नंददास पत्र वांचिके बडे भाई तुलसीदास कों पत्र कौ प्रति उत्तर लिख्यो। तामें एसे लिख्यो जो—मेरो विवाह प्रथम तो श्रीरामचन्द्रजी सों भयो हतो, ता पाछें बीच में श्रीकृष्ण आइ पोहोंचे, सो आइके अचक ले गए। जो– जैसे कोई लौकिक में व्याह करि लेजाइ, और कोइ जोरावर लूटि लेइ। सो तैसे ही श्रीरामचंद्रजी में वल हो-तो तो मोकों श्रीकृष्ण कैसे ले जाते? और (श्रीरामचन्द्रजी तो एक पत्नीव्रत हैं। सो

तब नंददास के भाई तुलसीदास ने उन वैष्णवन सों कह्यो जो- एक पत्र में तुम कूं लिखि देत हूं, सो ताकौ जुवाब तुम हम कों मगवाइ देउगे ? तब उन वैष्णवन ने तुलसी-दास सों कह्यो जो— कालि हमारो मनुष्य श्रीगोकुल जाइगो । सो तुम कों पत्र देनो होइ तो लिखो ।

तब तुलसीदास ने वाही समै नंददास कों पत्र लिख्यो । और वा पत्र में यह लिख्यो जो—पतिवृता-धर्म छोडिके अब तैंने व्यभिचार धर्म कियो । सो तैंने आछो काम न कियो । अब तू आवै तो तो कों फेरि पति-वृता कौ धर्म बताऊं ।

सो यह पत्र तुलसीदास ने वा वैष्णव के हाथ दियो । सो-जो-मनुष्य चलत हतो ताकों वह पत्र सोंप्यो । सो वह मनुष्य पत्र लेके चल्यो, सो कितनेक दिन में श्रीगोकुल आइ पोहोंच्यो । सो नंददास कौ पत्र

वैष्णवन के भेलो हतो, सो सब पत्र वा मनुष्य ने श्रीगुसाँईजी के खवास कों सौंपे। तब खवास ने सगरे पत्र श्रीगुसांईजी के आगे आनि धरे। तब वे पत्र श्रीगुसाँईजी ने देखि-देखिके जा जाके नाम को हुतो, सो ता ताकों दियो, और नंददास कौ पत्र हतो सो नंददास कों दियो।

तब नंददास पत्र बांचिके बडे भाई तुलसीदास कों पत्र कौ प्रति उत्तर लिख्यो। तामें एसे लिख्यो जो—मेरो विवाह प्रथम तो श्रीरामचन्द्रजी सों भयो हतो, ता पाछें बीच में श्रीकृष्ण आइ पोहोंचे, सो आइके अचक ले गए। जो— जैसे कोई लौकिक में व्याह करि लेजाइ, और कोइ जोरावर लूटि लेइ। सो तैसे ही श्रीरामचंद्रजी में बल होतो तो मोकों श्रीकृष्ण कैसे ले जाते? और (श्रीरामचन्द्रजी तो एक पतीव्रत हैं। सो

दूसरी पत्नी कूं कैसे संभारेंगे ? एक पत्नी हू बराबर संभारि न सके, सो रावण हरिके ले गयो । और श्रीकृष्ण तो अनन्त अबलान के स्वामी हैं, और इनकी पत्नी भए पाछें कोई प्रकार को भय रहे नाहीं है, एक कालावच्छिन्न अनन्त पत्नीन कूं सुख देत हैं । जासों मैंने श्रीकृष्ण पति कीने हैं । सो जानोगे) अब तो तन, मन, धन यह लोक परलोक हैं सो सब श्रीकृष्ण को है । तातें अब तो मैं परबस होइके रह्यो हूं ।

सो वा पत्र में एक कीर्तन लिख्यो । सो पद :—

राग आसावरी

कृष्ण नाम जब तें श्रवण सुन्यो री (आली)
तब तें भूली भवन हों तो बावरी भई री ॥
भरि आवें नैन चित रंचक न चैन मुखहू न आवै बैन
तन की दसा कछु और ही भई री ॥ १ ॥

जेते क नेम-धर्म कीने री ! मैं,
बहु विधि अंग अंग अम ही भई री ॥
'नंददास' के सुबन सुनि माधुरी सूरति हैं धो कैमें दई री ॥ २ ॥

सो यह पत्र नंददास ने तुलसीदास कों पत्र में लिखिके पठायो । सो कासिद (कितनेक दिन में तहां जाइ पोहोंच्यो । सो वे पत्र सब वैष्णवन कों दिये) तब उन वैष्णवन ने नंददास कौ पत्र (बांचिके) तुलसीदास-कों बुलाइके) दियो, सो नंददास कौ पत्र तुलसीदास ने बांच्यो । सो बांचिके तुलसीदास के मन में यह आई जो- अब तो नंददास सर्वथा इहां न आवेगो सो यह निश्चय करिके तुलसीदास तो चुपचुपाते अपने घर गए ।

और नंददास तो श्रीगोकुल छोडिके कहूँ न गये । सदैव श्रीगुसाँईजी के दर्शन किए।

(सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भए। जिनको श्रीगुसांई-जी के स्वरूप में एसो दृढ भाव हतो)

(इति वार्ता तृतीय)

(वार्ता चतुर्थ)

* और एक समय नंददास ने श्रीभागवत संपूर्ण भाषा कियो* तब मथुरा के पौराणिक, जे कथा कहत हते, सो वे सगरे पंडित मिलिके श्रीगोकुल आए। तब वे पंडित श्रीगुसांईजी सों विनती करन लागे, जो-महाराजाधिराज ! हम श्रीभागवत की कथा कहिके व्यावृत्ति करत हैं, सो आपके

---

* भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ भेद है:—

*सो एक दिन नंददास के मन में एसी आई जो जैसे तुलसीदासजी ने रामायण भाषा किये हैं, तैसे हम हूं श्रीमद् भागवत भाषा करें। पाछें नंददास ने श्रीमद भागवत दशम-भाषा संपूर्ण कियो। तब मथुरा के०

सेवक नंददास ने सब भागवत भाषा कियो है। तातें हमारी जीविका गई। तातें अब हमारी कथा कोऊ सुनेगो नाहीं, यह विनती हम आप सों करन आए हैं। आप तो परम दयाल हो, यह सब आपके हाथ (उपाय) है।

तब श्रीगुसांईजी नंददास कों बुलाइके कह्यो जो-हम सुने हैं जो-तैंने श्रीभागवत की भाषा करी है। सो तातें ए ब्राह्मण कथा कहिके उदर-पूर्ण करत हैं, सो तिनकों भाषा तें हानि होति है। तातें तुम इतनी भाषा तो रहन देउ, एक व्रजलीला पंचाध्याई राखो, और सब श्रीयमुनाजी में पधराइ देउ। यातें इन ब्राह्मणन को अतिक्रम होत हैं।

तब जितनी भाषा श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें कही तितनी भाषा राखी, और सब-

×सो नंददास ने श्रीगुसांईजी की आज्ञा प्रमाण मानि के व्रजलीला ताईं (भागवत) राखी और ०

(सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भए। जिनकौ श्रीगुसांई-जी के स्वरूप में एसो दृढ भाव हतो)

(इति वार्ता तृतीय)

(वार्ता चतुर्थ)

❀ और एक समय नंददास ने श्रीभागवत संपूर्ण भाषा कियो❀ तब मथुरा के पौराणिक, जे कथा कहत हते, सो वे सगरे पंडित मिलिके श्रीगोकुल आए। तब वे पंडित श्रीगुसांईजी सों विनती करन लागे, जो-महाराजाधिराज ! हम श्रीभागवत की कथा कहिके व्यावृत्ति करत हैं, सो आपके

❀ भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ भेद है:—

❀सो एक दिन नंददास के मन में एसी आई जो जैसे तुलसीदासजी ने रामायण भाषा किये हैं, तैसे हम हूं श्रीमद् भागवत भाषा करें। पाछें नंददास ने श्रीमद भागवत दशम-भाषा संपूर्ण कियो। तब मथुरा के •

सेवक नंददास ने सब भागवत भाषा कियो है। तातें हमारी जीविका गई। तातें अब हमारी कथा कोऊ सुनेगो नाहीं, यह विनती हम आप सों करन आए हैं। आप तो परम दयाल हो, यह सब आपके हाथ (उपाय) है।

तब श्रीगुसांईजी नंददास कों बुलाइके कह्यो जो-हम सुने हैं जो-तैंने श्रीभागवत की भाषा करी है। सो तातें ए ब्राह्मण कथा कहिके उदर-पूर्ण करत हैं, सो तिनकों भाषा तें हानि होति है। तातें तुम इतनी भाषा तो रहन देउ, एक व्रजलीला पंचाध्याई राखो, और सब श्रीयमुनाजी में पधराइ देउ। यातें इन ब्राह्मणन कौ अतिक्रम होत हैं।

तब जितनी भाषा श्रीगुसांईजी श्रीमुख तें कही तितनी भाषा राखी, और सब-

×सो नंददास ने श्रीगुसांईजी की आज्ञा प्रमाण मानि के व्रजलीला ताईं (भागवत) राखी और ०

श्रीयमुनाजी में पधराइ दीनी—

सो वे नंददास श्रीगुसांई जी के एसे (आज्ञाकारी) कृपा-पात्र भगवदीय हे।

(इति वार्ता चतुर्थ)

—:□:—

(वार्ता पञ्चम) *

—:*:—

ओर एक समैं नंददास के बड़े भाई तुलसीदासजी व्रज में आए सो वृन्दावन की सोभा देखिके बोहोत प्रसन्न भए। सो तहां वृन्दावन के बृच्छ पसु, पंछी सब मुख तें 'कृष्ण' 'कृष्ण' कहत हैं। तब तुलसीदास ने एक दोहा कह्यो :—

कृष्ण कृष्ण सब रटत हैं आक ढाक अरु खैर।
तुलसी या व्रजके विषे कहा राम सों वैर ?

पाछें तुलसीदास ने मथुरा आइके पूंछ्यो जो—श्रीगुसांईजी के सेवक नंददास कहा हैं ?

* भाव प्रकाश वाली प्रति में यह वार्ता विस्तृत रूपान्तर से है- जो अन्त में दी जारही है।

तब मथुरा के लोगन ने कह्यो जो—श्रीगुसांईजी होंइगे तहां नंददास होंइगे, कै तो श्रीगोकुल तथा श्रीनाथजीद्वार।

सो इतनो सुनत ही तुलसीदास प्रथम श्रीनाथजीद्वार तो गए नाहीं, श्रीगोकुल आए। तब पूंछ्यो जो- इहा कोई नंददास है? तब काहू वैष्णव ने कह्या जो- श्रीगुसांईजी के साथ श्रीनाथजीद्वार गयो है। तब तुलसीदास श्रीगोकुल को दर्शन करिके बोहोत प्रसन्न भए, और मन में आई जो- एसी रमनीक भूमि छोडिके नंददास इहां तें कैसे चल्यो गयो?

पाछें दूसरे दिन तुलसीदास श्रीगोकुल तें मथुरा आए, सो पाछें उहा तें चले, सो गोपाल-पुर आए। सो उहां पूंछी जो- श्रीगुसांईजी कहां विराजें हैं? तब श्रीगुसांईजी की बैठक एक वैष्णव ने बताइ दीनी, और वह वैष्णव तुलसीदास के संग बैठक में आयो।

तब तुलसीदास ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी जो- महाराज! इहां नंददास सुने हैं, सो वे कहां हैं? तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो- राजभोग के दर्शन करिके गोविंदकुंड पे जाइ बैठत है, सो-नंददास तहां बैठो होइगो।

तब तुलसीदास गोविंदकुंड पे आए। तब नंददास ने तुलसीदास कों दूरि तें आवत देखिके मुख फेरिके श्रीगोवर्द्धननाथजी की ओर देखन लगे। तब तुलसीदास ने आइके नंददास सों कह्यो, जो- नंददास! तुम एसे कठोर क्यों भए हो? मैं तोकों आछी सिख देत हों, सो-तू मेरो कह्यो करेगो तो बोहोत सुख पावेगो। तातें तू एक बेर तो मेरे संग चलि। तहां गए पाछें तेरो मन प्रसन्न होइ तो तू अयोध्या में रहियो, चाहै तो चित्रकूट में रहियो। नातरु पाछें फिरि इहां आइयो।

सो इतनो तुलसीदास ने कह्यो। परि नंददास तो कछु बोले नाहीं, और नंददास ने तुलसीदास के वचन कौ प्रति-उत्तर पहिले ही विचार राख्यो हतो। सो ताही समैं नंददास ने यह कीर्तन करिके गायोः—

राग सारंग

जो गिरि रुचै तो बसो श्रीगोवर्द्धन,
गांम रुचै तो बसो नंदगाम ॥
नगर रुचै तो बसो मधुपुरी,
सोभा-सागर अति अभिराम ॥
सरिता रुचै तो बसो यमुना तट,
सकल मनोरथ पूरन काम ॥
'नंददास' कानन रुचै तो बसो,
शिखर भूमि श्रीवृंदावन धाम ॥ १ ॥

सो यह कीर्तन तुलसीदास ने नंददास के मुख तें सुन्यो। तब तुलसीदास ने नंददास सों न तो 'राम' कह्यो न 'कृष्ण' कह्यो। सो तत्काल उहां तें उठि चले, और अपने मन में यह विचारी जो-नंददास मेरो समुझैगो नाहीं

तातें अब श्रीगुसाँईजी पास चलिए।

पाछें तुलसीदास ने श्रीगुसांईजी पास आइके दंडोत करी, और हाथ जोरिके विनती करी जो- महाराज! पहिले तो नंददास बडे विषई हते, परि अब तो आपकी कृपा तें बडो भगवदीय भयो है। जो अनन्य भक्ति या कों भई है। सो ताको कारन कहा है?

तब श्रीगुसांईजी ने तुलसीदास कों आग्या करी, जो-यह नंददास तो उत्तम पात्र हतो। सो यह पुष्टिमार्ग में आइके प्रवृत्त भयो है। तातें याकों व्यसन अवस्था व्हे रही है।

तब श्रीगुसाँईजी के वचन सुनिके तुलसीदास बोहोत प्रसन्न भए। पाछें श्रीगुसांईजी तें विदा होइके अपने देश कों गए। और नंददास ने हू फेरि तुलसीदास को नाम हू न लियो। एक श्रीगुसांईजी के चरणारविंद

कौ आश्रय राख्यो। औ उनके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदा प्रसन्न रहते।

(इति वार्ता पंचम)*

---

* भावप्रकाश वाली प्रति में पञ्चम वार्ता का पाठ इस प्रकार है:—

और एक समै तुलसीदासजी ने विचार कियो जो-नन्ददास श्रीगोकुल में है, सो मैं जाइके लिवाइ लाऊं। यह विचारिके तुलसीदास काशीजी तें चले, सो कितेक दिन में श्रीमथुराजी में आइ पोहोंचे।

तब मथुराजी में पूछे जो- इहां नन्ददास ब्राह्मण काशी तें आयो हैं, सो तुम जानत होउ तो बताओ, जो वह कहां होइगो? तब काहू ने कह्यो जो- एक नन्ददास तो आइके श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है, सो तो गोकुल होइगो, या गिरिराज होइगो।

तब तुलसीदास प्रथम तो श्रीगोकुल आए। सो श्रीगोकुल की शोभा देखिके तुलसीदास कौ मन बहुत ही प्रसन्न भयो। पाछें तुलसीदास मन में विचारे जो- ऐसे स्थल छोड़िके नन्ददास कैसे चलेगये?

तब तुलसीदास ने सहाँ पूछ्यो जो--एक नन्ददास भाइया है, सो कहां होइगो ? तब काहू ने कही, जो--एक नन्ददास तो श्रीगुसांईजी को सेवक भयो है, सो श्रीगुसांईजी तो श्रीनाथजीद्वार गए हैं, सो उहां ही होइगो।

तब तुलसीदास फेर मथुरा में आइके श्रीयमुनाजी के दर्शन करे, पाछें सहां तें श्रीगिरिराजजी गए। तो उहां परासोली में तुलसीदास नन्ददास को मिले।

पाछें तुलसीदास ने नन्ददास सों कही जो-- तुम हमारे संग चलो। सो-गाम रुचै तो अयोध्या में रहो, पुरी रुचै तो काशी में रहो, पर्वत रुचै तो चित्रकूट में रहो, वन रुचै तो दंडकारण्य में रहो। ऐसे बड़े-बड़े धाम श्रीरामचन्द्रजी ने पवित्र करे हैं।

तब नन्ददास ने उत्तर देवेको यह पद गायो। सो पदः

'जो गिरि रुचै तो बसो श्रीगोवर्द्धन,
गाम रुचै तो बसो नंदगाम०।

पाछें नन्ददास सूरदास सों मिलिके श्रीनाथजी के दर्शन करवेकों गए। तब तुलसीदास हू उनके पाछें-पाछें गए। जब श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करे तब तुलसीदास ने माथो नमायो नहीं। तब नन्ददास जानि गये, जो- ये श्रीरामचन्द्रजी बिना और दूसरे को नहीं नमें हैं। नन्ददास ने मन में विचार कियो जो- यहां और श्री-

गोकुल में इनकों श्रीरामचन्द्रजी के दर्शन कराउं, तब ये श्रीकृष्ण को प्रभाव जानेंगे। पाछें नन्ददास ने श्रीगोवर्द्धन-नाथजी सों विनती करी। सो दोहा—

कहा कहों छवि आप की, भले बने हो नाथ,
तुलसी-मस्तक तब नमै, धनुष बाण लो हाथ॥

यह बात सुनिके श्रीनाथजी कों श्रीगुसांईजी की कानि तें विचार भयो, जो– श्रीगुसांईजी के सेवक कहे, सो हमकों मान्यो चहिये।

पाछें श्रीगोवर्धननाथजी ने श्रीरामचन्द्रजी को रूप धरिके तुलसीदास कों दर्शन दिये। तब तुलसीदास ने श्रीगोवर्धननाथजी कों साष्टांग दंडवत् करी।

जब तुलसीदास दर्शन करिके बाहर आए, तब नन्ददास श्रीगोकुल चले। तब तुलसीदास हू संग-संग आए। तब आइके नन्ददास ने श्रीगुसांईजी के दर्शन करि साष्टांग दंडवत करी, और तुलसीदास ने दंडवत् करी नाहीं।

पाछें नन्दादास कों तुलसीदास ने कही जो– जैसे दर्शन तुम ने वहां कराए वैसे ही यहां करावो। तब नन्ददास ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी- ये मेरे भाई तुलसीदास हैं, सो श्रीरामचन्द्रजी बिना और कों नहीं नमे हैं।

तब श्रीगुसांईजी ने कही जो- तुलसीदासजी ! बैठो ।

ता समै श्रीगुसांईजी के पांचमे पुत्र श्रीरघुनाथजी वहां ठाढे हुते, और उन दिनन में श्रीरघुनाथजी को विवाह भयो हतो। जब श्रीगुसांईजी ने कही जो–श्रीरामचन्द्रजी ! तुम्हारे सेवक आए है, इनकों दर्शन देवो । तब श्रीरघु-नाथलालजी ने तथा श्रीजानकी बहूजी ने श्रीरामचन्द्रजी को तथा श्रीजानकीजी को स्वरूप धरिके दर्शन दिए । तब तुलसीदास ने साष्टांग दंडवत करी ।

पाछें तुलसीदासजी दर्शन करिके बोहोत प्रसन्न भए । और यह पद गायो । सो पद :—

वरनों अवध श्रीगोकुल गाम। वहाँ सरजू यहां यमुना वक्रहीं ना

ता पाछें तुलसीदास ने श्रीगुसांईजी सों दंडवत करिके कह्यो– जो महाराज ! नंददास तो पहिले बड़ो विषयी हतो, सो अब तो याकों बड़ी अनन्य भक्ति भई है, ताको कारण कहा है ?

तब श्रीगुसांईजी ने तुलसीदास सों कह्यो जो– नंददास उत्तम पात्र हुते, तातें पुष्टिमार्ग में आइके प्रवृत्त भए । और अब व्यसन अवस्था याकों सिद्ध भई है, सो अब वे द्रढ भए है । तब श्रीगुसांईजी के श्रीमुख के वचन सुनिके तुलसीदास प्रसन्न होइ श्रीगुसांईजी कों दंडवत् करिके पाछें आप बिदा होइ काशी आए ।

वीरवल श्रीमथुराजी आए। तब वीरबल तो श्रीगोकुल कों गए श्रीगुसांईजी के दर्शन कों, सो ता दिन श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीद्वार पधारे हते, और श्रीगिरिधरजी घर हते। सो वीरबल श्रीगिरिधरजी के दर्शन करिके पाछें देसाधिपति S के पास आए।

तब देसाधिपति ने बीरबल सों पूछी जो–तू कहाँ गयो हतो ? तब बीरबल ने देसाधिपति सों कही, जो–श्रीगुसांईजीX के

सो वे नंददासजी श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते। जिनके कहेतें श्रीगोवर्द्धननाथजी कों तथा श्रीरघुनाथलालजी कों श्रीरामचन्द्रजी कौ स्वरूप धरिके दर्शन देने पड़े।

पाठ भेद :—S पातसाह X दीक्षितजी।

दर्शन कों (श्रीगोकुल) गयो हतो। सो वे तो श्रीनाथजीद्वार पधारे हैं, और उनके बडे पुत्र श्रीगिरिधरजी हे, तिनके दर्शन करि आयो हूँ।

तब देसाधिपति ने कह्यो जो—दिन दो में आपुन हू श्रीगोवर्द्धन चलेंगे। तब तू जाइके श्रीगुसांईजी के दर्शन करि आइयो।

ता पाछें दिन दोइ में देसाधिपति गोवर्द्धन आयो। सो मानसी-गंगा पे डेरा किए, और बीरबल तो श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों (गोपालपुर) गए। सों जाइके श्रीगोवर्द्धननाथजी तथा श्रीगुसांईजी के दर्शन किए, पाछें बीरबल डेरा में आयो।

सो दर्शन में बीरबल कों नंददास ने देख्यो, और सुन्यो जो—देसाधिपति ने डेरा मानसी-गंगा पे किए हैं।

सो देसाधिपति की एक लोंडी हती, सो वह लोंड़ी श्रीगुसाँईजी की सेवक हती। सो वाके ऊपर श्रीगोवर्द्धननाथजी सदैव प्रसन्न रहते। (वा कों दर्शन देते) सो वा लोंडी को और नंददास को आपुस बडी प्रीति हती। सो वासों मिलिवे के लिए नंददास मानसी-गंगा के ऊपर आए।

सो तहां (लोंडी कों) ढूंढन लागे, सो वहां तो वह लोंडी पाई नाहीं। सो वह लोंडी (बिलछू पे) एकांत ठोर देखिके एक वृक्षके नीचे रसोई करत हती। सो नंददास तहां आए, सो रसोई एक कदंब के नीचे करत हती। तब रसोई करिके श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो। सो वा समें श्रीगोवर्द्धननाथजी (आपु) पधारे, सो नंददास श्रीगोवर्द्धननाथ-जी के दर्शन करिके बोहोत प्रसन्न भए, और नंददास ने अपने मन में कह्यो जो—या

बाई कौ बडो भाग्य है जो- याकों श्रीगोवर्द्धन-नाथजी दर्शन देत हैं।

ता पाछे नंददास आनंद में मग्न होइके एक वृक्ष के पास ठाढे होइके एक पद गायो। सो पदः—

॥ राग टोडी ॥

चित्र सराहति चितवति मुरि-मुरि,
गोपी बोहोत सयानी ॥
घूंघट में झुकि वदन निहारति पलक न मारति,
जानि गई नंदरानी ॥ १ ॥
परि गई एक परिहास लीकतन,
कंचन थार जब आनी ॥
'नंददास' भोजन घर में उर पर कर ध
वह उत तें मुसिकानी ॥ २ ॥

यह कीर्त्तन नंददास ने (तहां) गायो। सो वा लोंडी ने सुन्यो, तब जान्यो जो-इहां कहूं नंददास आए हैं। तब वा लोंडी ने चहूँ ओर देख्यो, [१] तब नंददास देखे।

पाठभेदः—तब देखे तो एक वृक्षकी ओट में नन्ददास ठाढे हैं।

तब लोंडी ने नंददास सों कह्यो जो– तुम एसे छिपिके क्यों बैठे हो ? मेरे पास क्यो नाहीं आप आवत ? तब नंददास ने कह्यो जो– तिहारे इहां राजभोग कौ समौ हतो, सो श्रीगोवर्द्धननाथजी आरोगिवे कों पधारे हते। तातें मैं इहां ठाढो व्है रह्यो हतो।

पाछें वा बाई ने भोग सरायो। तब लोंडी ने नंददास सों कह्यो जो– मैं कहि नाहीं सकत हों जो–तुम इहां महाप्रसाद लेउ, तातें मेरे ऊपर कृपा करिके दूध की सामग्री है, सो जो कछु तुम्हारे मन में प्रसन्न आवै सो लेउ। सो काहे तें जो– तुम ब्राह्मण हो। तब नंददास ने कह्यो जो– एसो संदेह क्यों करावत हो ? इहां तो साक्षात् श्रीगोवर्द्धननाथजी आपु आरोगत हैं। तातें यह महाप्रसाद हम कों सर्वथा लेनो है। पाछें

नंददास ने वा बाई के आग्रह तें रंचक-रंचक सब लियो। तब वह बाई और नंददास बोहोत प्रसन्न भए। ता दिन तें नंददास वा बाई कौ बडो भाग्य करिके मानते।

ता पाछें वा बाई ने नंददास सों कह्यो, जो—अब इहां तो मानसी-गंगा हैं। सो यह गिरिराज पर्वत हैं, सो तो उत्तम तें उत्तम स्थल है। सो महाप्रभुजी की कृपा तें आपुन कों प्राप्त भयो है। तातें यह अस्थल छोडिके कहूं न जाइ सो सदा ही तुमारो संग होइ तो आछो। तब नंददास ने वा सों कह्यो जो- एसे ही होइगो। (ता पाछें लोंडी ने कह्यो जो-) और अब इन आखिन सों लौकिक देखनो उचित नाहीं हैं।

ता पाछें रात्रि कों तो नंददास उहांई रहे S

पाठभेद —S पाछें नन्ददास रात्रि को अपने स्थान मानसी गंगा पे जाइ रहे और प्रातःकाल० ।

सो दोऊ जने भगवद्‌-वार्ता करत रात्रि व्यतीत करी ।

सो जब प्रातःकाल भयो तब नंददास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों आए, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दर्शन कियो । पाछें रात्रि कों देसाधिपति के पास तानसेन ने (देसाधिपति के आगे) नंददास कौ कीर्तन गायो । सो पदः—

॥ राग केदारो ॥

देखो देखो नागर नट नृत्तत कालिंदी-तट ॥
गोपिन के मध्य राजै मुकुट की लटक ॥
काछिनी किंकिनी कटि पीतांबर की चटक ॥
कुंडल किरन मानों रवि-रथ की अटत ॥
तार्थेई तार्थेई सब्द कल उघटत ॥
उरप तिरप मान पाद की पटक (?) ॥
रास में राधे ! राधे ! मुरली में याही रट ॥
'नंददास' गावें तहां निपट निकट ॥

नंददास ने वा बाई के आग्रह तें रंचक-रंचक सब लियो। तब वह बाई और नंददास बोहोत प्रसन्न भए। ता दिन तें नंददास वा बाई कौ बडो भाग्य करिके मानते।

ता पाछें वा बाई ने नंददास सों कह्यो, जो—अब इहां तो मानसी-गंगा हैं। सो यह गिरिराज पर्वत हैं, सो तो उत्तम तें उत्तम स्थल है। सो महाप्रभुजी की कृपा तें आपुन कों प्राप्त भयो है। तातें यह अस्थल छोडिके कहूं न जाइ सो सदा ही तुमारो संग होइ तो आछो। तब नंददास ने वा सों कह्यो जो- एसे ही होइगो। (ता पाछें लोंडी ने कह्यो जो-) और अब इन आखिन सों लौकिक देखनो उचित नाहीं हैं।

ता पाछें रात्रि कों तो नंददास उहांई रहे S

पाठभेद —S पाछे नन्ददास रात्रि को अपने स्थान मानसी गंगा पे जाइ रहे और प्रातःकाल० ।

सो दोऊ जने भगवद्‌-वार्ता करत रात्रि व्यतीत करी।

सो जब प्रातःकाल भयो तब नंददास श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन कों आए, तब श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ दर्शन कियो। पाछें रात्रि कों देसाधिपति के पास तानसेन ने (देसाधिपति के आगे) नंददास कौ कीर्तन गायो। सो पद:—

॥ राग केदारो ॥

देखो देखो नागर नट नृत्तत कालिंदी-तट ॥
गोपिन के मध्य राजै मुकुट की लटक ॥
काछिनी किंकिनी कटि पीतांबर की चटक ॥
कुंडल किरन मानों रवि-रथ की अटत ॥
ताथेई ताथेई सब्द कल उघटत ॥
उरप तिरप मान पाद की पटक (?) ॥
रास में राधे ! राधे ! मुरली में याही रट ॥
'नंददास' गावें तहां निपट निकट ॥

सो यह पद नंददास कौ कियो तानसेन ने देसाधिपति के आगें गायो। तब देसाधिपति ने कह्यो, जो– यह पद जिनकौ कियो है, सो वे कहा हैं? तब बीरवल ने कह्यो जो- श्रीनाथजीद्वार में हैं, सो वे बड़े भगवदीय हैं। तब देसाधिपति ने कह्यो जो– उन कों याही घड़ी इहां बुलावो। तब बीरवल ने कह्यो जो–या बिरियां तो वह कोई आवेगो नाहीं, और मैं कालि जाइके अपने संग लाऊंगो।

सो प्रातःकाल बीरवल ने (गोपालपुर) आइके श्रीगुसांईजी के दर्शन किए, और श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किए।

पाछें नंददास सों कह्यो जो- देसाधिपति ने तुम कों याद कियो है, तुम कों बुलायो है। तब नंददास ने कह्यो जो– मेरो देसाधिपति सों कहा काम हैं? मोकों कछु द्रव्य की वांछा

नाहीं, और मेरे पास कछु द्रव्य नाहीं, सो खोंसि लेइगो। तातें मेरो कहा काम हैं? तब बीरबल ने कह्यो जो—तू नाहीं चलेगो तो वह तेरे पास आवेगो। तब नंददास ने कह्यो जो—उनकों मति बुलावो, इहां भीडकौ काम नाहीं। तातें मैं सैन आरती उपरांत मानसी-गंगा पे आऊंगो, सो तहांतें मोकों बुलाइ लीजो।

तब बीरबल तो अपने डेरा आए। पाछें नंददास सैन आरती करिके श्रीगुसांईजी कों दंडवत करिके मानसी-गंगा पे आए। तब देसाधिपति और बीरबल दोऊ बैठे हते, तब (नंददास कों देखिके पातसाह ने) बोहोत आदर करिके बैठाए।

पाछें देसाधिपति ने (नंददास सों) कह्यो जो—तुम ने रास कौ पद कियो है। तामें तुम ने कह्यो है, जो—'नंददास गावें तहां

निपट निकट', सो इतनो भूठ क्यों कहत हो ? तुम कौन भांति निकट भए हो। तब नंददास ने (पातसाह सों) कह्यो जो—मेरे कहे कौ तुम कों विस्वास नाहीं होइगो । तातें तुम्हारे घर में फलानी लोंड़ी है, सो तुम वासों पूंछि लेउ । सो वह सब जानत हैं ।

तब (अकबर पातसाह ने) नंददास कों तो बीरबल के पास राख्यो और आपु डेरा में गयो । सो जाइके वा लोंड़ी सों-पूछ्यो, जो-यह रास कौ पद नंददास ने गायो है, सो तानसेन ने मेरे आगे गायो है । ता पद कौ अभिप्राय कहा है ?

तब यह बचन (पातसाह के) सुनत ही (वह) लोंड़ी तो पछार खाइके गिरी, सो वा लोंड़ी के प्रान निकसि गए । सो जाइके लीला में प्राप्त भई । तब देसाधिपति नंददास

के पास दोर्‌यो आयो । सो इहां आइके देखे तो नंददास की हू देह छूटी है। सो नंददास हू लीला में जाइके प्राप्त भए।

तब देसाधिपति ने बीरबल सों पूंछी जो- इन दोऊन के प्रान क्यों छूटि गए ? तब बीरबल ने (पातसाह सों) कह्यो जो-(साहिब !) इनने अपनो धर्म गोप्य राख्यो, जो- इह बात आपने पूंछी सो-उह बात तो कही न जाइ, जब तांई न दिखाई जाइ । तातें इनने अपने मन में राखी । (तासों या बात को तो यहां उपाय है) तब बीरबल और देसाधिपति अपने डेरा गए, और कह्यो जो- देखो इनको धर्म कौन भांति को हतो ?

तब ए सब समाचार वैष्णवन ने श्री-गुसांईजी के आगें कहें । तब श्रीगुसांईजी आपु श्रीमुख तें नंददास की बोहोत सराहना करे, और कह्यो जो-वैष्णव को धर्म एसो ही

है। जो–एसे गोप्य राखनो, औरके आगें कहनो नांही।

सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे। और वह लोंडी हू एसी भगवदीय ही। तातें इन नंददास की वार्त्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिये।

इति वार्ता षष्ठ

(७) छीतस्वामी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण चौबे, मथुरा में रहते, (अष्टछाप में जिन के पद गाइयत हैं।) तिन की वार्ता※—

※ भावप्रकाश— ये छीतस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी
आधिदैविक के 'सुवल'-सखा, तिन कौ प्राकट्य
मूल स्वरूप हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'सुवल' सखा हैं, और रात्रि की लीला में 'पद्मा' हैं। सो पद्मा की श्रीचन्द्रावलीजी ऊपर बोहोत ही आसक्ति है, सो इहां हू छीतस्वामी कौ श्रीगुसांईजी पे बोहोत भर-भाव है।

सो (वे) छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण हते, तिन सों सब कोऊ 'छीतूचौबे' कहते। सो मथुरा में मथुरिया चौबे नामजादी हैं, तिन में ए पाँच चौबे तो महाई कुटिल हे। तिन में छीतूचोबे सिरदार हते, सो बडे गुंडा हते। सो विश्रांति-घाट ऊपर बैठे रहते, लुगा इन कों देखते, उन सों मसखरी करते।

❀ सो एक दिन उन पाचों जनेन ने मिलिके विचार कियो जो- (भाई !) गोकुल के गुसांई टोना-टमना बोहोत करत हैं, जो- जातें उनके वस होत हैं। तातें चलो, देखें कैसे टोना करत हैं ? तव पांचो जने मिलिके, एक तो खोटो रुपैया लीनो, और एक थोथो नारियल लियो

है। जो–एसे गोप्य राखनो, औरके आगें कहनो नांही।

सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे। और वह लोंडी हू एसी भगवदीय ही। तातें इन नंददास की वार्त्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिये।

इति वार्ता षष्ठ

(७) छीतस्वामी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण चौबे, मथुरा में रहते, (अष्टछाप में जिन के पद गाइयत हैं।) तिन की वार्ता*—

* भावप्रकाश— आधिदैविक मूल स्वरूप — ये छीतस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'सुबल' सखा, तिन कौ प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'सुबल' सखा हैं, और रात्रि की लीला में 'पद्मा' हैं। सो पद्मा की श्रीचन्द्रावलीजी ऊपर बोहोत ही आसक्ति है, सो इहां हू छीतस्वामी कौ श्रीगुसांईजी पे बोहोत भर-भाव है।

सो (वे) छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण हते, तिन सों सब कोऊ 'छीतूचौबे' कहते। सो मथुरा में मथुरिया चौबे नामजादी हैं, तिन में ए पाँच चौबे तो महाई कुटिल हे। तिन में छीतूचोबे सिरदार हते, सो बडे गुंडा हते। सो विश्रांति-घाट ऊपर बैठे रहते, लुगा इन कों देखते, उन सों मसखरी करते।

❀ सो एक दिन उन पाचों जनेन ने मिलिके विचार कियो जो– (भाई !) गोकुल के गुसांई टोना–टमना वोहोत करत हैं, जो– जातें उनके वस होत हैं। तातें चलो, देखें कैसे टोना करत हैं ? तब पांचो जने मिलिके. एक तो खोटो रुपैया लीनो, और एक थोथो नारियल लियो

है। जो—एसे गोप्य राखनो, औरके आगें कहनो नांही।

सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे। और वह लोंडी हू एसी भगवदीय ही। तातें इन नंददास की वार्त्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिये।

इति वार्ता षष्ठ

(७) छीतस्वामी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण चौबे, मथुरा में रहते, (अष्टछाप में जिन के पद गाइयत हैं।) तिन की वार्ता❀—

❀ भावप्रकाश— आधिदैविक मूल स्वरूप — ये छीतस्वामी लीला में श्रीठाकुरज के 'सुवल' सखा, तिन कौ प्राकट हैं। सो दिवस की लीला में तो 'सुवल' सखा हैं, और रात्रि की लीला में 'पद्मा' हैं। स पद्मा की श्रीचन्द्रावलीजी ऊपर बोहोत ही आसक्ति है, सा इहां हू छीतस्वामी कौ श्रीगुसांईजी पे बोहोत भर-भाव है।

सो (वे) छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण हते, तिन सों सब कोऊ 'छीतूचौबे' कहते। सो मथुरा में मथुरिया चौबे नामजादी हैं, तिन में ए पाँच चौबे तो महाई कुटिल हे। तिन में छीतूचोबे सिरदार हते, सो बडे गुंडा हते। सो विश्रांति-घाट ऊपर बैठे रहते, लुगा इन कों देखते, उन सों मसखरी करते।

❀ सो एक दिन उन पाचों जनेन ने मिलिके विचार कियो जो– (भाई !) गोकुल के गुसांई टोना–टमना बोहोत करत हैं, जो– जातें उनके वस होत हैं। तातें चलो, देखें कैसे टोना करत हैं ? तब पांचो जने मिलिके एक तो खोटो रुपैया लीनो, और एक थोथो नारियल लियो

है। जो—एसे गोप्य राखनो, औरके आगें कहनो नांही।

सो वे नंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे। और वह लोंडी हू एसी भगवदीय ही। तातें इन नंददास की वार्त्ता कौ पार नाहीं। सो कहां ताईं लिखिये।

इति वार्ता षष्ठ

(७) छीतस्वामी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण चौबे, मथुरा में रहते, (अष्टछाप में जिन के पद गाइयत हैं।) तिन की वार्ता*—

* भावप्रकाश— आधिदैविक मूल स्वरूप — ये छीतस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'सुबल' सखा, तिन कौ प्राकट्य हैं। सो दिवस की लीला में तो ये 'सुबल' सखा हैं, और रात्रि की लीला में 'पद्मा' हैं। सो पद्मा की श्रीचन्द्रावलीजी ऊपर वोहोत ही आसक्ति है, सो इहां हू छीतस्वामी कौ श्रीगुसांईजी पे वोहोत भर-भाव है।

सो (वे) छीतस्वामी मथुरिया ब्राह्मण हते, तिन सों सब कोऊ 'छीतूचौबे' कहते। सो मथुरा में मथुरिया चौबे नामजादी हैं, तिन में ए पाँच चौबे तो महाई कुटिल हे। तिन में छीतूचोबे सिरदार हते, सो बडे गुंडा हते। सो विश्रांति-घाट ऊपर बैठे रहते, लुगा इन कों देखते, उन सों मसखरी करते।

❀ सो एक दिन उन पाचों जनेन ने मिलिके विचार कियो जो– (भाई !) गोकुल के गुसांई टोना–टमना बोहोत करत हैं, जो– जातें उनके बस होत हैं। तातें चलो, देखें कैसे टोना करत हैं ? तब पांचो जने मिलिके एक तो खोटो रुपैया लीनो, और एक थोथो नारियल लियो

तामें राख भरी ❀ और पाचों जने एक नाव में बैठिके श्रीगोकुल आए । तब छीतस्वामी ने कह्यो जो- तुम बाहिर ठाढे रहो, हों भीतर जाइके उनकों टोना-टमना देखत हों, पाछैं तुम (भीतर) आइयो । सो छीतस्वामी खोटो नारियल लेके खोटो रुपैया लेके भीतर गयो, और ए चारों जने बाहिर ठाढे रहे ।

❀ ... ❀ भावप्रकाश वाली प्रति का पाठ भेदः—

और यह विचार कियो जो- भाई ! गोकुल जाइके श्रीगुसांईजी सों आपुन कुटिल विद्या करिये । तब उन चारोंन सों छीतू ने कही जो- सगरेन के पहिले मैं जाइके अपनी कुटिल विद्या करि आऊं, ता पाछें तुम जइयो । तब विन चौबेन ने कही जो- आछी बात है । तब छीतू ने कुटिल विद्या कौ ठाठ ठठ्यो । सो वा थोथे नारियल कों गांठि में बांधिके और वह खोटो रुपैया लेके पांचो जने मथुरा तें चले ।

सो ता समैं श्रीगुसाँईजी पोंढिके उठे हते। (सो गादी ऊपर बिराजे हते) हाथ में पुस्तक हती, सो देखत हते। ता समैं छीतस्वामी तहाँ गए। सों देखे तो श्रीगुसाँईजी श्रीगिरिधरजी दोइ बैठे हैं। तव (तो ये) मन में पश्चात्ताप करन लागे, जो– मैंने कौन काम कियो जो- इन तें मसखरी करन आयो? (सो) ए तो साक्षात् पूर्ण पुरुषोत्तम ईश्वर हैं। मोकों धिक्कार हैं, में ईश्वर सों कुटिलता करन आयो।

या भांति चित्त में श्रीगुसाँईजी कौ दर्शन करिके सोच करन लागे। (पाछें छीतस्वामी वह नारियल लाए हते सो दुबकाइके श्रीगुसाँईजी सों दंडवत करी।) तव इतने में (छीतस्वामी सों) श्रीगुसाँईजी बोले, जो-- छीतस्वामी! (तुम नीके हो?) आगे आउ। बोहोत दिनन में देखे। तव छीत-

स्वामी हाथ जोरिके साष्टांग दंडवत कीनी। और कह्यो जो- महाराज ! मोकों सरनि लीजिए, मेरो अंगीकार करिए। तब श्रीगुसाँई-जी ने (छीतस्वामी सों) कह्यो जो– तुमतो हमारे पूजनीक हो, तुम कों तो सब आप ही तें सिद्धि है। तुम हम कों दंडवत काहे कों करत हो ? (और एसे कहा कहत हो ?)

तब छीतस्वामी ने फेरि हाथ जोरिके विनती करिके कह्यो जो–महाराज ! मेरो अपराध क्षमा करो, और मोकों सरनि लीजिए।

(हम नाहीं जानत जो– कौन अपराध तें स्वामी भए हैं ? हमारे अब भाग्य खुले हैं- जो– आपके दर्शन पाए। अब एसी कृपा करो जो– स्वामित्व छूटै। जो– आपके दास कहाइवे की इच्छा है, और मन की कुटिलता तो बोहोत हुती, परि आपके दर्शन करत ही सब कुटिलता दूरि भाजि गई। तातें

अब हौं आप के हाथ बिकानो हौं, तातें अब तो आप जो- चाहो सोई करो । आप तो दाता हो, प्रभु हो, दीनानाथ हो, दयासिन्धु हो । या जीव की ओर प्रभुन कौ कहा देखनो? तातें महाराज ! अब मोकों आप कौ ही करि जानिए, आपुनो सेवक करिए ।)

तब (छीतस्वामी कौ शुद्धभाव जानिके) श्रीगुसांईजी तो परम दयालु (हैं सो आपु) कृपा करिके छीतस्वामी सों कह्यो जो- (छीत- स्वामी !) आगे आउ । सो (वे दंडवत करि) आगे आइ बैठे । तब ताही समैं (श्रीगुसांईजी ने) छीतस्वामीकों नाम सुनायो ।

(ता समैं छीतस्वामी ने यह पद गायो)

(भई अब गिरिधर सों पहिचान ।

कपट रूप धरि छलिवे आयो, पुरुषोत्तम नहिं जान ॥

छोटो बडो कछु नहिं जान्यो, छाइ रह्यो अज्ञान ।

छीतस्वामी, देखत अपनायो श्रीविट्ठल कृपानिधान ॥)

स्वामी हाथ जोरिके साष्टांग दंडवत कीनी। और कह्यो जो- महाराज ! मोकों सरनि लीजिए, मेरो अंगीकार करिए। तब श्रीगुसाँई-जी ने (छीतस्वामी सों) कह्यो जो– तुमतो हमारे पूजनीक हो, तुम कों तो सब आप ही तें सिद्धि है। तुम हम कों दंडवत काहे कों करत हो ? (और एसे कहा कहत हो ?)

तब छीतस्वामी ने फेरि हाथ जोरिके विनती करिके कह्यो जो–महाराज! मेरो अपराध क्षमा करो, और मोकों सरनि लीजिए।

(हम नाहीं जानत जो– कौन अपराध तें स्वामी भए हैं ? हमारे अब भाग्य खुले हैं- जो– आपके दर्शन पाए। अब एसी कृपा करो जो– स्वामित्व छूटै। जो– आपके दास कहाइवे की इच्छा है, और मन की कुटिलता तो बोहोत हुती, परि आपके दर्शन करत ही सब कुटिलता दूरि भाजि गई। तातें

अब हौं आप के हाथ बिकानो हौं, तातैं अब तो आप जो- चाहो सोई करो । आप तो दाता हो, प्रभु हो, दीनानाथ हो, दयासिन्धु हो। या जीव की ओर प्रभुन कौ कहा देखनो? तातैं महाराज ! अब मोकों आप को ही करि जानिए, आपुनो सेवक करिए ।)

तव (छीतस्वामी कौ शुद्धभाव जानिके) श्रीगुसांईजी तो परम दयालु (हैं सो आपु) कृपा करिके छीतस्वामी सों कह्यो जो- (छीत- स्वामी !) आगे आउ । सो (वे दंडवत करि) आगे आइ बैठे। तब ताही समैं (श्रीगुसांईजी ने) छीतस्वामीकों नाम सुनायो ।

(ता समैं छीतस्वामी ने यह पद गायो)

(भई अब गिरिधर सों पहिचान ।

कपट रूप धरि छलिवे आयो, पुरुषोत्तम नहिं जान ॥

छोटो बडो कछू नहिं जान्यो, छाइ रह्यो अज्ञान ।

छीतस्वामी, देखत अपनायो श्रीविट्ठल कृपानिधान ॥)

स्वामी हाथ जोरिके साष्टांग दंडवत कीनी। और कह्यो जो- महाराज ! मोकों सरनि लीजिए, मेरो अंगीकार करिए। तब श्रीगुसाँई-जी ने (छीतस्वामी सों) कह्यो जो– तुमतो हमारे पूजनीक हो, तुम कों तो सब आप ही तें सिद्धि है। तुम हम कों दंडवत काहे कों करत हो ? (और एसे कहा कहत हो ?)

तब छीतस्वामी ने फेरि हाथ जोरिके विनती करिके कह्यो जो–महाराज ! मेरो अपराध छमा करो, और मोकों सरनि लीजिए।

(हम नाहीं जानत जो– कौन अपराध तें स्वामी भए हैं ? हमारे अब भाग्य खुले हैं- जो– आपके दर्शन पाए। अब एसी कृपा करो जो– स्वामित्व छूटै। जो– आपके दास कहाइवे की इच्छा है, और मन की कुटिलता तो बोहोत हुती, परि आपके दर्शन करत ही सब कुटिलता दूरि भाजि गई। तातें

डरपिके खोटो नारियल और खोटो रुपैया लाए हते, सो श्रीगुसांईजी के आगें भेट धरी। सो श्रीगुसांईजी तो ईश्वर, इनके मन की सब जानी। तब नारियल तो भंडार में दै पठायो, जो भोग कौ समौ हतो, सो वा नारियल कों फोरिके श्रीनवनीतप्रियजी कों भोग समर्प्यो। सो नारियल छीतस्वामी के आगें फोर्‍यो, सो वामें तें काची गिरी दूध-की-सी भरी निकसी, सो भोग में श्रीनवनीत-प्रियजी कों समर्पे। भोग सर्‍यो ता पाछें प्रसादी गिरी मंगाइके सबन कों बटाई। छीत-स्वामी हू कों दीनी, और वा रुपैया की पैसा मगवाइ लिए, सो रुपैया हू खरो निकर्‍यो।

सो यह प्रताप देखिके छीतस्वामी हू कों वडो आश्चर्य भयो। X

X ..X इस स्थान पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ है:—

और फेरि आपु कहे श्रीमुख तें जो– छीतस्वामी! भेट कौ नारियल लाए हो, सो तुम काहेकों दुबकाए हो?

तब तो छीतस्वामी कौ मुख सुखाइ गयो, और यह बिचारयो जो– यह तो प्रभु हैं। मैं नारियल लायो, सो जानि गए तो नारियल की क्रिया क्यों न जाने होंइगे!

तब श्रीगुसांईजी सों छीतस्वामी ने बिनती करी जो- महाराज! आप तो सब मेरो कृत्य जानत हो? सो वह बात तो मेरी अब छानी राखो। तब श्रीगुसांईजी ने कही जो– छीतस्वामी! तुमारो जस तो जगत में विख्यात है। तुम कछू अपने मन में संदेह मति करो, तूम तो अब हमारे हो, तातें डरपत क्यों हो? वह नारियल ले आयो।

तब छीतस्वामी तो सोच करत रहे, और श्री-गुसांईजी ने हरिदास खवास सों आज्ञा करी जो- हरिदास! इनकी गांठि में सों वह नारियल है, सो खोलि लाउ। सो श्रीगुसांइजी की आज्ञा मानिके हरिदास ने वह नारि-यल और खोटो रुपैया छीतस्वामी की गांठि में ते लेके श्रीगुसांईजी आगें धरयो।

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने हरिदास खवास सों कह्यो जो- आधो नारियल तो इन छीतस्वामी कों देउ। तब हरिदास खवास ने वा नारीयल की गरी की दोइ फाड़

करी, सो एक फाड़ तो छीतस्वामी कों दीनी, और एक फाड़ में ते रंचक २ सबन कों बांट दीनी।

इतने में श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी कों आज्ञा दीनी जो–छीतस्वामी! तुम्हारे साथके जो चारों जने हैं तिनकों यामें तें थोरी २ बांटि दीजो। तब छीतस्वामी ने दंडवत करिके वह गठरी में बांधि राखी।

सो एसी कृपा श्रीगुसांईजी की देखिके छीतस्वामी ने मन में विचारी जो–मैं तो यह संसार-रूपी समुद्र में बह्यो जात हतो, सो मोकों बांह पकरिके काढ्यो। और मेरे मन में खोटे नारीयल खोटो रुपैया (कौ पश्चात्ताप) हतो सो हू ताप मेरो दूरि कियो। तोहू इनके चरन कमल कौ आश्रय कियो। सो मो पर श्रीगुसांईजी कृपा करी।

तब छीतस्वामी प्रसन्न होइके एक नयो पद करिके गौरी राग में गायो। सो पद:—

॥ राग गौरी ॥

हौं चरणातपत्र की छहियां ।
कृपासिंधु श्रीवल्लभ-नंदन,
बह्यो जात राख्यो गहि बहियां ॥ १ ॥
नव नख चन्द्र सरद राका ससि, *
त्रिविधि ताप मेटत छिन महियां ।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल,
सुजस वखान सकति श्रुति नहियां ॥ २ ॥

यह कीर्त्तन (वाही समै श्रीगुसांईजी के आगें छीतस्वामी ने गायो सो) सुनिके श्री-गुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए । (तब छीत-स्वामी ने दंडवत करिके कही जो– महाराज ! आपु तो प्रभु हो, आप कौ श्रुति जो–वेद है सोउ पार पावत नाहीं, तो और की कहा सामर्थ है, जो- आप कौ जस गान करै ? ता पाछें सन्ध्या आरति कौ समय भयो) तब श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी सों कह्यो जो- उठो

* 'ससि हरत ताप सुमिरत मन महिया' ऐसा भी पाठ है

दर्शन करो। तब छीतस्वामी मंदिर में तिवारी में तें श्रीनवनीतप्रियजी के दर्शन करे, तब देखे तो मंदिर में श्रीगुसांईजी ठाढे हैं। तब छीतस्वामी ने मन में कह्यो, जो- श्रीगुसांईजी कों तो हौं बैठक में छोडि आयो हूं। सो मंदिर में कहां तें आए ? तब जानी, जो- भीतर सों राह होइगी, ता राह पधारे होंइगे।

पाछें आरती के दर्शन करिके छीतस्वामी बाहिर आए। तब देखे तो श्रीगुसांईजी तो गादी-तकिया ऊपर विराजे हैं। सो देखिके बोहोत आश्चर्य पावत भए। परि कछू ठीक न परी, जानी जो- भीतर सों मारग होइगो, तातें ता मारग होइ आए होंइगे। ता पाछें सैन आरती भई। पाछें श्रीगुसांईजी ने उहांई महाप्रसाद लिवायो।

पाछें श्रीगुसांईजी छीतस्वामी कों आग्या किए, जो–सवारे श्रीगोवर्द्धन जाइ श्रीनाथजी

के दर्शन करिके इहां आइयो । तब छीत-स्वामी (रात में तो सोइ रहे) बडे सवारे आइ सातों स्वरूपन के मंगला के दर्शन करिके आए । श्रीगुसांईजी कौ दर्शन करिके दंडवत करिके आग्या लेके श्रीनाथजी के दर्शन कों चले ।

सो श्रीगोकुल तें श्रीयमुनाजी सूधे ही उतरिके चले, सो राजभोग के समें जाइ पोहोंचे, सो (श्रीगोवर्द्धननाथजी के) राजभोग आरती के जाइके दर्शन किए । तब देखे तो श्रीनाथजी के पास श्रीगुसांईजी ठाढे हैं । (सो श्रीगोवर्द्धननाथजी के पास ही देखे) तब (छीतस्वामी मन में) विचारे जो– श्री-गुसांईजी कों तो श्रीगोकुल छोडि आयो हों ।

ता पाछें (छीतस्वामी श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन करि नीचे उतरे तब) श्रीगुसांईजी की उहां काहू सों पूंछी जो- इहां श्रीगुसांईजी

पधारे हैं ? तब सेवकन ने कह्यो जो–(श्री-गुसांईजी गोकुल में है) इहां (तो) नाहीं पधारे हैं। तब मन में बड़ो आश्चर्य भयो जो मैंने तो श्रीगुसांईजी कों श्रीनाथजी के पास ठाढे देखे (और कालि हू श्रीनवनीतप्रियजी के पास ही ठाढे देखे हैं, और बैठक हू में विराजे देखे) तातें ए साक्षात् ईश्वर हैं, सब जगै दर्शन देत हैं।

सो यह बिचारिके छीतस्वामी श्रीगोकुल की सुरति बांधिके चले, सो उत्थापन भोग के समै श्रीगोकुल आइ पोहोंचे। श्रीगुसांईजी (अपनी वैठक में) गादी तकियान के ऊपर बिराजे हते, सो छीतस्वामी आइके दर्शन किए। तब श्रीगुसांईजी पूंछे जो–छीतस्वामी ! श्रीनाथजी के दर्शन करि आए ? तब छीतस्वामी ने कह्यो, जो- महाराज ! श्रीनाथ-जी के दर्शन तो किए, परि श्रीनाथजी के

पास आप हू ठाढे ही देखे। तब ए सुनिके श्रीगुसांईजी मुसिकाने।

तब छीतस्वामी यह निश्चय जानी जो–श्रीनाथजी और श्रीगुसांईजी कौ एक स्वरूप है। यह जानिके एक नयो पद करिके गायो। सो पदः—

॥ राग सारंग ॥

जे वसुदेव किए पूरन तप,
तेई फल फलित श्रीवल्लभ-देह।
जे गोपाल हते गोकुल में,
तेई अब आइ बसे करि गेह ॥ १ ॥
जे वे गोप वधू ही व्रज में,
तेई अब वेद-रुचा भई एह।
'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल,
एई-तेई तेई एई कछु न संदेह ॥ २ ॥

यह कीर्तन सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। तब श्रीगुसांईजी छीतस्वामी कों सैन आरती ऊपरांत बाहू दिन अपने इहां प्रसाद लिवायो।

पाछें (छीतस्वामी) तीसरे दिन सवारे उठिके देह-कृत्य करिके श्रीयमुनाजी में स्नान करिके अपरस ही में आइके श्रीगुसांईजी के आगें हाथ जोरिके ठाढे भए, और बिनती करिके कह्यो जो- महाराज ! कृपा करिके मोकों ब्रह्म-संबंध करवाइए । तब श्रीगुसांईजी भीतर पधारिके श्रीनवनीतप्रियजी के संनिधान बैठाइके आपने छीतस्वामी कों ब्रह्म-संबंध करवायो ।

पाछें छीतस्वामी ने बिनती करी जो- महाराज ! आग्या होइ तो अपने घर जाऊं ? तब श्रीगुसांईजी आग्या किए जो- राजभोग आरती के दर्शन किए उपरांत (तुम कों विदा करेंगे, ता पाछें राजभोग आरती भई पाछें) श्रीगुसांईजी बैठक में अपरस में विराजे । तब छीतस्वामी आइके दंडौत कियो, और बिनती करिके कह्यो जो- आग्या हो तो घर जाऊं ?

(तब श्रीगुसांईजी कह्यो जो- महाप्रसाद लेके अपने घर जाइयो) तब श्रीगुसांईजी सब बालकन-सहित भोजन कों पधारे । तब छीतस्वामी हू कों भीतर लेके पधारे । तब छीतस्वामी कों पातरि श्रीगुसांईजी आप अपने श्रीहस्त सों धरी । ता पाछें आप भोजन कों बैठे, तब छीतस्वामी कों प्रसाद लेवे की आग्या दीनी । पाछें आप भोजन करिके (आचमन लेके अपनी) बैठक में पधारे । तब छीतस्वामी हू महाप्रसाद लेके श्रीगुसांई-जी की बैठक में आए । तब श्रीगुसांईजी (छीतस्वामी कों) प्रसादी बीडा दियो, और कह्यो जो- (छीतस्वामी !) अब तुम अपने घर कों जाओ । तब श्रीगुसांईजी कों साष्टांग दंडवत करिके श्रीगोकुल तें चले, सो श्री-मथुराजी आए ।

तब वे चारों कुटिल (हते सो) छीत-

स्वामी सों मिले। तब (उन ने छीतस्वामी सों) पूंछी जो- तुम कहा कियो? हम तो तब ही जाने, जो- तुम कों टोना लग्यो, सो तब छीतस्वामी ने कह्यो जो- हौं तो श्री-गुसांईजी को सेवक भयो हूँ। तातें अब तो तुम्हारे कामतें गयो। यह बात छीतस्वामी की सुनिके कुटिल चुपु व्हे रहे।

तातें श्रीगुसांईजी को एसो प्रताप है। सो छीतस्वामी श्रीगुसांईजी की कृपा तें कवि भए। सो श्रीनाथजी के तथा श्रीगुसांईजी के बोहोत कीर्त्तन किए।

सो वे छीतस्वामी श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे।

इति वार्ता प्रथम

वार्ता द्वितीय

—*—

और एक समैं छीतस्वामी बीरबल के घर आगरे आए। सो छीतस्वामी बीरबल के पुरोहित हते, सो अपनी बरसोठी लेवे कों गए। सो बीरबल ने अपने घर में रहिवे कों स्थल दियो, सो छीतस्वामी तहाँ रहे। तहाँ प्रातः काल उठिके महाप्रभुन कौ नाम लेके एक पद गायो। सो पद—

॥ राग देवगंधार ॥

जै श्रीवल्लभ-राजकुमार ॥
पर-पाखंड रूपट-खंडन करि मकल वेद-धुरिधार ॥ १ ॥
परम पुनीत, तपोनिधि, पावन तन सोभा जितमार ॥
श्रीमुख-वाक्य कथित लीलामृत सकल जीव निस्तार ॥ २ ॥
निजमति सुदृढ़ सुकृत हरि पावन नवधा भक्ति-प्रचार ॥
दुरित दुरत अचेत प्रेत-गति हतित पतित-उद्धार ॥ ३ ॥
नहीं मिति नाथ कहां लों वरनों अगनित गुणगण सार ॥
"छीतस्वामी" गिरिधरन श्रीविट्ठल प्रगट कृष्णअवतार॥४॥

यह पद (छीतस्वामी ने) गायो सो बीरबल ने सुन्यो, परि बीरबल कों आछो न लागी। मन में कही जो—कहा वरनन कियो है ? देसाधिपति सुनै तो कहा कहै ? परि बीरबल ने 'छीतस्वामी सों कछू कह्यो नांहीं, बात मन में राखी।

(ता) पाछें छीतस्वामी उठिके देह-कृत्य करिके श्रीयमुनाजी में स्नान करि नित्यनेम करिके आए। पाछें पाक करिके श्रीठाकुरजी कों भोग समर्प्यो। पाछें बैठे-बैठे कीर्तन करन लागे। सो कीर्त्तन गावत हते, जो—छेली तुक में कहे जो— 'छीतस्वामी' गिरिधरन श्रीविट्ठल तेई-एई, एई-तेई कछु न संदेह।

यह पद गायो। सो सुनिके बीरबल कों आछी न लगी। तब बीरबल ने छीतस्वामी सों कही (जो छीतस्वामी ! तुम ने अब तो यह गायो 'तेई एई एई तेई कछु न संदेह' और

सवारे गाए जो- 'प्रकट कृष्ण अवतार'० सो यह तुमने गायो सो) देसाधिपति तो मलेच्छ है, सो सुनि पावेगो और तुम कों पूंछेगो, तब तुम कहा जुवाब देउगे ? तब छीतस्वामी ने बीरवल सों कह्यो जो- देसाधिपति सुनेगो तो जब पूंछेगो तब की तब, परि मेरे भाए तो तुम ही मलेच्छ हो, जो- तोकों एसी बुद्धि उपजी। जो- जा (मैं तो आज तें) तेरो मुख न देखूंगो। एसो बीरवल को तिरस्कार करिके उहांतें चले, सो श्रीगोकुल आए।

सो यह बात देसाधिपति सों हलकारा ने कही, जो-साहिब ! बीरवल का प्रोहित मथुरा से आया था, सो इन बातन के ऊपर बीरवल सें रूठ गया है। जो- समाचार भए हते, सो सब देसाधिपति के आगें विस्तार सों कहे, ता पाछें

बीरबल (दरबार में) आए। तब देसाधिपति ने पूंछी जो–बीरबल! तेरा प्रोहित आया था सो तो रूठ गया है। तब बीरबल ने देसाधिपति सों कही जो–साहिब! ब्राह्मण एसे ही होते हैं। जो–सहज ही की बात ऊपर रूस जाते हैं। तब देसाधिपति ने बीरबल सों कही। भया था सो तो कहो? तब बीरबल ने कही जो–साहिब! उन ने दो पद दीक्षितजी के गाए, सो परमेश्वर करके गाए। तब मैंने इतना कहा जो–देसाधिपति पूंछेगा तो कहा कहोगे? तिस पर रूठ गया है।

तब देसाधिपति ने कह्यो जो–बीरबल! तेरे प्रोहित ने झूठ बात तो कछु न कही थी जो– तो कों वह बात भूल गई? जो– मैं नवाडा ऊपर जाता था, और तू मेरे पास बैठा था, सो नवाडा श्रीगोकुल के तीर ऊपर

जाता था। ऊपर दीक्षितजी ठकुरानी घाट के ऊपर बैठे थे, सो दीक्षितजी ने मोकों आशीर्वाद दिया। तब मेरे पास एक मणि थी, तामें ते पांच तोला सोना नित्य झरै। सो मणि मैंने दीक्षितजी को दीनी। सो दीक्षितजी ने हाथ में लेके मोसों पूंछी, जो–मणि हम कों दीनी? एसे तीन वार पूंछी। तब मैने तीन्यों वेर कही जो–मणि दीनी? तब दीक्षितजी ने वह मणि लेके श्रीयमुनाजी में पधराय दीनी। तब मैं फिरि बैठ्या जो–मेरी मणि देउ। तब दीक्षितजी (ने) श्री-यमुनाजी में दोनों हाथ की अंजुली भरके मणि लाइके कही जो–तुम्हारी मणि हो सो काढि लेउ। तब मैंने मणि न लीनी। फेरि तीन वेर पूंछी जो-- मणि लेउ? तब मैंने तीन्यो बेर नाहीं कीनी। तब दीक्षितजी ने सगरी मणि श्रीयमुनाजी में डार दीनी।

सो (बीरबल ! यह) बात (तो) तू भूल गया ? यह काम बिना परमेश्वर न होइ। तातें तोकों एसो संदेह क्यों पर्यो जो- तैंने अपने प्रोहित सों एसे कही ? तेरे प्रोहित ने कछु झूठ तो न कह्यो था ? तातें दीक्षितजी तो साक्षात् परमेश्वर हैं, इसमें कछु संदेह नहीं।

या भांति सों बीरबल सों पातसाह ने कह्यो। सो सुनिके बीरबल चुपु करि रह्यो, कहा उत्तर देहि ?

❀तातें श्रीगुसांईजी कौ एसो प्रताप है, जो- देसाधिपति म्लेच्छ (सोऊ) जानत है। तातें श्रीगुसांईजी साक्षात् ईश्वर हैं, और बीरबल बहिर्मुख हैं, तातें श्रीगुसांईजी के स्वरूप कौ ज्ञान नाहीं। श्रीगुसांईजी आप श्रीमुख तें कबहू कबहू कहते जो- बीरबल बहिर्मुख है। ❀

❀··· ❀ इतना अंश भावप्रकाश के रूप मे प्रकाशित हुआ है। परन्तु १६६७ वाली वार्ता प्रति में यह वार्ता का अंश है।

छीतस्वामी तो बीरवल कौ तिरस्कार करिके श्रीगोकुल आए। (ता दिन श्रीगुसांई-जी श्रीगिरिधरजी श्रीनाथजीद्वार हते।

सो जब छीतस्वामी आए सो बात श्रीगुसांईजी ने सुनी जो– छीतस्वामी या प्रकार अपनी वृत्ति छोडिके श्रीगोकुल आए हैं, बैठे हैं) और श्रीगुसांईजी ने यह बात पहले ही सुनी जो– छीतस्वामी अपनी वरसोटी लेवे कों बीरवल के पास गए हते। सो या बात के ऊपर तिरस्कार करिके उठि आए हैं।

(सो तहाँ श्रीनाथजीद्वार में श्रीगोवर्द्धन-नाथजी के तथा श्रीगुसांईजी के दर्शन कों दूर के बैष्णाव जो– आए हे, तिन सों श्री-गुसांईजी ने कह्यो जो–तुम्हारे पास में छीत-स्वामी कों पठावत हों, सो तुम इनकी भली भांति सों सेवा कीजो। ता पाछें बैष्णाव तो

श्रीगुसाँईजी सों बिदा होइके अपने देस कों चले ।)

(ता पाछें बीरबल सों रिसाइके छीतस्वामी श्रीगोकुल आए हते, सो उहां श्रीगुसांईजी के दर्शन श्रीगोकुल में न पाए, तब दोइ-चार दिन तांई रहिके फेरि छीतस्वामी तरहटी में आए श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किये । सो अपने मन में बोहोत आनंद पाए । ता पाछें श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कों अनोसर करवाईके पर्वत तें नीचे उतरे, सो अपनी बैठक में बिराजे । तब श्रीगुसांईजी के आगे आइके छीतस्वामी ने सब समाचार विस्तार पूर्वक बीरबल के कहे । तब श्रीगुसांईजी छीतस्वामी के वचन सुनिके बोहोत प्रसन्न भए ।)

❀ सो ता समै लाहोर के वैष्णव सों श्रीगुसाँईजी ने कह्यो जो— तुम-पास छीत-

छीतस्वामी तो बीरबल कौ तिरस्कार करिके श्रीगोकुल आए। (ता दिन श्रीगुसांई-जी श्रीगिरिधरजी श्रीनाथजीद्वार हते।

सो जब छीतस्वामी आए सो बात श्रीगुसांईजी ने सुनी जो– छीतस्वामी या प्रकार अपनी वृत्ति छोडिके श्रीगोकुल आए हैं, बैठे हैं) और श्रीगुसांईजी ने यह बात पहले ही सुनी जो– छीतस्वामी अपनी वरसोटी लेवे कों बीरबल के पास गए हते। सो या बात के ऊपर तिरस्कार करिके उठि आए हैं।

(सो तहाँ श्रीनाथजीद्वार में श्रीगोवर्द्धन-नाथजी के तथा श्रीगुसांईजी के दर्शन कों दूर के बैष्णव जो– आए हे, तिन सों श्री-गुसांईजी ने कह्यो जो–तुम्हारे पास में छीत-स्वामी कों पठावत हों, सो तुम इनकी भली भांति सों सेवा कीजो। ता पाछें बैष्णव तो

श्रीगुसाँईजी सों बिदा होइके अपने देस कों चले ।)

(ता पाछें बीरबल सों रिसाइके छीतस्वामी श्रीगोकुल आए हते, सो उहां श्रीगुसांईजी के दर्शन श्रीगोकुल में न पाए, तब दोइ-चार दिन तांई रहिके फेरि छीतस्वामी तरहटी में आए श्रीगोवर्द्धननाथजी के दर्शन किये । सो अपने मन में बोहोत आनंद पाए । ता पाछें श्रीगुसांईजी श्रीगोवर्द्धननाथजी कौ अनोसर करवाईके पर्वत तें नीचे उतरे, सो अपनी बैठक में बिराजे । तब श्रीगुसांईजी के आगे आइके छीतस्वामी ने सब समाचार विस्तार पूर्वक बीरबल के कहे । तब श्रीगुसांईजी छीतस्वामी के वचन सुनिके बोहोत प्रसन्न भए ।)

❀ सो ता समै लाहोर के वैष्णव सों श्रीगुसाँईजी ने कह्यो जो– तुम-पास छीत-

स्वामी कों पठावत हों, सो तुम इनकी विदा भली भाँति सों करियो । पाछें श्रीगुसांईजी एक पत्र लिखिके छीतस्वामी सों कह्यो, जो यह पत्र लेके तुम लाहोर कों चलो । तब छीतस्वामी ने कह्यो जो– महाराज ! मैं लाहोर जाइ कहा करूँ ? तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो– मैं उहांके वैष्णवन सों कही हैं, तातें तुम्हारी बिदा भली भाँति सों करेंगे । ❀

❀ -- ❀ इस स्थल पर भावप्रकाश वाली प्रति में इस प्रकार पाठ-भेद है :--

ता पाछें श्रीगुसांईजी ने लाहोर के जो वैष्णव आए हते, तिनकों एक पत्र लिख्यो अपने श्रीहस्त सों, 'जो-ए छीतस्वामी (कों) हमने तुम्हारे पास पठाए हैं सो इनकी टहल तुम आछी भांति सों कीजो' ।

सो वह पत्र श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी कों दियो, और कह्यो जो– छीतस्वामी ! तुम लाहोर जावो । तब छीतस्वामी ने कही जो- महाराज ! मैं लाहौर जाइके कहा

तब छीतस्वामी ने कह्यो जो–महाराज ! मैं कछू वैष्णव के पास भीख मांगिवेकों तो वैष्णव भयो नाहीं ? और वीरवल के पास तो मेरी वरसोंढी हती, सो मैं वाकौ मोहडो तोडिके लावतो । परि महाराज ! वहिर्मुख ने तो मलेच्छकौ जुवाव दियो, तातें मैं उहां तें उठि आयो हूँ । और मोकूं जो--कछु चहिए

करूँगो ? तब श्रीगुसांईजी ने छीतस्वामी सों कह्यो, जो मैंने उन सब वैष्णवन सों कही है, सो वैष्णव तुम्हारी विदा आछी तरह सों करेंगे ।

तब श्रीगुसांईजी के वचन सुनिके छीतस्वामी ने यह पद गायो । सो पद–

हम तो श्रीविट्ठलनाथ उपासी ।
सदा सेवों श्रीवल्लभ--नंदन कहा करों जाइ कासी ।।
छांडि नाथ जो और रुचि उपजत सो कहियत असुरासी
छीतस्वामी गिरिधरन श्रीविट्ठल वानी निगम प्रकासी

जो यह पद छीतस्वामी ने गायो, सो सुनिके श्रीगुसांईजी (ने) छीतस्वामी के हृदयकी जानी जो - ए तो कहूं जानहार नाहीं हैं ।

सो विश्रांति देत है। (मेरे तो राज के चरण कमल छांडिके कछू काम नाहीं, और कहूँ न जाऊंगो) और महाराज ! अब मैं कहा यह कर्म करूंगो जो– वैष्णव होइके वैष्णव के पास भीख मागूं ?

तातें छीतस्वामी एसे टेक के कृपा-पात्र भगवदीय हे। उनकी यह बात सुनिके श्री-गुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए। (और कह्यो जो--) एसो वैष्णव को धर्म हैं। (एसो ही चहिए)

(ता पाछें श्रीगुसांईजी ने वह पत्र लाहोर के वैष्णवन कों लिखि पठायो जो-- छीतस्वामी तो इहाँ ते आइ सकत नाहीं है, तासों यह ब्राह्मण गरीब हैं, जो-- तुम तें याकी टहल बनि आवै तो इहां ही मनुष्य के हाथ हुंडी कराइ पठाइ दीजो सो वह पत्र श्रीगुसाँईजी को एक

मनुष्य लाहोर ले जाइके उन वैष्णवन कों दियो। तब उन वैष्णवन ने वह पत्र बांचिके रुपिया १००) की हुँडी कराइके पठाई, और उन वैष्णवन ने श्रीगुसांईजी कों यह पत्र विनती कौ लिख्यो, जो- महाराज ! इतनी हुँडी तो हम वर्ष-पर्यन्त पठावेगें। आप की हुँडी के साथ इनकी हुँडी पठावेंगे सदा)

(सो पत्र श्रीगुसांईजी के पास आयो तब बांचिके श्रीगुसांईजी ने वा पत्र के समाचार सब छीतस्वामी सों कहे। तब छीतस्वामी अपने मन में बोहोत प्रसन्न भए, और श्रीगुसांईजी हू उन वैष्णवन पर बोहोत प्रसन्न भए।)

भावप्रकाश— तातें छीतस्वामी उन बीरबल को त्याग करिके श्रीगुसांईजी कौ जस बढ़ायो। तो आपने हू बीरबल की बरसोड़ जितनो छीतस्वामी कों कराइ दीनो। तातें वैष्णवन कौ तो दृढ़ विश्वास राखनो श्रीगोवर्द्धननाथजी के ऊपर। जो- विश्वास राखै तो प्रभु

वाकी क्यों न खबर राखें ? तातें वैष्णवन कों तो एसी अनन्यता राखी चाहिये । और छीतस्वामी जो-श्रीगुसांई-जी की आज्ञा मानिके लाहोर जाते, तो एकही वार द्रव्य लावते, परि आगे कहा करते ? सो उन छीतस्वामी ने जो बिश्वास राख्यो, तो जनम- भरिके द्रव्य और ठौर जांचनो न परयो ।

तातें या जीव कों एसो एक प्रभुन कौ आश्रय राखनो । एक आश्रय श्रीवल्लभाधीश कौ करनो, जातें सब फल की प्राप्ति होइ ।

(पाछें वे लाहोर के वैष्णव छीतस्वामी कों प्रति वर्ष श्रीगुसांईजी की हुँडी के साथ न्यारी हुँडी पठावते, सो वे वैष्णव हू श्री-गुसांईजी के एसे कृपा-पात्र हते)

तातें छीतस्वामी एसे टेक के कृपा-पात्र भगवदीय भए । तातें इनकी वार्ता कौ पार नाहीं, सो कहां ताई लिखिये ।

इति वार्ता द्वितीय

(८) गोविन्दस्वामी

अब श्रीगुसांईजी के सेवक गोविन्दस्वामी सनोड़िया ब्राह्मण, महावन में रहते तिनकी वार्ता ❀

—*०*—

भावप्रकाश *

ये गोविन्दस्वामी लीला में श्रीठाकुरजी के 'श्रीदामा' आधिदैविक सखा तिनकौ प्राकट्य हैं । सो दिवस की मूलस्वरूप लीला में तो ये श्रीदामा सखा हैं, और रात्रि की लीला में ये 'भामा' सखी है, श्रीचंद्रावलीजी की । तातें यहां हू श्रीगुसांईजी के स्वरूप में आसक्त हैं ।

वार्ता प्रथम

सो (वे) प्रथम आंतरी (गांम) में रहते । (सो) तहां (वे) गोविन्दस्वामी कहावते, और आप सेवक करते । परि गोविंदस्वामी परम भगवद् भक्त हते, सो (वे) गोविंदस्वामी

आंतरी तें ब्रज कों आए, सो महावन में आइ रहे। काहे तें जो– (यह) ब्रजधाम है, इहां श्रीभगवान के चरणारविंद की प्राप्ति (कैसे न ?) होइगी।

सो गोविंदस्वामी कवि हते, (सो) आप पद करते। सो जो- कोई इनके पद सीखिके श्रीगुसांईजी के आगें गावै ताकों श्रीगुसांईजी प्रसाद लिवावते, और आप प्रसन्न होते। सो (वे) गावनहारे गोविंदस्वामी के आगें जाइ कहते, जो– तुम्हारे (किए) पद हम श्रीगोकुल में जाइ श्रीगुसांईजी के आगें गाए। सो पद सुनिके श्रीगुसांईजी बोहोत प्रसन्न भए, और हम कों प्रसाद लिवायो। तातें तुम अपने पद हम कों सिखावो। एसे आइ कहते। और गोविंदस्वामी अपने मन में यों जानते जो- कछू है सो (श्रीगोकुल है और श्रीगोकुल के) श्रीगुसांईजी हैं। परि मिलबो बनै नाहीं।

(सो) एसे करत कितनेक दिन बीते। तब एक दिन श्रीगुसांईजी कौ सेवक कछु कार्यार्थ वृंदावन गयो, सो भगवद्-इच्छा तें गोविंदस्वामी और वह वैष्णव कौ मिलाप भयो। सो गोविंदस्वामी और वह वैष्णव मिलिके बैठे। सो (तहां कोई) वार्त्ता के प्रसंग में गोविंदस्वामी ने कह्यो जो- श्रीठाकुर-जी की लीला साचात् कैसे जानी जाइ ?

तब वा वैष्णव ने कह्यो जो- फेरि कहूँगो। तब गोविंदस्वामी ने (वा वैष्णव सों) कह्यो जो- मोकों तो बोहोत दिन की आर्त्ति है, और तुम कहत हो जो- पीछे कहूँगो। सो एसी एकांत ठौर फेरि कहां मिलेगी ? तातें मेरे ऊपर कृपा करिके कहो।

तब वा वैष्णव कों गोविंददास के ऊपर दया आई। तब उन वैष्णव ने गोविंदस्वामी सों कह्यो जो—आज के समै तो श्रीठाकुरजी

कों श्रीविट्ठलनाथजी ने अपने बस करि राखे हैं, तातें श्रीठाकुरजी और ठौर जाइ सकत नाहीं। श्रीठाकुरजी तो श्रीगुसाँईजी के हाथ हैं, तातें श्रीठाकुरजी के चरणारविंद पाइए तो उनतें ही पाइए। तातें और ठौर श्रम करनो सो वृथा हैं। तातें श्रीगुसांईजी कृपा करें तो यह होइ।

सो यह सुनिके गोविंदस्वामी कों अति आतुरता भई, और अपने मन में अति उत्साह भयो। तब गोविंदस्वामी उन वैष्णव सों कही जो–तुम मोकों श्रीगोकुल लै चलो। मोकों श्रीगुसांईजी सों मिलावो, मिलाप होइ। ता पाछें उन वैष्णव ने गोविंदस्वामी की आतुरता देखिके कही जो–सवारे चलियो। तब रात्रि कों दोऊ जने उहां ही सोइ रहे।

जब प्रात:काल भयो तब उहां तें उठि चले,

सो श्रीगोकुल आए। तब ता समै श्रीगुसांईजी भीतर श्रीठाकुरजी कों राजभोग धरिके श्रीठकुरानीघाट स्नान करिवे कूं पधारते हते, सो आप स्नान करिके संध्या-वंदन करि तर्पन करत हते, सो ता समै आइ पोहोचे।

तब वा वैष्णव ने श्रीगुसांईजी कों गोविंददास कों दिखाए। तब (देखिके) गोविंददास के मन में आई, जो–ए तो वडे कोईक पंडित हैं, कर्म-कांड करत हैं। इन सों श्रीठाकुरजी क्यों करि मिलत होंइगे ? एसो चित्त में विचार करन लागे।

इतने में श्रीगुसांईजी संध्या, तर्पन करि पोहोंचे। तब श्रीगुसांईजी ने पूछ्यो जो–गोविंददास ! तुम कब आए, तब इन कह्यो, महाराज ! अब ही आयो।

(ता) पाछें श्रीगुसांईजी (उहां तें) मंदिर कों पधारे। (सो) साथ गोविंददास

हते; अपने मन में विचार करन लागे, (जो) इन मोकों कबहुँ देखे नाहीं, और ए तो मोकों पहचानत हैं। तातें कछू तो कारन दीसे है।

पाछें श्रीगुसांईजी (तो जाइके मंदिर में) राजभोग सराए। पाछें (दर्शन के) किवांर खुले। तब राजभोग समै के दर्शन खुले, तब गोविंदस्वामी ने राजभोग (आरती) के दर्शन किए। सो साक्षात् बाललीला-रसमय, रसात्मक स्वरूप कौ दर्शन भयो। ता समै श्रीगुसांईजी गोविंदस्वामी कों यह दान किए।

ता पाछें (श्रीगुसांईजी) राजभोग-आरती करि अनोसर करि (बाहिर आए) पाछें श्रीगुसांईजी सों गोविंदस्वामी ने कह्यो जो-महाराज! आप तो कपट-रूप दिखाए हो, और तुम्हारे भीतर तो साक्षात् प्रभु विराजे हैं, और बाहिर तो वेदोक्त कर्म करे हो?

तब श्रीगुसांईजी ने गोविंददास सों

कह्यो, जो– भक्तिमार्ग है, ❀ सो तो (फूल रूपी है और कर्ममार्ग कांटा रूपी है) सो तो फूलन की रक्षा कांटे विना न होइ। तातें वेदोक्त कर्म है, सो भक्ति-मार्ग रूपी फूल कों कांटे की बाडि है। तातें कर्म-मार्ग की बाडि विना भक्ति-मार्ग रूपी फूल को जतन न होइ, तब जतन विना फूल रहै नाहीं। यह वस्तु हैं सो तो गोप्य हैं, तातें प्रगट प्रमान यों ही है ❀

तब यह (वचन) सुनिके गोविंदस्वामी बोहोत प्रसन्न भए। तब गोविन्दस्वामी ने श्रीगुसांईजी सों (फेरि) विनती करी, जो– महाराज! मो पर कृपा करिए। तब श्रीगुसांई-जी ने कही जो– जाउ स्नान करि आउ, तब गोविंददास तत्काल स्नान करिके अपरस ही में आए। तब श्रीगुसांईजी (इन ऊपर) कृपा करिके नाम सुनायो। (ता) पाछें

❀…❀ इतना अंश भावप्रकाश-रूप में प्रकाशित हुआ था, पर यह वार्ता का मूल अंश है।

समर्पन करवायो। पाछैं (अनोसर कराइ) श्रीगुसांईजी भोजन कों पधारे, तब अपने श्रीहस्त सों गोविंददास कों पातरि धरी। तब गोविंददास ने महाप्रसाद लियो।

पाछैं गोविंददास श्रीगोकुल (ही में) आइ रहे, बहनि कान्हबाई कों बुलाइ लई। तब गोविंददास श्रीगुसांईजी के पास निरंतर रहते। तब तें श्रीगुसांईजी गोविंददास कों अपनो ही करि जानते।

(सो गोविदस्वामी एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते)

इति वार्ता प्रथम

—:—:—

वार्ता द्वितीय

——*:——

और गोविंददास महाबन के टीलेन में नित्य जाइके तहां कीर्त्तन करते। सो श्री-ठाकुरजी उनकों उहांई दर्शन देते। कोईक

विरियां गोविंददास के साथ मदनगोपालदास जाते सो तहां गोविंददास कीर्त्तन करें, सो मदनगोपालदास लिखि लेंइ । तब गोविंद-दास एक समै श्रीठाकुरजी सों कहे, जो– यह तान सूधी लेउ । तब मदनगोपालदास ने गोविंददास सों कही, जो- तुम कौन सूं कहत हो ? इहाँ तो कोई दूसरो नाहीं । तब गोविंददास ने कह्यो जो– 'हौंतो योंही बकत हों' । परि हृदेकी उनसों कही नाहीं । पाछें एक दिन श्रीगुसांईजी ने कही जो– गोविंद-दास ! श्रीठाकुरजी कैसें गावत हैं ? तब गोविंददास ने कही जो—महाराज ! श्रीठाकुर-जी तो गावत हैं, परि ताहू तें सुन्दर श्री-स्वामीनीजी गावति हैं । श्रीठाकुरजी के साथ एसो तान उठावत हैं जो- देखे ही बनै ।

तब श्रीगुसांईजी सुनिके मुसिकाइ रहे। (सो) वे गोविंददास एसे भगवदीय हे।*

इति वार्ता द्वितीय

वार्ता तृतीय

और (पहिले) गोविंददास आंतरी में आप सेवक करते। सो उहां 'गोविंदस्वामी' कहावते। आंतरी में इनके सेवक बोहोत हते।

सो एक समै आंतरी के लोग श्रीगोकुल आए। सो गोविंददास जसोदाघाट-ऊपर बैठे हुते। (सो उन सुनी ही जो– गोविंदस्वामी श्रीगोकुल में रहे हैं। सो सुनिके नाम पाइवे के लिये आए हे) तहां वे लोग आइ इनसों पूंछन लागे, जो– गोविंदस्वामी कहां रहत हैं? तव गोविंददास ने कही जो– वे

*भावप्रकाश वाली प्रति में यह द्वितीय वार्ता का प्रसंग नहीं है।

तो मुए बोहोत दिन भए। तब वे पूछत-पूछत गोविंददास के घर आए। (इतने में गोविंददास हू घर आए) तब कान्हबाई ने कह्यो जो- ए गोविंददास आए। तब उन लोगन ने इन कों पहिचाने। जो- ए तो हम सों एसे कहे जो- वे तो मुए बोहोत दिन भए हैं, और ए तो आप ही हते।

तब वे सगरे लोग बोले जो- स्वामी ! तुम हम सों यों क्यों कहे? जो- वे तोमुए। तब उन सों गोविंददास ने या भाति सों कह्यो, (जो- मरे नाहीं तो अब मरेंगे) ता ❀ कौ हेतु कहा ? जो- वे लोग इन सों पूछे जो गोविंदस्वामी कहां रहत हैं? तब गोविंददास ने कह्यो जो– वे तो मुए बोहोत दिन भए। स्वामी कहिके, तातें मुए। तातें

* ❀ इतना अंश भाव प्रकाश वाली वार्ता प्रति में नहीं है।

स्वामीपनो तो मुओ । अब तो दास हैं । ❀

भावप्रकाश ❀

जो या भांति सों गोविन्ददासजी ने कही, ताकौ कारन कहा ? (क्यों) जो भगवदीय कों मिथ्या न-बोलनो । ताकौ हेतु यह जो- उन लोगन ने तो इन सों पूछ्यो सो 'गोविंदस्वामी' कहिके पूछ्यो । तामों इन (ने) कही जो-वे 'स्वामी' तो मरे (क्यों) जो- अब तो हम 'दास' हैं ।

तब वे लोग कहे, जो- हम कों नाम देउ । तब गोविंददास ने कह्यो जो- अब तो मैं नाम देत नाहीं, हम तो अब दास हैं । तातें तुम श्रीगुसांईजी-पास नाम पाओ । तब उन कह्यो जो- हम कों श्रीगुसांईजी पास ले चलो । पाछें गोविंददास उन कों अपने संग ले जाइके श्रीगुसाँईजी-पास नाम दिवायो । पाछें वे लोग दिन पांच (श्रीगोकुल) रहिके (पाछें) आंतरी कों गए । (सो गोविंददास श्रीगुसाँई-जी के एसे कृपापात्र भगवदीय भए)

इति वार्ता तृतीय

वार्ता चतुर्थ

और गोविंददास पांव श्रीयमुनाजी में कबहूँ डारते नाहीं, कूप के जल सों न्हाते। श्रीयमुनाजी के तीर पे लोटते, अंजुली भरिके जल ले लेते। (सो पीजाते और आचमन हू न करते) सो उन कों एसो भाव। श्रीयमुनाजी कों कहते, जो–साक्षात् श्रीस्वामिनीजी हैं। (और यह कहते जो–) तामें मेरो अप्रयोजक सरीर कैसे डारूं? एसे श्रीयमुनाजी कौ अगाधभाव संयुक्त है, ताकौ विचार करते। वे गोविंददास साक्षात् दर्शन करते।

सो एक दिन श्रीबालकृष्णजी श्रीगोकुलनाथजी ए दोऊ भाई श्रीयमुनाजी में स्नान करत हते। ता समै श्रीयमुनाजी के तीर-ऊपर गोविंददास ठाढे हते। तब श्रीबालकृष्णजी और श्रीगोकुलनाथजी दोऊ भाई

आपुस में कह्यो जो– आपुन गोविंददास कं
पकरिके श्रीयमुनाजी में स्नान करवाइए
तब वे दोऊ भाई गोविंददास कों पकरिं
(श्रीयमुनाजी में) ले जानलागे । त
गोविंददास ने कह्यो जो–महाराज ! मोकं
श्रीयमुनाजी में मति डारो, और मोकों श्री
यमुनाजी में डारोगे तो मेरो दोष नाहीं
फेर तो आप जानो ? श्रीयमुनाजी हैं, सो त
साक्षात् (श्रीस्वामिनीजी हैं, ये) लीलात्मक
स्वरूप हैं । तामें (यह) मेरो अप्रयोजक सरो
कैसे डारूं ?

(सो गोविंददास ने जब) एसो कह्यो
तब छांडि दियो । तब (इन) दोऊ भाईन कों
श्रीयमुनाजी को लीलात्मक (स्वरूप को ता
समय) दर्शन भयो । तब गोविंददास ने
कह्यो जो– महाराज ! इहां तो उत्तमोत्तम
(सामग्री) होइ सो समर्पिए, सो निज-स्वरूप

जानिके कह्यो ।

(सो) वे गोविंददास (श्रीगुसांईजी के) एसे कृपा-पात्र (भगवदीय) हे ।

इति वार्ता चतुर्थ

वार्ता पञ्चम

और एक समै (रात्रि कों) श्रीगुसांईजी श्रीभागवत-दशमस्कंध-अष्टादशाध्याय वेणुगीत के अंत कौ श्लोक :—

"गा गोपकैरनुवनंनयतोरुदार ।
वेणुस्वनैः कलपदैस्तनु भृत्सु सख्यः ॥
अस्पन्दनं, गतिमता पुलकस्तरूणां ।
निर्योगपाशकृत लक्षणयोर्विचित्रम् ॥

या श्लोक की सुबोधिनी कौ व्याख्यान गोविंददास के आगे करत हते, सो व्याख्यान करत-करत अर्द्ध रात्रि गई । पाछें श्रीगुसांईजी आप तो पोंढिवे कों उठे । तब

गोविंददास कों आग्या दीनी जो– अब तुम (ही जाइके) सोइ रहो ।

तब गोविंददास श्रीगुसांईजी कों दंडोत करिके उठि चले । सो तहां (अपनी बैठक में) वैष्णव के संग श्रीबालकृष्णजी श्रीगोकुलनाथजी (श्रीगोविंदरायजी) बैठे हसत-खेलत हते (और हू वैष्णव पास बैठे हते) तहां गोबिंददास (हू) आए । तब (गोविंददास तें) श्रीगोकुलनाथजी ने पूछी जो– गोविंददास ! (या बिरियाँ) कहांतें आवत हो ? तब गोविंददास ने कह्यो जो- महाराज ! श्रीगुसांईजी के पास तें आवत हों । तब श्रीगोकुलनाथजी ने पूछी जो– उहां कहा प्रसंग होत हतो ? तब गोविंददास ने कह्यो जो– महाराज ! वेणुगीत के अंत कौ श्लोक "गा-गोपकैरनुवनं" या श्लोक कौ व्याख्यान कियो । तब श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो जो–

कहा व्याख्यान कियो ? तब गोविंददास ने कह्यो, जो–महाराज ! अपनी बात आप कहो, ताकी कहा पटतर दीजै ?

(तब) श्रीगोकुलनाथजी ने कह्यो, जो-गोविंददास ने श्रीगुसांईजी को स्वरूप नीकें जान्यो (है) ।

ता पाछें गोविंददास दंडवत करिके (अपने) घर कों गए । (सो वे गोविन्ददास एसे भगवदीय भए)

इति वार्ता पञ्चम

—)०'—

वार्ता षष्ठ

—).०:(—

और एक समै श्रीनाथजी और गोविंद-दास (दोऊ) अपछराकुंड-ऊपर साथ (ही खेलत) हते । सो उहां तें गोविंददास गिरि-

राज ऊपर आए, तब देखे तो इहां राजभोग की आरती होइ चुकी है। तब गोविंददास ने कह्यो जो–इहां राजभोग आरोग्यो कौन ने ? श्रीनाथजी तो अब पधारत हैं, एसे कह्यो। जो– तब (श्रीगुसांईजी) फेरिके राज-भोग की सामग्री सिद्ध करवाई, फेर राज-भोग धर्यो। पाछें भोग सर्यो आरती भई, अनौसर भयो।

भावप्रकाश

यहां यह संदेह होइ जो–श्रीनाथजी वहां हते नाहीं तो सेवा कौन की भई ?

तहां कहत हैं जो– श्रीआचार्यजी के पुष्टिमार्ग में श्रीठाकुरजी मर्यादा-पुष्टि-रीति सों बिराजत हैं। (तो भी) सगरे (सब स्थल में) पुष्टि-पुरुषोत्तम के भाव सों सगरी सामग्री आरोगत हैं, सगरी वस्तु, वस्त्र, आभूषन कों अंगीकार करत हैं। और दर्शन देवे में मर्यादा रीति सों बिराजत हैं, बोलत नाहीं सो भगवत्स्वरूप में दोइ प्रकार कौ स्वरूप है। एक भक्तोद्धारक, और एक मर्यादा–पुष्टि-रीति सों सब कों दर्शन दें, सो सर्वोद्धारक।

भक्तोद्धारक स्वरूप के विषै सब कों दर्शन नाहीं। सो जहां तांई वैष्णव कों प्रेम न होइ तहां तांई मर्यादा-पुष्टि-रीति सों अंगीकार (और) दर्शन है। भक्तोद्धारक स्वरूप, सर्वोद्धारक मर्यादा-पुष्टिरूप सों सिंहासन पे विराजिके सब कों दर्शन देत हैं, सो स्वरूप में तें बाहर प्रगट होइ। सो जहां तरुन, वृद्ध, गाय आदि, जैसो कार्य करनो होइ ता प्रकार कौ रूप करि उह भक्त सों बोलें, अनुभव करावें। तथा मर्यादा-पुष्टि स्वरूप हैं, उनही के मुख सों बोलें, अनुभव जतावें।

सो यहां भक्तोद्धारक स्वरूप कौ अनुभव गोविंद-स्वामी कों है। और श्रीगुसांईजी ने जो राजभोग धर्‌यो सो श्रीआचार्यजी की मर्यादा-अनुसार श्रीनाथजी ने सर्वोद्धारक रूप सों आरोग्यो। तो हू गोविन्दस्वामी जैसे भक्त के विशेष अनुभव सों श्रीगुसांईजी ने फेरि राजभोग धर्‌यो, एसे जाननो। प्रत्यक्ष अथवा वैष्णव-द्वारा विशेष आज्ञा होवे तो भगवत्कृपा भई जाननी। सोया तें श्रीगुसांईजी ने हू भगवद्-इच्छा समझिके फेरि राजभोग धर्‌यो।

और गोविंददास तथा कुंभनदास और गोपीनाथदास ग्वाल ए तीन्यो श्रीनाथजी के

एकान्त के सखा हैं। श्रीनाथजी ने इन कों कृपा करिके सब बतायो है।

सो एक समै श्रीनाथजी और गोविंद-दास पूंछरी की ओर खेलत हते (सो गोविन्द-दास सदैव श्रीनाथजी की साथ रहते) सो (एक दिन) राजभोग कौ समौ हतो, तातें श्रीनाथजी राजभोग आरोगिवे कों पूंछरी की ओर तें आवत हते, साथ गोविंददास हते।

सो गोपालदास भीतरिया अपछराकुंड तें स्नान करिके गिरिराज ऊपर आवत हतो, सो उन देखे। तब गोपालदास भीतरिया ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो—महाराज! श्रीनाथ-जी और गोविंददास पूंछरी की ओर तें आवत हते, सो मैंने देखे। तब श्रीगुसांईजी सुनिके चुपकरि रहे ता पाछें राजभोग समर्प्यो।

(सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के एकान्त के एसे सखा हैं। सो वे श्रीगुसांईजी के एसे कृपापात्र भगवदीय भए।)

इति वार्ता षष्ठ

वार्ता सप्तम

(और) एक समै श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी-द्वार पधारे हते, सो गोविंददास श्रीनाथजी-द्वार में हते। सो श्रीगुसांईजी पधारे ता समै श्रीनाथजी के उत्थापन को समो हतो, और गोविंदास तो गिरिराज के ऊपर श्रीनाथजी के दर्शन कों गए हते। सो गोविंददास तो श्रीनाथजी के दर्शन में छके रहते। तब गोविंददास ने श्रीनाथजी के दर्शन किए, सो देखे तो श्रीनाथजी के पाग के पेंच छूटे हैं।

सो गोविंददास पाग बोहोत आछी बांधते। सो गोविंददास ने श्रीनाथजी सों पूछी

जो– महाराज ! पाग के पेच क्यों खुले हैं ? तब श्रीनाथजी ने गोविंददास सों कही, जो- तू पाग के पेच संभारि दे । तब गोविंददास ने भीतर जाइके श्रीनाथजी की पाग टेढी करिके पेंच समार्‍यो । (श्रीगोवर्द्धननाथजी की पाग ढीली, सो संवारि दीनी) इतने ही श्रीगुसांईजी ऊपर पधारे ।

तब भीतरिया ने श्रीगुसांईजी सों कह्यो जो– महाराज ! गोविंददास ने श्रीनाथजी कों छुइके पाग के पेंच सुधारिके बांधे हैं । तब श्रीगुसांईजी तो सुनिके चुपु करि रहे कछू बोले नाहीं, तब भीतरिया ने कही । जो– महाराज ! अपरस तो छुई गई ? तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो, जो– गोविंददास के छुवे तें श्रीनाथजी छुवे नाहीं जात, तातें तुम संध्या-भोग धरो ।

या भाति सों श्रीगुसांईजी ने आग्या-दोनी। ❀ ताकौ हैतु कहा जो— अनौसर में श्री-नाथजी नित्य गोविंददास (सों खेलत है, लिपटत है) ऊपर चढते। तामें गोविंददास के छुवे तें श्रीनाथजी + छूए नाहीं ❀।

वे गोविंददास एसे कृपापात्र (भगवदीय) हे।

इति वार्ता सप्तम

वार्ता अष्टम

(और) एक समै श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करत हते, और गोविन्ददास ठाढ़े-ठाढ़े जगमोहन में कीर्तन करत हते। तव श्रीगोवर्द्धननाथजी गोविन्ददास की पीठि में

❀……❀ इतना अंश भावप्रकाश के रूप में प्रकाशित हुआ था पर यह वार्ता का ही मुख्य अंश है।

+ भाव प्रकाश का अधिक पाठ—

……छुवे तें अपरस, छुई जाइ नाहीं, और वैसे हू ब्राह्मण हैं, तातें वेद-मर्यादा हू में हानि आवत नाहीं।

कांकरी मारी, एसे आठ + कांकरी मारी। तब गोविन्ददास ने एक कांकरी श्रीनाथजी कें मारी, तब श्रीनाथजी चौंकि उठे । तब श्रीगुसांईजी देखे तो गोविन्ददास जगमोहन में ठाढे हैं, और दूसरो कोऊ नाहीं।

तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो—गोविन्ददास! यह तुम ने कहा कियो ? तब गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज ! "अपनो सो पूत, परायो टगीगर" § ? सो देखो, जब तें आठ कांकरी पीठ पे मारी हैं। आप मेरी पीठि देखो । तब गोविंददास ने अपनी पीठि दिखाइ के कह्यो जो— महाराज ! "खेल में को काकौ गुसैंया" ? तब श्रीगुसाँईजी चुपु करि रहे । पाछें श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कौ शृंगार करन

+ भावप्रकाश वाली प्रति में तीन कांकरी का उल्लेख है।

§ पाठभेद—"ढढीगर"।

लागे, और गोविंददास कीर्त्तन करन लागे।

या भांति सों गोविंददास सदैव श्रीनाथजी के संग खेलते।

(सो वे गोविंददास श्रीनाथजी के एसे कृपापात्र भगवदीय हते)

इति वार्ता अष्टम

—:।०):—

वार्ता नवम

और एक समै गोविंददास की बेटी आंतरी तें आई, सो थोडे-से दिन रही। परि गोविंददास ने तो कबहूँ वासों संभाषन न कर्यो, यों न पूछी जो– कब आई ?

(जो– कान्हबाई गोविंददास की बहिन हती, ताने कही जो–गोविंददास ! तू कब हूँ बेटी सों बोलत ही नाहीं। कब हूं कछु कहत ही नाहीं यों हू न पूछे जो– तू कब आई है ? सो यह कहा ?) ❀

❀ इस भाव का कुछ अंश १६६५ वाली वार्ता में लेखक प्रमाद से छूट गया है अन्यथा सम्बन्ध नहीं मिलता।

तब गोविंददास ने कान्हबाई सों कही जो– कान्हबाई ! मन तो एक है, सो श्री-ठाकुरजी में लगाऊं के बेटी में लगाऊं ? तब कान्हबाई चुपु करि रही ।

तब केतेक दिन पाछें (जब) गोविंददास की बेटी आंतरी कों चली, तब कान्हबाई इनकों संग लेके (बहू) बेटीन में दंडौत कराइवे कों ले गई । तब बहू बेटीन ने गोविंद-दास की बेटी जानिके कछु दियो । एक चोली, साडी तथा लहंगा श्रीपार्बती बहूजी ने दीनो, और घरन तें थोडो-थोडो सो दीनो। पाछें बहूबेटीन सों विदा होइके गोबिंददास की बेटी चली ।

पाछें गोबिंददास घर आए । तब कान्ह-बाई ने कह्यो जो– गोविंददास ! बेटी तो गई । तब गोविंददास ने कह्यो, जो– कछु बहूबेटीन ने दीनो ? तब यह बात सुनिके

कान्हबाई ने कह्यो जो– कछु दियो तो है। तब यह सुनिके गोविंददास बेटी के पाछें दौरे, सो कोस-एक ऊपर जाइ लीनी। तब बेटी सों कह्यो जो– बहू-बेटीन ने कछु दीनो (है सो फेरि दे आऊं, याके लिएतें आपुनो बुरो होइगो) सो लेके गोविंददास फिरि आए। तब बहू-बेटीन सों कह्यो जो– महाराज ! यह अपनो फेरि लेउ पाछें, नातर याकौ बुरो होइगो। यों कहिके फेरि दीनो।

पाछें कान्हबाई सों गोविंददास ने कह्यो जो– कान्हबाई ! बेटी तो अजान हती, परि तैंने क्यों लैन दीनो ? * एसे न करिए। तब कान्हबाई तो सुनिके चुपु करि रही।

(सो वे गोविंददास श्रीगुसांईजी के एसे कृपा-पात्र भगवदीय हते)

इति वार्ता नवम

* इस स्थान पर ऐसा पाठ भेद है:—जो कन्हिया ! तैने घर सों क्यों न दीनो। एसे न करिये।

वार्ता दशम

और एक समै वसंत के दिन हते, सो श्रीगुसांईजी श्रीनाथजीद्वार पधारे हते। सो श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी कों सैनभोग सराइके आप (श्रीनाथजी कों) बीड़ा आरोगावत हते। (और गोविंददास ठाढे २ मणिकोठा में कीर्तन करत धमारि गावत हते) सो कल्याणराग में एक नई धमारि करिके गावत हे। सो धमारि—

॥ राग कान्हरो ॥

श्रीगोवर्द्धनराइ लाला।
तिहारे चंचल नैन बिसाला॥
तिहारे उर सोहै वनमाला। तातें मोहि रही ब्रजबाला॥
खेलत-खेलत तहां गए जहां पनिहारिन की बाट।
गागरि फोरै सीस तें कोऊ भरन न पावै घाट॥
नंदराइ के लाडिले वलि एसो खेल निवारि।
मन में आनंद भरि रह्यो सुख जुवती सकल ब्रजनारि॥
अरगजा कुमकुम घोरिके प्यारी लीनो कर लपटाइ।
अचका-अचका आइके भाजी गिरिधर-गाल लगाइ॥

ए तीन तुक कहिके गोविंददास चुपु करि रहे। (गोविंददास तें) आगें कही न गई। तब श्रीगुसांईजी कही जो-गोविंददास ! धमारि पूरी क्यों नाहीं करत ? तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! धमारि तो भाजि गई, और मन तो अरुझाइ गयो। "ओचका-ओचका आइके भाजी गिरिधर गाल लगाइ" सो वह तो भाजि गई। तातें खेल तो उतनोई रह्यो, भाजि गई तो आगें खेल कहां होइ ?

तब यह सुनिके श्रीगुसाँईजी बोहोत प्रसन्न भए। पाछें सेन आरती करि श्रीनाथजी कों पोढाइ श्रीगुसांईजी आपु नीचे उतरे। पाछें धमारि की तुक श्रीगोकुलनाथजी* ने पूरी करी। सो तुकः—

* पाठभेदः— श्रीगुसांईजी।

"इहि विधि होरी खेलहीं ब्रज वासिन संग लाइ।
श्री गोवर्द्धनधर-रूप पे 'जनगोविंद' बलि बलि जाइ ॥

(सो) वे गोविंद्दास एसे कृपापात्र भगवदीय हे ।

इति वार्ता दशम ॥

—◌*◌—

वार्ता एकादश

एक दिन गोविंद्दास महावन की दिस टीलेन पर (एक समय) कीर्त्तन करत हते, तहाँ श्रीगोकुलनाथजी कीर्त्तन सुनिवे कों पधारते । तब अपने खवास सों कहते, जो-सावधान रहियो ? जब श्रीगुसांईजी के भोजन पधारिवे कौ समौ भयो होइ तब (मोकों) बुलाइ लीजियो ।

सो भीतर राजभोग आवें । ता समै श्रीगोकुनाथजी उहां पधारते, और एक

मनुष्य सावधान बैठ्यो रहतो । सो जब समौ होइ तब बुलावन आवे, एसें नित्य करें। सो एक दिन उहां मनुष्य हतो नाहीं कछु काम कों गयो हतो, तब श्रीगुसांईजी भोजन कों पधारन लागे, तब सब बालकन कों बुलाए तब श्रीवल्लभ न आए । तब श्रीगुसांईजी कहे, जो- महावन की ओर जाओ, तहां गोविंददास कीर्त्तन करत हैं, तहां तें बुलाइ लाओ । तब मनुष्य दौरे । तब तहां तें श्रीगोकुलनाथजी कों बुलाइ लाए। तब श्रीगुसांईजी भोजन कों पधारे ।

वे गोविंददास बोहोत आछो गावें, और श्रीनाथजी उनके साथ गावते । तातें श्री-वल्लभ सुनिवे कों आवते❀

इति वार्ता एकादश

❀ इनदोनों प्रसंगों में श्रीगोकुलनाथ जी (चतुर्थ पुत्र) के नाम आने से इस बात की पुष्टि होती है कि उनके कथानकों के वर्णनानन्तर वार्ताओं का संपादन किया गया है।

वार्ता द्वादश

और वे गोविन्ददास पाग बोहोत आछी बांधते। सो एक दिन श्रीगोकुल कों महाबन तें आवत हते, सो मारग में काहू ब्रजवासी ने गोविंददास के माथे तें पाग उतारि लीनी। तब तासों गोविंददास ने कही, जो- सारे! सोरह टूक हैं, सो सभारि लीजो, हौं तेरे घर सवारे आऊंगो। पाछें वह ब्रजवासी गोविंददास के पांवन परिके (पाग) दे गयो।

इति वार्ता द्वादश

—:※:—

वार्ता त्रयोदश

और गोविंददास जसोदाघाट पर जाइ बैठते, सो जो कोऊ पानी भरिवे कों आवते, तासों बतराइ अपने हृदै-विषै भगवद् भाव, तासों जो- चतुर होइ तासों टोक करें।

सो एक दिवस गोविंददास जसोदाघाट ऊपर

बैठे हते, तहां एक बैरागी बैठ्यो गावत हतो, सो बोहोत बेसुरो गावै । सुर कहूं, अच्छर कहूँ, ताल कहूँ, राग कहूँ । सो गोविंददास सुनिके वा बैरागी सों कह्यो जो-अरे बैरागी ! तू मति गावै, गाइबो खराब क्यों करत हो । न तो तेरो सुर ठीक, न तेरो राग ठीक, तू एसो काहे कों गावत है? गाइ न आवै तो मति गावै ।

तब वा बैरागी ने कह्यो जो-हो तो अपने राम कों रिझावत हों । गाइबो नाहीं आवत तो कहा भयो ? मेरो राम तो रीझत है ? तब गोविंददास ने कह्यो जो- तेरो राम तो मूरख नाहीं, जो- तेरे राग पर रीझेगो ? हम ही न रीझे तो राम कहा रीझेगो ? (तातें तू मति गावे) तब वह बैरागी चुपु करि रह्यो ।

(जो-उन गोविंददास ऊपर एसी कृपा हती जो- सब सों निशंक बोलते । वे । गोविंददास एसे कृपापात्र भगवदीय हते)

इति वार्ता त्रयोदश

—:—*:—:—

वार्ता चतुर्दश

और एक समय सीतलता में श्रीगुसांई-जी श्रीनाथजीद्वार पधारे हते। तब एक समै श्रीनाथजी और गोविंददास पूंछरी की ओर एक प्याऊ कौ ढाक है, तहाँ ढाक के नीचे श्री-नाथजी आपु सखा-ग्वाल-बाल मिलिके खेलत हते, और कबहूँक ढाक ऊपर चढिके मुरली बजाइके सब गाँइन कों बुलावते। सो एक दिन स्याम ढाक तें थोरी सी दूरि एक चौंतरा है। तापे बैठिके गोविंददास कीर्तन करत हते, और श्रीनाथजी स्याम ढाक के ऊपर बैठे हते, और गांइ सब आस-पास दूरि (गदेला घास) चरत हतीं (बन में)।

सो ता समै श्रीगुसांईजी आप स्नान

चंकृत हते, तब श्रीनाथजी ने गोविंददास सों कह्यो जो– मैं तो अब (अपने) मंदिर में जात हों, उत्थापन को समो भयो है (श्री-गुसांईजी स्नान करिके ऊपर पधारे हैं। जो-वहां श्रीगुसांईजी मोकों मंदिर में न देखेंगे तो मोसों कहा कहेंगे ? जो- तुम कहां गए हे ? तातें मैं जात हों।)

इतनो गोविंददास सों कहिके (श्रीनाथजी) ता ढाक पे तें उतावल कूदे, सो आपकी कबाइ को दांवन उहाँ उरभिके फट्यो। (सो दांवन को टूक तहाँ ही फटिके रहि गयो) सो श्रीनाथजी ने जान्यो नाहीं। तब गोविंददास दूरि तें देखे तो श्रीनाथजी की कबाइ को दांवन अरुभिके फट्यो है (सो कबाइ की लीर उरभी है)। तब श्रीनाथजी तो मंदिर में जाइके (अपने) सिंघासन-ऊपर विराजे। तब श्रीगुसांईजी तो मंदिर के किंवाड़ खोलिके उत्थापन किए।

सो जब गडुबा भरन लागे तब ता समै श्रीगुसांईजी ने श्रीनाथजी की कवाड़ दोंवन में तें फटी देखी। तब श्रीगुसांईजी गडुवा भरिके उत्थापन-भोग धरिके बाहिर आए। तब आप रूपा पोरिया कों पूंछी जो- इहां कोऊ आयो तो नाहीं ? तब रूपा पोरिया ने कह्यो जो— महाराज ! इहां तो कोई आयो नाहीं ? तब श्रीगुसांईजी चुपु करि रहे।

पाछें (श्रीनाथजी के) उत्थापन-भोग सराइ आपु (श्रीगिरिराज तें) नीचे उतरे। (सो अपनी बैठक में आए) तब भीतरिया कों आग्या दीनी जो- तुम आरती करियो। और सब सेवा सों पोंहोचियो, मेरो पेंडो मति देखियो।

इतनी कहिके आप नीचे अपनी बैठक में विराजे। तव सब बैष्णव दर्शन कों आए, परि आप काहू सों बोले नाहीं। इतने ही में

गोविंददास आए । तब गोविंददास ने श्रीगुसांईजी सों पूछी जो- महाराज ! आप अनमने क्यों बैठे हो ? तब श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो- कछु नाहीं । तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! यह बात तो कही चहिये ।

तब श्रीगुसांईजी ने कही जो- गोविंददास ! आज श्रीनाथजी की कवाड़ को दांवन फट्यो है । सो न जानिये जो- कौन अपराध पड्यो है ? तब गोविंददास ने हसिके कह्यो जो- महाराज ! आप या बात को भलो सोच कियो, तुम कहा लरिका को सुभाव जानत नाहीं ? तुम्हारो लरिका तो बोहोत चपल है, अब ही मैं देखत हतो । ता बात कों थोरी-सी वेर भई है। उहां वन में प्याऊ के ढाक के नीचे और लरिका बैठे हते और तुम्हारो लरिका ढाक ऊपर बैठ्यो हतो (सो जब तुम न्हाइके गिरिराज ऊपर

पधारे) सो लरिका तहां तें कूद्यो, सो खोंच लगी है। सो दांवन कौ टूक उहां अरुझो है, सो आप पधारो तो मैं तुम कों दिखाऊं।

तब श्रीगुसांईजी गोविंददास की बांह पकरिके पूंछरी की ओर कों चले, परि काहू सेवक कों साथ लियो नाहीं। सो जब वा ढाक के नीचे आए, तब आप देखे तो वही कवाइ की लीर लटकत है। सो श्रीगुसांईजी ने अपने श्रीहस्त सों वह लीर उतारि लीनी।

पाछें आप उहां तें अपछराकुंड पे पधारे, सो स्नान करिके अपरस ही में गिरिराज पे पधारे। तब वह लीर श्रीगुसांईजी ने-श्रीनाथ जी की कवाइ पे धरिके देखे, तब वह कवाइ साजी ह्वै गई। तब श्रीगुसांईजी गोविंददास पे बोहोत प्रसन्न भए। तब श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी की ओर देखिके हँसे। तब श्रीनाथजी हू हँसे

पाछें श्रीगुसांईजी सेन-आरती करिके (सेवा तें) पोहोंचिके आप अपनी बैठक में पधारे। तब और सगरे वैष्णव आइके श्रीगुसांईजी कों दंडवत कियो। तब गोविंददास (हू) आइके श्रीगुसांईजी के आगे बैठे। तब श्रीगुसांईजी ने (उन) वैष्णव सों कह्यो जो-अब कछु तुम्हारे मन में संदेह रह्यो है ? तब सब वैष्णव चुप करि रहे। पाछें श्रीगुसांई-जी चुपु करि रहे।

पाछें श्रीगुसांईजी ने कह्यो जो-अब एसो उपाय करिए ? जो-जैसे श्रीनाथजी कों श्रम करनो न पड़े। तब श्रीगुसांइजी आप मन में विचार करिके भीतरियान कों तथा वैष्णवन कों आग्यां करे जो-आजु पाछें घंटा-नाद तीन बेर और संख-नाद तीन बेर करिके छिनेक रहिके पाछें श्रीनाथजी के मंदिर की किवांड़ तुम खोलियो।

सो यह सुनिके गोविंददास तो बोहोत ही प्रसन्न भए। (सो गोविंददास एसे कृपा-पात्र भगवदीय हे)

इति वार्ता चतुर्दश

—*०*—

वार्ता पंच दश

और एक समै गोविंददास जसोदाघाट ऊपर बैठे हते। तहां प्रातःकाल कौ समौ हतो, सो तहां गोविंददास ने भैरवी (राग) अलाप्यो। सो गोविंददास कौ गरो बोहोत सुंदर, सो भैरवी राग एसो जम्यो जो कछु कहिवे में न आवे। सो एक मलेच्छ चल्यो जात हतो, सो वह राग में समुझत हतो। सो वा ने गोविंददास को अलाप सुनिके कह्यो जो-वाह वा! कहा! भैरवी राग अलाप्यो है।

ऐसो वा मलेच्छ ने कह्यो। तब (सुनि-के) गोविंददास ने कह्यो जो–अरे! राग छूयो-गयो।

ता पाछें गोविंददास ने भैरवी राग कबहूँ न गायो। काहे तें, जो–यह राग मलेच्छ ने सराह्यो है, सो श्रीनाथजी के आगे यह राग कैसे गाऊं? राग छूयो गयो। तातें गोविंद-दास ने भैरवी राग में कोई पद कियो नाहीं ❀। ऐसे टेकी (कृपा-पात्र भगवदीय) हते।

इति वार्ता पंच दश

—:✱:—

* भैरव राग का निर्देश मिलता है पर सम्प्रदाय में उक्त कारण वश भैरवी राग नहीं गाया जाता अतः भैरवी का उल्लेख किया गया है।

वार्ता-षोडश

और कबहूं श्रीनाथजी गोविंददास कों घोड़ा करते। सो आप गोविंददास की पींठि पे चढिके वन कों पधारते। सो गोविंददास कों लगी लगती, सो मारग में ठाढे-ठाढे लगी करत-चले जाते। तब एक बैष्णव ने कह्यो जो— गोविंददास! यह कहा? तब गोविंद-दास ने कछु उत्तर वाकों दियो नाहीं। प्याऊ के ढाक की ओर कों चले गए।

सो वह बैष्णव सैन—आरती उपरांत श्रीगुसांईजी के पास आयो। सो दंडवत करिके कह्यो जो— महाराज! गोविंददास तो ठाढे-ठाढे लगी करत हतो। इतने गोविंददास श्रीगुसांईजी के दर्शन कों आए। तब श्री-गुसांईजी ने पूंछी जो— गोविंददास बैष्णव कहा कहत है? जो— तुम आजु मारग में निहोरि के ठाढे-ठाढे लगी करत चले जात हते? तब गोविंददास ने कह्यो जो—महाराज!

घोडा कबहू बैठिके लगी करत है ? याकों तो सूझे नाहीं । जो– श्रीनाथजी मोकों घोडा करिके मेरी पीठि पे असवारी करत हैं । और वैसे में मोकूं लगी आई, तब में बैठिके लगी कैसे करूं ? तातें मैंने ठाढे-ठाढे लगी करी । (सो तो याने देखी परि श्रीनाथजी मेरी पीठि-ऊपर असवार हते सों तो याकों सूझै नाहीं)

तब श्रीगुसाईजी मुसिकाइके चुपु करिके रहे ।

इति वार्ता षोडश

वार्ता सप्त दश

और एक दिन श्रीगुसांईजी (मथुराजी में) श्रीकेशवदेवजी के दर्शन कों पधारे । सो श्रीगुसांईजी के साथ गोविंददास (हू) हते। सो उहां श्रीकेसवरायजी कौ शृंगार वोहोत भारी कियो हतो। जरी कौ वागा और चीरा, ताके ऊपर

जरी की ओढनी । सो श्रीगुसांईजी तो (केसोरायजी के निज-) मंदिर में भीतर गए, और गोविंददास द्वार सों लगे दर्शन करत हते सो बागा जरी कौ, जरी की ओढनी ऊपर देखिके गोविंददास ने कही श्रीकेसोरायजी सों जो-महाराज ! नीके (तो) हो ?

तब श्रीगुसाँईजी गोविंददास की ओर देखिके मुसिकाए । पाछें श्रीगुसांईजी श्री-केसवरायजी के दर्शन करिके बाहिर आए, तब श्रीगुसाँईजी ने गोविंददास सों कह्यो जो-गोविंददास ! केसोरायजी सों तुम ने कहा कह्यो ? (एसे न कहिए) तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! मैं तो एसो कह्यो जो-नीके हो ? जो- उष्णकाल (के) तो दिन, और तैसी गरमी पडै, और बागा पर ओढनी उढाई, तो कहा कहों ? तब श्रीगुसांईजी

(मुसिकाइके) चुपु व्हे रहे ।

वे एसे कृपा-पात्र (भगवदीय) हे !

इति वार्ता सप्त दश

वार्ता अष्टदश

और एक समय श्रीगुसांईजी श्रीनाथजी-द्वार पधारे हते । सो श्रीनाथजी की सैन । आरती करिके श्रीनाथजी कों पोढाइके आप नीचे अपनी बैठक में आइ (गादी-ऊपर) विराजे । तब वैष्णव (सब) आगे बैठे हते । तब एक वैष्णव ने श्रीगुसांईजी सों विनती करी, जो-महाराज ! गोविंददास तो श्रीनाथजी की राजभोग-आरती पहलेई महाप्रसाद लेत हैं ।

(तब इतने में ही गोविंददास तहां आए) तब श्रीगुसांईजी गोविंददास सों कहे, जो-गोविंददास ! ए वैष्णव कहा कहत हैं ? (जो-तुम राजभोग की आरती के पहिले महाप्रसाद लेत हो ?) तब गोविंददास ने कह्यो जो-महाराज ! लेत तो हों, परि परवस लेत

वायो। पाछें मंदिर में पधारे, गडुवा भरन लागे। पाछें श्रीगुसांईजी सों श्रीनाथजी ने कह्यो जो– तुम गोविंददास कों राजभोग-आरती उपरांत महाप्रसाद लेवे की आग्यां दीनी है। सो आज मोकों बन में खेलिवे कों अबार बोहोत भई, तीनि बेर तो जगमोहन में आइके फिरि गयो। पाछें कितनीक बेर लों जगमोहन में ठाढो भयो। जब गोविंददास (प्रसाद लेके आयो) तब (वाकी पीठ पर असवार होइके) बन में गयो। तातें तुम वाकों आग्या देउ, जो–तू जा भांति करत हतो ताही भांति सों करियो।

पाछें श्रीगुसांईजी गडुवा भरिके उत्था-न-भोग धर्यो। तब आपु गोविंददास कों नीचे) बुलायो। तब गोविंददास ने आइके श्रीगुसांईजी कों) दंडवत करी। तब श्री-ांईजी ने मुसिकाइके कह्यो जो–जा भांति

प्रसाद लेत हते ताही भाँति लीजियो, तुम कों दोष नाहीं। तुम कों प्रसाद लेते अवार भई, तातें श्रीनाथजी कों तेरी गैल देखनी परी।

तब गोविंददास दंडवत करिके कह्यो जो– महाराज ! जो– आग्यां। (ता) पाछें (श्रीगुसाँईजी फेरि श्रीगिरिराज पे पधारि के) श्रीनाथजी कौ भोग सरायो (ता पाछें आरती करिके अनौसर कराए)

सो वे गोविंददास श्रीगुसांईजी के सेवक एसे कृपापात्र भगवदीय (अन्तरंगी सखा) हे। जिन सों श्रीगोवर्द्धननाथजी आप सदैव वातें करते, संग खेलते, एसी कृपा करते। तातें इनकी वार्ता कौ पार नाहीं। सो कहां तांई लिखिये।

इति वार्ता अष्टादश

—:०:—

इति श्रीगुसांईजी के सेवक चारि अष्टछापी, तिनकी वार्ता लिखी सो संपूर्णम्।

श्रीकृष्णाय नमः श्रीगोपीजन वल्लभाय नमः। श्रीविट्ठलेशो जयति। श्रीसंवत् १६६७ मिती चैत्र सुदी ५ लिखतं श्रीगोकुलजी-मध्ये श्रीयमुनाजी-तट ब्राह्मण सनाढ्य चुंनीलाल। जो-बांचे सुनै सुनावैं ताकूं भगवत्-स्मरण। श्रीअवनी रवनी मधुपुरी जमुना जाकौ केश गोवर्द्धनधर भाल हैं तिलक श्रीविट्ठलेश ॥१॥

॥ श्रीहरिः ॥

द्वितीय खण्ड समाप्त



❀ विद्याविभाग कांकरोली ❀

के

प्रकाशित विशिष्ट ग्रन्थ

पुष्टि मार्गीय वैष्णवों नु आह्निक (गुजराती) =॥
बुरहानपुर शास्त्रार्थ (हिन्दी) अप्राप्य ।)
सनातन धर्म (हि०) अप्राप्य ।)
सम्प्रदाय प्रदीप (संस्कृत-हिन्दी) गदाधरदास कृत २)
रसिक रसाल (हि० रीति ग्रन्थ) कवि कुमार कृत १॥)

कांकरोली (चारों भाग सजिल्द सचित्र) ५)
(क) श्रीद्वारकाधीश की प्रा० वार्ता (प्र० भाग) १)
(ख) कांकरोली का इतिहास (द्वि० भाग) ३)
(ग) सेवा शृंगार प्रणाली (तृ० भाग) ॥।)
(घ) कीर्तन प्रणालिका (च० भाग) ॥=)

प्राचीन वार्ता रहस्य (हि० गु०- स०) प्र० भाग १)
" " अष्टछाप अप्राप्य द्वि० भाग
" " " तृ० भाग १॥)

कांकरोली दिग्दर्शन (गुजराती) ।)
ध्यान मंजूषा (कविता) प० दामोदर देव कृत ।)
श्रीवल्लभाचार्य महाप्रभु की प्रा० वार्ता (हि० गु०) २)
जगतानन्द (हिन्दी) कवि जगतानन्द की ग्रन्थावली १॥।)
श्रीवल्लभ वंश वृक्ष (सजिल्द) ६)
गोवर्द्धनलीला (सूरदास) प्रमाणिक संशोधन ।)